आशुतोष ग्रन्थ-मालायाः प्रथमं पुष्पम् ।

महाकविश्रीबाणभट्टविरचितम् ।

* श्रीहर्षचरितम् *

* आद्यमुच्छ्वासचतुर्थकम् *

करनाल मण्डलान्तर्गत समीक (सींख) ग्राम वास्तव्येन

पं० रामस्वरूपशास्त्रिणा "विरचितया"

आशुतोषिण्या-व्याख्यया

समलंकृतम् ।

प्रथम संस्करणे सहस्रं] सन् १९३९ [मूल्यं रूप्यकद्वयम्

पुनर्मुद्रणाद्यधिकारः प्रकाशकायत्तः

प्रकाशक—

पं० नारायणदत्त शर्मा

अध्यक्ष आशुतोष पुस्तकालय

सींख (करनाल)

ब्रांच—लाहौर ।

मुद्रक—

सरदारीलाल शारदा

मैनेजर दी सनातन धर्म ऐजुकेशनल

प्रिंटिंग प्रेस, लिमिटिड, लाहौर ।

ॐ

* नम्रनिवेदनम् *

श्रीमाननीयाः ?-विद्वान्सः—

श्रीहर्षचरित "आशुतोषिण्यायाः" प्रथमेस्मिन्संस्करणे अक्षर-संयोजकानां प्रकाशकानांचानवधानतया, कार्यान्तर संलग्ने च मयि जातानां यन्त्राद्यशुद्धीनां कृते खेदो महान् मनसि मे, तदर्थं सानुरोधं-प्रार्थ्यन्ते मया विद्वान्सः—यत् कृपया तत्र तत्र तच्छंशोधनं विधायपठन्त-पाठयन्तश्चमयि महान्तमनुग्रहंविधास्यन्तीति, किं बहुना—मनुष्य जन-सुलभप्रमाद हेतोर्यत्र कुत्रापि काचित्त्रुटिरुपलभ्येत, तन्मांप्रति लेख द्वारा सूचयेयुः-बुधाः, येनाग्रिमेसंस्करणेतन्निराकरणं करिष्येत। किं वा स्वयमपि तत्र तत्र तत्पूर्तिं करणेन मत्साहाय्यमाचरन्तो मयाशतशो-धन्यवादैर्भूष्येरन्निति बद्धाञ्जलिः प्रार्थयते।

कर्मण्यस्मिन् मत्साहाय्यकराणां पं० जगन्नाथशास्त्रिणां (प्रो० चीफकालिज़), म० म० पं० माधव भाण्डारी शास्त्रिणां (प्रो० ओरि-यण्टल कालिज़), पं० रामचन्द्र "कुशल" शास्त्रिणां (प्रो० ओरि-यण्टल कालिज़), पं० सूर्यनारायणशास्त्रिणां (प्रो० शीतला महा-विद्यालय) पं० ज्ञानचन्द्र वेदान्तशास्त्रिणां (लवपुरम्) पं० अमर-नाथशास्त्रिणां (वामनौली) च कृते शतशःधन्यवादाः। यैर्मत्साहाय्यं मनसा वाचा कर्मणा चाकारि।

श्रीविश्वेश्वरानन्द वैदिक अनुसंधानालय
डी० ए० वी० कालिज लाहौर
श्रावणी—सं० १९९६

विदुषामनुचरः—

रामस्वरूपः

प्राक्कथन

१—बाण का जीवन—संस्कृत के कवियों में बाण कुछ भाग्यवान् हैं। इनकी जीवन कहानी और तिथि के बारे में हमें निश्चय पूर्वक जितना मालूम है उतना कदाचित् किसी अन्य कवि के विषय में नहीं। अपने हर्षचरित् के पहिले दो उच्छ्वासों एवं कादंबरी के आरम्भ में अपनी कथा स्वयं लिखी है।

सरस्वती के पुत्र सारस्वत थे। इनके चचेरे भाई वत्स के कुल में कुबेर उत्पन्न हुए। कुबेर के पड़पोते (चित्रभानु) ही बाण के पिता थे। इनकी माता का नाम राजदेवी था। बाण अभी चौदह वर्ष के ही थे, कि इनके माता पिता स्वर्ग सिधारे। उदास होकर ये देशाटन करने लगे। इससे इन्हें बहुत अनुभव प्राप्त हुआ। कुछ समय पश्चात् ये अपने घर (प्रीतिकूट) लौट आए। एक दिन एक राजदूत इन्हें लेने आया। पहले तो बाण डरे, फिर साहस करके हर्ष के दर्बार में उपस्थित हुए। महाराज ने इनकी कविता से प्रसन्न हो बड़ा सम्मान किया, ये अब राज कवि कहलाने लगे, तथा इनकी कीर्ति चारों ओर फैलने लगी।

कदाचित् उसी वर्ष पतझढ़ के आने पर ये अवकाश लेकर अपने देश को आए। भाई बन्धुओं के कौतुक से हर्ष के विषय में पूछे जाने पर इन्होंने जो कहा— वही हर्षचरित् है।

आगे इन्होंने अपने विषय में कुछ न कह कर अपने राजा की ही महत्त्व पूर्ण जीवनी के दर्शन कराये हैं। इन्हें अपने दोनों ग्रन्थ समाप्त करने का अवसर नहीं मिला। "कादंबरी" इनके पुत्र (पुलिन्द) ने इनके बाद पूर्ण की हर्षचरित् अधूरा ही रहा। ये शाहबाद (आरा) प्रान्तवर्ति प्रीतिकूट ग्राम के निवासी तथा थानेश्वर और कन्नौज के महाराज हर्षवर्धन के प्रधान सभा पण्डित थे।

२—बाण का बेटा और बाण—कादंबरी को पूर्ण करने का सेहरा कवि के सुयोग्य पुत्र पुलिन्द के सिर पर है। पुलिन्द ने यह कार्य कर संस्कृत प्रेमियों पर विशेष अनुकम्पा की है। डाक्टर बुह्लर के कथनानुसार बाण के पुत्र का नाम भूषणबाण अथवा भूषणभट्ट है, यह बात अब असत्य सिद्ध की जा चुकी है, क्योंकि—

(क) कादंबरी के पुराने लेख मिले हैं जिन पर पुलिन्द नाम लिखित है।

(ख) कवि धनपाल ने भी अपनी सुक्तिमुक्तावली में लिखा है—

केवलोऽपि स्मृतो बाणः करोतिविमदान् कवीन्।
किम्पुनः क्लृप्तसंधानपुलिन्दकृतसंनिधिः ॥

३—बाण और मयूर—बाण और मयूर दोनों हर्ष के दर्बार की शोभा थे। कहते हैं, मयूर बाण के श्वसुर थे। मयूर का लिखा सूर्यशतक अब भी पढ़ा जाता है। संभव है कि उन्हों ने और भी लिखा होगा। पर समय के चक्र में वह नष्ट हो गया हो।

४—बाण की तिथि—इस विषय में हमें दो जगह से सहायता मिलती है। एक तो काव्य-ग्रन्थों से। दूसरे ह्यूनश्याँग के यात्रा-वृत्तान्त से, बाण ने हर्षचरित् के प्रारम्भिक श्लोकों में कुछ कवियों की स्तुति की है। कुछ अन्य कवियों की सूचि के निरीक्षण ने जहाँ बाण की तिथि नियत करने में सहायता दी है, वहाँ साहित्य के अनेक ऐतिहासिक पहलुओं पर भी प्रकाश-प्रक्षेपन किया है।

चीनी यात्री ह्यूनश्याङ्ग सातवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में भारत में आया। उसने भी हर्ष का वर्णन किया है। अतएव बाण की तिथि सातवीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वार्ध में ही मानी जाती है।

५—आख्यायिका और कथा-संस्कृत काव्य के तीन मुख्य भाग

हैं—गद्य, पद्य, और मिश्र। गद्य के आगे दो भाग हैं—आख्यायिका और कथा।

(१) आख्यायिका में कवि के कुल इत्यादि का संक्षेप से गद्यरूप में विस्तार से वर्णन होता है। कथामें पद्यरूप में ऐसा किया जाता है।

(२) आख्यायिका में नारी-हरण, युद्ध, नेता का वियोग-आदि का वर्णन होता है, कथा में नहीं।

(३) आख्यायिका में नेता अपने किए कार्य्यों का वर्णन करता है कथा में दूसरे व्यक्ति करते हैं।

(४) आख्यायिका को उच्छ्वासों में बाँटा जाता है। कथा में साधारणतः कोई भाग नहीं होते। यदि हों तो उन्हें लंबक कहते हैं।

वस्तुतः इन दोनों में कोई विशेष भेद नहीं होता।

हर्षचरित् एक आख्यायिका है और कादम्बरी, एक कथा।

६—टीका टिप्पणी

संस्कृत साहित्य में बाण एक चमकता हुआ तारा है। गद्य काव्य में इसका स्थान बहुत ऊँचा है।

अनेक बातों में इसका हर्षचरित् निराला है। यही आख्यायिका है जो आजकल मिलती है। मुख्य बातों पर यह ह्यूनश्याङ्ग के विवरण से मिलता जुलता है। आगे चलकर हम देखेंगे कि सामयिक भारत के विषय में बाण हमें क्या २ बतलाता है। पहले हम इसकी शैली को लेते हैं।

बाण पाञ्चाली तथा गोड़ी शैली में लिखिता है। पहली बात जो साफ़ तौर पर नज़र आ जाती हैं, वह है इसकी श्लेष प्रयोग करने के लिए उत्सुकता। प्रायः वे पौराणिक विषय पर होती है। पढ़नेवाला थक जाता है किन्तु अर्थ फिर भी गूढ़ रखने का यत्न करते प्रतीत होता है। दूसरे, यह लम्बे समासों का प्रयोग करके भाषा को जटिल

बना देता है। वास्तव में यह इसका अपराध नहीं। उस समय इन बातों को ही गद्य का ओजस अथवा प्राण समझा जाता था। यदि यह ऐसा न करता तो पण्डित मण्डली इसे सराहती—इसमें सन्देह है। परन्तु कहीं २ इसकी लेखनी से जो सीधे-सादे और सुन्दर पद निकले हैं, वे अमर हो गए हैं। इसके पात्र नैसर्गिक अतः प्रभाव-पूर्ण भाषा बोलते हैं। किन्तु जब यह कवि उड़ने लगता है तो इसकी कल्पना-कल्पना नहीं मालूम होती वह एक जीती जागती वस्तु दीखती है।

बाण का शब्द-परिचय भी बहुत है। अनेक शब्दों का अर्थ अपनी बुद्धि से घड़ना पड़ता है।

यह ऐसे शब्द लाना चाहता है जिनकी आवाज़ में जीभ को खूब मोड़ना पड़े—इसे अनुप्रास कहते हैं। यह खूबी समझी जाती थी।

उत्प्रेक्षा, विरोध, निदर्शन, व्यतिरेक, बिषम, उपमा रूपक और व्याघात। बाण ने प्रायः इन—अलङ्कारो का प्रयोग किया है—

बाण शब्द अथवा समानार्थ भाव को दुहरात रहता है जो प्रायः भला मालूम होता है, किन्तु कहीं २ पाठक उबने लगता है।

इसका प्रकृति-वर्णन सिद्ध करता है—कि यह प्राकृतिक सौंदर्य्य को समझने और प्यार करने वाला था।

सारांश यह है कि इसके काव्य का, चाहे किसी रस में वह लिख रहा हो, पढ़ने वाले पर प्रभाव पड़े बिना नहीं रह सकता। इसका चित्रण सजीव और अपूर्व है। भाषा में लचक पैदा करना इसे खूब आता है, और क़ाबू करना भी, ताकि जिधर चाहे मोड़ सके। महाराज हर्ष ने इसे "वश्यवाणी कविचक्रवर्ती" के नाम से अलंकृत किया, इसकी शैली में छिद्र भी है, पर जैसा हम कह आए हैं, बे समय के प्रभाव के कारण थे, इसकी धवल कीर्ति के चन्द्र

मण्डल पर वे केवल धब्बे कहे जा सकते हैं। अब हम उस समय के "बाण द्वारा" इंगित रीति-रिवाज पर कुछ प्रकाश डालते हैं।

मुख्य मत दो थे—हिन्दू और बौद्ध। कभी कोई सांप्रदायिक झगड़ा न होता था। राजगृह ही में अलग २ मातानुयायी थे। हर्ष के पिता सूर्य भक्त थे। उनके बड़े भाई, राज्यवर्द्धन, पक्के बौद्ध, और हर्ष स्वयं अपने आपको परमेश्वर कहते थे। राजा किसी विशेष धर्म की प्रशंसा न करता था। सब श्रेष्ठ लोग एक सा ही मान पाते थे।

आजकल की भांति पुराणों की कथाएँ प्रायः होती थीं। इससे पुराणों की प्राचीनता सिद्ध होती है, बाण ने रामायण और महाभारत का भी उल्लेख किया है।

मूर्ति-पूजा और देवालय होते थे। कादंबरी से पता चलता है, कि उन दिनों ब्रह्मा और कार्तिकेय की पूजा का भी रिवाज था। तथा सती प्रथा भी थी। हर्षचरित् में रानी यशोवती अपने पति की मृत्यु के पूर्व ही चिता में जलकर प्राण त्याग करती है किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जनता इस बात को बहुत पसन्द न करती थी।

ब्राह्मण वेद शास्त्रों का अध्यन किया करते थे। उत्सव के अवसर पर ऊँचे घरों के स्त्री पुरुषों में नृत्य का भी रिवाज था।

७—बाण की कृतियाँ

निम्नलिखित ग्रन्थ बाण के कहे जाते हैं:—

(१) हर्षचरित्। (२) कादंबरी। (३) चँडीशतक। (४) पार्वतीपरिणाय।

चौथा ग्रन्थ नाटक है यह कवि की असफल कृति कही जा सकती है। कोई पंडित लोग तो इसे बाण का लिखा नहीं मानते। दो तीन और ग्रन्थ भी बाण ने लिखे, परन्तु वे अब नहीं मिलते।

रामस्वरूपः

श्रीहर्षचरितम्

आशुतोषिण्यासमेतम्

प्रथम उच्छ्वासः

* चतुर्मुख मुखाम्भोज वनहंसवधूर्मम ।
मानसे रमतां नित्यं सर्वशुक्ला सरस्वती ॥१॥

* आशुतोषिणी *

वृन्दारकैर्वन्दितपादपीठो गौर्येकदन्ताग्निभवैरुपेतः ।
सदाशुतोषः करुणापयोधिशिवंप्रतन्याद्गिरिजापतिर्नः ॥

१—अथ श्रीमन्महा कविर्बाणभट्टः चिकीर्षितस्य स्व निबंधस्य निर्विघ्न-परिसमाप्त्यर्थं वाग्देवता स्मरण रूपं मङ्गलं ग्रन्थादौ शिष्यशिक्षार्थं निबध्नाति । **चतुर्मुखेति**—चतुर्मुखस्य, ब्रह्मणः, चत्वारि, आननान्येव, (अम्भोजानां, कमलानां), वनानि, तत्र या हंसवधूः, मरालस्त्री, (प्रजापतेः मुखकमल वनविहारस्तत्रहंसवधूस्वरूपेत्यर्थः) सर्वशुक्ला, सर्वतःशरीर

* पद्यमिदं हलायुध वृत्तिकारेण महाकविदण्डिना स्वसंदर्भकाव्यादर्शे अलेखि, केषुचिद्-हर्षचरित पुस्तकेषु लभ्यते, नसर्वत्र ।

१. ओंकारश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ।
कण्ठंभित्वा विनिर्यातौ तस्मान्माङ्गलिकावुभौ ॥

नमस्तुंगशिरश्चुम्बि चन्द्रचामरचारवे ।
त्रैलोक्यनगरारम्भ मूलस्तम्भाय शम्भवे ॥२॥

वसनादिना, (पक्षे) च्युतसंस्कारादिदोषरहिता, शुक्ला, श्वेतवर्णा, (पक्षे) परिशुद्धा, सरस्वती, वाग्देवी, (पक्षे) संस्कृतभारती च, मम मानसे, चित्ते, (पक्षे) मानसाख्ये सरसि यथा हंसी मानसंविहायस्वर्गसुखमप्यनुभवितु नेच्छति, तस्यैव सरसःशोभामतितरांप्रकाशयति, तथैव विदुषां मानसकलहंसी भगवती भारती मन्मानसं प्रविश्यसदर्थजातं प्रकाशयतु, इति श्लेषतात्पर्यार्थः) नित्यं, सर्वदा, रमतां, विहरतु । कमलकानने मानसाख्ये सरसि हंसीव या प्रजापतेः मुखकमलवने नित्यंश्रुति रूपेण विहरति, साऽतिविशुद्धस्वरूपा सरस्वती मम मानसे[1] नित्यं निवसतु, इति भावार्थः । हंस वधूरूपेण भगवत्या वर्णनत्वाद्रूपकमलंकारः, अनुष्टुब्वृत्तम् ॥१॥

अथेदानीं जन्मान्तरीमैहिकंवा विघ्न निचयमाशङ्क्य स्वादिष्टदेवं शिवं स्तौति ।

नमस्तुङ्गेति—तुङ्गं, समुन्नतं, शिरः, उत्तमाङ्गं, तं चुम्बति, स्पृशति, (तत्र संलग्न इत्यर्थः) यश्चन्द्रः, शशीः, स एव, चामरं, व्यजनं, (चमर्याः गोः पुच्छसंभूतःव्यजनविशेषः) तेन, चारुः, मनोहरः, त्रैलोक्यं, त्रिभुवनं, (भूःभुव-स्वः) एव नगरं, पुरं, तस्य य आरम्भः, निर्माणोपक्रमः, तस्य, मूलस्तम्भः शुभ्रशिलामय स्थूणाविशेषः, तस्मै, शम्भवे, शंकराय, नमः, प्रणतिरस्तु ।

यथा महानगरी निर्माणे पुरतो गोपुरंविरचय्य महतींस्थूणां च निवेश्य श्वेतपताकां निबध्नाति जनः, तथैव त्रैलोक्य नगरारम्भे पताकारूपेणशुभ्रं

१. अस्तियद्यपि सर्वत्र नीरं नीरज मण्डितम् ।
रमते न मरालस्य मानसं मानसं विना ॥

हरकण्ठ ग्रहानन्द मीलिताक्षीं नमाम्युमाम् ।
कालकूट विष स्पर्श जात मूर्छा गमामिव ॥३॥

चंद्रमसं नियुज्य स्थूणारूपेण स्वयं भगवान शंकरः अतितरां शोभते तस्मै शम्भवे नमः इतितात्पर्यार्थः । [1]परम्परित रूपकमत्रालंकारः । अनुष्टुप् ॥२॥

अथ श्रीभूतभावनंसंस्तुत्य तदर्द्धाङ्गिनीं श्रीपार्वतीं स्तौति—**हर कण्ठग्रहेति**—हरस्य, शंकरस्य, कण्ठग्रहे, कण्ठाश्लेषे, यः-आनन्दः, सुख विशेषः, तेन मीलिते, संकुचिते, अक्षिणी, नेत्रे, यस्यास्ताम् (आश्लेषसुख शिथिलगात्रीमित्यर्थः) अत एव [2]काल कूटस्य, हलाहलस्य, (अत्र काल कूट शब्देनैव विषत्व सिद्धेः पुनर्विषशब्दप्रयोगः पौनरूक्त्यमावहति परं गो वलीवर्द्द न्यायेन कविसम्मतत्वाच्च नाशङ्कनीयोऽयंदोषः) स्पर्शेन, सम्पर्केण, जातः, सम्भूतः, मूर्छागमः, मोहावेशः; यस्याः पार्वत्याः (तथाभूतामिव) उमां, पार्वतीं नमामि, वन्दे ।

यथैव विष संसर्गे हि श्वासप्रश्वास योगेनपार्श्ववर्तिनःमूर्च्छागमः सम्भाव्यते, तथैव विषसंयुतेमहादेवकण्ठे वाहोस्संसर्गे-आनन्देन निमीलिताक्ष्याः पार्वत्याः विषोपहतामिव नेत्र निमीलनमतिशय प्रणय दर्शनाय पतिकण्ठ ग्रहानन्द कृते विष सम्पर्क जनित मूर्च्छागम इत्युत्प्रेक्षितम् । उत्प्रेक्षालंकारः—अनुष्टुप्[3] ॥३॥

अथ कविकुल शिरोमणिं भगवंतं श्रीकृष्णद्वैपायनं प्रथमं स्तौति—**नमः, इति**—सर्वविदे, सर्ववेदादिकं वेत्तीति सर्ववित्, (सर्वज्ञायेत्यर्थः) ।

---

१. यत्र कस्य चिदारोपः परारोपण कारणम् ।
तत्परंपरिताश्लिष्टाश्लिष्ट शब्द निबंधनम् ॥ इति साहित्यदर्पणे ॥
२. काकोल काल कूटहलाः हलाः विषभेदा अमीनव—इति कोषः ।
३. श्लोकेषष्ठं गुरूज्ञेयं सर्वत्र लघुपंचमम् ।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घ मन्ययोः ॥ श्रुतबोधे ॥

नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे ।
चक्रेपुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम् ॥४॥

[1]कविवेधसे, कवीनां, काव्यकर्तॄणां, वेधाः, विधाता, (कविभ्यः-अभिनव काव्य रचनामार्ग प्रदर्शनेन शिक्षयितारमित्यर्थः) (व्यस्यति, विभजति, वेदादीनिति व्यासः) तस्मै व्यासाय, नमः, प्रणतिः, योऽसौ कवि वेधाः व्यासः तदाख्य महाकाव्यं, भारतवर्षमिव, भरतराज्ञः, स्थानमिव (अत्र-भारतं इत्येकस्यैव पदस्य श्लेषनिबन्धेनोभयार्थे वर्षमिव इत्यनेनान्वयं ज्ञेयम् । सरस्वत्या वागधिष्ठात्र्यादेव्याः, (पक्षे) तदाख्यया नद्या, पुण्यं चक्रे, पवित्रं कृतवान् ।

प्रथमं वेदशास्त्रमविभक्तमासीत् तं पराशरसुतोव्यासः (द्वैपायनः) ऋग्यजुसामाथर्वरूपं मन्त्रब्राह्मणात्मकभेदद्वयं विभज्य पञ्चमवेदभूतं महाभारतं पुराणादीना च विभागं चक्रे तदास्य नाम व्यासेति प्रसिद्धिमगात् । **भावः**—प्रजापतिः स्वकर्म कौशलं सर्वर्तु मनोहरं रत्ननिचयमेकत्रप्रदर्शयितुं भारतवर्ष-अखिल दुरितनाशाय यथा पवित्र प्रवाहिण्या सरस्वत्या नद्या पवित्रीचकार, तथैव व्यासोऽपि विद्याप्रकाश रूपकौशलं योगबलेन अन्तर्निगूढभावं लोकातिशायिनं महाभारतं वाग्देव्याः कला विलासेन पवित्रतामनयदिति—अत्र महाभारतस्य भारतवर्षेण सह अवैधर्म्यत्वादुपमालंकारः तादात्म्य संबंधेन च व्यज्यते व्यासोऽयं विधाता—अतः-उपमालंकारेण रूपकालंकारध्वनिरिति[2] ज्ञेयम् ॥४॥

कवीनां स्वभावं-पर्यालोचयन्नाहश्लोकषट्केन । **प्राय-इति**—इह लोके रागः, असदभिनिवेशः, तेन, अधिष्ठिता, आक्रान्ता, दृष्टिर्ज्ञानं, येषां ते, तथाभूताः, अतःएव कुकवयः, कुत्सिताः, घृणास्पदाः, कवयः, (असत्संदर्भनिर्मातार इति यावत्) प्रायः, बाहुल्यन, लोके, जगति, दृश्यन्ते इति शेषः ।

१. अपारे काव्य संसारे कविरेवप्रजापतिः ।
   यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्तते ॥
२. रूपकं रूपितारोपाद्विषये निरपन्हवे । साहित्य दर्पणे ॥

प्रायः कुकवयो लोके रागाधिष्ठित दृष्टयः ।
कोकिला इव जायन्ते वाचालाः कामचारिणः ॥५॥

(अज्ञानान्धतयात्र कुकवीनां यानि हि भूयांसि काव्यानि दृश्यन्ते लोके तानि आलंकारिकमार्ग रहितानि केवलमसारतरविषयकानि काव्याध्येतॄणामनिष्ट कारकाणि सर्वथा त्याज्यानि—इति भावः । तथैव ते तु केवलं कोकिलाइव, परभृत इव, वाचालाः, श्रुतिमधुरयावाचा, मूर्खाणां चित्ताकर्षकाः (असंबद्ध प्रलापिन इतियावत्) कामचारिणः, शास्त्राननुशीलाः, यथेच्छया विचरन्तः, (अनभिज्ञाहित-इत्यर्थः) कुकवयः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते, कुकविनिन्दात्र—

यथैव कोकिलाः स्व कुहुरवेण प्राकृतानां जनानां मनांसि वशीकुर्वन्ति, तथैव पूर्व कवीनांमार्ग मननुसरन्तः स्वेच्छया काव्यकान्तार पर्यटनशीलाः, ये केवलं वाङ्माधुर्येण हि जनानां चेतांसि प्रीणयितु' यतन्ते, परमध्येतॄणां श्रेष्ठ काव्येषु प्रवृत्तिं असत् काव्येषु निवृत्तिं च कर्तु मक्षमास्तेषां काव्यालाप वर्जनीय एवेतिभावः ।

कोकिल पक्षे-त्वेवं—रागः, लौहित्यं, तेन, अधिष्ठिता, व्याप्ता, दृष्टिः, चक्षुः, येषां तथा विधाः, वाचालाः, प्रलपनशीलाः, वाचा, वाण्या, (स्वकीय कुहुरवेणेत्यर्थः) आलाः, आसमन्तात्, लान्ति, आवर्जयन्ति, वशी कुर्वन्ति (मानसमितिभावः) येते तादृशाः कामचारिणः, कामोत्तेजनकराः, जायन्ते । (काममुद्दीपयन्तीत्यर्थः) ।

"वाचाला इत्यत्र अवाचालाः"इति पठान्तरे" केचित् कवयः कोकिला इव अवाचालाः मधुरभाषिणः कामचारिणः, स्वप्रतिभानुसारमभिनव संदर्भ कुर्वाणाः, सुकवि प्रशंसात्रज्ञेया । अत्रकविषु कोकिलानामवैधर्म्यत्वात् श्लिष्ट विशेषण प्रतिपादितः । श्लेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥५॥

सन्ति श्वान इवासंख्या जातिभाजो गृहे गृहे ।
उत्पादका न वहवः कवयः शरभा इव ॥६॥
अन्यवर्ण परावृत्या वन्धचिह्ननिगूहनैः ।
अनाख्यातः सतां मध्ये, कविश्चौरो विभाव्यते ॥७॥

सन्तीति—गृहेगृहे, प्रतिगृहम्, असंख्याः, संख्यातीताः, (गणयितु मशक्या इति यावत्) जातिः जन्म, तन्मात्रं भजन्ते, इत्येवंभूताः, सामान्यसामर्थ्यकाः । (नहि अभिनव रचनया किमपि जगतः-उपकर्तुं समर्था इति भावः) श्वानइव, कुक्कुरा इव, सन्ति, विद्यन्ते, ते हि यथा भुक्तोद्गीर्ण भोजनप्रियाः, अमेध्य भोजनेप्सया यथाकामं विचरन्तः, अगणनीयाः, कुकवयः, असत् काव्यरचनया कालंनयन्तः, एवं भूताः, निंदास्पदाः, (सततं-निन्दनीयाः-एवेतिभावः) (उक्तकवयः निन्द्याः परं के अनिन्द्या इत्यपेक्षायामाह । उत्पादकाः, इति—किन्तु वहवः, भूयांसः, कवयः, कवित्वख्याति मिच्छया काव्यकला प्रणयनोत्सुकाः, शरभाइव, अष्टापदमृगविशेषा इव, न उत्पादकाः, नाभिनवकाव्यरचना निपुणा इत्यर्थः । सन्तीति पूर्वेणसंबंधः । अत्यल्पा एव विद्यन्ते इति तात्पर्यम् ।

यथैव [1]शरभाणांकुत्रचिदेवावस्थानं नहि सर्वत्रलभ्यन्ते तथैव सत्काव्य निर्मातारः सुकवयः अल्पसंख्याका एव विद्यन्ते संसारे इतिभावः । अत्र कुकविषु शुनां सुकविषु च शरभाणां अवैधर्म्यसाम्यप्रतिपादनात् उपमाद्वयं—अन्योऽन्यनैरपेक्ष्य तया स्थितेश्वानयोः संसृष्टिः ॥६॥

अन्येति—अन्यस्य अपरस्य, कवेः, काव्यकर्तुः, वर्णानां, अक्षराणां, (रचितानां संदर्भाणामितिभावः) परावृत्तिः, विपर्यासेन, परिवर्त-

१. गंधर्वः शरभो रामः सृमरो गवयो शशः—इत्यमरः ।
२. जाति सामान्य जन्मनोः··············· ,,

श्लेषप्रायमुदीच्येषु, प्रतीच्येष्वर्थमात्रकम् ।
उत्प्रेक्षा दाक्षिणात्येषु, गौड़ेष्वक्षरडम्बरः ॥८॥

नेनेत्यर्थः । प्रथनं (पक्षे) अन्येवर्णाः कृष्ण गौरादयः तेषां परावृत्तिः, वर्णान्तरेणगूहनं तिरोधानं तथा बंधानां गौड़ी पाञ्चाली वैदर्भ्यादीनां, चिह्नानां, श्रीप्रभृति लिङ्गादीनां च, गूहनैः, गोपनैः (पक्षे) बन्धचिह्नस्य शृंखलादेः, निगूहनैः । अनाख्यातः, अप्रकटितः, अथ च नना अनाः, अपुरुषः, (का पुरुषः इतिभावः) एवं ख्यातः, प्रसिद्धः, कविः, काव्यनिर्माता सतां, सहृदयानां, सज्जनानां मध्ये (सज्जन संसदीत्यर्थः) चौरः, तस्करः, विभाव्यते, ज्ञायते, योहि अपर कवीनां संदर्भादाकृष्यरचयति रचनां तस्कररूपेणासौहि सहृदय समाजे चौरो गण्यते ॥७॥

इदानीं देशभेदेन रचना शैलीं दर्शयति—**श्लेषेति**—उदीच्येषु उत्तर पथ वासिषु, प्रदेशेषु, तत्रत्यानां कवीनां रचनायामितिभावः । श्लेषप्रायं, बह्वर्थवाचकत्वं, श्लेष प्रयोगः, आधिक्येन दृश्यते, उदीच्याः हि कवयः श्लेषालंकाराश्रयेण काव्यं रचयन्तीतिभावः । प्रतीच्येषु, पाश्चात्येषु, पश्चिम देशेष्वित्यर्थः । अर्थमात्रकं, अर्थस्यैव प्राधान्यं, नच शब्दालंकारादीनामित्यर्थः । तथाच प्रतीच्यांदिशि अर्थस्यैव विशेषादरः नोदीच्यादीनामिव तेषां शब्दालंकारादिषु मात्रशब्देनायं व्यज्यते । दाक्षिणात्येषु तद्देशोद्भवेषु-उत्प्रेक्षायाः संशय मूलकप्रकृतस्यालंकारस्यैवविशेषादरः गौड़ेषु वङ्ग देशादारभ्य उत्कल देश पर्यन्तेषु, जनपदेषु, प्राच्येषु अक्षराणां, वर्णानां, डंबरः, ओजगुणवतांसमासभूयिष्ठानांपदानामेव रचना सौकर्यमित्यर्थः ।

सर्वत्रैव देशेषु कविभिरेकैकोहि गुणः समादृतः परंनहि-सहृदयानां-संतोषकरः, अतःगुणनिचय मेव हि श्रेयानितिभावः ॥८॥

साम्प्रतं सहृदय प्रीति जनकं रचना प्रकारं वर्णयति—**नव इति** नवः,नूतनः,

नवोऽर्थो जाति रग्राम्या श्लेषोऽक्लिष्टः स्फुटो रसः ।
विकटाक्षरबंधश्च कृत्स्नमेकत्र दुष्करम् ॥९॥
किं कवेस्तस्य काव्येन सर्ववृत्तान्तगामिनी ।
कथेव भारती यस्य न व्याप्नोति दिगन्तरम् ॥१०॥

अन्यैः, कविभिरनिबद्धः, अर्थः, अभिधेयः, (अविधा प्रतिपाद्योवाच्यार्थः-इतियावत्) अग्राम्या, नीच जनोच्चारितवाग्जालःग्राम्यः सचदोषविशेषः तद्रहिता, जातिः, रचनाशैली, यत्रश्लेषः शब्दार्थोभयवृत्तिरलंकारः, अक्लिष्टः, सहृदयवेद्यः (अदुर्बोध इति यावत्) रसः शृंगारादि स्फुटः, सुव्यक्तः, विकटः, (विकटत्वंपदानां न्यासविशेषः) तद्गुण युक्तः, बन्धः, प्रबन्धः, ओज गुण प्रकाशकं राडम्बर विशेषैः गौड़ी रीत्यनुसारेणेतिभावः। ग्राम्यादि दोषरहितं सुबोध्य श्लेषादिकं स्फुटं रसं गौडीरीति बंधनं रचनयागुम्फनामत्यर्थः। एतत्सर्वं कृत्स्नं काठिन्येनहि एकत्र, एकस्मिन्कवितरीति शेषः। दुष्करं (दुर्लभमिति यावत्) एतेहि गुणाः एकस्मिन्सन्दर्भे न दृश्यन्ते, एतच्च सर्व गुण सौष्ठवत्वं सहृदय प्रीति करमित्यर्थः। अथ च नूतन-अर्थः ग्राम्यत्वादि दोष रहितः, श्लेषादिऽलंकारैः शोभितः, अकठिनः, स्फुटः, अक्षर विन्यासादि-भिरलंकृतोहि संदर्भः सहृदयानांप्रीतिमुद्भावयति ॥९॥

ये हि कवयः पूर्वोक्त गुणयुक्तां रचनां कर्तुमसमर्थास्तेषां काव्यकरणं निरर्थकत्वमित्याशयेनाह। **किमिति**—यस्य कवेः, कवित्वख्यातिप्राप्तुमिच्छोः, कथा, संदर्भविशेषः, तस्यवाक्, सर्ववृत्तान्तगामिनी, सर्वविषयप्रकाशिनी, प्रागुक्त नवार्थादिगुणोद्भासिनीत्यर्थः। अथवा सर्वाणि यानि वृत्तानि मात्रिक वार्णिकादीनि छंदांसि तेषामध्ययन परायण सहृदयानन्दकारीणीत्यर्थः। (पक्षे) भारतीव, महाभारतमिव (भगवतो व्यासस्यमहाकाव्यंसर्वैः कवि-भिराद्रीयते) दिगन्तरं, दिग्भागपर्यंतं (सर्वत्रेति भावः,) नप्राप्नोति, [1]कथा

उछ्वासान्तेऽप्यखिन्नास्ते येषां वक्त्रे सरस्वती ।
कथमाख्यायिकाकारा न ते वंद्याः कवीश्वराः? ॥११॥
कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया ।
शक्त्येव पाण्डुपुत्राणां गतया कर्णगोचरम् ॥१२॥

नगच्छति, स्वकीयया प्रतिभया झटिति जनानां हृदयानि न व्याप्नोति, तस्य-कवेः, काव्येन, संदर्भेण किं-न किमपि प्रयोजनं जनानामित्यर्थः, (वैफल्य मेव तस्य जगतीतिभावः) पूर्वं निर्दिष्टरचनाशैलीमनुसृत्य महाभारत कथामिव यस्य संदर्भः दिगन्तरं न प्राप्तस्तस्य काव्येन किं प्रयोजनमिति भावः ॥१०॥

साम्प्रतं नमस्करोति कवीन् । **उछ्वासेति**—येषां कवीनां वक्त्रे, मुखे, सरस्वती वागधिष्ठातृदेवी, विलसतीतिशेषः, उछ्वासस्यैव, श्वासप्रश्वास मारुत-त्यागेनेव, यद्वा वाग्विश्रान्तिस्थानस्य प्रकरणसमाप्तेरिति भावः । अन्ते, अव-सानेऽपि, अखिन्नाः, कवित्व शक्तेःप्रभावाद्रचनायामनिवृत्ताः, आख्यायिका-काराः, आख्यायिका इतिवृत्तं तं कुर्वन्ति तथोक्ताः, संदर्भरचयितारः, ते प्रसिद्धाः, लब्धख्यातिकाः, कवीश्वराः, कविश्रेष्ठाः, कथं न वंद्याः, अपितु वंदनार्हाः, एवेति भावः, आख्यायिकाकारान् सर्वानेव कवीन् वंदे इतितात्पर्यार्थः । येषां कवीनां वदने विहरति सर्वदैव सरस्वती ते आख्यायिकाकाराः कविवराः पूज-नीया इति भावः ॥११॥

अधुना तद्रचित संदर्भ प्रशंसया महाकविं सुबधुंस्तौति । **कवीनामिति**—कर्णस्य, सूतपुत्रस्य, दुर्योधनसुहृदः, स्वनामविख्यातस्य वीरस्येतियावत् । एव गोचरः स्थानं (पक्षे) कर्णः, कवीनां स्वीयं २ गोः, इन्द्रियं, श्रवणं, तस्य चरं, विषयं, कवीनांश्रवणपथवर्तिनमित्यर्थः (कर्णसमीपेएकपुरुषाघातिनी

१. **नारदोऽश्रावयद्देवानसितो देवलः पितृन् । गंधर्वयक्षरक्षांसि श्राव-यामास वैशुकः**

पदबन्धोज्ज्वलो हारी कृतवर्णक्रमस्थितिः ।
भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते ॥१३॥

शक्तिरस्तीति पाण्डुपुत्राणां श्रवणकालमिनियावत्) गतया, प्राप्तया, (पक्षे) श्रुतिविषयंनीता, वासवः, इन्द्रः, तेन दत्ता तया (पक्षे) वासवानुग्रहेण प्राप्ता स्त्री वासवदत्ता, तदिति वृत्तान्तः, तया शक्त्या, तदाख्य अस्त्रविशेषेणेत्यर्थः । पाण्डुपुत्राणां, युधिष्ठिरादीनामिव, वासवदत्तया, तदाख्य गद्यकाव्येन, कवीनां दर्पः, अहंकारः, नूनं निश्चयेन, अगलत् ननाश । इन्द्रप्रदत्तांएकपुरुषाघातिनीं शक्तिं निशम्य पाण्डवाः यथा विजयाशा रहिताः हतदर्पाश्चासन्, तथैव वासवदत्तायां संदर्भ सौष्ठवत्वमवलोक्य सर्वे कवयः अतः परसाधिकमुत्कर्षजनककाव्यं कर्तुमक्षमाः अहंकारशून्याः—अभवन्नित्यर्थः । उपमाऽलंकारः ॥१२॥

महाकवेः हरिचन्द्रस्य गद्यकाव्यस्य प्राधान्यं दर्शयति—**पदेति**—पदानां, सुप्तिङन्तानां, बंधः, रचनाचातुर्यः (पक्षे) स्वस्थानपरायणश्च, तेन उज्ज्वलः, दीप्यमानः, हारी, मनोहरः, (पक्षे) हारालंकारशोभाच । अथवा ("अहारी" इति पाठे) न हरति कस्यापि धनादिकमित्याहारी । कृता, स्थापिता, वर्णानां, अक्षराणां (पक्षे) ब्राह्मणादीनां च क्रमेण मर्यादानुसारेण च स्थितिः येन यस्मिन्वा, एवंभूतः भट्टारः, प्रभुः, हरिचन्द्रः तन्नामकश्चित्कविः, तस्यगद्यबंधः, गद्यग्रन्थः, नृपः, राजा, स इवाचरतीति नृपायते, नृपवत् शोभते इत्यर्थः । हरिचन्द्रकवेः काव्यं सर्वातिशायिनमिति व्यज्यते । यस्मिन्गद्यकाव्ये पदानां वर्णानां च स्थितिक्रमः, अतीव शोभनः-असौ हरिचन्द्रस्य गद्यग्रंथः नृप इव विराजते—इति तात्पर्यार्थः ॥१३॥

अपर कविं सातवाहनं, स्तौति । **अविनाशिनमिति**—सातवाहनः, तदाख्यःकवि विशुद्धाः, निर्दोषा, जातिः, अलंकारादिर्येषु, तथाभूतैः, सुभाषितैः, शोभना-भाः-कान्तिः, येषांतैः, शोभनैर्वाक्यैः, रत्नैरिव, अविनाशिनं

अविनाशिनमग्राम्यमकरोत् सातवाहनः ।
विशुद्धजातिभिः कोषं रत्नैरिव सुभाषितैः ॥१४॥
कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला ।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥१५॥

अनश्वरं, अतिरमणीयं, स्थायिनं चेत्यर्थः, अग्राम्यं, ग्राम्यत्वादिदोषरहितं, कोषं, काव्यनिधिं अकरोत् ।

यथा च शोभनैः रत्नैः स्वकीयनिधिः पूर्यते जनेन तथैव सातवाहनेन कविना काव्यनिधिः विशुद्धैश्शब्दरत्नैः-आपूरी । उपमालंकारः । "साम्यं वाच्य मवैधर्म्यं वाक्यैक्य उपमाद्वयोः" ॥१४॥

प्रवरसेननामानं कविं प्रशंसयति । **कीर्तिरिति**—प्रवरसेनस्य, तदाख्य-कवेः (पक्षे) प्रः, प्लवने, (कूर्दने-इत्यर्थः) रसः, रागो, येषां ते प्रवरसाः, वानराः, तेषां, इनः, स्वामी, "इनः पत्यौ नृपार्कयोः" सुग्रीवः, तस्य वानर राजस्य, कवेश्च, कीर्तिः, काव्यरचना समुद्भवं यशः, "यशः कीर्तिः समज्ञा च— इत्यमरः" कुमुद वत्, उज्वला, प्रदीप्ता अथवा कुः, पृथिवी, तस्या-मुद आनन्दः, तया उज्वला, यद्वा कुमुदेन, तदाख्येन वानरसेनापतिना, उज्वला, प्रशस्ता, सेतुना, तदाख्य-काव्यग्रंथेन, (पक्षे) तन्नाम मार्गेण नलनील निर्मितेन, कपिसेनेव, वानरवाहिनीव, सागरस्य समुद्रस्य परंपारं प्रयाता, गता, यथैव वानर सेना सेतुबंधेन सागरं समुत्तीर्य सागरपारस्थितां लङ्कां प्राप्ता, तथैव प्रवरसेनस्य यशः तदीय ग्रन्थस्य प्रचारेण सागरमभिसमुत्तीर्य देशान्तरं गतमितिनिष्कर्षार्थः ॥१५॥

दृश्यकाव्यप्रणेतारंभासकविं प्रशंसति । **सूत्रेति**—भासः, तदाख्यकविः, सूत्रं, वृत्तं धारयतीति सूत्रधारः, नाटकमुख्यपुरुषः, "नाट्योपकरणादीनि सूत्र-मित्यभिधीयते, सूत्रंधारयतित्यर्थे सूत्रधारो निगद्यते ।"

सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः ।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव ॥१६॥
निर्गतासु न वा कस्य, कालिदासस्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ? ॥१७॥

(पक्षे) स्थपतिश्च, तेन कृतः, आरम्भोयेषांतैः वह्वीभूमिका अनुकरणावस्था, वेशपरिवर्तनादिकं (पक्षे) कक्ष्या च । येषु तथोक्तैः, सपताकैः पताकास्थानविशेषैः, "यत्रार्थेचिन्तितेऽन्यस्मिंस्तल्लिङ्गोऽन्यःप्रयुज्यते, आगन्तुकेन भावेन पताकास्थानकं तु तत्" । देवकुलैरिव, देवमन्दिरैरिव, नाटकैः रूपकभदे "नाटकं ख्यातवृत्तंस्यात् पंचसंधिसमन्वितम्" । यशो लेभे, कीर्तिमवाप । नाट्यरचनाकुशलः भासो नाम कविः स्वकीय नाटकग्रन्थैः देवकुलैरिव यशो लेभे ।

यथा मन्दिरनिर्माता देवमंदिरं निर्माण्य पताकां च स्थाप्य यशभागभवति तथैव भासोऽपियशमवाप ॥१६॥

महाकविं कालिदासं स्तौति—**निर्गताष्विति**—निर्गतासु उच्चरितासु, नवार्थप्रतिपादिकासुच, मधुराः, मनोहारिण्यः, सान्द्राः, धनाः, निविडाः (सुरसा इतियावत्) (पक्षे) मधु विद्यते यासु ताः मधुराः, मकरन्दवाहिन्यः, सान्द्राः, घनाः, पूर्णावस्थां प्राप्ता इत्यर्थः । तथाविधासु मंजरीष्विव, कुसुमवल्लरीष्विव, कालिदासस्य कवेः सूक्तिषु, मनोहरेषुवाक्येषु, कस्य जनस्य वा प्रीतिः प्रेम न जायते, नोत्पद्यते, अपितु सर्वस्यैव सहृदयस्य जनस्यप्रीतिर्भवत्येवेत्यर्थः, नहि कश्चिदपि जनःयस्य कालिदासकाव्येषु नास्ति प्रीतिरितिभावः—उपमाऽलंकारः ॥१७॥

समुद्दीपितेति—समुद्दीपितः, उत्तेजितः, कंदर्पः, कामो यया बहूनां कामिजनानां कथाश्रवणेनन तदुत्पत्तेरित्यर्थः, उपवनगमनविहारैः श्रृंगाररसः समुद्भवतीति । तथोक्ता (पक्षे) समुद्दीपितः नेत्रानलेनः दग्धः, कंदर्पः, कामः

समुद्दीपितकंदर्पा कृतगौरीप्रसाधना ।
हरलीलेव नो कस्य विस्मयाय वृहत्कथा? ॥१८॥
आढ्यराजकृतोत्साहैर्हृदयस्थैः स्मृतैरपि ।
जिह्वान्तः कृष्यमाणेव न कवित्वे प्रवर्तते ॥१९॥

यस्यां तथोक्ता, अथवा कृतं, विहितं, गौर्य्याः ईश्वर्याः, प्रसाधनं, पूजनं, नायकेन, नरवाहनदत्तेनेतिभावः। यस्यां तथाभूता (यद्वा) कृतं गौर्य्याः पार्वत्याः, प्रसाधनं, आराधनं, हरस्येतियावत्-यद्वा, गौर्य्याः,(कर्मभूतायाः,) प्रसाधनं अलंकरणंहरेण (कर्त्रेति भावः) यस्यां तथा भूता, वृहत्कथा, तदाख्यइतिहास काव्यं, हरलीलेव शम्भोः कौतुकमिव, कस्य जनस्य आश्चर्याय विस्मयाय न, अपितु सर्वस्यैव सहृदय जनस्य विस्मयायेतिभावः । उपमाऽलंकारः ॥१८॥

आढ्यराजनामानं कविं प्रस्तौति । **आढ्यराजेति** आढ्यराजः, तन्नाम कविः तेन कृताः, रचिताः, ये उत्साहाः, ग्रंथविशेषाः, तैः, हृदयस्थैः, चित्त-निहितैः, आलोचितैरितिभावः । अपि किं वा स्मृतैः, स्मरणतांनीतैः, विद्वद्भिः, जिह्वा, रसना (मम बाणभट्टस्येति भावः) अन्तः कृष्यमाणेव, आकृष्टा इव (वृथा तव प्रवर्तनमेतेषामुत्साहानां पुरस्तादित्याशयेनेत्यर्थः,) कवित्वे, कवित्व-शक्तिं प्रकटयितुं न प्रवर्तते नोत्सहते । सुमनोरमा आढ्यराजकृताः-उत्साहाः तेषां पुरस्तान्नहि कस्यापि कवित्वशक्तिः प्रशरति एतदेव हि उत्साहाना-मुत्साहत्वमितिभावः । उत्प्रेक्षाऽलंकारः । भवेत्संभावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मनः "दर्पणे" ॥१९॥

एवंबहूनां कवीनां सन्ति काव्यानि परं नृपतेर्भक्त्या किमपि जिह्वा चापल्यंकरोम्येवेत्याशयेनाह । **तथापीति**—तथापि जिह्वाया अन्तःकृष्य-माणोऽपि नृपतेः, राज्ञः,श्रीहर्षस्य ममवंशोद्भवस्येति यावत् । भक्त्या,अनुरा-गेण, निर्वहणे, परिसमाप्तौ, आकुलः, संदर्भसमाप्तिर्भवेन्न वा-इत्येवंशंक्य-

तथाऽपि नृपतेर्भक्त्या भीतो निर्वहणाकुलः ।
करोम्याख्यायिकाम्भोधौ जिह्वाप्लवनचापलम् ॥२०॥
सुखप्रबोधललिता सुवर्णघटनोज्वलैः ।
शब्दैराख्यायिकाऽऽभाति शय्येव प्रतिपादकैः ॥२१॥

मानः । अत एव भीतः, त्रस्तः, सहृदयसंसदि-अप्रतिभशंकयाऽत्यर्थः आख्यायिका, इतिवृत्तं । "आख्यायिका कथावत् स्यात् कवेर्वंशानुकीर्तनम् । अस्यामन्यकवीनां च वृत्तंपद्यं क्वचित् क्वचित् ॥

तदेव अम्भोधिः, समुद्रः, तस्मिन् जिह्वया, रसनया, प्लवनं, संतरणं, तदेवचापलं चाञ्चल्यं, करोमि । उडुपेन समुद्रतरणोत्साहवता जनेनेव किंचित्मात्रेण जिह्वासंतरणेन आख्यायिकाम्भोधिं संतरितुमिच्छामीति भावः । रूपकमलंकारः ॥२०॥

दर्शकानमथनृणां च आख्यायिकायां प्रवृतिं जनयितुं सौकर्यदर्शयति । **सुखेति**—सुखस्य, अलोचनाजनितस्य, प्रबोधः ज्ञानं, यद्वा सुखेन बोधः, "काव्यं यशसेऽर्थ कृते व्यवहार विदे शिवेतरक्षतये । सद्यपरनिर्वृतये. कान्ता सम्मिततयोपदेशयुजे"मम्मटः । तेन ललिता, सुभगा, मनोहारिणीत्यर्थः (पक्षे) सुखात्, सुखस्वापात्, प्रबोधः, जागरणं, तत्रललिता, मनोरमा, आख्यायिका, इतिहासकाव्यम, सुवर्णानां, सुप्रयुक्तानां,, "एकःशब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग्ज्ञातःस्वर्गलोके कामधुग्भवति" ।

वर्णानां, अक्षराणां, (पक्षे) सुवर्णानां, हेम्नां, घटनया, योजनया, (पक्षे) कारुकर्मनैपुण्येन, उज्वलैः, प्रदीप्तैः, प्रतिपादकैः, विवक्षितार्थबोधकैः शब्दैः, (पक्षे) प्रतिपादकैः, सोपान विशेषैः, चरणान्यासपीठैर्वा, शय्येव, पर्यंकइव, आभाति, विराजते । श्लेषानुप्राणितोऽपमाऽलंकारः ॥२१॥

साम्प्रतं ग्रन्थनायकं श्रीहर्षमाशिषा संवर्धयति । **जयतीति**—ज्वलत्,

जयति ज्वलत्प्रतापज्वलनप्राकारकृतजगद्रक्षः ।
सकलप्रणयिमनोरथसिद्धिश्रीपर्वतो हर्षः ॥२२॥

एवमनुश्रूयते—१ पुरा किल भगवान्स्वलोकमधितिष्ठन्परमेष्ठी विकासिनिपद्मविष्टरे समुपविष्टः सुनासीरप्रमुखैर्गीर्वाणैः परिवृतो ब्रह्मोद्याः कथाः कुर्वन्नन्याश्च निरवद्या विद्यागोष्ठीर्भावयन्कदाचिदासाञ्चक्रे ।

दीप्यमानः, प्रताप एव ज्वलन्, प्रतापानलः, स एव प्राकारः आवरणः "प्राकारा वरणः सालः—इत्यमरः" (कोष्ठविशेषः) तेन कृता जगतांरक्षा येन तथाभूतः (कोष्ठनिर्मिता हि पुरी शक्यते-अनायासेन रक्षयितुमितिभावः,) सकलानां, अखिलानां, प्रणयिनां, अर्थिनां, मनोरथस्य, ईप्सितस्य, सिद्धिं, अर्थजातंपूरयितुं, पूरणे, श्रियां, सम्पदां, विभूतीनां, पर्वतः, गिरिः, (हर्षयति आनन्दयति जनानिति हर्षः) तदाख्यः नृपतिः, जयति, सर्वोत्कर्षेण वर्तते-इत्यर्थः । अधिकप्रतापेन विराजमानः श्रीहर्षः नृपतिः जगद्रक्षकः सम्पूर्णमनोरथसिद्धिदः जयति सर्वदैव जयतु इति भावः । निरङ्गरूपकसलंकारः । आर्यावृत्तम् ॥२२॥

एवमिति—एवं, अनेनप्रकारेण, अनुश्रूयते, परम्परया आकर्ण्यते । पुरा किल भगवान् स्वलोके विद्यागोष्ठीं कुर्वन्आसाञ्चक्रे-इत्यनेन संबन्धः । **पुरा-इति**—पुराकिल भगवान् पूर्व समये भगवान्, भगं, कल्याणं, विद्यते यस्यस भगवान्, कल्याणकरः, स्वस्य, आत्मनः, लोकं, ब्रह्मलोकं, अधितिष्ठन्, स्थितिंकुर्वन्, परमे, सर्वोत्कृष्टे, स्थाने तिष्ठतीति परमेष्ठी, पितामहः, ब्रह्मा, विकासिनि, विकसिते, पद्ममेव, कमलमेव, विष्टरं, आसनं, तस्मिन्पद्मविष्टरे, सुनासीरप्रमुखैः, "वृद्धश्रवाः सुनासीरः पुरुहूतः पुरंदरः—इत्यमरः" इन्द्रादिभिः गीर्वाणैः, "गीर्वाणा: दानवारयः……इत्यमरः" देवैः, परिवृतः, चतुर्तः परिवेष्टितः, ब्रह्मोद्याः, "वेदस्तत्वं तपो ब्रह्म—इत्यमरः" ब्रह्म वेदः, ईश्वरो वा "ब्रह्मोद्या सा कथा यस्यामुच्यते ब्रह्मशाश्वतम् ।" उद्यते कथ्यते कीर्ति विषयं

तथाऽऽसीनं च तं त्रिभुवनप्रतीक्ष्यं मनुदक्षचाक्षुषप्रभृतयः प्रजापतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरःसरा महर्षयः सिषेविरे। केचिदृचः स्तुतिचतुराः समुदाचरन्। केचिदपचितिभाञ्जि यजूंष्यपठन्। केचित्प्रशंसा सामानि जगुः।

अपरे विवृतक्रतुक्रियातन्त्रान्मन्त्रान्व्याचचक्षिरे। विद्याविसंवादकृताश्च तत्र तेषामन्योन्यस्य विद्याविवादाः प्रादुरभवन्। आथाति

नीयते इतियावत्। याभिः, तथाभूताः, कथाः, कुर्वन्, अन्याश्च वेदवाह्या इतिहास पुराणादीनामित्यर्थः। निरवद्याः, अनिन्द्याः, प्रशंशार्हा इतियावत्। विद्यागोष्ठीः, ज्ञानसमालोचिती, विद्वत्परिषदित्यर्थः "यागोष्ठी सर्व विद्विष्टा या च स्वैर विसर्पिणी। पर हिंसात्मिका या च न तामवतरेद्बुधः लोक चित्तानुवर्तिन्या कीड़ा मात्रैक कार्यया। गोष्ठ्या सह चरन् विद्वान् लोके सिद्धिं नियच्छति॥ भावयन्, सम्पादयन्, आसांचक्रे, अवतस्थे।

तथाऽऽसीनमिति—तथा पूर्वोक्तप्रकारेण, आसीनम्, उपविष्टं, त्रिभुवनप्रतीक्ष्यं, "प्रतीक्ष्यः पूज्यः-इत्यमरः।" (त्रयाणां भुवनानां समाहारः त्रिभुवनम्) तेन प्रतीक्ष्यं, पूज्यं, लोकत्रय पूजनीयमितिभावः। मनुदक्ष चाक्षुषप्रभृतयः, आदयः, प्रजापतयः सर्वे च सप्तर्षिपुरःसरा-सप्तर्षि सहिता इतिभावः। महर्षयः, तं ब्रह्माणं सिषेविरे, सेवितवन्तः। केचित्स्तुति चतुराः स्तुतिषु स्तोत्र पाठेषु चतुराः, दक्षाः, ऋचः, ऋग्वेदान्, समुदाचरन्, उक्तवन्तः। उदात्तादि स्वरभेदेन सम्यक् उच्चारितवंत, इत्यर्थः। "केचिदपचितिभाञ्जि," पूजानमस्यापचितिः-इत्यमरः। अपचिति, पूजा, तां भजन्तीति, अपचितिभाञ्जि पूजा सन्बन्धीनीतिभावः। यजूंषि, यजुर्वेद गतान्मंत्रभागान्, अपठन्, पेठुः, केचित्प्रशंसा सामानि, स्तुतिगर्भितानि, सामानि, सङ्गीत मयानि वेद भागानि। जगुः, गीतवंतः, सामगायनमकुर्वन्नित्यर्थः।

अपरे-इति—अपरे, अन्ये, विवृतानि, प्रकटितानि, क्रतुक्रियाणां,

रोषणः प्रकृत्या महातपा मुनिरत्रेस्तनयस्तारापतेर्भ्राता नाम्ना दुर्वासा द्वितीयेन मन्दपालनाम्ना मुनिना सह कलहायमानः साम गायन् क्रोधान्धो विस्वरमकरोत् ।

सर्वेषु च शापभयप्रतिपन्नमौनेषु मुनिषु, अन्यालापलीलया- अवधीरयति कमलसम्भवे च कुमारी किञ्चिदुन्मुक्तबालभावे भूषितन-

---

यज्ञादिकर्मणां, तन्त्राणि, प्रकरणानि, यैः, येषु वा, तान् मंत्रान् व्याचचक्षिरे, कथयामासुः । विद्या विसंवादकृताः, विद्यानां वेदशास्त्रादीनां, यः, विसंवादः, मतभेदः, तेनकृताः, जनिताः, (नतुरागमात्सर्यादिनेत्यर्थः) तत्र, तस्मिन्स्थाने तेषां, ऋषीणां, अन्योन्यस्य, परस्परस्य, विद्याविवादाः, प्रश्नोत्तररूपाः, प्रादुरभवन्, उत्पन्नाः । अथ सामगायन् क्रोधान्धोदुर्वासा विस्वरमकरोदित्यनेनसंबंधः । **अथेति**—अथ प्रादुर्भूतविवादे, अतिरोषणः, अतिकोपनः, प्रकृत्या स्वभावेनैव (अन्यथाब्रह्मसंसदि कोपोऽयमयुक्तः) महातपाः, अतितपस्वी, मुनिः, अत्रेस्तनयः, पुत्रः, तारापतेः, चन्द्रमसः, भ्राता, नाम्ना दुर्वासाः, द्वितीयेन, अपरेण, मन्दपालनाम्ना, मन्दपालाभिधेयेन, मुनिना सह, कलहायमानः, कलहं-कुर्वन्, सामगायन्, सामवेदं, सङ्गीतस्वरेण पठन् क्रोधान्धः, क्रोधेन, मात्सर्येण, अन्धः, विवेकशून्यः, विस्वरम्, विकृताः, स्वराः, उदात्तादयः यस्मिन् तथाः भूतं-अकरोत् ।

शापेति—शापभय प्रतिपन्नमौनेषु, शापादभयंशापभयं तेन त्रस्ताः, अतएव प्रतिपन्नं, स्वीकृतं, मौनं, यैस्तथाभूतेषु-सर्वेषु मुनिषु, अन्यालापलीलया, (अपर कथाव्याजेनेतिभावः) अवधीरयति, तिरस्कुर्वति, दुर्वाससमितिभावः । कमल सम्भवे, कमलात् सम्भवोजन्मयस्य स कमलसम्भवः, तस्मिन्कमलसम्भवे, (पद्मयोनावित्यर्थः) कुमारी, कौमार व्रतं विद्यते यस्या सा कुमारी, अनूढावाला, (सामान्यवयस्का इत्यर्थः) किञ्चिदुन्मुक्तबालभावे, ईषदुज्झितशैशवे, भूषितनवयौवने, नवयौवनेनालंकृता-इत्यर्थः, नवे वयसि वर्तमानानूतनामवस्थां-प्राप्ता,

वयौवने नवे वयसि वर्त्तमाना गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता पितामहमुप-
वीजयन्ती ।

निर्भर्त्सनताड़नजातरागाभ्यामिव स्वभावारुणाभ्यां पादपल्लवाभ्यां समुद्भासमाना शिष्यद्वयेनेव पदक्रममुखरेण नूपुरयुगलेन वाचालितचरणा, मदननगरतोरणस्तम्भविभ्रमं बिभ्राणा जङ्घाद्वितयं, सलीलम्-उत्कलकलहंसकुलकलालापिनि मेखलादाम्नि विन्यस्तवाम

गृहीतचामरप्रचलद्भुजलता, गृहीतेन, धारितेन, चामरेण, चमरीगोपुच्छनिर्मितनव्यजनविशेषेण, प्रचला, चलन्ती भुज-एव लता यस्या एवंभूता, पितामहं, ब्रह्माणं, उपवीजयन्ती, व्यजनं स्पन्दयन्ती ।

निर्भर्त्सनेति—निर्भर्त्सनाय, विस्वरपाठतयातिरस्करणाय, यत्ताड़नं, प्रहरणं, रोषोद्भूतहननमितिभावः । तेन जातः, उत्पन्नः, रागः, लौहित्यं, ययोः, एवंभूताभ्यां स्वभावारुणाभ्यां, सहजरक्ताभ्यां पादपल्लवाभ्यां समुद्भासमाना, सम्यक् देदीप्यमाना, पदक्रममुखरेण, पादयोः यक्रमः, पादविन्यासः, तेन मुखरं सशब्दं, रणदितिभावः । तेन वाचालितचरणा, वाचालितौ नदन्तौ, चरणौ, यस्यास्तथोक्ता । **मदनेति**—मदननगरतोरणस्तम्भ विभ्रमं, मदनस्य, कामस्य, यन्नगरं, पुरं, निवासस्थानं, तस्ययत्तोरणं बहिर्द्वारं, तस्य स्तम्भौ, स्थूणा, तयोर्विभ्रम इवविभ्रमः, विलासः, यस्यास्तथा विधं, जङ्घाद्वितयं, उरुयुगलंबिभ्राणा, धारयन्ती । (मदन नगरे तस्याःजङ्घाद्वितयंस्तम्भरूपेणावर्तते-इत्यर्थः) **उत्केति**—उत्कानां, उत्सुकानां कलहंसानां, कुलस्य, समूहस्य, यः कलः, मधुररवः, सुं एव आलापः, भाषणविशेषः, तद्वत्प्रलापिनि, सान्द्रशब्दकर्त्रीत्यर्थः । मेखलादाम्नि, काञ्चिस्रजि, मालारूपधारिणीत्यर्थः । विन्यस्तः, स्थापितः, किसलयः, नवपल्लवः, तद्वत्वाम हस्तो यया—**विद्वन्मानसेति**—विद्वन्मानस निवासलग्नेन, विदुषां, शास्त्राध्ययनकृत परिश्रमाणां, मानसं, चित्तं, तत्र यो निवासः, अवस्थानं, तेन लग्नं, संसक्तं,

हस्तकिसलया, विद्वन्मानसनिवासलग्नेन गुणकलापेनेवांसावलम्बिना ब्रह्मसूत्रेण पवित्रीकृतकाया, भास्वन्मध्यनायकम्-अनेकमुक्तानुयातम्-अपवर्गमार्गमिव हारमुरसा समुद्वहन्ती, वदनप्रविष्टसर्वविद्यावधूचरणालक्तकरसपाटलेन इव स्फुरतादशनच्छदेन विराजमाना, संक्रान्तकमलासन कृष्णाजिन प्रतिमां मधुरगीताकर्णनावतीर्ण शशिहरिणाम्-इव कपोलस्थलीं दधाना, तिर्य्यक्सावज्ञम् उन्नमितैकभ्रूलता श्रोत्रमेकम्,

---

गुणकलापेनेव, चातुर्यादिगुण समूहेनेव, अंसावलम्बिना, स्कंधे विलम्बमानेन, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन "अमौक्रमसौवर्णं, ब्राह्मणानां विभूषणम् । देवानां पितृणां च भागो येन प्रदीयते ॥" पवित्रीकृतकाया, पवित्रीकृता, शुद्धिंनीताः काया, शरीरं यस्याः, **भास्वनिति**—भास्वन्मध्यनायकं, भास्वन्, भाः, कान्तिः विद्यतेयस्य स भास्वन्, देदीप्यमानः, उज्वलः मध्यनायको, मध्यमणिर्यस्य (पक्षे) भास्वतः, सूर्यस्य, अनेकमुक्तानुयातं, अनेकैः, मुक्ताफलैः, अनुयातं, ग्रथितम् (पक्षे) अनेकैः, मुक्तैः, "मोक्षमार्गगामिभिः," अनुयातं, सेवितं अपवर्गमार्गमिव, मुक्तिपथमिव, (अपवर्गमार्गस्य-मुक्ताजालस्य च विशुद्धत्वादुत्प्रेक्षितम्) हारं, मुक्ताकलापं, उरसा, वक्षःस्थलेन, समुद्वहन्ती, धारयन्ती, **वदनेति**—वदने, आनने, प्रविष्टानां, सर्वासां, विद्यानामेव, वधूनां, स्त्रीणां, चरणेषु पादेषु, यः अलक्तकरसः, लाक्षाद्रवः, तेनेव पाटलः, ईषद्रक्तः, तेनस्फुरता, विलसता, दशनच्छदेन, अधरेण, विराजमाना, शोभमाना (सर्वाविद्याएवनार्यस्तासां मुखप्रवेशेनालक्तक रसेन ओष्ठयोःस्वभावारुणयोरुत्प्रेक्षितम्) **संक्रान्तेति**—संक्रान्ता, संलग्ना, कमलासनस्य, ब्रह्मणः, कृष्णाजिनस्य, कृष्णमृगचर्मणः, प्रतिमा, कान्तिः, यस्यास्तथाविधा । अत एव, मधुरस्य, मनोहरस्य, गीतस्य, गानस्य, आकर्णनाय, श्रवणाय, अवतीर्णः, उपस्थितः, शशिनः, चन्द्रस्य, हरिणकलंकरूपो मृगो यत्र तादृशीं, कपोलस्थलीं, गंडप्रदेशं, दधाना, धारयन्ती । **तिर्यगिति**—तिर्यक्, कुटिलं, यथास्यात्तथा सावज्ञं, अवज्ञया,

विस्वरश्रवणकलुषितं प्रक्षालयन्तीव अपाङ्गनिर्गतेन लोचनांशु जलप्रवाहेण इतरश्रवणेन च विकसित सिन्धुवार मञ्जरीजुषा हसतेव प्रकटितविद्यामदा, श्रुतिप्रणयिभिः प्रणवैरिव कर्णावतंसकुसुम मधुकरकुलैरुपास्यमाना, सूक्ष्मविमलेन प्रज्ञाप्रतानेनेवांशुकेनाच्छादितशरीरा, वाङ्मयमिव निर्मलं दिक्षु दशनज्योत्स्नालोकं विकिरन्ती देवी सरस्वती श्रुत्वा जहास ।

तिरस्कृतभावेन, विस्वरपाठकं, दुर्वाससमित्यर्थः । उन्नमितैकभ्रूलता, उन्नमिता, ऊर्ध्वभागंनीता, एका भ्रूलता इव, वल्लरीरूपा, भ्रूलता यया, एवंभूतया, श्रोत्रमेकं, कर्णमेकं, विस्वर श्रवणेन, अशुद्धस्वराकर्णनेन, यत्—कलुषितं, दूषितं, (कालुष्यतां नीतमिति यावत्) अपाङ्गनिर्गतेन, नेत्र प्रान्त च्युतेन, लोचनस्य, नेत्रस्य, अंशवः, किरणा एव जलानि तेषां यः प्रवाहः, स्रोतः, तेन, इतर श्रवणेन, कर्णेन, प्रक्षालयन्तीव, शुद्धतांनयन्तीव । **विकसितेति**—विकसिता, प्रफुल्लिता, या सिन्धुवारस्य सम्भलतरोः, मञ्जरी, वल्लरी, तद्जुषा, तद्वद्कान्त्या, हसतेव, हास्यं कुर्वाणा-इव, अतएव प्रकटितविद्यामदा-प्रकटितः प्रकाशनीतः, विद्यामदः, विद्यार्जनितः, अहंकारः । यया एवंभूता ।

श्रुतिप्रणयिभिरिति—श्रुतिप्रणयिभिः, श्रुतिर्वेदशास्त्रं, तत्र प्रणयिभिः, प्रेमकर्तृभिः, प्रणवैरिव, ॐ कारैरिव, कर्णेषु, श्रोत्रेषु, यानि, अवतंसानि, कर्णभूषणानि, तान्येव कुसुमानि, पुष्पाणि, मधुकरकुलैः, भ्रमरैः, उपास्यमाना, (मधुर ध्वनिना श्रुतिसुखंजनयद्भिरित्यर्थः) सूक्ष्मेन, ह्रस्वेन, अतएव, अतिविमलेन, परिशुद्धेन, प्रज्ञाप्रतानेनेव-प्रज्ञाप्रतानः, बुद्धिवैचित्र्यं, स एव प्रतानः, प्रसरः, तेनेव-अंशुकेन, वसनेन, पटेनेत्यर्थः (अर्थात् बुद्धिवैचित्र्यमेव वस्त्रंयस्या-एवंभूता) तेन-आच्छादितशरीरा, अच्छादितं, आवर्णितं, शरीरं यस्या, **वाङ्मयेति**—वाङ्मयमिव-विद्यामिव (शास्त्रं) निर्मलं, अतिशुद्धं, दशनानां, या ज्योत्स्ना, कान्तिः, तस्याः, यद्-आलोकं, द्योतं, तं-इतस्ततः, दिक्षु, दिग्भागेषु, विकिरन्ती, प्रसारयन्ती, देवी सरस्वती, श्रुत्वा, आकर्ण्य, जहास ।

दृष्ट्वा च तां तथाहसन्तीं स मुनिः-आः पापे ? दुर्गृहीतविद्यालवावलेपदुर्विदग्धे ? मामपि-उपहससि। इत्युक्त्वा शिरः कम्पविशीर्यमाणबन्धविशरैः उन्मिषत्तड़ित्तन्तुपिङ्गलिम्नो जटासञ्चयस्य रोचिषा सिञ्चन्निव रोषदहनद्रवेण दश दिशः कृतकालसन्निधानामिवान्धकारितललाटपट्टाष्टापदाम्, अन्तकान्तः पुरमण्डनपत्रभङ्गमकरिकां भ्रुकुटिमाबध्नन्,

दृष्ट्वा-इति—स मुनिः तां हसन्तीं वीक्ष्य शापजलं जग्राह इत्यनेनान्वयः। **तथेति**—पादताड़नभ्रुकुटिसंचरणपूर्वकमित्यर्थः। स मुनिः, दुर्वासाः, आः इति क्रोधाभिव्यञ्जकमव्ययम्। पापे, ? पापकारिणि, अनिष्टकर्त्रीत्यर्थः। **दुर्गृहीतेति**। दुर्गृहीतः, दुष्टभावेनाभ्यस्तः, यः, विद्यालेशः, (अत्यल्पविद्येतिभावः) तेन यः, अवलेपः, अहंकारः, तेन दुर्विदग्धा, दुर्विनीता तत्सम्बुद्धौ, दुर्विदग्धे ? मामपि, लोकत्रय प्रसिद्धं दुर्वाससमपीति भावः। उपहससि, हास्यास्पदं विदधासि। इत्युक्त्वा, एवमाभाष्य। **शिरःकम्पेति**—शिरसः, कम्पेन, विधूननेन, विशीर्यमाणाः, विकीर्यमाणाः, ये बन्धविशराः, बन्धनिचयाः, तैः। **उन्मिषदिति**—उन्मिषन्, उद्यन्, तडित्तन्तूनां, विद्युत्स्रजां, पिङ्गलिम्ना, पिङ्गत्वं, पिङ्गलवर्णत्वं यस्य, तथाभूतस्य, जटासंचयस्य, जटानिचयस्य, रोचिषा, कान्त्या "रोचि शोचि रुभे क्लीबे, इत्यमरः।" सिञ्चन्निव, वर्षन्निव, दशदिशः रोषदहनद्रवेण, क्रोधाभिप्रसृतस्वेदेन। **कृतेति**—कृतं, विहितं, कालस्य, यमस्य, कृष्णवर्णस्य वा, सन्निधानम्, उपस्थितिर्यस्यां तथा भूताम्, इव। **अन्धकारितेति**—अन्धकारितं, आकुञ्चनेनदुष्प्रेक्ष्यं, ललाटपट्टमेव, मस्तकप्रदेशमेव, अष्टापदं, सुवर्णं, यया तादृशीं (अनेनभ्रूविक्षेपेणाप्रकाशित स्वरूपेणास्यादर्शनीयत्वंस्पष्टं) **अन्तकेति**—अन्तकस्य, यमस्य, अन्तःपुरं, अवरोधगृहम्, तस्य मण्डनाय, अलङ्करणाय, पत्रभङ्गस्य मकरिकां, पत्रस्य यःभङ्गः, त्रुटनं, तद्वत् मकराकारधारिणीं किसलयमितिभावः। ताम् भ्रुकुटिं, भ्रुविक्षेपं, आबध्नन्। धारयन् अतिलोहितेन, अतिरक्तेन, चक्षुषा, नेत्रेण, अमर्ष-

अतिलोहितेन चक्षुषामर्षदेवतायै रुधिरोपहारमिव प्रयच्छन्, निर्दयदष्ट दशनच्छदोदंतांशुच्छलेनभयपलायमानांवाचमिव रुन्धन्, अंसावस्रंसिनः शापशासनपट्टस्येव ग्रंथन् ग्रन्थिम् अन्यथाकृष्णाजिनस्य, स्वेदकणप्रति बिम्बितैः शापभयात्-शरणागतैरिव सुरासुरमुनिभिः प्रतिपन्नसर्वावयवः कोपकम्पतरलिताङ्गुलिनाकरेण प्रसादनलग्नामक्षरमालामिवाक्षमाला-माक्षिप्य कामण्डलवेन वारिणा समुपस्पृश्य शापजलं जग्राह।

देवतायै,अमर्षः, क्रोधः, तस्याधिष्ठात्री या देवता तस्यै। रुधिरोपहारमिव, रक्तपूजासाधनमिव, प्रयच्छन्, अर्पयन्। **निर्दयेति**। निर्दयं, दयारहितं, यास्यास्तथा दष्टः, दंशितः, दशनच्छदः, ओष्ठः, (दन्तानिदशदयति, आवृणोति,-इति दशनच्छदः) येन तथाभूतः, दन्तांशुच्छलेन, दन्तकिरणव्याजेन भयपलायमानां, भयात् (शाप) देशान्तरंगम्यमानां, इव, वाचं, रुन्धन्, अवरोधयन्। **अंसेति**—अंसस्रंसिनः, स्कंधावलम्बिनः, कृष्णाजिनस्य, मृगचर्मणः, शापस्य, यःशासनपट्टः, फलकं, तमिव, तस्य ग्रन्थिं, बंधनं, अन्यथा, वैपरीत्येन, ग्रन्थन्, बन्धन्। (शापशासनं हि स्वभाव शुक्लंलिपि कृष्णं च भवति अत्रापि श्वेतकृष्णवर्णस्य कृष्णाजिनस्यसाम्यत्वात्, (उत्प्रेक्षालंकारः) **स्वेदेति**—स्वेद कणेषु, क्रोधोद्भवेषुघर्मबिन्दुषु, प्रतिविम्बितैः, प्रतीयमानैः, प्रतिपन्नसर्वावयवः, प्रतिपन्नानि, स्फुटिभूतानि, सर्वाणि, समग्राणि, अवयवानि, देह भागानि, येषां तैः शापभयात्, शरणागतैः शरणंप्राप्तैः, सुरासुर मुनिभिः (स्वेदबिन्दुषुदृश्यन्तेहिसर्वे मुनिप्रभृतयः, तत्रोत्प्रेक्षितं कविना यदेते शापभयादस्य शरणमागता-इति) कोपकम्पतरलिताङ्गुलिना, कोपेन, क्रोधेन, यःकम्पः, तेन तरलिताः, प्रचलिताः, अङ्गुलयो यस्य एवं विधेन करेण, हस्तेन। प्रसादनलग्नां, प्रसन्नतायै, लग्नां, आगतां ताम्। अक्षरमालामिव, वर्णावलीमिव (भारतीसंबंधेनैतदुक्तम्) अक्षमालां, रुद्राक्षजपमालां, आक्षिप्य, परित्यज्य, कामण्डलवेन, कमण्डलौभवः कामण्डलवः तेन स्वकरस्थितेनजलपात्रेण,

अत्रान्तरे स्वयम्भुवोऽभ्यासे समुपविष्टा देवी मूर्तिमती पीयूष-फेनपटलपाण्डरं कल्पद्रुमदुकूलवल्कलं वसाना। बिसतन्तुमयेनांशुकेनोन्नतस्तनमध्यबद्धगात्रिकाग्रन्थिः, तपोबलनिर्जितत्रिभुवनजयपताकाभिरिव तिसृभिर्भस्मपुण्ड्रकराजिभिर्विराजितललाटाजिरा, स्कन्धावलम्बिना सुधाफेनधवलेन तपःप्रभावकुण्डलीकृतेन गङ्गास्रोतसेव योगपट्टकेन विरचितवैकक्ष्यका, सव्येन ब्रह्मोत्पत्तिपुण्डरीकमुकुल-

---

वारिणा, जलेन, समुपस्पृश्य, आचम्य शापजलं, जग्राह, गृहीतवान्।

अत्रान्तरे-इति—अत्रान्तरे मूर्तैश्चतुर्भिर्वेदैःसह सावित्रीसमुत्तस्थौ, इत्यनेनान्वयः। स्वयम्भुवोऽभ्याशे, प्रजापतेरन्तिके, समुपविष्टा, स्थिता, देवी, भगवती, मूर्तिमती, (निश्चला इतिभावः) **पीयूषेति**—पीयूषं, अमृतं, तस्य यत् फेनपटलं, फेननिचयं, तद्वत्, पाण्डरं, शुभ्रम्। **कल्पद्रुमेति**—कल्पद्रुमस्य, सुरतरोः, दुकूलं, वसनं, इव, तरुवल्कलं, छालं, वसाना, वस्त्ररूपेणाधारयन्तीत्यर्थः। बिसतन्तुमयेन, कमलतन्तुनिर्मितेन, अंशुकेन, सुविमलवस्त्रेण। **उन्नतेति**—उन्नतयोः, प्रवृद्धयोः स्तनयोः, कुचयोः, मध्ये बद्धा, गात्रिकाग्रन्थिः, बन्धनविशेषः, यया (सच स्वस्तिकाकारःस्तनोद्देशेभवतिस्त्रीणां) **तपोबलेति**—तपसां, चान्द्रायणादिव्रतानां, बलेन, निर्जितस्य, नितरांवशीकृतस्य, त्रिभुवनस्य, जयपताकाभिरिव, जयध्वजैरिव, तिसृभिः, भस्म पुण्ड्रक राजिभिः, भस्मतिलकैः, विराजितललाटाजिरा, विराजितं, शोभितं, ललाटाजिरं, ललाटाङ्गणं, यस्याः तथाभूता। **स्कन्धेति**—स्कन्धौ, अंसौ, तदवलम्बिना, तत्संलग्नेन, सुधाफेनधवलेन, अमृतफेन पाण्डरेण, तपः प्रभावकुण्डलीकृतेन, तपसां प्रभावेन, बलेन, कुण्डलीकृतेन, कुण्डलवत् वर्तुलाकारेण। योगपट्टकेन, तदाख्य उपवीताकारेण, वसनेन, विरचित वैकक्ष्यका, "तिर्यग्वक्षसि विक्षिप्तं वैकक्ष्यकमुदाहृतम्"। विरचितं, निर्मितं, वैकक्ष्यकं, कुक्षौनिहित तिर्यग्हारविशेषः, यया, सव्येन, वामेन, ब्रह्मोत्पत्तिपुण्डरीकमुकुलमिव, ब्रह्मणः उत्पत्तिःयस्मात् तत्पुण्डरीकं, श्वेतपद्मं,

मिव स्फटिककमण्डलुं करेण कलयन्ती, दक्षिणमक्षमालाकृतपरिक्षेपम्, कम्बुनिर्मितोर्मिकादन्तुरितं तर्जनतरलिततर्जनीकम्, उत्क्षिपन्तीकरम्, आः पाप ? क्रोधोपहत ? दुरात्मन् ? अज्ञ ? अनात्मज्ञ ? ब्रह्मबन्धो ? मुनिखेटकापसदनिराकृत ? आत्मस्खलितविलक्ष ? कथं सकल सुरासुरमुनिमनुजवृन्दवन्दनीयांत्रिभुवनमातरं भगवतीं सरस्वतीं शप्तुमभिलपसि ? इत्यभिदधाना, रोषविमुक्तवेत्रासनैरोङ्कारमुखरितमुखैः

तस्य मुकुलमिव, कुड्मलमिव, स्फटिकं शुभ्रं कमण्डलुं, जलपात्रं, करेण, हस्तेन, कलयन्ती, धारयन्ती। दक्षिणमक्षमालाकृतपरिक्षेपम्, दक्षिणेन, दक्षिण करेण, अक्षमालया, रुद्राक्षजपमालया, कृतः परिक्षेपः, वेष्टनं, यस्य-च तम्। कम्बुनिर्मितोर्मिकादंतुरितं, कम्बुः, शंखः, तेन निर्मिता, या उर्मिका, अङ्गुलीयकं, तेन दंतुरितः, दशनवत्कृतः, (युक्त इतियावत्) तम् तर्जनं, भर्त्सनं, तरलिता, प्रचलिता, तर्जनी, तर्जनाङ्गुलीयकं, करं हस्तं, उत्क्षिपन्ती, ऊर्ध्वाधोनयन्ती। आः पाप ! अनात्मज्ञ ! आत्मानं न विजानाति, इति, अनात्मज्ञः, तत्सम्बुद्धौ। ब्रह्मबन्धो ! निकृष्टब्राह्मण !, मुनिखेटक !, मुनिषु ये खेटकाः, अधमाः, तेषु अपसदाः, नीचाः, तैः निराकृतः धिक्कृतः, तत्सम्बुद्धौ (नीचकृत निरादर इतिभावः) **आत्मस्खलितेति**—आत्मनः, स्वस्य, स्खलितं, दोषः (विस्वरपाठजनितमित्यर्थः) तेन विलक्षः, लज्जितः, तत्सम्बुद्धौ। **सकलेति**—सकलैः, सर्वैः, सुरासुरमुनिमनुजवृन्दैः, समूहैः, वन्दनीयां, पूज्यां, त्रिभुवनमातरं, जननीं, भगवतीं, कल्याणकारिणीं, सरस्वतीं, वाग्देवीं, कथं शप्तुमभिलषसि, इच्छसि। इत्यभिदधाना, कथयन्ती। **रोषेति**—रोषेण, क्रोधेन, विमुक्तानि, त्यक्तानि, वेत्रासनानि, वेतसनिर्मितानि आसनानि, यैः तथाभूतैः। ओङ्कारेण, प्रणवेन, मुखरितं, ध्वनितं मुखं, येषां तैः (सततं, ओं ओं, इत्येवमुच्चरद्भिरित्यर्थः) **उत्क्षेपेति**—उत्क्षेपेण-उत्थानेन, दोलायमानैः, प्रकम्पमानैः, (चलद्भिरित्यर्थः)

उत्क्षेपदोलायमानजटाभारभरितशिरोभिः परिकरबन्धभ्रमितकृष्णा-जिनच्छायाश्यामायमानदिवसैः, अमर्षनिश्वासदोलाप्रेङ्खोलितब्रह्मलोकैः सोमरसमिव स्वेदविसरव्याजेनस्रवद्भिः-अग्निहोत्रपवित्रभस्मस्मेरलला-टैः कुशतन्तुचारुचामरचीरचीवरिभिः—आषाढिभिः प्रहरणीकृत-दण्डकमण्डलुमण्डलैः मूर्तैश्चतुर्भिर्वेदैः सह वृषीमपहाय सावित्री समु-त्तस्थौ। ततो मर्षय भगवन् ? अभूमिरेषा शापस्य इत्यनुनाथ्यमानोऽपि-

---

जटाभारैः, जटासमूहैः, भरितानि, पूरितानि, शिरांसि, येषां तैः।

परिकरेति—परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तेन, भ्रमितं, आवर्तितं, यत्, कृष्णाजिनं, मृगचर्म, तस्य छायया, प्रभया, श्यामायमानाः, कृष्णत्वमापद्यमानाः, दिवसाः, अहानि, यैः, तथाभूतैः। **अमर्षेति**—अमर्षेण, कोपेन, यः निश्वासः, श्वसनम्, तदेव दोला, दोलनयंत्रं (पूरकरेचनभयरूपत्वान्निश्वासस्येत्यर्थः) तेन प्रेङ्खोलितः, प्रकम्पितः, ब्रह्मलोकः, यैः तथाभूतैः सोमरसमिव, सोमलतारसमिव, स्वेदविसरव्याजेन, घर्मप्रसरच्छलेन, स्रवद्भिः, क्षरद्भिः,। **अग्निहोत्रेति**—अग्निहोत्रस्य, होमस्य, पवित्रं, शुद्धं यद् भस्म, तेन स्मेराः, विकसिताः, ललाटाः, मस्तकानि, येषां तैः। **कुशेति**—कुशानां, दर्भानां, तन्तवः, सूत्राणि, एव चारूणि, मनोहराणि, चामराणि, व्यजनविशेषाणि, तथा, चीराणि, वस्त्राणि, चीवराणि, कौपीनानि, येषां तथोक्ताः, तैः आषाढिभिः, पालाशदण्डधारिभिः "आषाढ संज्ञो दण्डस्तु पालाशो व्रतचारिणाम्" ब्रह्मचारिभिः। प्रहरणीकृताः, प्रहरणाय उत्थापिताः (क्रोधादित्यर्थः) दण्डाः, पालाशाः, कमण्डलुमण्डलानि, कमण्डलुसमूहाः यैः। मूर्तैः देहधारिभिः, चतुर्भिर्वेदैः, सह वृषीम्, आसनं, "व्रतीनामासनंबृषी, इत्यमरः" अपहाय, त्यक्त्वा, सावित्री समुत्तस्थौ, उत्थिता। ततो मर्षय इत्यतः तच्छापोदकं विससर्ज इत्यनेनान्वयः। ततः, तस्मादनंतरं, मर्षय, क्षमस्व, एषा सरस्वती, शापस्य, अभूमिः, अस्थानं (अयोग्येतिभावः) एवं, विबुधैः, विद्वद्भिः, अनु

विबुधैः-उपाध्याय ? स्खलितमेकं क्षमस्वेतिबद्धाञ्जलिपुटैः प्रसाद्यमानोऽपिस्वशिष्यैः, पुत्र ? माकृथास्तपसः प्रत्यूहमितिनिवार्यमाणोऽप्यत्रिणा, रोषावेशविवशो दुर्वासा दुर्विनीते ? व्यपनयामि ते विद्यालवावलेप विशेषजनितामुन्नतिमिमाम् , अधस्ताद्गच्छमर्त्यलोकम् . इत्युक्त्वा तच्छापोदकं विससर्ज । ततः प्रतिशापदानोद्यतां सावित्रीं सखि ? संहर रोषम् , असंस्तुतमतयोऽपि जात्यैव द्विजन्मानोमाननीयाः इत्यभिदधाना सरस्वती एव न्यवारयत् । अथतां तथा शप्तां सरस्वतीं दृष्ट्वा पितामहोभगवान् कमलोत्पत्तिलग्नमृणालसूत्रामिव धवलयज्ञोपवीतिनीं-

---

नाथ्यमानः, प्रसाद्यमानः । उपाध्याय ? आचार्य ?, स्खलितं, अपराद्धम्, एकम् । बद्धाञ्जलिपुटैः, बद्धानि, अञ्जलिपुटानि, यैः एवंभूतैः स्वशिष्यैः, प्रसाद्यमानोऽपि, प्रसन्नतांनीयमानोऽपि । पुत्र ? तपसः, प्रत्यूहं, विघ्नं, माकृथाः, माकुरु,(शापदानेन तपसः नाशसंभवादित्यर्थः) एवं अत्रिणा स्वपित्रा, महातपसा, निवार्यमाणोऽपि वर्जितोऽपि । रोषस्य, कोपस्य, यः, आवेशः तेन विवशः, पराधीनः, दुर्वासाः, दुर्विनीते? दुष्टे ! ते, तव, विद्यालवः, विद्यालेशः, (स्वल्पमात्र विद्याधारिणीत्यर्थः,) तेन यः, अवलेपः, गर्वः, तज्जनितां, तदुत्पन्नाम् , उन्नितिमिमाम् , व्यपनयामि, दूरीकरोमि । अधस्ताद् , नीचैः मर्त्यलोकं, गच्छ, व्रज, । इत्युक्त्वा, एवमुक्त्वा, तत्-शापोदकं, पूर्वगृहीतशापजलं विससर्ज, त्यत्याज । ततः, शापदानानन्तरं, प्रतिशापदानोद्यतां, शापप्रतिकारकरणायोत्थितां, सावित्रीं, स्वसखीं, सखि ? संहर रोषम्, कोपं माकुरु । **असंस्तुतेति**—न संस्तुता, असंस्तुता, अविशुद्धा, मतिः बुद्धिः, येषां ते, असंस्कृतमतयः, इतिभावः (अपि) जात्यैव, द्विजन्मानः, ब्राह्मणाः, माननीयाः, पूजार्हाः । इत्यभिदधाना, कथयन्ती, सरस्वती एव न्यवारयत् न्यषेधयत् । अथेत्यादितःपितामहः, सुधीरमुवाच इत्यनेनान्वयः । **तथेति**—तेन प्रकारेण, (निर्दोषां सरस्वतीमित्यभिप्रायः) शप्तां सरस्वतीं, स्वपुत्रीं, दृष्ट्वा, अवलोक्य, पितामहः, ब्रह्मा, कमलोत्पत्तिः, कमलात् , नारायणनाभिपद्मात् , यद् , उत्पत्तिः, जन्म, तथा

तनुमुद्वहन्, उद्गच्छदच्छांगुलीयकमरकतमयूखलताकलापेन त्रिभुवनोपप्लवप्रशमकुशापीड़धारिणेव दक्षिणेन करेण निवार्य शापकलकलम्, अतिविमलदीर्घैर्भाविकृतयुगारम्भसूत्रपातमिव दिक्षुपातयन् दशन किरणैः सरस्वतीप्रस्थानमङ्गलपटहेनेवपूरयन्नाशाः स्वरेणसुधीरमुवाच-ब्रह्मन् ? न खलु साधु सेवितोऽयं पन्थाः येनासिप्रवृत्तः, निहन्त्येषपुरस्तात्। उद्दामप्रसृतेन्द्रियवाजि समुत्थापितं हि रजः कलुषयति

कारणभूतया, लग्नं, संसक्तं, मृणालसूत्रं, कमलतन्तु, इव यज्ञोपवीतिनीं, ब्रह्मसूत्रयुक्तं, तनुं, शरीरं, उद्वहन्, धारयन्। **उद्गच्छदिति**—उद्गच्छत्, उदयमानः, अच्छस्य, शुभ्रस्य, अङ्गुलीयकमरकतस्य (मरकतमणिर्निर्मिताङ्गुलीयकस्येत्यर्थः) मयूखलताकलापः, किरणनिचयः, यस्मात्, तथाभूतेन। त्रिभुवनस्य, त्रिलोकस्य, यः उपप्लवः, संक्षयः तस्य प्रशमाय, शान्तिकरणाय, कुशापीडं, दर्भतन्तुसमूहं, धारयतीति, तथोक्तेनेव (माङ्गलिकत्वं हि कुशानाममङ्गलनाशायेत्यर्थः) दक्षिणकरेण, हस्तेन, शापकलकलं, शापजनितकोलाहलं, निवार्य, दूरीकृत्य। अतिविमलैः अतिशुभ्रैः, भाविनः, भविष्यतः, कृत युगारम्भस्य, सत्ययुगस्य, आरम्भे, पूर्वरूपे, यः, सूत्रपातः, विन्यासः, तमिव, दिक्षु, दिग्भागेषु, दशनकिरणैः, दन्तमयूखैः, पातयन्, निक्षेपयन्, **सरस्वतीति**—सरस्वत्याः, वाग्देव्याः, (शप्तायाः-इतियावत्) यत् प्रस्थानं, ब्रह्मलोकात् मर्त्यलोकगमनं, तस्य यः मङ्गलपटहः, माङ्गलिकवाद्यविशेषः। तेनेव, आशाः, दिशाः, पूरयन्, स्वरेण, शब्देन, सुधीरं, गम्भीरं यथास्यात्तथा, उवाच, उक्तवान्। **ब्रह्मनिति**-ब्रह्मन्, न खलु साधुसेवितोऽयं पंथाः, साधुभिः, सज्जनैः, नहि मार्गमिदं सेव्येत, येनासिप्रवृत्तः, येनपथाभवान् प्रचलितुमुद्यतः। निहन्त्येषः, एषःपन्थाः, मार्गः, पुरस्तात्, अग्रतः, निहन्ति (गच्छन्तमितिभावः) **उद्दामेति**—उद्दामं, उद्धतं, यथा तथा, प्रसृतानि प्रवृत्तानि, इन्द्रियाण्येव, वाजिनः, अश्वाः, तैः समुत्थापितं, समुद्धतं, रागः,

दृष्टिमनक्षजिताम्। कियद्दूरं वा चक्षुरीक्षते। विशुद्धया हि धिया पश्यन्ति कृतबुद्धयः, सर्वानर्थानसतः सतो वा। निसर्गविरोधिनी चेयं पयः पावकयोरिव धर्मक्रोधयोरेकत्रवृत्तिः। आलोकमपहाय कथं तमसि निमज्जसि। क्षमा हि मूलं सर्वतपसाम्। परदोषदर्शनदक्षा दृष्टिरिव कुपिता बुद्धिर्न ते आत्मरागदोषं पश्यति। क्व महातपोभारवैवधिकता। क्व पुरोभागित्वम्। अनिरोषणश्चक्षुष्मानन्ध एव जनः। नहि कोपकलुषिता विमृशति मतिः कर्तव्यमकर्तव्यं वा। कुपितस्य हि प्रथममन्धका-

"धूलिश्च" अनक्षजिताम्, अक्षाणि, इन्द्रियाणि, जयन्तीति अक्षजितः ते न सन्तीति अनक्षजिताः, तेषां, अजितेन्द्रियाणाम्, दृष्टिं, नेत्रं "ज्ञानंच" कलुषयति, मलिनयति। कियद्दूरं वा चक्षुरीक्षते, कियद्दूरं हि दृश्यते चक्षुषा। (अल्पमेवेतिभावः) कृतबुद्धयः, संस्कृतमतयः, विशुद्धया हि धिया, परिशुद्धमतिना, सर्वान्, अनर्थान्, उत्पातान्, असतः सतो वा, शुभान्यशुभानि वा, पश्यन्ति, अवलोकयन्ति। **निसर्गेति**—निसर्गविरोधिनी, स्वभाववैरिणी, पयः पावकयोः, जलाग्न्योः, इव, धर्मक्रोधयोः, पुण्यपापयोः, एकत्रवृत्तिः, एकत्रावस्थानम्। आलोकमपहाय, आलोकं, प्रकाशं, अपहाय, त्यक्त्वा, कथं तमसि, अन्धकारे, निमज्जसि, पतसि। **परेति**—परस्य, अन्यस्य, दोषदर्शने, दोषावलोकने, दक्षा, चतुरा, दृष्टिरिव, कुपिता, कोपंप्राप्ता, बुद्धिः, मतिः, ते, तव, आत्मरागदोषं, स्वकीयदोषं (आत्मस्खलनमित्यर्थः) न पश्यति। महातपोभारवैवधिकता, महतां, तपसां भारस्य, वैवधिकः, वाही, धर्ता, तस्यभावस्तत्ता क्व। पुरोभागित्वं, दोषैकदर्शित्वं, क्व अनिरोषणः, अनिकोपनः, चक्षुष्मान्, नेत्रसहितः (अपीतिशेषः) जनः, अन्ध एव (ज्ञानशून्यत्वादित्यर्थः) कुपितस्य, क्रोधितस्य, हि, निश्चयेन, (हीतिनिश्चयबोधकमव्ययम्) प्रथमत् विद्या, ज्ञानं, अन्धकारिणी, अन्धकाराच्छन्ना भवति, (ज्ञानशून्या इत्यर्थः) ततः, तदनन्तरं, भ्रुकुटिः, भ्रूभङ्गः (भवतीतिशेषः) आदौ, पूर्वं, इन्द्रियाणि,

रिणी भवति विद्या, ततो भ्रुकुटिः। आदौ इन्द्रियाणि रागः समास्कंदति चरमं चक्षुः। आरम्भे तपो गलति पश्चात्स्वेदसलिलम्, पूर्वमयशःस्फुरति अनन्तरमधरः। कथं लोकविनाशायते विषपादपस्येव वल्कलानि जातानि। अनुचिता खलु-अस्य मुनिवेशस्य हारयष्टिरिव वृत्तमुक्ताचित्तवृत्तिः। शैलूप इव वृथा वहसि कृत्रिममुपशमशून्येन चेतसा तापसाकल्पम् अल्पमपि न ते पश्यामि कुशलजातम्। अनेनातिलघिम्ना-अद्याप्युपर्य्येव सवसे ज्ञानोदन्वतः। न खलु अनेडमूकाः एडा जड़ा वा सर्वे एते महर्षयः। रोपदोषनिषद्ये स्व हृदये निग्राह्ये किमर्थमसि निगृहीतवाननागस्त्रं

रागः, समासक्तिः, लौहित्यं च, समास्कंदति, आश्रयति, चरमं, पश्चात् चक्षुः, नेत्रं, (समास्कन्दतीत्यर्थः) आरम्भे (कोपस्येति भावः) तपोगलति, नश्यति, पश्चात्स्वेदसलिलम्, स्वेदजलम् (कुपितस्यहि स्वेदप्रस्रवणंस्वभावः) पूर्वं, प्राक्, अशयः, अकीर्तिः, अनन्तरं, पश्चात्, अधरः, ओष्ठः, स्फुरति, कम्पते। **कथमिति**—लोकविनाशायः, विषपादपस्येव, विषवृक्षस्येव, ते, तव, वल्कलानि, मुनिवस्त्राणि, (त्वक्रूपाणीतिभावः) जातानि, उत्पन्नानि।

अनुचितेति—अस्य, पुरोदृश्यमानस्य, मुनिवेशस्य, हारयष्टिरिव, मुक्ताहारमिव, वृत्तमुक्ता, सुचरितच्युता, "परिवर्तुल मुक्ताफला च"। अनुचिता, अयुक्ता, चित्तवृत्तिः, मनसङ्कल्पः। **शैलूपेति**—शैलूष इव, नट इव, उपशमशून्येन, शान्तिरहितेन, चेतसा, तापसाकल्पं, मुनिवेशं, कृत्रिमं (नतुयथार्थेनेतिभावः) वृथैव, वहसि, धारयसि, अल्पमपि, किंचिदपि, ते, कुशलजातं, मङ्गलं, न पश्यामि। अनेन अतिलघिम्ना, अतिलाघवेन, अद्यापि, अधुनापि, ज्ञानोदन्वतः, ज्ञानसमुद्रस्य, उपरि एव, प्लवसे, संतरसि (नतु मध्ये प्रविशसीतिभावः) **न खलु, अनेडमूकाः** श्रोतुं वक्तुं चासर्थाः। "कथिता अनेड मूकाः श्रोतुं वक्तुं च खलु न ये शक्ताः। एडास्तुश्रुतिहीनाः जड़ास्तुमूर्खाः बुधैः प्रोक्ताः। एडाः, श्रुतिहीनाः, जड़ाः, मूर्खाः, सर्वे-एते महर्षयः, (पुरः स्थिताः-इतिभावः)

सरस्वतीम्। एतानि तानि आत्मस्खलितवैलक्ष्याणि यैर्याप्यतां याति अविदग्धो जनः, इत्युक्त्वा पुनराह-वत्से सरस्वति? विषादं मागाः।

एषा त्वामनुयास्यति सावित्री। विनोदयिष्यति चास्मद्विरहिताम्। आत्मजमुखकमलावलोकनावधिश्चतेशापोऽयंभविष्यतीति। एतावदभिधाय विसर्जितसुरासुरमुनिमनुज मण्डलः ससम्भ्रमोपगतनारदस्कन्धविन्यस्तहस्तः समुचिताह्निक करणाय-उदतिष्ठत् सरस्वत्यपि

रोषेति—रोषः, क्रोधः, एव दोषः, तस्य, निषीदति-अस्यामिति निषद्या, आपण गृहं, तत्सम्बुद्धौ, (अथवा) रोष, एव दोषः, तस्य निषद्या, आवासः, यत्रतादृशे स्वहृदये, चित्ते, निग्राह्ये, (निग्रहीतुं योग्य-इत्यर्थः) अनागसां, निरपराधाम्, सरस्वतीं, किमर्थनिगृहीतवानसि, शप्तवानसि। **एतानीति**—एतानि, आत्मनः, स्वस्य, स्खलितानि प्रमादाः, तैः, वैलक्ष्याणि, लज्जास्पदानि, (साधुसंसदि मुखावनतिविधायकानीतिभावः) यैः, याप्यतां, गर्हणीयतां, याति, प्राप्नोति, अविदग्धः, अज्ञः, जनः, इत्युक्त्वा, पुनराह, पुनः कथयामास, वत्से? पुत्रि? सरस्वति? विषादं मा गाः, मा दुःखमनुभव,।

एषा त्वां सावित्री अनुयास्यति, अनुगमनं करिष्यति (त्वयासार्धंगमिष्यतीत्यर्थः) अस्मद्विरहितां, वियोगितां, च त्वां, विनोदयिष्यति, सुखयिष्यति। (पुत्र मुखदर्शनपर्यन्तं हि ते शापः) एतावदभिधाय, एवमुक्त्वा, विसर्जितः, प्रेषितः, सुराः, देवाः, असुराः, राक्षसाः, तेषां, मुनिमनुजादीनां च, मण्डलः, समूहो येन, तथाभूतः। ससंभ्रमं, सहसैव, उपगतः, प्राप्तः, नारदः, नारदर्षिः, स्कंधे, अंशप्रदेशे, विन्यस्तः, स्थापितः, हस्तः, करो येन, समुचिताह्निक करणाय, समुचितं, युक्तं, यत्, आह्निकं, दिवसकार्यं (संध्यावंदनादिकमितिभावः) तस्य यत्, करणं, कार्यरूपेण परिणयनं, तस्मै उदतिष्ठत्, उत्थितः। सरस्वत्यपीत्यादितः सावित्र्यासमंगृहमगादित्यनेनान्वयः। शप्ताकिंचिदवनतमुखी, **धवलेति**—धवल कृष्णशारां, धवलः, शुभ्रः, कृष्णः, नीलः, ताभ्यां,

शाप्ता किंचिदधोमुखी धवलकृष्णाशारां कृष्णाजिनलेखामिव तपसेदृष्टि मुरसि पातयन्ती, सुरभिनिःश्वास परिमललग्नैर्मूर्तैः शापाक्षरैरिव षट्चरणाचक्रैराकृष्यमाणाशोकशिथिलितहस्ताधोमुखीभूतेनोपदिश्यमानमर्त्यलोकावतरणमार्गेव नखमयूखजालकेन नूपुररवव्याहार हृतैः भवनकलहंसकुलैःब्रह्मलोकनिवासिहृदयैरिवानुगम्यमाना समं सावित्र्यागृहमगात्। अत्रान्तरे सरस्वत्यवतरण वार्तामिव कथयितुं मध्यमंलोकमवततार अंशुमाली। क्रमेण च मन्दायमाने मुकुलित विसिनी विरह

शारा, शवला, ताम्, शारशवलां (धवलकृष्णामित्यर्थः) (शारग्रहणेन वर्णद्वयप्रतीतिरितिभावः) कृष्णाजिनलेखामिव, कृष्णमृगचर्म श्रेणीमिव, तपसे, तपः कर्तुं: उरसि, हृदये, दृष्टिं पातयन्ती, अवलोकयन्ती।

सुरभितं, सुगन्धितं, यत्-निश्वासं, तस्य परिमलेन, गंधेन, मूर्तैः, देहवद्भिः, लग्नैः, संलग्नैः, शापाक्षरैरिव, शापवर्णैरिव, षट्चरणाचक्रैः, भ्रमरैः, आकृष्यमाणा, आकर्षिता,। शोकेति—शोकेन, शापाद्भवेन दुःखेन, शिथिलितौ, तेजरहितौ, हस्तौ, करौ, यस्याः सा। अधोमुखीभूतेन, अधोमुखतांगतेन, उपदिश्यमानं, उपदेशंदीयमानं, मर्त्यलोकावतरणमार्गा इव, मर्त्यलोके, भूलोके, यद्, अवतरणं, गमनं, तत्रदर्शितमार्गा, इव। नखमयूखा नां, नखकिरणानां, जालकेन, समूहेन। नूपुरयोः रवाः, नूपुराः, पादाभूषणविशेषाः तेषां, रवाः, निस्वनाः, एव व्याहाराः वचनानि, तैः हृताः, आकृष्टाः, भवन कलहंस कुलैः, ब्रह्मसद्म हंससमूहैः, ब्रह्मलोकनिवासीहृदयैः, ब्रह्मलोके, निवासः, स्थितिः, येषां, तेषांहृदयैं चित्तैः, इव, अनुगम्यमाना, अनुकरणं क्रियमाणा (सदैव कृतगमना इत्यर्थः) सावित्र्यासमं, सार्धं, गृहमगात्, सद्मनि गता। अत्रान्तरे, अतः परं, सरस्वत्यवतरण वार्ता कथयितुं, सरस्वत्या यत् अवतरणं, भुःगमनं, तस्य या वार्ता तां, कथयितुं वक्तुं, मर्त्यलोकं, भूलोकं, अंशुमाली, सूर्यः, अवततार, उदयं लेभे। (पूर्वमागमनात् दूता गमनं संभा-

व्यसनविषण्णसरसि वासरे, मधुमदमुदितकामिनीकोपकुटिलकटाक्ष-क्षिप्यमाण इव क्षेपीयः क्षितिधरशिखरमवतरति तरूणतरकपिलपन लोहिते लोकैकचक्षुषि भगवति सवितरि प्रस्नुतमहिष्युधः क्षरत्क्षीरधारा धवलितेषु, आसन्नचन्द्रोदयोद्दामक्षीरोदक्षालितेषु-इव दिव्याश्रमोप-शल्यकेषु-अपराह्णप्रचारप्रचलिते चामरिणि चामीकरतटताडन-

---

व्यमेवेति भावः) क्रमेणेत्यादितः सावित्री सरस्वतीमवादात्, इत्यनेनान्वयः। क्रमेण, क्रमशः, मन्दायमाने, मन्दतांगते, (सूर्ये इतियावत्) मुकुलितानां, संकुचितानां, विसिनीनां, पद्मिनीनां, विरहः, वियोगः, (कान्तस्य सूर्यस्य-विच्छेदादितिभावः) तदेव व्यसनं दुःखं, तेन, विषण्णं, दुःखितं, (निजकन्य-कानामिवपद्मिनीनां दर्शनादितिभावः) सरः, सरोवरं, यस्मिन्, तथाभूते, वासरे, दिवसे, **मधुमदेति**—मधुमदेन, मद्यपानसमुद्भवेनोत्साहेन, मुदिताः, सञ्जातकामाः (संभोगाभिलाषिण्य इतियावत्) याः कामिन्यः, स्त्रियः, तासां कोपेन, (कथमयमधुनापि नास्तमेति अन्तराय भूतः, इति क्रोधेन) कुटिलः, वक्रः, यः कटाक्षः, तिर्यगीक्षणं, तेन, क्षिप्यमाण इव, प्रक्षिप्त इव, क्षेपीयः, अतिक्षिप्रं, अतिसत्वरं, क्षितिधरशिखरं, अस्ताचलप्रदेशं, अवतरति, अवतीर्यमाणे, **तरूणेति**—तरूणतरः, अतियुवा, यः कपिः, वानरः, तस्य यत्, लपनं, मुखं, तद्वत् लोहितः, रक्तवर्णः, तस्मिन्, लोकैकचक्षुषि, लोकानां, जगतां, एकं, अद्वितीयं चक्षुः, नेत्रं, तस्मिन्, भगवति, कल्याणकरे, सवितरि, सूर्ये। **प्रस्नुतेति**—प्रस्नुतात्, प्रस्रवणात्, महिष्याः, ऊधसः, स्तनात्, क्षरन्ति, यानि क्षीराणि, दुग्धानि, तेषां, धारावत्, स्रोत इव, धवलितानि, शुभ्रवर्णानि, तेषु। **आसन्नेति**—आसन्नः, पार्श्ववर्ती, यश्चन्द्रोदयः, तेन, उद्दामः, उच्छलितः, यः, क्षीरोदः, समुद्रः, तेन क्षालितानि, धौतानि, तेषु, इव। दिव्याश्रमोपशल्यकेषु, दिव्याः, भव्याः, ये आश्रमाः, तेषां उपशल्य-कानि, प्रान्तभागानि, तेषु। अपराह्णे, द्वितीय प्रहरे, यः प्रचारः, प्रकर्षेण

रणितरदने रदति, सुरस्रवन्तीरोधांसि स्वैरमैरावते, प्रसृतानेकविद्याधराभिसारिकासहस्रचरणालक्तकरसानुलिप्त इव प्रकटयति च तारापथे पाटलताम्, तारापथप्रस्थितसिद्धदत्तदिनकरास्तमयार्घ्यावर्जिते रञ्जितककुभि, कुसुम्भभासि स्रवति पिनाकिप्रणति मुदितसंन्ध्यास्वेदसलिल इव

चरणं (पर्यटनमितियावत्) तस्मै प्रचलितः, प्रवृत्तः, तस्मिन्, चामरिणि, चामरयुक्ते। चामीकरस्य, सुवर्णपर्वतस्य (सुमेरोरित्यर्थः) तटेषु, प्रान्तभागेषु, यत्, ताड़नं, वप्रक्रीडाकरणं, तेन, रणिताः, शब्दिताः, रदनाः, दन्ताः, यस्य तथाभूते, रदति, शब्दायमाने, **सुरेति**—सुराणां, देवानां, या स्रवन्ती, मन्दाकिनी, गंगा, तस्याः रोधांसि, तटानि, तत्र, स्वैरं, यथेच्छम्, ऐरावते, (स्वेच्छया विचरणशीले इत्यर्थः) इन्द्रवारणे। **प्रसृतेति**—प्रसृतानां, प्रचलितानां, (कान्तं प्रति अभिसरणायेतिभावः) अनेकासां, बह्वीनां, विद्याधराभिसारिकाणां, विद्याधरसुन्दरीणां, "या दूतिका गमन कालमपाहरन्ती सोढुं स्मर ज्वर भरार्तिपिपासितेव, निर्याति वल्लभ जनाधर पानलोभात्, साकथ्यते कविवरैरभिसारिकेति।" सहस्रस्य, चरणालक्तकरसैः, चरणलाक्षाद्रवैः, अनुलिप्त इव, कृतलेप इव, प्रकटयति! प्रकाशयति, तारापथे, नक्षत्रमार्गे (आकाशे-इति यावत्) पाटलतां, ईषद्रक्ततां, **तारापथेति**—तारापथेषु, गगनमार्गेषु, प्रस्थितैः, प्रचलितैः, सिद्धैः, देवविशेषैः, दत्तानि, अर्पितानि, दिनकराय, सूर्याय, यानि, अस्तमयार्घ्याणि, अस्तसमयार्पितानि, अर्घ्याणि, तेभ्यः, आवर्जितः, युक्तः, तस्मिन्, रञ्जितककुभि, रक्तीकृत दिशि। कुसुम्भानि, कुसुम्भपुष्पाणि, तद्वत्, भाः, कान्तिः, यस्य तादृशे, (रक्तवर्णे इत्यर्थः) स्रवति, क्षरति, सति, पिनाकिने, पिनाकं, धनुः-विद्यतेऽस्य इति पिनाकी, तस्मै शंकराय या प्रणतिः, प्रणामः, तत्र मुदिता, उल्लासिता, या, संध्या तस्याः, स्वेदसलिल इव, धर्मोद्भवजल इव, रक्तचन्दनद्रवे, चन्दनरसे, **वन्दारु-इति**—वन्दारुभिः, वन्दनशीलैः,

रक्तचन्दनद्रवे, वन्दारुमुनिवृन्दारकवृन्दबध्यमानसन्ध्याञ्जलिवने, ब्रह्मोत्पत्तिकमलसेवासमागतसकलकमलाकर इव राजति ब्रह्मलोके, समुच्चारिततृतीयसवनब्रह्मणिब्रह्मणि, ज्वलितवैतानज्वलनज्वालाजटालाजिरेषु, आरब्धधर्मसाधनशिबिरनीराजनेष्विव सप्तर्षिमन्दिरेषु, अघमर्षणमुषितकिल्विषगदोल्लाघलघुषु यतिषु सन्ध्योपासनासीनतपस्विपंक्तिपूतपुलिने लवमानपद्मयोनियानहंसहासदन्तुरोर्मिणि मन्दाकिनीजले,

(पूजनीयैरित्यर्थः) मुनिवृन्दारकाणां, मुनिश्रेष्ठानां, वृन्दैः, समूहैः, बध्यमानं, संयम्यमानं, संध्यायां, संध्यासमये, अञ्जलिवनं, अञ्जलिसमूहः, यस्मिन्, तथाभूते (सन्ध्या समये मुनिभिः क्रियमाणाञ्जलिपुटे-इत्यर्थः) ब्रह्मेति—ब्रह्मणः, प्रजापतेः, उत्पत्तिः, जन्म यस्माद् तत् कमलं (नारायणनाभिकमलमित्यर्थः) तस्य सेवार्थं, समागताः, प्राप्ताः, सकलाः, सर्वे, कमलाकराः, पद्मनिचयाः, यस्मिन्। राजति, शोभमाने, समुच्चारितेति—समुच्चारितं, प्रतिपादितं, तृतीयसवनं, सायंकालिकस्नानं, तत्र, ब्रह्म, वेदो येन तथाभूते ब्रह्मणि, भूदेवे, ज्वलितस्य, प्रदीप्तस्य, वैतानज्वलनस्य, यज्ञाग्नेः, ज्वालाभिः, शिखाभिः, जटालानि, व्याप्तानि, अजिराणि, अङ्गणानि येषां तादृशेषु। आरब्धेति—आरब्धं, कृतारम्भं, धर्मसाधनाय, धर्मसंचयाय, शिबिरस्य, स्कंधावारस्य (सेनानिवासस्थानस्येत्यर्थः) नीराजनं, शांतिकर्म, येषु, तथोक्तेषु, (विघ्नशंकयाकृतशान्तिकर्मष्वित्यर्थः) सप्तर्षिमन्दिरेषु, सप्तर्षिसद्मसु। अघमर्षणेति—अघानि, पापानि, मर्षयति, परिमार्जयति, इति अघमर्षणः वैदिक मंत्रः, तेन मुषितानि, हृतानि, किल्विषाणि, पापानि, गदाः, रोगाश्च, तैः, उल्लाघाः, स्वस्थाः, (नीरोगाः इति यावत्) अतएव लघवः, सुदेहाः, शोभनो देहो, शरीरं, येषां ते सुदेहाः, तेषु यतिषु, ब्रह्मचारिषु। सन्ध्येति—सन्ध्योपासनाय, आसीनानां, उपविष्टानां, तपस्विनां पंक्तिभिः, तापसावलिभिः, पूतानि, पवित्रितानि, पुलिनानि, सैकतानि, यस्य तादृशे। लवमानेति—लव-

जलदेवतातपत्रे पत्ररथकुलकलत्रान्तः पुरसौधे, निजमधुमधुरामोदिनि कृतमधुपमुदि मुमुदिषमाणे कुमुदवने, दिवसावसानताम्यत्तामरसमधुरमधुरसपीतिव्रते सुषुप्सति मृदुमृणालकण्टककण्डूयनकुण्डलितकन्धरे, धुतपक्षराजिवीजितराजीवरजसि, राजहंसयूथे, तटलताकुसुमधूलिधूसरितस-

मानः, संतरन्, यः पद्मयोनेः, प्रजापतेः, यानहंसः, वाहनः, तस्ययदट्टहासः हास्यं तेन दन्तुराः, उत्पन्नदशनाः, इव, उर्म्मयः, तरङ्गाः, यस्य, तथोक्तं। जलदेवतेति—जलदेवतायाः, जलाधिष्ठात्र्यादेव्याः, यत्, आतपत्रं, छत्रं, तस्मिन्, पत्ररथानां, पत्रं, पक्षं, एव, रथं, वाहकं, येषां ते पत्ररथाः तेषां पत्ररथानां, पक्षिणां, कुलं, समूहः, तस्य कलत्राणि, कलेन मधुरशब्देन त्रायते रक्ष्यते याभिस्ता, कलत्राणि स्त्रियः तेषामन्तः पुरस्य सौधं, सद्म, तस्मिन्, निजेति—निजेन, स्वकीयेन, मधुरसेन, मकरन्देन, आमोदते, उल्लसति। मध्विति—मधुना कृतः, मधुपानां, षट्पदानां, मुद्, आनन्दो यत्र तथाभूते, अथवा, निजमधुना, मकरन्देन, मद्येन वा, मधुरः, मनोहरः, आमोदः, उत्साहः, यस्यतथोक्ते, कृता मधुपानां भ्रमराणां, मद्यपानां वा, मुद् यत्र मुमुदिषमाणे, विकाशंप्राप्यमाणे, (पक्षे) मोदितुमिच्छति, इच्छितगानवाद्यादि गोष्ठिगते, कुमुदवने, कमलवने। दिवसेति--दिवसस्य, दिनस्य, अवसानेन, अन्तेन, ताम्यन्ति दुःखमनुभवन्ति, यानि, तामरसानि, रक्तकमलानि, तेषां, मधुरसस्य, सौरभस्य, पीतिः, पानं, तेन, व्रतं, नियमः, यस्य तथाभूते। सुषुप्सति-निद्रामिच्छति, मृद्विति—मृदुना, कोमलेन, मृणालकाण्डस्य, पद्मनालदण्डस्य, कण्टकेन (तृणेनेत्यर्थ) यत् कण्डूयनं, खर्जनं, तेन कुण्डलिता, समीकृता, कन्धरा, ग्रीवा येन तादृशे। धुतेति—धुताभिः कम्पिताभिः, पक्षराजिभिः, पक्षपंक्तिभिः, वीजितं, व्यजनितं, राजीवानां, श्वेतकमलानां, रजः, धूलिः येन तादृशे, राजहंसयूथे, तदाख्यहंससमूहे। तटेति—तटेषु, प्रान्तभागेषु, याः, लताः, वल्लर्यः, तासां, कुसुमानि, पुष्पाणि, तेषां, धूलिभिः, रजोभिः, धूस-

रिति सिद्धपुरपुरन्ध्रिधम्मिल्लमल्लिकागन्धग्राहिणि सायन्तने तनीयसि निशानिःश्वासनिभे नभस्वति, सङ्कोचोदञ्चदुच्चकेसरकोटिसङ्कटकुशेशयकोशकुटीकुटिलशायिनि षट्चरणचक्रे, नृत्योद्धूतधूर्जटिजटाटवीकुटजकुड्मलनिभे नभस्तलं स्तवकयति तारागणे, सन्ध्यानुबन्धताम्रे परिणमत्तालफलत्विषि कालमेघमेदुरे, मेदिनीं निमीलयति नववयसि तमसि तरुणतरतिमिरपटलपाटनपटीयसि

रिताः, धूसरवर्णतांनीताः, सरितः नद्यः येन तथाभूते। **सिद्धेति**—सिद्धानां, देवयोनिविशेषाणां, पुरे, नगरे, याः पुरन्ध्र्यः, स्त्रियः, तासां, धम्मिल्लेषु, संयतकेशेषु, याः, मल्लिकाः, मल्लिकापुष्पाणि, तेषां गंधग्राही, गंधं, सौरभं, गृह्णाति स्वीकरोति-इति गंधग्राही, तस्मिन्, सायन्तने, सायंकालभवे। **तनीयसीति**—तनीयसि, सुक्ष्मे (मंदसंचारिणीत्यर्थः) निशा निः श्वासनिभे, निशा, रात्रिः (नायिकेतिभावः) तस्याः निश्वासं, श्वसनं तन्निभे, तत्सदृशे, नभस्वति, आकाशे। प्रायेणात्र उत्प्रेक्षाऽलंकारः। **सङ्कोचेति**—सङ्कोचे, निमीलने, उदञ्चताम् उद्गच्छताम्, उच्चकेसराणां, किञ्जल्कानां, कोटिभिः, अग्रभागैः, सङ्कटानि, व्याप्तानि, यानि कुशेशयानि, पद्मानि, तेषां कोशाः, आभ्यन्तरभागाः, एव कुट्यः, कुटीराणि (क्षुद्रसद्मानीत्यर्थः) तेषु कुटिलं, यथा तथा शायिनि, शयनशीले, षट्चरणचक्रे, भ्रमरसमूहे,। **नृत्येति**—नृत्येषु, नर्तनेषु, उद्धूतानि, उत्पन्नानि, धूर्जटेः, शंकरस्य, जटाऽटव्याः, जटा एव अटवी, अरण्यं, तस्मात् जटाजूटात्, कुटजानां, गिरिमल्लिकापुष्पाणां, कुड्मलानि, कोरकाणि, तन्निभे, तत्सदृशे। नभस्तलं, आकाशं, स्तवकयति, (पुष्पगुच्छमिवाचरतीत्यर्थः) तारागणे, नक्षत्र मण्डले। **सन्ध्येति**—संध्यायाः अनुबंधेन, अनुगमनेन, ताम्रं, रक्तवर्णं, तस्मिन्, अत एव, परिणमत्, पक्वावस्थां प्राप्तं यत् तालफलं, तस्य, त्विट्, इव, त्विषः, प्रभाः यस्य, तादृशे, कालमेघमेदुरे, कालमेघः, कृष्णवर्णमेघः, तद्वत् मेदुरः, चिक्कणः, तस्मिन्, मेदिनीं, पृथ्वीं,

समुन्मिषति, यामिनीकामिनीकर्णपूरचम्पककलिकाकदम्बके प्रदीपप्रकरे, प्रतनुतुहिनकिरणकिरणलावण्यालोकपाण्डुन्याश्यानलीनीरमुक्तकालिन्दीकूलबालपुलिनायमाने शातक्रतवे कृशयति तिमिरमाशामुखे, खमुचि मेचकितविकचितकुवलयसरसि, शशधरकरनिकरकचग्रहा-

निमीलयति, आच्छादयति, नववयसि, (सद्योत्पन्ने-इत्यर्थः) तमसि, अन्धकारे, तरुणेति—तरुणतराणां, पक्ववयसां, तिमिरपटलानां, अन्धकारचयानां, पाटने, दूरीकरणे, पटीयान्, चतुरः, तस्मिन्, समुन्मिषति, ज्वलति (ईषत्प्रकटतां गते-इत्यर्थः) यामिनीति—यामिनी, रात्री एव, कामिनी, स्त्रीः, तस्याः, कर्णपूरः, अवतंसः, एव चम्पकस्य, चम्पकाख्य पुष्पस्य, कलिकायाः, डोडिकायाः, कदम्बकं, गुच्छं, तस्मिन्, (तत्सदृशेतिभावः) प्रदीपप्रकरे, प्रदीपसमूहे, प्रतन्विति—प्रतनुभिः, अत्यल्पैः, तुहिनकिरणस्य, चन्द्रस्य, किरणानां, रश्मीनां, यत्, लावण्यं, चारुत्वं, तस्य, आलोकैः, प्रकाशैः, तैः, पाण्डुनि ईषद्पीते, तस्मिन, आश्यानम्, ईषत्शुष्कम्, नीलनीरैः, कृष्णजलैः, मुक्तं, त्यक्तं, कालिन्दीकूलस्य, यमुनातटस्य, बालपुलिनं, सद्योत्थितसैकतं, (तद्वदाचरतीति तादृशे) शतानि क्रतवः, यज्ञाः, यस्य सः, शतक्रतुः, इन्द्रः, तस्येदं, (अथवा) स अधिष्ठाता, यस्य तत् शातक्रतवं, ऐन्द्रं, तस्मिन्, कृशयति, कृश्यतांनयति, (खण्डयतीतिभावः) तिमिरं, अंधकारं, आशामुखे, दिग्भागे, खमुचि, खं, आकाशं, मुञ्चति त्यजति तथाभूते (आकाशंपरित्यज्यभूमण्डलमाच्छादयतीतिभावः) मेचकितेति—मेचकितं, स्निग्धतांनीतं, विकचितानां, विकशितानां, कुवलयानां, नीलोत्पलानां, सरः, सरोवरं, येन तथाभूते, शशधरेति—शशधरस्य, चन्द्रस्य, करनिकरैः, किरणसमूहैः, (हस्तैरित्यर्थः) यः कचग्रहः, केशग्रहणं, तेन आविलं, मालिन्यं, म्लानतां, नीतं, प्राप्तं, तस्मिन्, अत एव विलीयमाने, निलयंप्राप्यमाणे, (अन्योऽपिकेशाकर्षणेनावनतमुखोलज्जया अदर्शनं गच्छतीत्यर्थः) मानिनीनां, मानवतीनां,

विले विलीयमाने मानिनीमनसीव शर्वरीशवरीचिकुरचये चापपक्षत्विषि तमस्युदिते भगवत्युदयगिरिशिखरकुहरहरिखरनखरनिवहहेतिनिहतनिज-हरिणगलगलितरुधिरनिचयनिचितमिव लोहितं वपुरुदयरागधरम-धरमिव विभावरीवध्वा धारयति श्वेतभानौ, अचलच्युतचन्द्रकान्तजल-धाराधौत इव ध्वस्ते ध्वान्ते, गोलोकगलितदुग्धविसरवाहिनि दन्तमयम-करमुखमहाप्रणाल इवापूरयितुं प्रवृत्ते पयोधिमिन्दुमण्डले, स्पष्टे प्रदोष

(कान्तं प्रतिकुपितानामित्यर्थः) नारीणां, स्त्रीणां, मनसीव, चित्तइव, शर्वर्यां, रात्रौ, शबरीणां, शबरस्त्रीणां, चिकुरचये, केशसमूहे, चापपक्षत्विषि, चाषोनाम पक्षिविशेषः, तस्य पक्षवत्, त्विषः, कान्त्यः, यस्य तादृशे, तमसि, अंधकारे, उदिते, प्रादुर्भूते, उदयगिरीति—उदयगिरेः, उदयाचलस्य, शिखरेषु, प्रान्तभागेषु, यानिकुहराणि, गह्वराणि, तेषु ये हरयः सिंहाः, तेषां, खराः, तीक्ष्णाः, ये नखाः, तेषां ये नखरनिवहाः, तीक्ष्णनखसमूहाः, एव हेतयः, अस्त्राणि, तैः निहतः, मारितः, यो निजहरिणः, स्वोत्सङ्गागतमृगः, तस्यगलात्, कण्ठ-देशात्, गलितैः, च्युतैः, रुधिरनिचयैः, रक्तसमूहैः, तैः, निचितमिव, व्याप्त-मिव, अत एव लोहितं, रक्तम्, वपुः, शरीरं, उदयरागधरं, उदयसमये योरागः, लौहित्यं तं धरतीतिधरं, अधरं, ओष्ठं, इव, विभावरीवध्वा, विभा-वरी, रात्रिः, एव, वधूः, वधूटी, तस्याः, श्वेतभानौ, चन्द्रमसि धारयति। अचलेति—अचलात्, पर्वतात्, च्युतानां, पतितानां, चन्द्रकान्तानां, चन्द्र-कान्तमणीनां, जलधाराभिः, जलस्रोतैः, धौतमिव, प्रक्षालितमिव, ध्वान्ते, अन्धकारे, गोलोकेति–गोलोकात्, गोस्थानात्, (गोष्ठादित्यर्थः) मयूखसमूहाद्वा, गलितान्, निःसृतान्, दुग्धविसरान्, दुग्धप्रस्रवान्, वहति, धारयति, तथा-भूते। दन्तमयं, गजदंतनिर्मितं यत् मकरमुखं, मकराननं, (मकरःजल-जलजन्तु विशेषः) तदेव महान् प्रणाल, जलनिष्कामन वर्त्म, तस्मिन्निव, पूरयितुं, भरितुं, प्रवृत्ते, सन्नद्धे, पयोधिं, समुद्रं, एवंभूते, इन्दुमण्डले, चन्द्र-

समये सावित्री शून्यहृदयामिव किमपि ध्यायन्तीं सास्रां सरस्वतीमवादीत् सखि, त्रिभुवनोपदेशदानदक्षायास्तव पुरो जिह्वा जिह्रेति मे जल्पन्ती। जानासि एव यादुर्वश्याः विसंष्ठुलाःगुणवत्यपि जने दुर्जनवन्निर्दाक्षिण्याः क्षणभङ्गिन्यो दुरतिक्रमणीया न रमणीया दैवस्य वामा वृत्तयः निष्कारणा च निकारकणिकापि कलुषयति मनस्विनोऽपि मानसमसदृश जनादापतन्ती। अनवरतनयनजलसिच्यमानश्च तरुरिव विपल्लवोऽपि सहस्रधा प्ररोहति।

मण्डले, स्पष्टे प्रदोष समये, जातप्रदोषकाले, सावित्री शून्यहृदयामिव, रिक्तचित्तामिव, किमपि ध्यायन्तीं, विचारयन्तीं, सास्रां, अश्रुमुखीं सरस्वतीं, अवादीत, अकथयत्।

सखि? त्रिभुवनोपदेशदानदक्षायाः, भुवनत्रय उपदेशदाने, दक्षायाः, चतुरायाः, तवपुरः, अग्रे, जल्पन्ती, कथयन्ती, मे, मम, जिह्वा, रसना, जिह्रेति, लज्जते। दुर्वश्याः, परवश्यतां आपादयितुमशक्याः, विसंष्ठुलाः, मर्यादा रहिताः, गुणवत्यपिजने, दुर्जनवत, निर्दाक्षिण्याः, निष्ठुराः, क्षणभंगिन्यः, नष्टप्रायाः, दुरतिक्रमणीयाः, दुःखेनातिक्रमितुशक्याः, न रमणीयाः, अमनोज्ञाः, दैवस्य, भाग्यस्य, (अदृष्टस्येतियावत) वामाः, कुटिलाः, (विरुद्धाः) वृत्तयः व्यवहाराः, "दुर्जनवद्गुणवत्यपिजने पतन्त्यवं, जानास्येव, इतिपूर्वेणा न्वयः", निष्कारणा, कारणरहिता निकारकणिका, निकारः, तिरस्कार,ः (धिक्कारइत्यर्थः) तस्य कणिका अपि, लेशमात्रमपि (अपीति संभावनायाम्) असदृशजनात्, अयोग्यजनात, आपतन्ती, मनस्विनः, श्रेष्ठजनस्य, मानसं, चित्तं, कलुषयति, व्यथयति। **अनवरतेति**—अनवरतं, निरंतरं, नयनजलेन, अश्रुजलेन, सिच्यमानः, तरुरिव, वृक्षमिव, विपत्, आपत्, तस्य लवः, लेशः, (पक्षे) पत्रशून्यश्च, सहस्रधा, सहस्ररूपेण, प्ररोहति, बर्धते।

संतापपरमाणवः, दुःखलेशाः, सम्यक् तापःसंतापः, उष्णत्वं, च,

अतिसुकुमारं च जनं संतापपरमाणवो मालतीकुसुममिव म्लानिमानयन्ति। महतां चोपरि निपतन्नणुरपि सृणिरिव करिणां क्लेशः कदर्थनायालम्। सहजस्नेहपाशग्रन्थिबन्धनाश्च बान्धवभूता दुस्त्यजा जन्मभूमयः। दारयति दारुणः क्रकचपात इव हृदयं संस्तुतजनविरहः। सा नार्हस्येवं भवितुम्। अभूमिः खल्वसि दुःखक्ष्वेडांकुरप्रसवानाम्। अपि च पुराकृतेकर्मणि बलवति शुभेऽशुभे वा फलकृति तिष्ठत्यधिष्ठातरि प्रष्ठे पृष्ठतश्च कोऽवसरो विदुषि शुचाम्।

इदं च ते त्रिभुवनमङ्गलैककमलममङ्गलभूताः कथमिव मुखमपवि-

मालतीकुसुममिव, मालतीपुष्पमिव, अतिसुकुमारं जनं, कोमलं जनं, म्लानिमानयन्ति, दुःखयन्ति,। अणुरपि, अणुमात्रमपि, क्लेशः, दुःखं, सृणिरिव, अंकुश इव, करिणां हस्तिनां, कदर्थनाय, पीड़नाय, महतां सज्जनानां, च, उपरि, निपतन्, अलम्। **सहजेति**—सहजं, स्वाभाविकं, यत् स्नेह, प्रेम, एव पाशः, रज्जुस्तेन, ग्रन्थिबंन्धनं यासां, तादृशाः, बान्धवभूताः, कुटुम्बतांगताः जन्मभूमयः, दुस्त्यजाः, त्यक्तुमशक्याः। संस्तुतजनविरहः, संस्तुताः, प्रणयिनः, तेषां विरहः वियोगः, दारुणः, कठोरः, क्रकचः, करपत्रं, (दारुविदारण लोहनिर्मितं करपत्रं) तस्यपातः, अङ्गेषुपातनं, तद्वदिव, दारयति (शकलतां विभजतीत्यर्थः) नार्हसि, अयोग्या। दुःखमेव क्ष्वेडः, विषं, तस्य अंकुराः, प्ररोहाः, तेषां, प्रसवानां, उत्पन्नानाम्, (फलानामितिभावः) अभूमिः, अस्थानं, खलु असि। अपिच, पुराकृते, पूर्वजन्मनि, कृते, कर्मणि, बलवति, फलकृति, शुभाशुभफलदातरि, अधिष्ठातरि, ईश्वरे, प्रष्ठे, सर्वश्रेष्ठे, तिष्ठति, स्थिते, विदुषि, विद्वज्जने, शुचाम्, शोकानाम्, कोऽवसरः, कःसमयः, (न कोऽपीतिभावः) (शुभाशुभ कर्माणि, ईश्वरेच्छया सर्वैर्देवानुभूयन्ते, न ह्यत्र विद्वांसः शोचन्तीतितात्पर्यम्)।

इदमिति—इदं त्रिभुवनमङ्गलैककमलं भुवनत्रय मङ्गलभूतं, ते मुखं,

त्रयन्त्यश्रुबिन्दवः। तदलम्। अधुना कथय कतमं भुवोभागमलङ्कर्तु-मिच्छसि। कस्मिन्नवतितीर्षति ते पुण्यभाजि प्रदेशे हृदयम्। कानि वा तीर्थान्यनुग्रहीतुमभिलषसि केषु वा धन्येषु तपोवनधामसु तपस्यन्ती स्थातुमिच्छसि। सज्जोऽयमुपचरणचतुरः सहपांशुक्रीडापरिचयपेशलः प्रेयान्सखीजनः क्षितितलावतरणाय।

अनन्यशरणा चाद्यैवप्रभृति प्रतिपद्यस्व मनसा वाचा क्रियया च सर्वविद्याविधातारं धातारं च स्वश्रेयसाय स्वचरणरजः पवित्रितत्रिदशा-

आननं, अमङ्गलभूताः, अमाङ्गलिकाः, अश्रुबिन्दवः, अश्रुकणिकाः, कश्मिव, अपवित्रयन्ति, म्लानयन्ति। कथय, अधुना, साम्प्रतं, कतमं, कं, भुवोभागं पृथ्वीतलं, अलंकर्तुमिच्छसि, सुशोभयितुमीहसे। कस्मिन्, पुण्यभाजिप्रदेशे, पुण्यं भजतीति पुण्यक्षेत्रम्, ते, हृदयं, चित्तं, अवतितीर्षति, अवतरितु मिच्छति। कानि वा, तीर्थानि, पुण्यस्थानानि, अनुग्रहीतु, अनुग्रहकर्तुं, अभि-लषसि, इच्छसि। केषु वा, धन्येषु, धन्यवादार्हेषु, तपोवनधामसु, स्थानेषु, तपस्यन्ती, तपः कुर्वन्ती, स्थातुमिच्छसि। उपचरणचतुरः, उपचरणं, सेवा, तत्र-चतुरः, निपुणः, सह, सार्धं, पांशुक्रीडायां, धूलिक्रीडने, यः परिचयः प्रणयः, तेन पेशलः, परवशः (बाल्यकाले बालाः, क्रीडन्ति धूलिभिः, सहज स्वभावमेतत् बालानां, तत्रमैत्रित्वमधिगच्छन्ति च तेनैवमैत्रिप्रेम्णा परवश इत्यर्थः) प्रेयान् सखीजनः, (प्रियसखी सावित्रीतिभावः) सज्जः, प्रस्तुतः, क्षितितलावतरणाय, पृथ्वीतलमवतरितुं।

अनन्यशरणा, नास्ति अन्यंशरणं यस्याः, एवंभूता, अद्यैव प्रभृति, साम्प्रतमेव, मनसा वाचा कर्मणा च, सर्वविद्याविधातारं, सर्वासां विद्यानां, जन-यितारं, धातारं, रक्षितारं, स्वश्रेयसाय, कल्याणाय, (स्वस्य) चरणरजसा, पदरेणुना, पवित्रिताः, पूताः, त्रिदशानां, देवानां, असुराणां, राक्षसानां च, मौलयः, किरीटाः, येन, एवभूतं। सुधेति—सुधा, अमृतं, सूते, उत्पद्यते,

सुरमौलिं सुधासूतिकलिकाकल्पितकर्णावतंसकं देवदेवं त्रिभुवनगुरुं त्र्यम्बकम् । अल्पीयसैव कालेन स ते शापशोकविरतिं वितरिष्यति, इति ।

एवमुक्ता-मुक्तमुक्ताफलधवललोचनजललवा सरस्वती प्रत्यवादीत्, प्रियसखि ? त्वया सह विचरन्त्या न मे कांचिदपि पीड़ामुत्पादयिष्यति ब्रह्मलोकविरहः शापशोको वा । केवलं कमलासनसेवासुखमार्द्रयति मे हृदयम् । अपि च त्वमेव वेत्सि मे भुवि धर्मसाधनानि सर्वयोगयोग्यानि च स्थानानि स्थातुम्, इत्येवमभिधाय विरराम । रणरणकोपनीत प्रजागरा च उन्मीलितलोचनैव तां निशामनयत् ।

अस्मात्, इति सुधासूतिः, चन्द्रः, तस्य कला एव, कलिका, कुड्मलिका, तया कल्पितः, कृतः, अवतंसकः, कर्णभूषणं, येन, तं, देवदेवं (देवानामधिदेवमिति यावत्) त्रिभुवनगुरुं, भुवनत्रयाचार्यं, त्र्यम्बकं, महादेवं, प्रतिपद्यस्व, भजस्व, (इत्यनेनान्वयः) स, एव, भगवान्, (इत्याध्याहार्यम्) अल्पीयसैव, कालेन अल्पसमयेनेव, ते शापशोकविरतिं, शापजनितं, यत्, शोकं, तस्य विरतिं, नाशं, वितरिष्यति, करिष्यति ।

मुक्तेति—मुक्ताः, त्यक्ताः, (पातिता इतियावत्) मुक्ताफलवत्, धवलाः, शुभ्रवर्णाः, लोचनजललवाः, अश्रुविन्दवः, यया, एवंभूता, सरस्वती, वाग्देवी, प्रत्यवादीत्, प्रत्युत्तरमदात् । प्रियसखि ? त्वयासहविचरन्त्या, विहरन्त्या (निवसन्त्या, इति यावत्) कांचिदपिपीडां, किमपिदुःखं, ब्रह्मलोक विरहः, वियोगः, शाप शोको वा, दुर्वासादत्तशापोद्भवःशोको वा, नोत्पादयिष्यति, न जनयिष्यति । केवलं, (एतदेवेति भावः) कमलासनस्य, ब्रह्मणः, सेवासुखं, सेवयालभ्यमानन्दं, चित्तं, आर्द्रयति, स्नेहयति, (प्रेमभावं प्रकटयतीत्यर्थः) अपि च त्वमेव वेत्सि, जानासि, मे, मम, (मदर्थमितिभावः) स्थातुं, स्थितिकरणाय, भुवि, पृथिव्यां, धर्मसाधनानि, धर्मक्षेत्राणि, सर्व योगयोग्यानि, "योगश्चित्त वृत्तिनिरोधः," तद्योग्यानि, उचितानि । रणरणकेति–रणरणकेन

अपरेद्युरुदिते भगवति त्रिभुवनशेखरे तुरङ्गमुख खणाखणायितखर खलीनकर्षणाक्षतक्षरत्क्षतजेनेवपाटलितवपुष्युदयाचलचूडामणौ जरत्कृकवाकुचूडारुणारुणपुरः सरे विरोचने रोचमाने नातिदूरवर्ती पितामह विमानहंसकुलपालः पर्यटन्नपरवक्त्रमुच्चैरगायत् —

"तरलयसि दृशं किमुत्सुकामकलुषमानसवासलालिते" ?

अवतर कलहंसि ? वापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥२२॥

उत्कण्ठया, उपनीतः, जातः, प्रजागरः, जागरणं, यस्याः तथाभूता, उन्मीलिते, ईषद्विकसिते, लोचने, नेत्रे, यस्याः, एवंभूता, एव, तां, निशां, रात्रिं, अनयत् । अपरेद्युरित्यादितः विमानहंसकुलपालः-उच्चैः, अगायत-इत्यनेनान्वयः । अपरेद्युः, अपरदिने, त्रिभुवनशेखरे, त्रिभुवनतिलके, भगवति, कल्याणकरे, तुरगाणां, अश्वानां (सप्तानामितियावत्) मुखेषु, आननेषु, खणाखणायिताः, खणखणाशब्दंकुर्वन्तः, खराः, तीक्ष्णाः, खलीनाः, कविकाः, तेषां कर्षणेन, आकर्षणेन, यः क्षतः, आघातः, (व्रणोतियावत्) तेन क्षरत्, निःसरत्, (घोटकानां मुखेभ्य इतिभावः) क्षतजं, रक्तं, तेनेव, पाटलितवपुषि, ईषद्रक्त कलेवरे, उदयाचलचूडामणौ, उदयगिरिमस्तके, जरन्, वृद्धो यः कृकवाकुः, ताम्रचूडः, तस्य चूडा, मस्तकं, तद्वत्, अरुणः, रक्तवर्णः, यः अरुणः, तन्नाम सारथिः, यस्य तथाभूते, विरोचने, सूर्ये, रोचमाने, शोभमाने, नातिदूरवर्ता, अनतिदूरस्थः (पार्श्वस्थित एवेतिभावः) पितामहस्य, ब्रह्मणः, विमानहंसस्य, वाहनभूतमरालस्य, पालः, रक्षकः, पर्यटन्, भ्रमन्, अपरवक्त्रं, तदाख्यं वृत्तं, (आख्यायिकासुप्रयोज्यंछन्द इतिभावः) उच्चैः, तारस्वरेण, अगायत ।

तरलयसीति—अकलुषं, अम्लानं, मानसं, तन्नामसरः, यद्वा, अकलुषं निर्मलं, मानसं चित्तं, यस्य सः, ब्रह्मा, तस्मिन् अथवा, अकलुषं मानसं, येषां ते अकलुषमानसाः, विद्वांसः, तेषु वासेन, **निवसनेन**, लालिता, विनोदिता, तत्सम्बुद्धौ, हे अकलुषमानसवासलालिते ? किं, कथम्, उत्सुकां, उत्कण्ठा

तच्छ्रुत्वा सरस्वती पुनरचिन्तयत् — अहमिवानेन पर्यनुयुक्ता। भवतु। मानयामि मुनेर्वचनम्, इत्युक्त्वोत्थाय कृतमहीतलावतरणसङ्कल्पा परित्यज्य वियोगविक्लवं स्वपरिजनं ज्ञातिवर्गमवगणय्य त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य चतुर्मुखं कथमप्यनुनयन्ती निवर्तिताऽनुयायिव्रतिव्राता ब्रह्मलोकतः सावित्री द्वितीया निर्जगाम।

व्यक्तिकां, (कातरामितिभावः) दृशं, दृष्टिं, तरलयसि, चञ्चलयसि, हे कलहंसि! वापिकां, दीर्घिकाम् (पक्षे) उप्यन्ते कर्माणि, अस्यां इति वापिका, कर्मभूमिः, तां (मर्त्यलोकमित्यावत्) अवतर, याहि।

अत्र हि न नवचिरस्थितिरित्याशयेनाह। पुनरपि, पङ्कजानां, (लक्षणया) हेमकमलानां, आलयः, स्थानं, तं मानसं, सरः (पक्षे) पङ्कजालयं, पद्मयोनिं, (ब्रह्माणमिति यावत्) यास्यसि, प्राप्स्यसि। अत्र हि श्लिष्ट विशेषणैः कलहंस्या वापिकावतरणरूपात्, अप्रस्तुतात्, सरस्वत्याः मर्त्यलोकावतरणस्य प्रस्तुतस्य वर्णनात्, अप्रस्तुतप्रशंसा, अलङ्कारः, अपरवक्त्रं वृत्तं। तच्छ्रुत्वा, तदपरवक्त्रंनिशम्य, पुनः, अचिन्तयत्। **अहमिवेति**—अनेन, यानहंसपालेन, अहं, (सरस्वती) पर्यनुयुक्तेव, व्यङ्ग्येन प्रतिबोधितेव। भवतु, अस्तु। मुनेर्वचनं, (शापवाक्यमित्यावत्) मानयामि, स्वीकरोमि। इत्युक्त्वा, कृत महीतलावतरणसङ्कल्पा, कृतं, विहितं, महीतलावतरणाय, मर्त्यलोकगमनाय, सङ्कल्पः, निश्चयः, यया, एवंभूता। वियोगेन, विच्छेदेन, विक्लवं, दुःखितं, स्वपरिजनं, स्वसखीजनं, परित्यज्य, त्यक्त्वा ज्ञातिवर्गं, बान्धवसमूहं च, अवगणय्य, अगणयित्वा, प्रदक्षिणीकृत्य, वारत्रयं प्रदक्षिणांविधाय, चतुर्मुखं, ब्रह्माणं कथमपि, अनुनयन्ती, सान्त्वयन्ती। **निवर्तितेति**—निषिद्धाः, (मयासहनागन्तव्यमिति यावत्) अनुयायिनः, अनुगमन शीलाः, व्रतीनां, व्राताः, समूहाः यया, एवंभूता ब्रह्मलोकतः; स्वर्गतः।

ततः क्रमेण, इत्यतः आरभ्यमन्दाकिनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार इत्य-

ततः क्रमेण ध्रुवपदप्रवृत्तां धर्मधेनुमिवाधोधावमानधवलपयोधराम्, उद्धुरध्वनिमन्धकमथनमौलिमालतीमालिकाम्, आलीयमानवालखिल्यरुद्धरोधसमरुन्धतीधौततारवत्त्वचम्, त्वङ्गत्तुङ्गतरङ्गतरत्तरलतरतारतारकाम्, तापसवितीर्णतरलतिलोदकपुलकितपुलिनाम्, आप्लवनपूत पितामहपातितपितृपिण्डपाण्डुरितपाराम्, पर्यन्तसुप्तसप्तर्षिकुश-

तेनान्वयः। क्रमेण, क्रमशः, ध्रुवेति—ध्रुवस्य, नित्यस्य, वस्तुनः (विष्णोरिति यावत्) पदात्, चरणात्, अथवा, पदात्, तृतीयपदस्थापनस्थानात्, (आकाशादिति भावः) प्रवृत्तां, निःसृतां, धर्मधेनुमिव, धर्मायधेनुः, धर्मधेनुः, (होमधेनुरिति भावः) तामिव, अधोधावमानं, नीचैः, निः सरत्, धवलं, शुभ्रं, पयः, जलं, दुग्धञ्च, यस्यास्ताम्, (पक्षे) अधोधावमानाः, अधोमुखाः, धवलाः, शुभ्रवर्णाः, पयोधराः, स्तनाः, यस्यास्ताम्। उद्धुरध्वनिं, उद्धुराः, उत्कटाः, ध्वनयः, शब्दाः यस्यास्ताम्, अन्धकेति—अन्धको नाम कश्चि दसुरः, तंमथयति नाशयति, (शिव, इतियावत्) तस्य मौलिः, जटाजूटं, तस्य या मालतीमालिका, मालती पुष्पमाला, ताम्। आलीयमानेति—आलीयमानैः, (अतिक्षुद्रत्वाद् नश्यद्भिरित्यर्थः) वालखिल्यैः, मुनिविशेषैः रुद्धं, संश्लिष्ट रोधः, तटं यस्यास्ताम्। अरुन्धतीति—अरुन्धत्या, वषिष्ठपत्न्या, धौता प्रक्षालिता, तरोरियं, तारवी, (वृक्षसंबन्धिनीत्यर्थः) त्वक् यस्यां तथाभूताम्। त्वङ्गेति—त्वङ्गत्सु, प्रचलत्सु, त्वङ्गेषु, उन्नतेषु, तरङ्गेषु, लहरिकासु, तरन्त्यः, तरणशीलाः, तरलतराः, अतिचपलाः, ताराः, महत्यः, तारकाः, नक्षत्राणि, यस्यां ताम्। तापसेति—तापसैः, तपस्विभिः, वितीर्णानि, दत्तानि, तरलानि (तरङ्ग सम्पर्कात्) चञ्चलानि, तिलोदकानि, तिलमिश्रिततर्पणजलानि, तैः, पुलकितानि, उल्लासितानि, पुलिनानि, सैकतानि, यस्यास्ताम्। आप्लवनेति—आप्लवनेन, स्नानेन, पूतः, पवित्रः, यः, पितामहः, ब्रह्मा, तेन पातितैः, पितृपिण्डैः, पितृभ्यः, (अग्निष्वातादिभ्यः) अर्पितैः, पिण्डैः, (तिलोदकमिश्रि

शयनसूचितसूर्यग्रहणसूतकोपवासाम्, आचमनशुचिशचीपतिमुच्यमानार्चनकुसुमनिकरशाराम्, शिवपुरपतितनिर्माल्यमन्दारदामकानादरदारितमन्दरदरीदृषदम्, अनेकनाकनायककामिनी कुचकलशविलुलितविग्रहाम्, ग्राहग्रावग्रामस्खलनमुखरितबहु स्रोतसम्, सुषुम्नास्रुतशशिसुधाशीकरस्तवकतारकिततीराम्, धिषणाग्निकार्यधूमधूसरित

तैर्यवान्ननिर्मितैः पिण्डैः) पाण्डुरितः, पाण्डुवर्णतांनीतः, पारः, तटप्रदेशः, यस्यास्ताम्। **पर्यन्तेति**—पर्यन्तेषु, प्रान्तभागेषु, सुखेन, सुप्तानां, शयन सुख मनुभवतां. सप्तानां ऋषीणां, मरीच्यादीनां, कुशा एव शयनानि, पर्यङ्कास्तैः, सूचितः, प्रकटितः, सूर्यग्रहणस्य, सूतकेन, आशौचेन, (राहुकेतुग्रसितस्य-भानोरित्यर्थः) उपवासः, अनशनम्, यस्यास्ताम्। **आचमनेति**—आचमनेन, शुचिः, पवित्रः, यःशचीपतिः, इन्द्रः तेन मुच्यमानैः, त्यक्तैः (दीयमानैरितियावत्) अर्चनकुसुमनिकरैः, पूजापुष्पनिचयैः, शारां, (चित्रविचित्र वर्णातां प्राप्तेत्यर्थः) **शिवेति**—शिवपुरात्, (कैलाशादितियावत्) मन्दारदामकं, मन्दारपुष्पस्रजं, यस्यां तथाभूतां। **अनादरेति**—अनादरेण अपमानेन, दारिताः, खण्डिताः, (अतिवेगेनेतिभावः) मन्दरदर्याः, मन्दराचल गुहायाः, दृषदः, पाषाणाः, यया, ताम्। **अनेकेति**—अनेकेषां, बहूनां, नाकनायकानां, सुराणां, याःकामिन्यः, स्त्रियः, तासां, कुचकलशैः, स्तनकुम्भैः, विलुलितः, प्रकम्पितः, (आलोडित इत्यर्थः) विग्रहं, शरीरं (जलरूपकमितियावत्) यस्यास्तथोक्तां। **ग्राहेति**—ग्राहाणां, जलजन्तुविशेषाणां, ग्रावग्रामाणां, पाषाणसमूहनाञ्च, स्खलितेन, इतस्ततःनिपतनेन, मुखराणि, सशब्दानि. बहूनि, स्रोतांसि, जलनिःसरणमार्गाणि यस्यास्ताम्। **सुषुम्नेति**—सुषुम्नाख्यसूर्यरश्मेः, स्रुतः, निसृतः, यःशशिः, चन्द्रः, तस्य, सुधानां, पीयूषानां, (अमृतमयकिरणानामितिभावः) शीकरस्तवकैः, विन्दुच्छैगुः, तारकितं, नक्षत्रपंक्तिमिव, तीरं, तटं, यस्यास्ताम्। **धिषणेति**—धिष

सैकताम्, सिद्धविरचितबालुकालिङ्गलङ्घनत्रासविद्रुतविद्याधराम्, निर्मोकमुक्तिमिव गगनोरगस्य, लीलाललाटिकामिव त्रिविष्टपस्य विक्रयवीथिमिव पुण्यपण्यस्य, दत्तार्गलामिव नरकनगरद्वारस्य, अंशुकोष्णीषपट्टिकामिव सुमेरुनृपस्य, दुकूलकदलिकामिव कैलासकुञ्जरस्य, पद्धतिमिवापवर्गस्य, नेमिमिवकृत युगस्य, सप्तसागरराजमहिषीं मन्दा-

गस्य, बृहस्पतेः, यत्, अग्निकार्यं, अग्निहोत्रकर्म, तस्य धूमेन, धूसरितानि, धूसरवर्णतां प्रापानि (म्लानानि, इत्यर्थः) सैकतानि, पार्श्वभागानि, यस्यास्ताम्। **सिध्देति**—सिध्दैः, देवयोनिविशेषैः, विरचितानि, पूजार्थनिर्मितानि, यानि बालुका लिङ्गानि, बालुका मर्याशिव लिङ्गानि (चिन्हानि) तेषां लंघनात्, उल्लंघनात्, त्रासेन, भयेन (सिध्दाः साशापं दद्युरितिभयेन) विद्रुताः, पलायिताः, विद्याधराः, देवयोनिभेदाः, यस्यां ताम्। **निर्मोकेति**—निर्मोकमुक्तिमिव, निर्मोकस्य, कञ्चुकस्य, मुक्तिः, उज्झनं, तामिव, गगनं, आकाशं, एव, उरगः, (उरसा गच्छतीति उरगः,) सर्पः, तस्य (कृष्णवर्णत्वादाकाशस्य शुक्ल वर्णत्वाच्च निर्मोकस्य, इत्युत्प्रेक्षितम्) **लीलेति**—त्रिविष्टपस्य, स्वर्गस्य, लीला ललाटिकामिव, विनोदार्थमस्तक भूषणमिव। विक्रयवीथिमिव, विक्रयस्थानमिव, पुण्य पण्यस्य, व्यवहारार्थ पुण्य सञ्चयः एव विक्रेयद्रव्यं, तस्य पण्यं विक्रयस्थानं, तमिव। दत्तार्गलामिव, दत्ता, स्थापिता, अर्गला, द्वारावरोधकाः दण्डाः, तामिव, नरकनगरस्य,नरकमेवनगरं, पुरं, तस्य, द्वारं, मुखं, तस्य। **अंशुकेति**—सुमेरुनृपस्य, राज्ञः, अंशुकं, सूक्ष्मवसनं, तेन, निर्मिता रचिता, उष्णीषपट्टिका, शिरोवेष्ठनपटी, तामिव। कैलासकुञ्जरस्य, कैलासाद्रिवारणस्य, दुकूल कदलिकामिव, वस्त्ररचित वैजयन्तीमिव (स्रगिवेतिभावः) अपवर्गस्य, स्वर्गस्य, पद्धतिमिव, मार्गमिव कृतयुगस्य, सत्ययुगस्य, नेमिमव, चक्राधारमिव। सप्तसागर राजमहिषीं, सप्तानांसागाराणां समाहारः, तस्य, यद्वा, सप्त च ते सागराः, सप्तसागराः, तेषां, "अथवा" सप्तसागरराजः, क्षीरसमुद्रः तस्य, महिषीं,

किनीमनुसरन्ती मर्त्यलोकमवततार । अपश्यच्चाम्बरतलस्थितैवहार-मिव वरुणस्य, अमृतनिर्झरमिव चन्द्राचलस्य, शशिमणिनिष्यन्दमिव विन्ध्यस्य, कर्पूरद्रुमद्रवप्रवाहमिव दण्डकारण्यस्य, लावण्य रस प्रस्र-वणमिव दिशाम्, स्फटिकशिला पट्टशयनमिवाम्बरश्रियाः, स्वच्छ शिशिरसुरसवारिपूर्णं भगवतः पितामहस्यापत्यं हिरण्यवाह नामानं महानदम् यं जनाःशोण इति कथयन्ति । दृष्ट्वा च तं रामणीयकंहृत-हृदया तस्यैव तीरे वासमरचयत् । उवाच च सावित्रीम्—सखि,

पत्नीं, मंदाकिनीं, गंगा, अनुसरन्ती, अनुसरणंकुर्वन्ती, मर्त्यलोकं, भूलोकं, अवततार, अवतीर्णा, (प्रायेणात्र, उत्प्रेक्षालंकारः) अम्बरतलस्थितैव, आका-शस्थितैव, वरुणस्य, जलाधिपतेः, हारमिव, मुक्तास्रगिव । अमृतनिर्झरमिव, सुधास्रोतमिव, चन्द्राचलस्य, चद्राख्य पर्वतस्य । शशिमणि निष्यन्दमिव, चन्द्रकान्त मणिस्रवन्निव, विन्ध्यस्य, विन्ध्यपर्वतस्य । **कर्पूरेति**—कर्पूरद्रुमस्य, कर्पूरवृक्षस्य, य द्रवः, स्वेदः, तस्य प्रवाहः, स्रोतः, तमिव, दण्डकारण्यस्य, दण्डकवनस्य । लावण्यस्य, सौंदर्यस्य, य रसः, तस्य यत्, प्रस्रवणं, वहनं, तमिव, दिशाम् । स्फटिकशिला, स्फटिकमणिः, तस्याः पट्टमेवशयनं, पर्यङ्कं, तदिव, अम्बरश्रियाः, आकाशलक्ष्म्याः । **स्वच्छेति**—स्वच्छानि, निर्मलानि, शिशिराणि, शीतलानि, सुरसानि, मधुराणि, वारीणि, जलानि, तैः पूर्णः, भरितः, भगवतः, पितामहस्य, ब्रह्मणः, अपत्यं, संततिं, हिरण्यवाह नामानं, तन्नाम प्रसिद्धं, महानदम्, अपश्यत्, अवलोकयत्, इति पूर्वेणान्वयः । यं नदं जनाः, मानवाः शोण इति, नाम्ना, कथयन्ती, वदन्ती । दृष्ट्वा च. अव-लोक्य च तं, (नदमितियावत्) (तस्येत्याध्याहार्यम्) तस्य रामणीयकं, मनोहारित्वं, तेन हृतं, स्ववशीकृतं, हृदयंयस्या तादृशी, तस्यैव तीरे तटे, वासं, स्थितिं, अरचयत् । सखि ? मधुराः, मुग्धकराः, मयूराणां, बर्हिणां, विरुतयः, शब्दाः । **कुसुमेति**—कुसुमानां, पुष्पाणां, पांशुपटलैः, धूलिसमूहैः, सिक-

मधुरमयूरविरुतयः कुसुमपांशुपटलसिकतिलतरुतलाः परिमलमत्तमधुप-वेणीवीणा रणितरमणीया रमयन्ति, मां मन्दीकृतमन्दाकिनी द्युतेर-स्यमहानदस्योपकण्ठभूमयः। पक्षपाति च हृदयमत्रैव स्थातुम्मे इति। अभिनन्दितवचना च तथेति तया तस्य पश्चिमे तीरे समवातरत्। एकस्मिंश्च शुचौ शिलातलसनाथे तटलतामण्डपे गृहबुद्धिं बबन्ध। विश्रान्ता च नातिचिरादुत्थाय सवित्र्यासार्धमुच्चितार्चनकुसुमा-स्नौ। पुलिनपृष्ठप्रतिष्ठित सैकतशिवलिङ्गा च भक्त्या परमया पञ्चब्रह्म-पुरः सरां सम्यङ्मुद्रांबबन्ध, विहितपरिकरा ध्रुवागीतिगर्भामवनिपवन

तिला सैकतवन्तः, तरूणां, वृक्षाणां, तलाः, अधोभागाः, परिमलेन, सुग-न्धिना, मत्तानां, उन्मत्तानां, मधुपानां, षट्चरणानां, वेणीसमूहः, सैववीणा, तन्त्री, तस्याःरणितेन, रण रण शब्देन, रमणीयाः, शोभनाः, मन्दीकृता, मन्दाकिन्याः गंगायाः, द्युतिः, कान्तिः, येन तथोक्तस्य, अस्य महानदस्य, शोणस्य, उपकण्ठभूमयः, पार्श्व प्रदेशाः, मां रमयन्ति, प्रीणयन्ति। मे हृदयं, अत्रैवस्थातु, अस्मिन्नेव तटेस्थितिं कर्तु, पक्षपाति, प्रणयी। **अभिनन्दितेति**—अभिनंदितं, समर्थितं, वचनं यस्यास्तथोक्ता, तस्य पश्चिमे तीरे, पश्चिमतटे, समावतरत्। एकस्मिंश्च, शुचौ, पवित्रे, शिलातलसनाथे, शिलातलयुक्ते, तट-लतामण्डपे, तटपार्श्ववर्तिलतागृहे, (कुंज-इत्यर्थः) गृह बुद्धिं, इदमावयोः गृहं, इति बुद्धिं, मतिं बबंध, चकार (कृतवतीत्यर्थः) विश्रान्ता च मार्गश्रमं दूरीकृत्य, च नातिचिरात्, (सद्यैवेतिभावः) उत्थाय, सावित्र्यासार्धं, स्वस-ख्यासह, उच्चितानि, एकत्रिकृतानि, यानि, अर्चनकुसुमानि, पूजापुष्पाणि, तैः, स्नौ, स्नानंकृतवती। **पुलिनेति**—पुलिनस्य, सैकतप्रदेस्य, पृष्ठे, उपरि, प्रतिष्ठितं, स्थापितं, सैकतं, वालुकामयशिवलिङ्गं, यया सा परमया भक्त्या, श्रद्धया, पञ्चब्रह्माणि, (सद्योजात वामदेवाघोर तत्पुरुषेशानरूपाणि) पुरः सराणि, अग्रगण्यानि, यस्यां तादृशीं, मुद्रां, कराङ्गुलिसंयोग विशेषां,

गगनदहनतपनतुहिनकिरणयजमानमयीर्मूर्तीरष्टावपि ध्यायन्ती सुचिरमष्टपुष्पिकामदात्। अयत्नोपनतेन फलमूलेनामृतरसमप्यतिशिशयिषमाणेन च स्वादिम्ना शिशिरेण शोणवारिणा शरीरस्थितिमकरोत्। अतिवाहितदिवसा च तस्मिंल्लतामण्डपशिलातले कल्पितपल्लवशयना सुष्वाप। अन्येद्युरप्यनेनैव क्रमेण नक्तंदिनमत्यवाहयत्।

एवमतिक्रामत्सु दिवसेषु गच्छति च काले याममात्रोद्गते च रवावुत्तरस्यां ककुभि प्रतिशब्दपूरितवनगह्वरं गम्भीरतारतरम्, तुरङ्गहेषित-

सम्यक्, विधिपूर्वकं, बबन्ध, कृतवती। प्रथमं सद्योजातपूजामारभ्य क्रमशः, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष ईशानपूजाविधायिनीत्वेवं पञ्चमुद्राविधानेन पञ्चब्रह्माणि अपूजयदितिभावः) विहितपरिकरा, कृतपूजाविधाना, ध्रुवाख्यातन्नाम गीतिविषयच्छन्दोविशेषः, अस्ति गर्भमध्ये, यस्यास्ताम्, अन्तरान्तरगीतिपूर्विकां, पुष्पाञ्जलिमदादित्यनेनान्वयः। अवनिः, पृथ्वी, पवनः, वायुः, गगनं, आकाशं, तपनः, सूर्यः, तुहिनकिरणः, चन्द्रः, दहनः अग्निः, सलिलं जलं, यजमानः, याज्ञिकः, एताः अवन्याद्यात्मिकाः, ताः, अष्टौ, मूर्तीः (शंकरस्येत्यर्थः) ध्यायन्ती, ध्यानंकुर्वन्ती, अष्टपुष्पिकां, अष्टौपुष्पाणि, अदात्, दत्तवती। अयत्नोपनतेन, अनायासप्राप्तेन, फलमूलेन, कन्दादिना, अमृतरसमपि, पीयूषमपि, अतिशिशयिषमाणेन, अतिशयितुमिच्छता, स्वादिम्ना, अतिस्वादयुक्तेन, शिशिरेण, शीतेन, शोणवारिणा, शोणनदजलेन, शरीरस्थितिं (नत्वातृप्तभोजनमितिभावः) अतिवाहितदिवसा, अतिक्रान्तदिना, तस्मिन्लतामण्डपे, लतागृहे, शिलातले, प्रस्तरखण्डे, कल्पितं, निर्मितं, पल्लवानां, शयनं, शय्या, यया, एवंभूता, सुष्वाप, पर्णशयनेएव निद्रांलेभे इतिभावः। **अन्येद्युरिति**—अन्येद्युः, अपरदिने, अपि अनेनैवक्रमेण, क्रमशः, नक्तंदिनं, अहर्निशं, अत्यवाहयत्।

एवं अतिक्रामत्सु, गच्छत्सु, दिवसेषु, दिनेषु, गच्छति च काले, समये, याममात्रमिव, प्रहरमात्रमिव, उद्गते, उदिते, रवौ, सूर्ये, उत्तरस्यां, उदीच्यां,

ह्रादमश्रृणोत् । उपजातकुतूहला च निर्गत्य लतामण्डपाद्विलोकयन्ती विकचकेतकीगर्भपत्रपाण्डुरं रजः संघातं नातिदवीयसि सम्मुखमापतन्तमपश्यत्.क्रमेण च सामीप्योपजायमानाभिव्यक्तिःतस्मिन्महति शफरोदरधूसरे रजसिपयसीव मकरचक्रं प्लवमानं पुरः प्रधावमानेन, प्रलम्बकुटिलकचपल्लवघटितललाटजूटकेन, धवलदन्तपत्रिकाद्युतिहसितकपोलभि-

ककुभि, दिशि, प्रतिशब्देन, प्रतिध्वनिना, पूरितानि, पूर्णानि, वनगह्वराणि, काननकन्दराः, येन तं गम्भीरतारतरं, अतिशयित गम्भीरं, शब्दं, तुरङ्गमाणां, अश्वानां, यानिह्रेषितानि, शब्दविशेषाः, तेषां, ह्रादः, निनादः, तं अश्रृणोत, कर्णकुहरतामनयत । उपजातकुतूहला, च, उपजातः, उत्पन्नः, कुतुहलः, औत्सुक्यं, यया एवंभूता, लतामण्डपात् लतागृहाद्, निर्गत्य, विलोकयन्ती । **विकचेति**—विकचं, विकसितं, केतकीगर्भपत्रं, तदाख्यपुष्पपल्लवं, तद्वत्, पाण्डुरं, ईषच्छुभ्रम्, रजःसंघातं, धूलिसमूहं, नातिदवीयसि, अनतिदूरवर्तिनि, (पार्श्ववर्तिनीतिभावः) सम्मुखान्, पुरोयायिमार्गान्, आपतंतं, आगच्छंतं, अपश्यत । क्रमेण च, क्रमशः, **सामिप्येति**—सामीप्येन, नैकट्येन, उपजायमाना, प्रादुर्भूता, अभिव्यक्तिः, स्फुटता यस्य तादृशं, अश्ववृन्दं, अश्वसमूहं, ददर्श, अवलोकयत्, इत्यनेनान्वयः । तस्मिन्, (अश्ववृन्देत्यर्थः) शफरोदर धूसरे, शफरस्य, मत्स्यस्य, उदरवत् धूसरं, धूसरवर्णकं, तस्मिन्, रजसि, पांशौ, पयसीव, जलमिव, **मकरेति**—मकरचक्रं मकराः, जल जन्तवः, तेषां चक्रं, मण्डलं, तदिव, प्लवमानं तरमाणं, पुरः, अग्रे, प्रधावमानेन, (शीघ्रगमनेनेति भावः) **प्रलम्बेति**—प्रलम्बनेन, लम्बमानेन, कुटिलेन, कुञ्चितेन, कचः, **केशः** (चिकुरः कुन्तलो बालः कचः केशः शिरोरुहः इत्यमरः) पल्लवइव, नवपत्रमिव, तेन, घटिता, बद्धो, ललाटे, मस्तके, जूटकेन, केशबंधेन, एवंभूतेन । **धवलेति**—धवलायाः, शुभ्रायाः, दन्तपत्रिकायाः, गजदन्तरचित कर्णाभरणायाः, या, द्युतिः, कान्तिः, तया हसिता, उद्भासिता, कपोलभित्तिः.

त्तिना, पिनद्धकृष्णागुरुपङ्कच्छुरणाकषायकञ्चुकेन, उत्तरीयकृतशिरोवेष्टनेन, वामप्रकोष्ठनिविष्टहाटककटकेन, द्विगुणपट्टपट्टिकागाढग्रन्थिग्रथितासिधेनुना, अनवरतव्यायामकृशकर्कशशरीरेण, वातहरिणयूथेनेव मुहुर्मुहुः खमुड्डीयमानेन, लङ्घितसमविषमावटविटपेन, कोणधारिणा, कृपाणपाणिना, सेवागृहीतविविधवनकुसुमफलमूलपर्णेन, "चल चल याहि याहि, अपसर्पापसर्प पुरःप्रयच्छ पन्थानम्" इत्यनवरतकृतकल

गंडस्थलं, यस्य तेन । **पिनद्धेति**—पिनद्धः, धारितः, कृष्णागुरुपङ्कस्य, गंधद्रव्यविशेषद्रवस्य, च्छुरणेन, अधिवासनेन, कषाय, सुरभिः, कञ्चुकः, वारवाणः, येन, तथाभूतेन, उत्तरीयेण, तद् वस्त्रेण, कृतं, शिरोवेष्टनं, उष्णीषं, येन, **द्विगुणेति**—द्विगुणा, द्विरावृत्ता, या, पट्टपट्टिका, वस्त्रखण्डं, (पेटिका इतिप्रसिद्धा) तस्या, गाढेन, कठिनेन, ग्रंथिना, ग्रथिता, निबद्धा, असिधेनुका, छुरिका, येन तथोक्तेन । **अनवरतेति**—अनवरतेन, निरन्तरेण, कृतः, व्यायामः, अङ्गचालनं, तेन, कृशं, ह्रस्वं, कर्कशं, कठिनं, एवंभूतेन शरीरेण, विग्रहेण । वातहरिणा, वाताभिमुखंधावन्ति ते, तेषां यः यूथः, समूहः, तेनेव, मुहुर्मुहुः वारम्बारं, खं, आकाशं, उड्डीयमानेन, अति वेगेनधावमानेनेत्यर्थः । **लङ्घितेति**—लङ्घितः अतिक्रान्तः, समानां, समतलानां, विषमाणां, विषमप्रदेशानां, अवटानां, उन्मार्गाणां, विटपः, विस्तरः, (प्रसरेतिभावः) येन तथा भूतेन । कोणधारिणा, लगुडधारिणा, (कोणो वाद्य प्रभेदेस्यात् वीणादीनां च वादने, एक देशे गृहा दीनामश्रौ च लगुडेऽपि च इतिमेदिनी) कृपाणपाणिना, धृतासि हस्तेन, च । **सेवेति**—सेवार्थं, स्वामिनः, स्वाभिष्टदेवस्य वा, सेवार्थं, गृहीतानि, विविधानि, नानाविधानि, वनस्य, कुसुमानि, पुष्पाणि, फलानि, मूलानि, कन्दानि, पर्णानि, पत्राणि, च, येन, तथाभूतेन, चल, चल, याहि, याहि, आगच्छ, आगच्छ, अपसर्पापसर्प, अपगच्छ, पुरः, अग्रतः पन्थानम्, मार्गं, प्रयच्छ, देहि, इति, एवं, अनवरतं, निरन्तरं, कृतः,

कलेन, युवप्रायेण, सहस्रमात्रेण पदातिबलेन सनाथमश्ववृन्दं सन्ददर्श।

मध्ये च तस्य सार्धचन्द्रेण मुक्ताफलजाल मालिना विविधरत्न खण्डखचितेन शङ्खक्षीर फेन पाण्डुरेण क्षीरोदेनेव स्वयं लक्ष्मीं दातुमागतेन गगन गतेनातपत्रेण कृतच्छायम्, अच्छाच्छेनाभरणद्युतीनां निवहेन दिशामिव दर्शनानुरागलग्नेन चक्रवालेनानुगम्यमानम्, आनितम्ब विलम्बिन्या मालतीशेखरस्रजा सकलभुवनविजयार्जितया रूपप-

विहितः, कल कलः कोलाहलः, येन तथाक्तेन, युव प्रायेण, तरुणबहुलेन, सहस्रमात्रेण, (सहस्र परिमितेन) पदातिबलेन, पद चारिसैन्येन, सनाथं, सहितं, अश्ववृदं, अश्वसमूहं, ददर्श।

मध्ये इत्यादितः, अष्टादश वर्षीयंकश्चिद् युवानमद्राक्षीत्, इत्यनेनान्वयः। मध्येच तस्य (अश्ववृन्देत्यर्थः) सार्ध चन्द्रेण, अर्द्धशशिना, (इवेतिशेषः) मुक्ताफल जाल मालिना, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, जालं, समूहः, तस्य माला स्रक्, तद्वत्। **विविधेति**—विविधानां, नानाविधानां, रत्नानां खण्डैः, शकलैः, खचितं, घटितं, तेन, शङ्खः, कम्बुः, क्षीरं, दुग्धं, तस्य यः फेनचयः, डिण्डीर निचयः, तद्वत्, पाण्डुरं, श्वेतं, तेन, क्षीरोदेनेव, क्षीरोदरागेणेव, (लक्ष्मी जनकेत्यर्थः) स्वयं, लक्ष्मीं, रमां, दातुमागतेन, प्राप्तेन, गगनगतेन, आकाशस्थितेन, आतपत्रेण, छत्रेण, कृतच्छायम्, कृता छाया, अनातपं (आतप निवारणमित्यर्थः) कान्तिश्च, यस्य तं। अच्छाच्छेन, स्वच्छेन, आभरणद्युतीनां, भूषणप्रभाणाम्, निवहेन, समूहेन, दर्शनानुरागलग्नेन, दर्शने, अवलोकने, यः अनुरागः, प्रेम, तेन लग्नं, आसक्तं, तेन दिशां चक्र वालेन, मण्डलेन, अनुगम्यमानं, अनुसृतं, आ नितम्बं, नितम्बपर्यन्तं, बिलम्बिन्याः, लम्बमानायाः, मालतीशेखरस्रजा, मालतीलतायाः यत् शेखरं, पुष्पं, तेन रचितया शिरोमालया, सकलानां, सर्वेषां, भुवनानां, (भूःभुवःस्वः स्वरूपाणां) विजयाय, जेतुं, अर्जितया, एकत्रितया (प्राप्तया इत्यर्थः) रूपपताकेव, सौन्दर्य वैजय-

नाकयेव विराजमानम्, समुत्सर्पिभिः शिखण्डकपद्मरागमणेररुणैरंशुजालैरदृश्य मानवनदेवताविधृतैर्वालपल्लवैरिव प्रमृज्यमानमार्गरेणुपरुष-वपुषम् वकुलकुड्मलमण्डलीमुण्डमाल मण्डनमनोहरेण कुटिलकुन्तलस्तबकमालिना मौलिना मौलिनातपं पिबन्तमिव दिवसम्, पशुपतिजटामुकुटमृगाङ्कद्वितीयशकलघटितस्येव, सहजलक्ष्मीसमालिङ्गितस्य ललाटपट्टस्य मनः शिलापङ्कपिङ्गलेन लावण्येन लिम्पन्तमि-

न्येव. विराजमानम्. शोभंतम्, समुत्सर्पिभिः. समुद्गच्छद्भिः. शिखण्डकपद्मरागमणेः. शिखंडकं. शिरो भूषणं. यः. पद्मरागमणिः. तदाख्यमणिः (रत्नं) तस्य, अरुणैः. रक्तैः. अंशुजालैः. किरणनिचयैः। **अदृश्यमानेति**—अदृश्यमानया, अदर्शनया, वनदेवतया, वनाधिष्ठात्र्यादेव्या, विधृताः, धारिताः, तैः, वालपल्लवैरिव, नवकिसलयैरिव, प्रमृज्यमान मार्गरेणु, प्रमृज्यमानाः. अपनीयमानाः. मार्गरेणवः, गमनादङ्गलग्नाधूलयः. यस्य तादृशं. अरुणवपुं, रक्तशरीरं। **वकुलेति**—वकुल कुड्मलानां. वकुलमुकुलानां. मण्डली. मालाइव, मुण्डमाला, रुण्डमाला. तया मण्डनं, शोभा, तेन, मनोहरेण। **कुटिलेति**—कुटिलः. भङ्गिमान्. यः कुन्तलानां. कचानां, स्तवकः. गुच्छः. तेषां माला, समूहः. तद्वता. मौलिना. किरीटेन. (शिरोभूषणं नोतिभावः) मौलितातपं, दूरीकृतघर्म्मं (किरीट प्रभावादित्यर्थः) दिवसं. दिनं. पिबंतमिव. पानंकुर्वंतमिव। **पशुपतीति**—पशुपतेः. शङ्करस्यजटासु, यत्, मुकुटं. शिरोभूषणभूतं, यः मृगाङ्कः, अर्द्धचन्द्रः. तस्य द्वितीयं. अन्यं, शकलं. खण्डं, तेन, घटितस्येव; रचितस्येव, (अर्द्धचन्द्राकृतेरित्यर्थः) **सहजेति**—सहजा, नैसर्गिकी, या लक्ष्मीः, शोभा, यद्वा, सहजा, सहोत्पन्ना, या लक्ष्मीः, रमा,(अतिसौभाग्यत्वात्, श्रीः निरन्तर मेव सहोदर प्रेम्णा तावसदितिभावः) तया समालिङ्गितः, युक्तः. तस्य ललाट पट्टस्य. मस्तकप्रदेशस्य। **मनः शिलेति**—मनःशिलाः रक्तवर्णः, (मैनसिलधातुविशेषः) तस्य पङ्कः, द्रवः, तद्वत्, पिङ्गलः, गौर-

वान्तरिक्षम् , अभिनवयौवनारम्भावष्टम्भप्रगल्भदृष्टिपाततृणीकृतत्रिभुवनस्य चक्षुषः प्रथिम्ना, विकच कुमुदकुवलय कमलसरः सहस्र संछादितदशदिशं शरदमिव प्रवर्तयन्तम् , आयतनयननदीसीमान्तसेतुबन्धेन, ललाटतट शशिमणि शिलातलगलितेन कान्तिसलिलस्रोतसेव द्राघीयसा घोणावंशेन शोभमानम् , अतिसुरभिसहकारकर्पूर कक्कोल लवङ्ग पारिजातक परिमलमुचा, मत्तमधुकर कुलकोलाहल मुखरेण मुखेन सनन्दनवनं वसन्तमिववसन्तम् , आसन्नसुहृत्परिहास-

वर्णाः, तेन लावण्येन, सौन्दर्येण, लिम्पन्तमिव, लेपनं कुर्वन्तमिव, अन्तरिक्षं, दिग्भागम् । **अभिनवेति** अभिनवस्य, नूतनस्य, यौवनारम्भे, यः, अवष्टम्भः, गर्वः, तेनप्रगल्भः, चतुरः, यः, दृष्टिपातः, अवलोकनं, तेनतृणी कृतं, तुच्छतांनीतं, त्रिभुवनं, त्रिलोकं, येन, तथोक्तस्य, चक्षुषः, नेत्रस्य, प्रथिम्ना, विस्तारेण । **विकचेति**—विकचानां, विकसितानां, कुवलयानां, नीलोत्पलानां, कुमुदानां, कमलानां च, सरः सहस्रैः, सरोवरसंघैः, संछादिता, दशदिशो येन, तथाभूतेन, शरदमिव, शरत्कालमिवप्रवर्तयन्तम् , प्रकटयन्तं । **आयतेति**—आयते, विशाले, नयने, नेत्रे, एव नद्यौ, तयोः, सीमान्तेषु, प्रान्तभागेषु, "यः" सेतुबंधः, पुलनिर्माणं, तेन । **ललाटेति**—ललाटतटं, मस्तकं, एव शशि मणि शिलातलं, चन्द्र कान्त मणेः प्रस्तर तलं, तस्मात् गलितं, निःसृतं, तेन, कान्तिसलिल स्रोतसेव, सौन्दर्यजल प्रवाहेणेव, द्राघीयसा, अतिदीर्घेण, घोणा वंशेन, नासादण्डेन, शोभमानम् । **अतिसुरभीति**—अतिसुरभिः, अतिशयेन सुगंधवत् , अतएव, सहकारः, आम्रः, कर्पूरं, कक्कोलकं, लवङ्ग (लौंग) पारिजातं, तेषां पुष्पविशेषाणां, परिमलं, सुगधं, मुञ्चतीतिपरिमल मुचा, तेन । मत्तानां, मधुकराणां, षट्पदानां, कोलाहलं, शब्दं, तेन मुखरं, सशब्दं, एवंभूतेन, मुखेन, सनन्दन वनं, नन्दन काननं, वसन्तमिव, ऋतुमिव, वसन्तं, तिष्ठंतं । **आसन्नेति**—आसन्नेन, पार्श्ववर्तिना, सुहृदा, मित्रेण, यः परिहासः,

भावनोत्तानित मुखमुग्धहसितैर्दशनज्योत्स्नास्नपितदिङ्मुखैः पुनःपुनर्नभसि सञ्चारिणां चन्द्रालोकमिव कल्पयन्तम्, कदम्बमुकुल स्थूलमुक्ताफल युगलमध्याध्यासितमरकतस्य त्रिकण्टककर्णाभरणस्य प्रेङ्खतः प्रभया समुत्सर्पन्त्या सकुसुमहरित कुन्दपल्लव कर्णावतंसमिवोपलक्ष्यमाणम् आमोदितमृगमदपङ्कलिखितपत्र भङ्ग भास्वरम्, भुजयुगलमुद्दामसकराक्रान्त शिखरमिव मकरकेतुदण्डद्वयं दधानम्, धवलब्रह्मसूत्र

हास्यं, तस्य भावना, भावावबोधः, तस्मिन्, उत्तानितं, उन्नमितं, यत्, मुखं, आननं, तस्य मुग्धानि, मनोज्ञानि, यानि, हसितानि, स्मितानि, तैः। **दशनेति**—दशनानां, दन्तानां, ज्योत्स्नया, कान्त्या, स्नपितानि, धौतानि, दिङ्मुखानि, दिग्भागानि, येषु तथाभूतैः। पुनः पुनः, वारंवारं, नभसि, आकाशे संचारिणां, प्रचटनशीलं, चन्द्रालोकमिव, शशिकिरण शुभ्रत्वमिव, कल्पयन्तं, विस्तारयन्तं। **कदम्बेति**—कदम्बमुकुलवत्, स्थूलं, पीनं, यत्, मुक्ताफल युगलं, मौक्तिकयुग्मं, तस्य मध्ये, अध्याश्रितं, आश्रितं, मरकतं, तन्नामरत्नं, यस्य, यत्र वा, तथोक्तस्य, त्रिकण्टककर्णाभरणस्य, त्रीणि, कण्टकानि, (कण्टक सदृश्यः, शलाकाः, इतिभावः,) यत्र तादृशं, यत्, कर्णाभरणं, कर्णभूषणं, तस्य प्रेङ्खतः, दीप्यमानस्य, प्रकम्पनो वा, समुत्सर्पन्त्या, समुद्गच्छन्त्या, स कुसुमं, पुष्पसहितं, हरितं, हरिद्वर्णं, कुन्दपल्लवं, कुन्दाख्य वृक्ष पत्रं, तदेव, कर्णावतंसं, कर्णभूषणं, तमिव, उपलक्ष्यमाणम्, प्रतीयमानं, **आमोदीति**—आमोदी, सौरभवान्, यः, मृगमदपङ्कः, कस्तुरिकारसः, तेन लिखितः, चित्रितः, यो पत्रभङ्गः, पत्ररचना, तेन भास्वरं, दीप्यमानम्। **उद्दामेति**—उद्दामेन, उद्धतेन, मकरेण, (बाहुस्थितमकाराकार, मांस पिण्ड विशेषः) तेन, आक्रान्तं, व्याप्तं, (अधिष्ठितं) शिखरं, अग्रभागं, यस्य, तादृशं, भुजयुगलं, बाहुयुग्मं, मकरकेतुदण्डद्वयं, मन्मथदण्डयुगलम्, दधानं, धारयंतम्। **धवलेति**—धवलेन, सितेन, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन,

सीमन्तितं सागरमथनसामर्षगङ्गास्रोतः संदानितमिव मन्दरंदेहमुद्वहन्तम्, कर्पूरक्षोदमुष्टिच्छुरणपांशुलेनेव कान्तोच्चकुचचक्रवाकयुगलविपुलपुलिनेनोरःस्थलेनस्थूलभुजायामपुञ्जितम्, पुरो विस्तारयन्तमिव दिक्चक्रम्, पुरस्तादीषदधोनाभिनिहितैककोणकमनीयेन पृष्ठतः कक्ष्याधिक्षिप्तपल्लवेनोभयतसंवलनप्रकटितोरुविभागेनहारीतहरितानिबिड़निपीडितेनाधरवाससाविभक्ततनुतर मध्यभागम्, अनवरतश्रमोप-

---

सीमन्तितं, सन्नद्धम् । **सागरेति**—सागरस्य, समुद्रस्य, मथनेन, सामर्षा, सकोपा, (पतिद्वेषादित्यर्थः) या गङ्गा, भागीरथी, तस्याः, स्रोतसा, प्रवाहेण, सन्दानितमिव, बद्धमिव, मन्दरं, मन्दराचलम्, इव, देहं, शरीरं, उद्वहंतम्। **कर्पूरेति**—कपूरस्य, क्षोदः, चूर्णं, तस्य मुष्टिः, (मुष्टिनिहित कपूरामतिभावः) तस्य च्छुरणं, लेपनं, तेन, पांशुलं, शुभ्रं, तेन । **कान्तेति**—कान्तायाः, स्त्रियाः, उच्च कुचावेव, स्तनौ, एव, चक्रवाकयुगलं, चक्रवाकमिथुनं, तस्य विपुलं, वृहत्. पुलिनं, सैकतं, तेनेव, उरःस्थलेन, वक्षःस्थलेन । **स्थूलेति**—स्थूलेन, पीनेन भुजयोः, आयामेन, विस्तारेण, पुञ्जितं, समाहृतं, दिक्चक्रं, दिङ्मण्डलं, पुरः, अग्रे, विस्तारयन्तमिव, प्रसारयन्तमिव । **अधोनाभीति**—नाभेरधः अधोनाभिः, तत्र, निहितः, स्थापितः, एकः, कोणः, अंशः, तेन, कमनीयं, लावण्यमयं, तेन पृष्ठतः, पश्चात् । **कक्ष्येति**—कक्ष्यायाः, काञ्च्याः, "कक्ष्या वृहतिकायां स्यात् काञ्च्यांमध्येभबन्धने" इति मेदिनी" अधिक्षिप्तः, वद्धः, पल्लवः, प्रान्तभागो यस्य तेन, उभयतः, उभयोः, भागयोः, संवलनेन, सङ्कोचनेन, प्रकटितः, प्रकाशितः, उर्वोर्विभागः, येन, तथाभूतेन, (ऊरुशब्दोऽत्र पाद मात्राभिव्यञ्जकः) हारीत हरिता, हारितः, पक्षिविशेषः, तद्वत् हरिद्वर्णं तेन, निविड़ निपीड़ितेन, सुदृढ़निबद्धेन, अधर वाससा, परिधान वस्त्रेण, विभक्तः, प्रकटितः (विभाजितो वा) तनुतरः, अतिकृशः, मध्यभागः, कटिप्रदेशः, यस्य, तम् । **अनवरतेति**—अनवरतं, निरन्तरं, कृतः, यः, श्रमः

चितमांसकठिनविकटमकरमुखसंलग्नजानुभ्यां विशालवक्षःस्थलोपलवेदिकोत्तम्भन शिलास्तम्भाभ्यां चारुचन्दनस्थासकस्थूलकान्तिभ्यामुरुदण्डाभ्यामुपहसन्तमिवैरावतकरायामम्, अतिभरितोरुभारवहनखेदेनेव तनुतरजङ्घाकाण्डं, कल्पपादपपल्लवपाटलस्योभयपार्श्वावलम्बिनः पादद्वयस्य दोलायमानैर्नखमयूखैरश्वमण्डनचामरमालामिव रचयन्तम्, अभिमुखमुच्चैरुदञ्चद्भिरनिचिरमुपरिविश्राम्यद्भिरिव वलितविकटम्, पत-

व्यायामः, तेन, उपचितं, प्रवृद्धं, यत् मांसं, तेन, कठिनं, दृढं, विकटं, वृहत्, मकरमुखं, जानुनोरुपरि प्रदेशं, तेन, संयते, संलग्ने, जानुनी, ययोः, ताभ्याम्। विशालेति—विशालं, वृहत्, यत् वक्षः स्थलं, उरुतटं, तदेव उपलवेदिका, प्रस्तररचितवेदिका, तस्याः, उत्तम्भनाय, धारणाय, शिला स्तम्भौ, पाषाण स्तम्भौ, (तत्स्वरूपाविनिभावः) ताभ्याम्। चार्विति—चारुणा, लावण्यवता, चन्दनस्थासकेन, बिन्यस्तमलयजेन, स्थूला, अतिशया, कान्तिः, प्रभा, ययोः, ताभ्यां, उरुदण्डाभ्यां, जङ्घाप्रदेशाभ्यां, ऐरावत कराऽऽयामम्। इन्द्र वारण शुण्डादण्ड विस्तारम्, उपहसन्तमिव, हास्यं कुर्वाणमिव। अतिभरितेति—अति, अत्यर्थं, भरितयोः, पूरितयोः, उर्वोः, भारस्य, वहनेन, धारणेन, यः खेदः, परिश्रमः, तेनेव, तनुतरः, अतिकृशः, जङ्घाकाण्डः, जानू, अधोभागः, यस्य तं। कल्पपादपेति—कल्पपादपस्य, कल्पतरोः, पल्लवः, किसलयः, तद्वत्, पाटलं, ईषद्रक्तं, तस्य, उभयपार्श्वावलम्बिनः, उभयोः, द्वयोः, पार्श्वयोः, पार्श्वभागयोः, आलम्ब्यते, इति तादृशस्य, पादद्वयस्य, पादयुगलस्य, दोलायमानैः, प्रकम्पमानैः, नखमयूखैः, नखकिरणैः,ः। अश्वेति—अश्वस्य, तुरगस्य, (स्व वाहनस्येति भावः) मंडनं अलंकरणं, चामरमाला, तामिव, रचयन्तम्, कुर्वन्तम्। अभिमुखेति—अभिमुखं, सम्मुखं, उच्चैः, उदञ्चद्भिः, उत्पतद्भिः, अनिचिरं, अतिसमयं, विश्राम्यद्भिरिव, विश्रामं कुर्वद्भिरिव, बलितं, गतिबिशेषः, तेन, विकटं, उद्भटं यथा स्यात्तथा पतद्भिः, उच्च-

द्भिः खुरैः खण्डितभुवि प्रतिक्षणदशनविमुक्तखणखणायितखरखलीने दीर्घघ्राणालीनलालिकेललाटलुलितचारुचामीकरचक्रके शिञ्जानशातकौम्भजयनशोभिनि मनोरंहसि गोलाङ्गूलकपोलकालकायलोम्नि नीलसिन्धुवारवर्णा वाजिनीसमारूढम्, उभयतः पर्याणपट्टाश्लिष्टहस्ताभ्यामासन्नपरिचारकाभ्यांदोधूयमानधवलचामरिकायुगलम्, अग्रतः पठतो

लद्भिः, खुरैः, शफैः, खण्डितभुवि, खण्डिता, खण्डशः कृता, (उत्पाटितेतिभावः) भूः, पृथ्वी, येन, तादृशेन, प्रतिक्षणं, वारम्वारं, दशनैः, दन्तैः, विमुक्तः, अपसारितः, तेन खणखणायितः, खण खण शब्दवत्, कृतः, खरः, कर्कशः, खलीनः, कविका, (चर्वितेतिभावः) येन तथाभूते। दीर्घेति—दीर्घायां, वृहत्यां, घ्राणायां, नासिकायां, लीनः, लग्नः, लालिकः, कविकाशेखरं यस्य तादृशे, ललाटे, मस्तके, लुलितं, चञ्चलितं, (वेगनेतिभावः) चारुः, सुन्दरं, यत्, चामीकरचक्रं, सुवर्णवलयं, यस्य, तथोक्ते। शिञ्जानेति—शिञ्जानं, यत्, शातकौम्भजयनं, "जयनं स्यात्तुरङ्गादि सन्नाहे" इति मेदिनी" स्वर्ण रचित अश्ववर्म, तेन शोभिते, मनोरंहसिः, मन इव रंह, वेगः, यस्य तादृशे। गोलाङ्गूलेति—गोलांगूलः, कृष्णमुखवानरः, (लंगूर इति प्रसिद्धः) तस्य कपोलवत्, गण्डप्रदेशवत्, कालाः, कृष्णवर्णाः, कायलोमानि, शरीररोमाणि, यस्य तादृशे। नीलेति—नीलं, यत्, सिन्धुवारं, तदाख्य पुष्पं, तस्यैव वर्णो, यस्यतथाभूते। वाजिनि, अश्वे, समारूढम्, स्थितं, उभयतेति—उभयतः (उभयोः पार्श्वयोरित्यर्थः) पर्याणेति—पर्याणपट्टः, अश्वपृष्ठस्थितासनः, तस्मिन्, आश्लिष्टः, संयतः, हस्तः, (वामकरः, इतिभावः,) याभ्यां, तथोक्ताभ्यां, आसन्नपरिचारकाभ्यां, पार्श्ववर्तिभ्यां, दोधूयमानं, बीज्यमानं, धवलं, शुभ्रं, चामरिकायुगलम्, चामरयुग्मम्। अग्रतः, पुरस्तात्, पठतः, पठनशीलस्य, वन्दिनः, स्तुतिपाठकस्य, सुभाषितेन, सुभाषणेन, अकण्टकिते, रोमाञ्चिते, कपोलफलके, गण्डतटे, यत्र

वन्दिनः सुभाषितमुत्कण्टकितकपोलफलकेन लग्नकर्णोत्पलकेसरपक्ष्मशकलेनेव मुखशशिना भावयन्तम्, अनङ्गयुगावतारमिव दर्शयन्तम्, चंद्रमयीमिव सृष्टिमुत्पादयन्तम्, विलासप्रायमिव जीवलोकं जनयन्तम्, अनुरागमयमिव सार्गान्तरमानयन्तम्, शृङ्गारमयमिव दिवसमापादयन्तम्, रागराज्यमिव प्रवर्तयन्तम्, आकर्षणाञ्जनमिव चक्षुषोः, वशीकरणमन्त्रमिव मनसः, स्वस्थावेशचूर्णमिवेन्द्रियाणाम्, असन्तोषमिव कौतुकस्य, सिद्धयोगमिव सौभाग्यस्य, पुनर्जन्मदिवसमिव मन्मथस्य,

---

तथाभूतेन। लग्नेति—लग्नानि, संसक्तानि, कर्णोत्पलस्य, कर्ण भूषणभूतस्य, कुमुदस्य, केसराणि किंजल्कानि, पक्ष्माणि, नेत्ररोमाणि, (तेषां) शकलानि, खण्डानि, यस्मिन्, तेनेव, मुखशशिना, मुखचन्द्रेण, भावयन्तं. चिन्तयन्तं। अनङ्गेति—अनङ्गस्य, कामस्य, युगे, समये, अवतारः, अवतरणं, (जन्मग्रहणमितियावत्) तमिव, जीवलोकं, मर्त्यलोकं, दर्शयन्तं, चन्द्रमयीमिव, चन्द्रप्रायमिव, सृष्टिं, सर्गं, उत्पादयन्तम्। विलासप्रायमिव, कामोद्भवानन्दमिव, जीवलोकं, जनयन्तम्। अनुरागमिव, प्रेमातिशयमिव, मार्गान्तरं, पन्थानं, तद्भागं च, आनयंतं, प्रापयन्तम्। शृंगारमयमिव, शृंगाराख्यरसमिव, दिवसं, दिनं, आपादयन्तम्, कुर्वन्तम्। रागराज्यमिव, रागः, स्नेहः, तस्यराज्यमिव, एकाधिपत्यमिव, प्रवर्तयन्तम्। आकर्षणाञ्जनमिव, वशीकरणकज्जलमिव, चक्षुषोः, नेत्रयोः, मनसः, चित्तस्य, वशीकरणमंत्रमिव, वशीकर्तुं मंत्रप्रयोगमिव, इन्द्रियाणां, ज्ञानकर्मेन्द्रियाणां, (चक्षुरादीनामित्यर्थः) स्वस्थावेशचूर्णमिव, (स्वस्ययथास्थात्तथा आवेशयतीति तथाभूतं) चूर्णं, वशीकरणद्रव्यं, तदिव। असंतोषमिव, अतृप्तिमिव. कौतुकस्य, आश्चर्यस्य। सौभाग्यस्य, सौजन्यतायाः, सिद्धयोगमिव, सिध्यै, (कार्याणामित्यर्थः) योगः, उपायः, तमिव। मन्मथस्य, कामस्य, पुनर्जन्म दिवसमिव, अपरजन्मदिनमिव। यौवनस्य, रसायनमिव, औषधमिव, (गुणान्तराधानमित्यर्थः)

रसायनमिव यौवनस्य, एकराज्यमिव रामणीयकस्य, कीर्तिस्तम्भमिव रूपस्य, मूलकोषमिव लावण्यस्य, पुण्यकर्मपरिणाममिव संसारस्य, प्रथमाङ्कुरमिव कान्तिलतायाः, सर्गाभ्यासफलमिव प्रजापतेः, प्रतापमिव विभ्रमस्य, यशः प्रवाहमिव वैदग्ध्यस्य. अष्टादशवर्ष देशीयं युवानमद्राक्षीत् ।

पार्श्वे च तस्य द्वितीयमपरसंश्लिष्टतुरङ्गम्, परंप्रांशुमुत्तप्ततपनीय स्तम्भावदातं, परिणतवयसमपि व्यायामकठिनकायम्, नीचनखश्मश्रुकचम्, शुक्तिखलतिम्, ईषत्तुन्दिलम्, रोमशोरः स्थलम्,

रामणीयकस्य. सौन्दर्यस्य, एकराज्यमिव, अद्वितीयमिव । कीर्तिस्तम्भमिव, यशस्तम्भमिव, रूपस्य । मूलकोषमिव, प्रधाननिधिक्षेत्रमिव, लावण्यस्य, सौन्दर्यस्य, संसारस्य, प्रजायाः, पुण्यकर्मपरिणाममिव, पुण्यफलमिव, कान्ति लतायाः, प्रभावल्लर्याः, प्रथमाङ्कुरमिव, प्ररोहमिव, प्रजापतेः, ब्रह्मणः, सर्गाभ्यासफलमिव । सर्गस्ययत् करणं, निर्माणं, तत्र यः, अभ्यासः, (अभ्यसनमभ्यासः,) कर्मणि प्रौढत्वं तस्य यत् फलं, तमिव । विभ्रमस्य, विलासस्य, प्रतापमिव, कान्तिप्रवाहमिव । वैदग्ध्यस्य, नैपुण्यस्य, यशः प्रवाहमिव, यशसां, यत् प्रस्रवणं विस्तारं तमिव । अष्टादश वर्ष देशीयं, अष्टादशवर्षवयस्कं, युवानं, प्रौढं, पुरुषं अद्राक्षीत्, अपश्यत् ।

पार्श्वेच तस्य, (दधीचस्येत्यर्थः) द्वितीयं, अपरं, अन्यं, संश्लिष्टतुरङ्गम्, संसक्तं, (अश्वारूढमित्यर्थः) परं, अधिकं, प्रांशुं, उन्नतशरीरकमितियावत् । **उत्तप्तेति**—उत्तप्तं, प्रज्वलितं, यत्, तपनीयं सुवर्णं, तस्य स्तम्भवत्, स्थूणावत्, अवदातः, गौरवर्णः, तं, परिणतवयसमपि, परिणतम्, परिपाकतांगतम्, वयः, अवस्था, यस्य तं, तथाभूतमपि, (वृद्धमपीति यावत्) व्यायामेन, निरन्तरअङ्गप्रचालनपरिश्रमेण, काठिन्यतांप्राप्ताकाया, शरीरं, यस्य तं, नीचाः, निम्नाः, (लम्बमानाः, इतिभावः) नखाः, श्मश्रवः, मुखबाला

अनुल्बणोदारवेशतया जरामपिविनयमिव शिक्षयन्तम्, गुणानपि गरिमाणमिवानयन्तम्, महानुभावतामपि शिष्यतामिवजनयन्तम्, आचारस्याचार्यकमिवकुर्वाणम, धवलवारबाणधारिणम्, धौतदुकूलपट्टिकापरिवेष्टितमौलिं पुरुषम्।

अथ स युवा पुरोयायिनां यथा दर्शनं प्रतिनिवृत्य विस्मयमानमनसां कथयतां पदातीनां सकाशादुपलभ्यदिव्याकृति, तत्कन्यायुगल-

कचाः, केशाश्च यस्य, तं, तथाविधं, शुक्तिखलतिं, शुक्तिवत्, शंबूकवत्, खलतिं, खलवाटम्, ईषत्, किंचित्, तुन्दिलं, स्थूलोदरं, रोमशं, बहुलोमयुक्तं, उरःस्थलं, वक्षःस्थलं, यस्य तथाभूतं। **अनुल्बणेति**— अनुल्बणं, अनुत्कटः, (सौम्येतिभावः) उदारः, विशुद्धः, वेशो, (सौम्य वस्त्र परिधारणमित्यर्थः) यस्य, तस्य भावः तत्ता, तया, जरामपि, वृद्धत्वमपि, विनयमिव, अतिनम्रभावमिव, शिक्षयन्तं, (पाठयन्तमित्यर्थः) गौरव मिव, गरिमाणमिव, गुणानपि, दाक्षिण्यादीनपि, गरिमाणं, गौरव तां, आनयन्तं, प्रापयन्तं। महानुभावतामपि, उदारतां (महत्वतामितियावत्) शिष्यतां, छात्रतां, जनयन्तं, उत्पादयन्तं, आचारस्य, आचार्यकं, (अध्यापकत्व मित्यर्थः,) कुर्वाणं, कुर्वन्तं, (विद्यानिपुणत्वादितिभाव;) धवल वारबाण धारिणं, धवलं, सितं, यत् वारबाणं, (वारयतिदूरीकरोतिबाणं शरमिति वारबाणं,) कवचं, तं, धारिण, **धौतेति**—धौतया, प्रक्षालितया, दुकूल पट्टिकया, वस्त्रखण्डिकया, परिवेष्टितः, परिक्लिष्टः, मौलिः, चूडा यस्य पुरुषं, ददर्शेतिशेषः।

अथेति—स युवा, पूर्वनिर्दिष्टस्तरुणः, पुरोयायिनां, अग्रगामिनां, यथा- दर्शनं, (पूर्वोक्तशिलातलेस्थितां, दृष्ट्वेत्यर्थः) प्रतिनिवृत्य, पुनरागत्य, विस्मयमानसां, विस्मयमानं, आश्चर्यान्वितं, मनः, येषां तथोक्तानां, कथयतां, वदतां, पदातीनां, पदसैन्य चारिणां, सकाशात्, पार्श्वतः, उपलभ्य, ज्ञात्वा,

मुपजात कुतूहलः प्रतूर्णतुरगो दिदृक्षुस्तं लतामण्डपोद्देशमाजगाम। दूरादेव च तुरगादवततार। निवारितपरिजनश्च, तेन द्वितीयेन साधुना-सह चरणाभ्यामेव सविनयमुपससर्प। कृतोपसंग्रहणौ तौ सावित्री समं सरस्वत्या किसलयासनदानादिना कुसुमफलार्घ्यावसानेन वनवासोचितेनातिथ्येन तथाक्रममुपजग्राह। आसीनयोश्च तयोरासीना नातिचिरमिव स्थित्वा तं द्वितीयं प्रवयसमुद्दिश्यावादीत्—'आर्य, सहजलज्जा धनस्य प्रमदाजनस्य प्रथमाभिभाषणमशालीनता, विशेषतो वनमृगीमु-

---

दिव्या, दर्शन योग्या, आकृतिः, मूर्तिः-एवंभूतंतत् कन्यायुगलम्, दृष्टकन्यायुग्मं, उपजातकुतूहलः, उपजातः, उत्पन्नः, कुतूहलः, (दर्शनाभिलाष इत्यर्थः) प्रतूर्णतुरगः, विद्रुताश्वः, दिदृक्षु, द्रष्टुमिच्छु, तस्यपूर्ववर्णितस्य, लतामण्डपस्य, उद्देशं, प्रान्तभागं, आजगाम, आगतः, दूरादेव च, दूरतः, तुरगात्, अश्वात्, अवततार, निवारितपरिजनश्च, निवारितः, निषेधितः, परिजनः, पार्श्ववर्तीजनः येन तथाभूतः, तेन द्वितीयेन, अपरेण, साधुना सह वृद्धेनसार्धं, चरणाभ्यामेव, पादाभ्यामेव, सविनयं, यथा स्यात्तथा, उपससर्प, अगमत्। (चरणाभ्यामेवेत्यत्राति विनयं,सूच्यते) कृतोपसंग्रहणं, कृतं, विहितं, उपसंग्रहणं, सम्मानेनग्रहणं, प्रणामादिकं वा ययोः, तथाभूतौ। किसलयासन दानादिना, पल्लवनिर्मितआसनदानादिना, कुसुमफलार्घ्या वसानेन, कुसुमेन, पुष्पेण, फलेन च, यत् अर्घ्यं, अर्घ्यदानं (पूजनमित्यर्थः) तदेव, अवसानं, अन्तं, यस्य, तेन, वनवासोचितेन, वनवासयोग्येन, (नहिवनवासे नगर वस्तूनि लभ्यन्ते अतः) आतिथ्येन, अतिथिसत्कारेण, यथाक्रमं, यथानियमं, उपजग्राह, आदरं चकार (आदृत वतीतिभावः) आसीनयोः, उपविष्टयोः, तयोः, आसीना, स्थिताः, किंचिच्चिरं विलम्ब्य, तं द्वितीयं, प्रवयसं, स्थविरावस्थाकं, उद्दिश्य, उद्देश्यमभिनीय, अवादीत्, **सहजेति**—सहजा, स्वाभाविका, लज्जातदेव धनं, यस्य एवंभूतस्य प्रमदाजनस्य, कुलस्त्रीजनस्य, प्रथमाभिभाषणं,

ग्धस्य कुलकुमारीजनस्य । केवलमियमालोकनकृतार्थाय चक्षुषे स्पृहयन्ती प्रेरयत्युदन्तश्रवणकुतूहलिनीश्रोत्रवृत्तिः । प्रथमदर्शनेचोपायनमिवोपनयति सज्जनः प्रणयम् । अप्रगल्भमपि जनं प्रभवता प्रश्रयेणार्पितं मनोमध्विव वाचालयति । अयत्नेनैव चातिनम्रेसाधौ धनुषीव गुणाः परां कोटिमारोपयति विस्रम्भः । जनयन्ति च विस्मियमतिधीरधियामदृष्टपूर्वा दृश्यमाना जगति स्रष्टुः सृष्ट्यतिशयाः । यतस्त्रिभुवनाभिभावि रूपमिद

प्रथमं, प्राक्, अभिभाषणं, आलापनं, अशालीना, धृष्टता, (चापल्यमिति भावः) विशेषतः, प्रायेण, वनमृगीमुग्धस्य, वनस्यमृगी, हरिणी, तद्वत् मुग्धः, सरलः तस्य, (वनमृगी इत्यत्र जनसम्पर्क राहित्यं व्यज्यते) कुलकुमारीजनस्य, (प्रथमाभिभाषणानौचित्यमेवेत्यर्थः) केवलं, इयंश्रोत्रवृत्तिः, श्रवणेन्द्रियव्यापारः, आलोकनेन दर्शनेन, (युवयोरितियावत्) कृतार्थाय, मनोरथसिध्यै, चक्षुषे, नयनाय, स्पृहयन्ती, स्पृहां कुर्वन्ती, (नेत्रवद् स्वयमपि कृतार्थतां गंतुमिच्छन्तीत्यर्थः) उदन्तस्य, वृत्तस्य, (युवयोरितिभावः) श्रवणे, श्रोत्रविषयी करणे, कुतूहलिनी, उत्पन्नकुतूहला, प्रेरयति, नियोजयति, (आलापयितुमामिति शेषः) प्रथमं, अपूर्वमित्यर्थः । दर्शनं, अवलोकनं, तस्मिन्, उपायनमिव, उपहारमिव, प्रणयं, स्नेहं, सज्जनः, साधुजनः, उपनयति, प्रकटयति । अप्रगल्भमपि, मुग्धमपि, जनं, प्रभवता, महता, प्रश्रयेण, विनयेन (विश्वासेनेत्यर्थः) अर्पितं, दत्तं, (सज्जनायत्तीकृतमितिभावः) मनः चित्तं, मधु इव, मद्यमिव, वाचालयति, वाचालं करोति । **अयत्नेति**—अयत्नेनैव, परिश्रमंविनैव, अतिनम्रेसाधौ, विनीतसाधुजने धनुषीव, कार्मुकेइव, गुणाः, विनयादि, (मौर्वीच,) परां कोटिं, परममुत्कर्षं, (धनुषः शिखाञ्च) आरोपयति, स्थापयति, विश्रम्भः, विश्वासः, अतिधीरधियां, अतिधीराधीः, बुद्धिर्येषां तथा विधानां, अदृष्टपूर्वाः, पूर्वमनवलोकिताः, दृश्यमानाः, दृष्टिपथं प्राप्ताः, स्रष्टः, विधातुः सृष्टिः, सर्गः, तस्याअतिशयाः,

मस्यमहानुभावस्यकुमारस्य । सौजन्यपरतन्त्रा चेयं देवानांप्रियस्याति-भद्रता कारयति कथां, न तु युवतिजन सहोत्था तरलता । तत्कथयागम नेनापुण्यभाक्कतमोविक्रमजृम्भित विरहव्यथयाशून्यतां नीतो देशः । क वा गन्तव्यम् । कस्य वायमपहृतहरहुङ्काराहंकारोऽपर इवानन्यजो युवा ।

उत्कर्षाः (सर्वश्रेष्ठ वस्तूनीतिभावः) यतः, त्रिभुवनाभिभाविरूपमिदं, त्रिभुवनस्य, भूःभुवः स्वः, इत्यस्य, अभिभावितं, तिरस्कृतं, रूपं येन, तथोक्तस्य, महानुभावस्य (योग्यस्येत्यर्थः) कुमारस्य (दधीचस्येति) विस्मयं, आश्चर्यं, जनयन्ति, उत्पादयन्ति । **सौजन्येति**—सौजन्यस्य, सौभाग्यस्य, परतन्त्रा, पराधीना, इयं, देवानां, गीर्वाणाना, (पूज्यानामित्यर्थः) अतिभद्रता, शिष्टाचारः, (तवसमीपे इतिभावः) कथां कारयति, (वदतीत्यर्थः) (देवानांप्रियः, इति मूर्खे केचिद् व्याहरन्ति परंनात्र मूर्खशब्दवाचकोऽयं शब्दः प्रणयातिशय बोधकोयमत्र) युवतिजन सहोत्था, युवतिजनानां, प्रौढस्त्रीणां, सहोत्था, नैसर्गिकी, तरलता, चाञ्चल्यं, नतुकथां कारयतीति पूर्वेण-सम्बंधः । अथमुनिशापं विचिन्त्य सरस्वत्याः, भर्तृयोग्यतां दधीचस्य च मनसि निधाय परिचयंपृच्छति । **तत्कथयेति**—तत्, तस्मात्, कथय, वद, आगमनेन कतमोदेशः, अपुण्यभाक्, पुण्यरहितः, कृतः, विक्रमजृम्भितविरहव्यथया, विक्रमेण, वलेन, जृम्भिता, उद्दीपिता, या बिरहव्यथा, वियोगपीड़ा, (युवयोरित्यर्थः) तया, शून्यतांनीतः (यस्मादेशाद्भवन्तावागतौ सदेशः सांप्रतं युवयोः विच्छेदेनातितरं दुःखमनुभवति एतदेव तस्यापुण्यभाक्त्वमित्यर्थः) क्ववा गमनं युवयोः **कस्येति**—(कस्यापत्यमित्यर्थः,) **अपहृतेति**—अपहृतः, नाशितः, हरस्य, शिवस्य, हुङ्काराहङ्कारः, गर्वः, येन, तथाभूतः (हर क्रोधानलेनादग्धइत्यर्थः,) अनन्यजः, नास्ति अन्यस्माज्जन्म यस्यसोऽनन्यजः, आत्मभूः, कामः, एवंभूतोऽयं युवा, तरुणः, कस्येति पूर्वेणान्वयः । किन्नाम्नः, किंनामाभिधेयस्य, समृद्धः, प्रवृद्धः, तपः, यस्य, पितुः (पातिरक्षतीति पिता)

किं नाम्नः समृद्धतपसः पितुरयममृतवर्षी कौस्तुभमणिरिवहरेर्हृदय-माह्लादयति। का चास्य त्रिभुवननमस्या प्रभातसन्ध्येव महतस्तेजसो-जननी। कानि वास्य पुण्यभाञ्जि भजन्त्यभिख्यामक्षराणि, आर्ये परि-परिज्ञानेऽप्ययमेव क्रमः कौतुकानुरोधिनोहृदयस्य' इत्युक्तवत्यां तस्यां प्रकटितप्रश्रयोऽसौ प्रतिव्याजहार 'आयुष्मति, सतां हि प्रियंवदता कुल-विद्या। न केवलमाननं हृदयमपि च ते चन्द्रमयमिव सुधाशीतलैरान-न्दयति वचोभिः। सौजन्य जन्मभूमयो भूयसाशुभेन सज्जननिर्माणशि-

तस्य अमृतवर्षी, अमृतं, पीयूषं, वर्षति, सिञ्चतीति, अमृतवर्षी, कौस्तुभमणि-रिव, तदाख्यरत्नमिव, हरेः, विष्णोः, हृदयं, चित्तं, आल्हादयति, आनन्दयति, (यथा कौस्तुभमणिः हरेः, हृदयमानन्दयति, तथैवायमपि आनन्दयति जनानां चेतांसीत्यर्थः) (कौस्तुभमणेरमृतप्रस्रवणं प्रसिद्धम्) का चास्य (पुरोदृश्य-मानस्येतिभावः) त्रिभुवननमस्या, त्रिलोकीपूज्या, प्रभातसंध्येव, प्रातः काली-नसंध्येव, महतस्तेजसः, समृद्धकान्तेः, जननी, माता (संध्या समये सर्वेऽपि प्राणिनः भगवद्स्मरणं कुर्वन्ति, अतः त्रिलोकीपूज्येतिभावः) तामिव। (उपमा) कानि वास्य, पुण्यभाञ्जिपुण्यवन्तीत्यर्थः। अभिख्यां, संज्ञां, भजन्ति, कथय-न्तीत्यर्थः, अक्षराणि, वर्णाः, (किंनामधेयोयमितिभावः) आर्यपरिज्ञानेऽपि, अयं साधुरितिज्ञानेऽपि, कौतुकानुरोधिनः विशेषपरिचय कर्त्रेः, हृदयस्य, चित्त-स्य, अयमेवक्रमः, नियमः (ज्ञानपरम्परा, इत्यर्थः) इत्युक्तवत्यां, एवं कथयन्त्यां, तस्यां, (साविच्यामित्यर्थः) प्रकटित प्रश्रयः, दर्शितसौजन्यः, असौ, प्रतिव्या-जहार, प्रत्युत्तरमदात्। **सतामिति**—सतां, सज्जनानां, प्रियंवदता, मधुरभाषित्वं, कुलविद्या, वंशपरम्परागतकला, (नैसर्गिकीविद्येत्यर्थः) न केवलमाननं, मुखं, अपितु हृदयमपि, चित्तमपि. ते, चन्द्रमयमिव, शशित्वमिव, सुधाशीकर शीतलैः, अमृतविन्दुवच्छिशिरैः, बचोभिः, बचनैः (मधुरालापैरित्यर्थः) आनन्दयति. प्रीणयति। **सौजन्येति**—सौजन्यस्य, सदाचारस्य, जन्मभूमयः,

ल्पकला भवादृश्यो जायन्ते। दूरे तावदन्योन्यस्यालापनमभिजातैःसह् दृशोऽपिमिश्रीभूतामहतीं भूमिमारोपयन्ती। श्रूयताम् अयं खलु भूषणंभार्गववंशस्य भगवतो भूर्भुवःस्वस्त्रितयतिलकस्य, अदभ्रप्रभावस्तम्भितजम्भारिभुजस्तम्भस्य, सुरासुरमुकुटमणिशिलातलशयन दुर्ललितपादपङ्केरुहस्य, निजतेजः प्रसरप्लुष्टपुलोम्नश्च्यवनस्य वहिर्वृत्तिजीवितं

उत्पत्तिस्थानानि, भूयसा, वहुलेन, शुभेन, पुण्येन, सज्जननिर्माणे, रचेन, शिल्पकला, शिल्पविद्या, इव, भवादृश्यः, भवत् शदृशाः, जायन्ते, उत्पद्यन्ते। दूरे-इति—अन्योन्यस्य, परस्परस्य, (सज्जनानामितिशेषः) आलापनं, भाषणं, दूरे, तावत्, (तिष्ठन्त्वित्याध्याहार्यम्) अभिजातैः, सत्कुलोत्पन्नैः, सह, सार्धं, मिश्रीभूताः, संमिश्राः, दृशोऽपि, दृष्टयोऽपि, महतींभूमिं, स्थानं, (स्वर्गमितियावत्) आरोपयन्ति, नयन्ति। अयंखलु, भूषणं, अलङ्कारणं, भार्गववंशस्य, भृगोरयंभार्गवः, तस्य, वंशं, कुलं, तस्य,। भगवतः, भूः, पृथिवी, भुवः, अन्तरीक्षं, स्वः, स्वर्गः, तेषां त्रितयं, तस्य तिलकं, शिरोभूषणं, तस्य। अदभ्रेति—अदभ्रः, महान्, प्रभावः, तेनस्तम्भितः, रुद्धः, जम्भारेः (जम्भः तदाख्यः, असुरस्तस्यारिशत्रुः) इन्द्रः, तस्य, भुजएवस्तम्भः, येनतथोक्तस्य, (पुरा अश्विनी कुमाराभ्यां, यज्ञभागभुजौकरू, इति प्रार्थितोऽयं तथा ताभ्यांभागं ददत्, क्रुद्धेन इन्द्रेण रोषित, ततश्चास्यसवज्रहस्तः, स्तम्भितोऽभूदितिपुराणे अवधेयम्) सुरासुरेति—सुराणां देवानां, असुराणां, राक्षसानां, "च" मुकुटेषु, मौलिषु, यानि मणिशिलातलानि, रत्नप्रस्तराः, तेषु, शयनेन, दुर्ललितं, दुर्गम्यं, (अत्यादृतमितिभावः) पादपङ्केरुहं, चरणकमलं, यस्य, तथाभूतस्य, (सुरासुर वन्द्यस्येत्यर्थः) निजेति—निजानां, स्वकीयानां, तेजसां, प्रसरेण, विस्तारेण, प्लुष्टः, दग्धः, पुलोमा, तदाख्यराक्षसः, येन, तथाभूतस्य, (पुरा गर्भवतीभृगोः पत्नी पुलोम्नाराक्षसेन हृता, तदानीं गर्भस्थोऽसौ मुनिर्गर्भाच्चुच्योत, ततश्चान्वर्थनाम्ना

दधीचो नाम तनयः। जनन्यस्यजितजगतोऽनेकपार्थिवसहस्रानुयातस्य शर्यातस्य सुता राजपुत्री त्रिभुवनकन्या रत्नं सुकन्यानाम। तां खलु देवीमन्तर्वत्नीं विदित्वा वैजनने मासिप्रसवाय पिता पत्युः पार्श्वात्स्वगृहमानाययत्। असूत च सा तत्र देवी दीर्घायुषमेनम्। अनेहसावर्धत तत्रैवायमानन्दितज्ञातिवर्गो बालस्तारकराजइव राजीवलोचनो राजगृहे। भर्तृभवन मागच्छन्त्यामपि दुहितरिनासेचनक दर्शनमिममभुञ्चन्माता-महोमनोविनोदनं नप्तारम्। अशिक्षतायं तत्रैवसर्वा विद्याः सकलाश्च-

---

नेनच्यवनेन राक्षसादग्धः पुराणे अनुसंधेयाचैषावार्ता) च्यवनस्य, च्यवननाम्नः बहिः, बहिर्प्रदेशे, वृत्तिः, अवस्थानं यस्य तादृशं, जीवितं, जीवनाश्रयः, दधीचोनाम, तनयः, पुत्रः, जितजगतः, जगद्विजयिनः, अनेकानि, बहूनि, पार्थिवानां, नृपाणां, सहस्राणि, तैः, अनुयातः, अनुगम्यमानः, (सेवितइत्यर्थः) तस्य-शर्य्यातस्य, तदाख्यराज्ञः, त्रिभुवनकन्यारत्नं, त्रिभुवने याः, कन्याः, तासु, रत्नभूता, सुकन्यानाम, सुकन्याभिधेया, अस्यजननी, माता। तांखलु, (सुकन्यामितियावत्) देवीं, अन्तर्वत्नीं, विदित्वा, ज्ञात्वा, वैजननेमासि, प्रसवाय, पिता, (शर्यातिः) पत्युः, (च्यवनस्य) पार्श्वात्, स्वगृहं, स्ववेश्म, आनाययत्, अनेहसा, कालेन, आनन्दितः, ज्ञातिवर्गः, कुटुम्बिजनः, बालस्तारकराज इव, बालचन्द्रइव, राजीवलोचनः, कमलाक्षः, तत्रैव, राजगृहे, मातामहवेश्मनि, भर्तृभवनमागच्छन्त्यामपि मातरि, (च्यवनपार्श्वसमागतामपिसुकन्यामित्यर्थः) आसेचनकं, अतितृप्तिकरं, दर्शनं यस्य, तदासेचनकंतृप्तेर्नास्त्यन्तो यस्य दर्शने। तथाभूतं, मनोविनोदं, मनसः, आनन्द जनकं, इमं, मातामहः, शर्यातिः, नप्तारं, दौहित्रं, (दुहिता दूरेहिता दोग्धेर्वा पितुः सकाशात्) न, अमुञ्चत्, न प्रेषितवानितभावः। सर्वाविद्याः, सकलाः, सम्पूर्णाः, कलाः, चतुष्षष्ठ्यात्मकाः, तत्रैव, अशिक्षत, शिक्षांलेभे। **कालेति**—कालेन, समयेन, उपारूढयौवनं, जातयौवनं, इमं,

कलाः। कालेन चोपारूढ यौवनमिममालोक्याहमिवासावप्यनुभवतु मुख कमलावलोकनानन्दमस्येति मातामहः कथंकथमप्येनंपितुरन्तिकमधुना व्यसर्जयत्। मामपि तस्य देवस्य सुगृहीतनाम्नः शर्यातस्याज्ञाकारिणं विकुक्षिनामानं भृत्यपरमाणुमवधारयतु भवती। पितुः पादमूलमायान्तं मया साभिसारमकोरोत्स्वामी। तद्धि नः कुलक्रमागतं राजकुलम्। उत्तमानां च चिरंतनता जनयत्यनुजीविन्यपि जने कियन्मात्रमपि मन्दाक्षम्। अक्षीणः खलु दाक्षिण्यकोशो महताम्। इतश्चगव्यूति मात्रमिव पारेशोणं तस्य भगवतस्च्यवनस्य स्वना-

---

आलोक्य, दृष्ट्वा, आह, उवाच, अहमिव (मत्सदृशमित्यर्थः) असावपि, (अस्यपिताच्यवनोऽपि,) अस्य, मुखकमलावलोकनसुखं, मुखपद्मदर्शने यत्सुखं, आनन्दः, तं, अनुभवतु, नयतु। (इतिविचार्येतिभावः) मातामहः, शर्यातिः, कथंकथमपि, अतिकृच्छ्रेण, पितुरन्तिकं, पितुः पार्श्वगमनाय, अधुना, साम्प्रतं, एनं, व्यसर्जयत्, प्रेषितवान्। मामपि, तस्यदेवस्य, नृपतेः, सुगृहीतनाम्नः, सुगृहीतंनाम यस्य तथोक्तस्य, (प्रातः स्मरणीयस्येतिभावः) शर्यातस्य, तदाख्यस्य, आज्ञाकारिणं, सेवापरायणं, विकुक्षिनामधेयं, भृत्यपरमाणुं, क्षुद्रतरं किंकरं, भवती, अवधारयतु, जानातु। पितुः पादमूलं, पितुः पार्श्वं, आयान्तं, आगच्छन्तं, (एनमितिशेषः) मया साभिसारं, ससहायं, स्वामी, प्रभुः, अकरोत्। (आज्ञापयदित्यर्थः) **तद्धीति**—तत्राजकुलं नः, अस्माकं, कुलक्रमागतं, (वंश परम्परासेवितमित्यर्थः) हीति (निश्चयार्थः) उत्तमानां, सज्जनानां, चिरंतनता, (चिरानुगत्यमित्यर्थः) अनुजीविनि, सेवके कियन्मात्रमपि, अल्पमात्रमपि, मन्दाक्षं, लज्जां, (चिरकालसेवके महतांलज्जा जायते, इति मामनुजीविनमपि स्वदौहित्र सहचरं कृतवानित्यर्थः) खलु, निश्चयेन, महतां दाक्षिण्यकोशः, औदार्यनिधिः, अक्षीणः, (नक्षयंप्राप्नोतीत्यर्थः) (स्वदाक्षिण्यादेवंकृतवानितिभावः) इतश्च, अस्मात् स्थानात्, पारेशोणं, शोणस्य, नद-

म्नानिर्मितव्यपदेशं च्यावनं नाम चैत्ररथकल्पं काननं निवासः। तदवधिरेवनौयात्रा। यदि च गृहीतक्षणं दाक्षिण्यमनवहेलं वा हृदयमस्माकमुपरि भूमिर्वा प्रसादानामयं जनः श्रवणार्हो वा ततो न विमाननीयोऽयं नः प्रथमः प्रणयः कुतूहलस्य। वयमपि शुश्रूषवो वृत्तान्तमायुष्मत्योः। नेयमाकृतिर्दिव्यतां व्यभिचरति। गोत्र नामनी तु श्रोतुमभिलषति नौ हृयम। तत्कथय कतमोवंशः स्पृहणीयतां जन्मना नीतः। का चेयमत्रभवती भवत्याः समीपे समवाय

स्य पारेइति पारेशोणम्, गव्यूतिमात्रं, क्रोशयुगं. (इव) तदेवतन्मात्रं, तस्मिन्, तस्य भगवतः, स्वनाम्ना, निर्मितः, कृतः, व्यपदेशः, संज्ञा यस्य तथोक्तं, चैत्ररथकल्पं, चैत्ररथं नाम कुबेरोद्यानं, (तत्सदृशमित्यर्थः) काननं, उद्यानं,तस्मिन्, निवासः, स्थितिः। नौ, आवयोः, यात्रा, गमनं, तदवधिरेव, तद्पर्यन्तमेव, गृहीतेति—गृहीतं, स्वीकृतं, क्षणदाक्षिरायं, स्वल्प कालीन चातुर्यं, येन तथाभूतं, अनवहेलं, नास्ति अवहेला, अवज्ञा, (अपमानं) यस्य तादृशं, अस्माकंहृदयं प्रसादानां, अनुग्रहाणां, भूमिः, स्थानं, श्रवणार्हः, श्रोतुंयोग्यः, अयंजनः, न, विमाननीयः, अनादरणीयः, (नोपेक्षणीय इतिभावः) नः, अस्माकं, अयं, प्रथमः, आद्यः, प्रणयः, स्नेहः, कुतुहलस्य, कौतुकस्य, (श्रवणौत्सुक्यस्येत्यर्थः) आयुष्मत्योः, युवयोः, वृत्तान्तं, इतिवृत्तं, शुश्रूषवः, श्रोतुमिच्छावः। ("वयमपि" इत्यत्र द्विवचनपदवाच्ये, आदरार्थवहुवचनम् नाशङ्कनीयोऽयंदोषः) इयमाकृति, दिव्यतां, देवत्वमित्यर्थः, न व्यभिचरति, नातिक्रामति, (नहि एतादृशी आकृतिर्दिव्यतांविनाभवितुशक्यते) गोत्रनामनी, गोत्रं, वंश प्रवर्तकं; नाम, अभिधेयं, च, श्रोतुं, कर्णविषयीकर्तुं, नौ, आवयोः, हृदयं, अभिलषति, इच्छति। तत्कथय, वद, कतमोवंशः, कुलं, जन्मना, जन्मग्रहणेन, स्पृहणीयतां, स्पर्धायोग्यतां, नीतः, (कस्मिन्कुले अस्या जन्म इतिभावः) इयं, पुरोदृश्यमानेत्यर्थः, अत्रभवती, पूज्या, भवत्याः, तव, समीपे, पार्श्वे, विरोधिनां, परस्पर विरु-

इव विरोधिनां पदार्थानाम् । तथाहि । संनिहितबालान्धकारा भास्वन्मूर्तिश्च, पुण्डरीकमुखी हरिणलोचना च, बालातपप्रभाधरा कुमुदहासिनीच, कलहंसस्वना समुन्नतपयोधरा च, कमलकोमलकरा हिम-

---

द्धानां, पदार्थानां, वस्तूनां, समवायइव, नित्यसंबंधइव, का, (एषाइतिशेषः) तथाहि, तमेवार्थमवगच्छेत्यर्थः । सन्निहित बालान्धकारा, सन्निहिताः, बालाः, नवाः, अन्धकाराः, तमांसि, भास्वन्मूर्तिश्च, भास्वतः, सूर्यस्य, मूर्तिः, (सूर्यमूर्तिसकासे अन्धकाराः नसम्भाव्यंते, अतः-विरोधः) सन्निहिताः, सङ्गताः, बालाः, केशाः, अन्धकारा तमांसि, इव यस्याः सा, भास्वन्मूर्तिः, भास्वती, दीप्यमाना, मूर्तिर्यस्यास्तथोक्ता, इतिपरिहारः । पुण्डरीकमुखी, पुण्डरीकः, तदाख्यदिग्गजः, सिंहो वा, तस्येव, मुखं, यस्याः, हरिणलोचना च, हरिण इव, मृगइव, लोचने, वत्रे यस्याः, तथोक्ता, (या च व्याघ्रमुखी सा हरिण लोचनाकथं, इति विरोधः) पुण्डरीकं, श्वेतपद्मं तद्वद्मुखंयस्याः, तथाभूता, हरिणलोचनाच, (याहि कमलमुखी सातुहरिण लोचनाभवितुं शक्या एवेतिपरिहारः) **बालातपेति**—बालातपस्य, सूर्यस्य, प्रभां, धरतीति, तथोक्ता, कुमदहासिनी च, कुमुदवत् हासोविद्यतेयस्याः, तथाभूता, (यत्र हि बालातपः, तत्र कुमुद हसनं, नैवसंभवति तस्य रात्रौ विकसन शीलत्वात् अतः विरोधः) बालातपः नवसूर्यालोकः, (ईषद्रक्तमित्यर्थः) तस्यप्रभेव, प्रभा, कान्तिः, यस्य तथाभूतः, अधरः, ओष्ठः, यस्याः, तथाभूता, इति परिहारः । **कलहंसेति**—कलः, मधुरः, हंसस्य, स्वनः, शब्दः, यस्याः, तथाभूता, सनुन्नतपयोधरा च, समुन्नताः, समुन्नद्धाः, पयोधराः, मेघाः, यस्यां तथोक्ता (प्रावृडित्यर्थः) (नहि प्रावृट्काले हंसानां स्वनःश्रूयते, यतः ते मानसं प्रयान्तितत्समये, अत-विरोधः) कलः, मधुरः, हंसस्येव, स्वनो यस्यास्तथोक्ता, समुन्नताः, प्रवृद्धाः, पयोधराः, स्तनाः, यस्यास्तथोक्ता, इतिपरिहारः । **कमलेति**—कमलं, पद्मं, तद् कोमलौ, करौ हस्तौ, यस्याः, तथोक्ता, हिमगिरेः, हिमालयस्य, शिलावत्, पृथुः,

गिरिशिलापृथुनितम्बा च, करभोरुर्विलम्बितगमना च, अमुक्तकुमारभावा स्निग्धतारका च, इति । सा त्ववादीत्-आर्य, श्रोष्यसिकालेन । भूयसो दिवासानत्र स्थातुमभिलषति नौ हृदयम् । अल्पीयांश्चायमध्वा । परिचय एव प्रकटीकरिष्यति । आर्येण न विस्मरणीयोऽयमनुषङ्ग दृष्टोजनः, इत्यभिधाय तूष्णीमभूत् । दधीचस्तु नवाम्भोभारगम्भीराम्भो

महान्, नितम्बः, कटकं, यस्याः, तथोक्ता, (याहि कोमलकरा साकथंहिमशिला पृथुनितम्बा तस्याश्चकाठिन्यत्वात् विरोधः । सादृश्यात्, यथाहिमगिरेः शिला प्रवृद्धाशुभाचभवति तथैवास्याः नितम्बमपिभाति, इतिपरिहारः । करभोरुः, करभस्य, उष्ट्रस्य, उरु इव उरुः-यस्याः तथाभूता, विलम्बितं, अतिमंदं, गमनं, यस्याः, तथोक्ता, (याउष्ट्रवद्गच्छति साकथंविलम्बितगमना इतिविरोधः) करभः, करप्रान्तभागः तद्वत्, उरुः, जङ्घायस्याः सा, (अतिकोमल जङ्घा अतएव विलम्बित गमना इति परिहारः । अमुक्तकुमारभावा, नमुक्तः, नत्यक्त, कुमार भावः, वाल्यं (शैशवमित्यर्थः) स्निग्धतारका, स्निग्धा, स्नेह प्रकाशिका, (प्रणयप्रकाशिनीत्यर्थः) तारका, अक्ष्णः कनीनिका, यस्यास्तथोक्ता (यथा वालभावः नत्यक्तः सानहिजानातिप्रेमबंधनं, इतिविरोधः । कुमारे, कार्तिकेये, भावः, भक्तिर्यस्याः तथोक्ता, इति परिहारः । स्निग्धः, प्रेमपात्रं, तारकः, तन्नाम दैत्यः, (कुमार भक्तायाः कुमार शत्रु प्रति स्नेहोविरुद्धः, इति पूर्वार्धपरिहारः) इति, एवं, सातु, अवादीत्, अकथयत् । आर्य ? कालेन, समयेन, श्रोष्यति, (अस्याः वृत्तमितियावत्) भूयसः, बहून्, दिवसान्, अत्र स्थातुं, नौ, आवयोः, हृदयं, अभिलषति, इच्छति । अल्पीयान्, अत्यल्पः, अध्वा, मार्गः, परिचयः, संस्तवः, प्रकटीकरिष्यति, प्रकाशयिष्यति । अनुषङ्ग दृष्टः, अनुषङ्गेण, कार्यान्तर संलग्ने, दृष्टः, अवलोकितः, अयंजनः (सरस्वतीरूपः) आर्येण, भवता, नविस्मरणीयः, स्मृतिपथंनेयः, रावेतिभावः, इत्यभिधाय, इत्युक्ता, तूष्णीमभूत्, मौनं दधार । **नवाम्भोभारेति**—नवानां,

धरध्वाननिभया भारत्या नर्त्तयन्वनलताभवनभाजो भुजगभुजः सुधीरमुवाच आर्य, करिष्यति प्रसादमार्याराध्यमाना । पश्यामस्तावत्तातम् । उत्तिष्ठ, व्रजामः, इति । तथेति च तेनाभ्यनुज्ञातः शनकैरुत्थाय कृतनमस्कृतिरुच्चचाल । तुरगारूढं च तम् प्रयान्तं सरस्वती सुचिरमुत्तम्भितपक्ष्मणा निश्चलतारकेण लिखितेनेवचक्षुषा व्यलोकयत् । उत्तीर्य शोणमचिरेणैवकालेन दधीचः पितुराश्रमपदं जगाम । गते च तस्मिन्सा तामेवदिशामालोकयन्तीसुचिरमतिष्ठत् । कृच्छ्रादिव च संजहार दृशम् अथ मुहूर्तमिवस्थित्वा स्मृत्वा च तां तस्य रूपसंपदं पुनः

नूतनानां, (सद्यसञ्चितानामित्यर्थः) अम्भसां, जलानां, भारेण, गम्भीरोयोऽम्भोधरध्वानः, पयोधरनादः, तन्निभया, तत्सदृशया, भारत्या, वाण्या, नर्तयन्, वनलताः, वल्लर्यः, एव, भवनानि, सद्मानि, भजन्ते, आश्रयन्ते, तथोक्तान् (भुजगान्, सर्पान्, भुञ्जते इति भुजगभुजः) तान्, मयूरान् । तैरिवयथास्यात्तथा, सुधीरं, धैर्यावष्टम्भपूर्वकं, उवाच, अगादीत् । आर्य ! आर्या, श्रेष्ठा, (एषा, इतिभावः) आराध्यमाना, सेव्यमाना, (सेवितेत्यर्थः) प्रसादं, अनुग्रहं, करिष्यति । पश्यामस्तावत्तात, पितरम् । उत्तिष्ठं, व्रजामः, गच्छामः । तथा, तेनप्रकारेण, तेनाभ्यनुज्ञातः, अनुमोदितः, शनकैः, शनैः, उत्थाय, कृतनमस्कृतिः, विहितनमस्कारः, उच्चचाल, प्रतस्थे । तुरगारूढं, अश्वारूढंचतं, प्रयान्तं, गच्छंतं, उत्तम्भितेन, निश्चलेन, पक्ष्मणा, निश्चलतारकेण, स्थिरकिनीनिकया, च, लिखितेनेव, चित्रितेनेव, चक्षुषा, नेत्रेण, सुचिरं, अतिसमयं, व्यलोकयत्, ददर्श । शोणमुत्तीर्य, शोणमदावतरणं विधाय, अचिरेणैव, सत्वरमेव, कालेन, समयेन, दधीचः, पितुराश्रमपदं, पितुः पादमूलं, जगाम, गतः । गते च तस्मिन्, (दधीचगमनानन्तरमित्यर्थः) सा-तामेवदिशं, तमेवदिग्भागं, आलोकयन्ती, पश्यन्ती, सुचिरं, बहुकालं, अतिष्ठत्, स्थितवती । कृच्छ्रात्, काठिन्येन, च, दृशं, दृष्टिम्, संजहार, न्यवर्तयत् ।

पुनर्व्यस्मयतास्याः हृदयम्। भूयोऽपि चक्षुराचकाङ्क्ष तद्दर्शनम्। अवशेव केनाप्यनीयत तामेव दिशं दृष्टिः। अप्रहितमपिमनस्तेनैव सार्धमगात्। अजायत च नव पल्लव इव बालवनलतायाः कुतोऽप्यस्या अनुरागश्चेतसि। सालसेव शून्येव सनिद्रेव दिवसमनयत्।

अस्तमुपयाति च प्रत्यक्पर्यस्तमण्डले लाङ्गलिकास्तबकताम्रत्विषि कमलिनीकामुके कठोरसारसशिरः शोणशोचिषि सावित्रे त्रयीम-

---

अथ, अस्मादनतरं, मुहूर्तमिव स्थित्वा, अल्पकालंस्थित्वा, तां, तस्य (दधीचस्येतियावत्) रूपसंपदं, रूपनिधिं (लावण्यमित्यर्थः) स्मृत्वा, च, स्मरणं विधाय, पुनः पुनः, बारंबारं, अस्याहृदयं, चित्तं, व्यस्मयत, विस्मयमगच्छत् भूयोऽपि, पुनरपि, चक्षुः, नेत्रं, तद्दर्शनं, आचकाङ्क्ष, ऐच्छत्। **अवशेति**— अवशेव, पराधीनेव, केनापि, केनचिदपि, तामेवदिशं, दिग्भागं, दृष्टिः, अनीयत, नीयते, **अप्रहितेति**—अप्रहितमपि, अप्रेरितमपि (अनियुक्तमपीत्यर्थः) मनः, चित्तं, तेनैवसार्धं, (दधीचेनसहेत्यर्थः) अगात्, अगमत्। बाल वनलतायाः, वनवल्ल्याः, कुतोऽपि, नवपल्लव इव, नूतनपत्र इव, अस्याः, (सरस्वत्या इतियावत्) चेतसि, मनसि, अनुरागः, स्नेहः, अजायत, उत्पन्नः, शून्येव, रिक्तेव, सालसेव, आलस्ययुक्तेव, सनिद्रेव, निद्रितेव, दिवसं, दिनं, अनयत्, अत्यवाहयत्।

अस्तमुपयाति, अस्तंगच्छति, प्रत्यक् पर्यस्तमंडले, प्रतीच्यां, पश्चिमायां-दिशि, पर्यस्तं, पतितं, मंडलं, यस्य तथाभूते। लाङ्गलिका, औषधविशेषः, तस्याः, यत्, स्तबकं, गुच्छं, तद्वत्, ताम्राः, रक्तवर्णाः, त्विषः, प्रभाः, यस्य तथाभूते। कमलिनीकामुके, (विकाशशीलेत्यर्थः) **कठोरेति**—कठोरः, कठिनः, (वृद्धत्वमुपगत इत्यर्थः) यः सारसः, पक्षिविशेषः, तस्यशिरइव, शोणा, रक्तवर्णा, शोचि, कान्तिः, यस्य, एवंभूते, सावित्रे, सवितुरिदं सावित्रं, तस्मिन् (सूर्ये) त्रयीमये, (ऋग्यजुः साम्नांत्रितयं त्रयी) तदात्मके, तेजसि,

येतेजसि, तरुणतर तमालश्यामले च मलिनयतिव्योमव्योमव्यापिनि तिमिरसंचये, संचरत्सिद्धसुन्दरी नूपुररवानुसारिणि च मन्दंमन्दंमन्दाकिनीहंसइव समुत्सर्पति शशिनि गगनतलम्, कृतसंध्याप्रणामानिशामुख एव निपत्य विमुक्ताङ्गी पल्लवशयने, तस्थौ। सावित्र्यपि कृत्वा यथाक्रियमाणं सायंतनं क्रियाकलापमुचिते शयनकाले किसलयशयनमभजत। जातनिद्रा च सुष्वाप।

इतरा तु मुहुर्मुहुरङ्गवलनैर्विलुलित किसलयशयनतला निमीलित-

(प्रभायुक्त इत्यर्थः) **तरुणेति**—तरुणतरः, नूतनः, तमालः, तदाख्यवृक्षः, तद्वत्, श्यामलः, ईषन्नीलवर्णः, तस्मिन्, व्योम, आकाशं, मलिनयति, मलिनतांनयति, व्योमव्यापिनि, आकाशमाच्छादिनि, तिमिरसंचये, अन्धकार पटले **सञ्चरदिति**—सञ्चरन्तीनां, इतस्ततः गच्छन्तीनां, सिद्धसुन्दरीणां, सिद्धस्त्रीणां, नूपुररववत्, अलङ्कारशब्दवत्, अनुसरति, अनुगच्छति, मंदं मंदं, शनैः शनैः, मन्दाकिनी हंस इव, गंगा हंस इव, समुत्सर्पति, समुद्गच्छति, गगनतलं, आकाशे, शशिनि, चन्द्रे। **कृतेति**—कृतः, संध्यायां, संध्यायै वा, प्रणामः नमस्कारः, यया तथोक्ता, (उपासितसंध्येतिभावः) निशामुखमेव, प्रदोषसमय एव, (नहि शयन कालेइत्यर्थः,) निपत्य (नच यथाशयनमितिभावः) विमुक्ताङ्गी, निहितशरीरा, (निःसहाया इतियावत्, व्यज्यतेविमुक्ताङ्गीशब्देन) पल्लवशयने, किसलयशयने, तस्थौ, स्थितिंचकार। सावित्र्यपि, यथाक्रियमाणं येनकेन प्रकारेण विहितं, सायंतनं, संध्यादिकर्म, यया एवंभूता, उचिते, युक्ते, शयनकाले, समये, किसलय शयनं, पत्रशय्यां, अभजत, प्राप, जातनिद्रा च, प्राप्तनिद्रा च, सुष्वाप, शयनमकरोत्।

इतरातु, (सरस्वतीत्यर्थः) मुहुर्मुहुः, बारं बारं, अङ्गवलनैः, अङ्गचालनैः, (इतस्ततः, अङ्गप्रक्षेपैरित्यर्थः) **विलुलितेति**—विलुलितं, अवगाहितं, किसलयशयनतलं, पल्लवशय्या, यया:, तथाभूता, निमीलित लोचनापि, निमी

लोचनापि नाभजत निद्राम् । अचिन्तयच्च—'मर्त्यलोकः—खलु सर्वलोकानामुपरि, यस्मिन्नेवं विधानि संभवन्ति त्रिभुवनभूषणानि सकलगुणग्रामगुरूणि रत्नानि । तथाहि । तस्यमुख लावण्यबिन्दुरिन्दुः । तस्य च चक्षुषो विक्षेपा विकचकुमुदकुवलयकमलाकराः । तस्य चाधरमणेदीधितयोविकसितबन्धूकवनराजयः । तस्य चाङ्गस्यपरभागकरणमनङ्गः । आः! पुण्यभाञ्जि तानि चक्षूंषि चेतांसि यौवनानि वा स्त्रैणानि, येषाममौ विषयोदर्शनस्य । त्वगां नु दर्शयता च तमन्यजन्मजनिकृते·

लिते, संकुचिते, लोचने, नेत्रे, यया, तथाभूतापि, निद्रां, नाभजत, न, प्राप । अचिन्तयच्च, चिन्तयामास, च, मर्त्यलोकः, भूलोकः, सर्वलोकानां, स्वर्गपातालादीनां, उपरि, श्रेष्ठः । यस्मिन् (मर्त्यलोके, इतियावत्) त्रिभुवनभूषणानि, (भूः-भुवः-स्वः, अलंकरणानि. सकल ग्राम गुरूणि, सकलाः, गुणाः, दाक्षिण्यादयः, तेषां ग्रामः, समूहः. तेनगुरूणि, महान्ति, एवंविधानि, एतादृशानि, रत्नानि, सम्भवन्ति, उत्पद्यन्ते । तस्य (दधीचस्येत्यर्थः) मुखस्य, वदनस्य, यत्, लावण्यं, चारुत्वं, (सौन्दर्यमितियावत्) तस्य, बिन्दुः, कणः, (अल्प मात्रलावण्यमित्यर्थः) इन्दुः, चन्द्रः, । तस्य, चक्षुषोः, नयनयोः, विक्षेपाः, निपाताः, ते, एव, विकचानां, विकसितानां, कुमुदानां, कैरवाणां, कुवलयानां, नीलोत्पलानां, कमलानां, पद्मानां, च, आकराः, निचयाः । अधरमणेः, अधरोष्ठस्य, दीधितयः, किरणाः, (एवेतिशेषः) विकसितानां, प्रफुल्लितानां, बन्धूकानां, पादपविशेषाणां, यत् वनं, काननं, तस्य राजयः. पंक्तयः । तस्य, च, अङ्गस्य, शरीरस्य, परभाग करणं, (अन्यावयवमित्यर्थः) अनङ्गः, कामः । (अस्य, दधीचस्यकामः द्वितीयंशरीरमितिभावः) आः, इतिहर्षविषादयोः । पुण्यभाञ्जि, पुण्यानिभजन्ते इति तानि, स्त्रैणानि, स्त्रीणां, नारीणां, इमानि (तत्सम्बन्धीनि-इत्यर्थः) अथवा, स्त्रीणां समूहाः, स्त्रैणानि, नारिजातयः । येषां, (चक्षुरादीनामितिभावः) असौ (पूर्वनिर्दिष्टोयुवा) दर्शनस्य, अवलोक

नेव मे फलितमधर्मेण । का प्रतिपत्तिरिदानीम्' इति चिन्तयन्त्येव कथं कथमप्युपजातनिद्राक्षणमशेत । सुप्ता च तं दीर्घलोचनं ददर्श । स्वप्रासादितद्वितीयदर्शना चाकर्णाकृष्टकार्मुकेण मनसि निर्दयमताड्यत मकरकेतुना । प्रतिबुद्धाया मदनशरताड़िताया‌श्च तस्या वार्तामिवोपलब्धुमरतिराजगाम । तथा हि । ततः प्रभृति कुसुमधूलिधवलिताभिर्वनलताभिरताड़िताऽपि वेदनामधत्त । मन्दमन्दमारुतविधुतैः कुसुमरजोभिः

नस्य, विषयः, गोचरः, (दर्शनपथि गत इत्यर्थः) क्षणं, क्षणमात्रं (निमेषमात्रमितियावत्) नु, (इतिवितर्के) दर्शयता, अवलोकयन्त्या, च, **अन्येति**—अन्यजन्मनि, पूर्वजन्मनि, यः, जनिः, जन्म, (निन्दित कर्मणामित्यर्थः) तत्कृतेनैव, तदुद्भवेनैव, मे, मम, अधर्मेण, पापेन, फलितं, (पूर्वजन्मकृतकर्मणा ईदृशीविकृतिर्जाता, इतिभावः) इदानीं, साम्प्रतं, का प्रतिपत्तिः, इति कर्तव्यता, (किमनुष्ठेयमितिभावः) इति चिन्तयन्त्येव, विचार्यमाणा एव, कथं कथमपि, केनापिप्रकारेण, (अतिकृच्छ्रादितिभावः) उपजातनिद्रा, प्राप्तनिद्रा, क्षणं, क्षणमात्रं, (नत्वधिकमित्यर्थः) अशेत, सुप्ता (च) तं, दीर्घलोचनं (दधीचमितियावत्) ददर्श, अपश्यत् । **स्वप्नेति**—स्वप्ने, निद्रावस्थायां, आसादितं, प्राप्तं, द्वितीयं, अपरं, दर्शनं, (तस्येत्यर्थः) यया एवंभूता । आकर्णाकृष्टं, कर्णपर्यन्तं, आकृष्टं, कर्षितं, कार्मुकं, धनुः, येन, एवं भूतेन, मनसि, हृदि, निर्दयं, दयारहितं यथास्यात्तथा, (निष्ठुरभावेनेत्यर्थः) मकर केतुना, कामेन, अताड्यत, ताड़िता । प्रतिबुद्धायाः, जागरितायाः, मदनशर ताड़ितायाः, कामबाणपीड़ितायाः, तस्याः, (सरस्वत्याः, इतिभावः) वार्ता, वृत्तं, उपलब्धुं, ज्ञातुं, अरतिः, वस्तु वैराग्य कामदशा । आजगाम, प्राप्तः । ततः प्रभृति, तदारभ्य । **कुसुमेति**—कुसुमानां, धूलिभिः, परागैः, धवलिता, शुभ्रतांनीता, ताभिः, वनलताभिः, अताड़िताऽपि, अपीड़िताऽपि, वेदनां, व्यथां, अधत्त, अनुबभूव । (लता स्पर्शे सुखमनुभव एव जनानां परं अस्या-

अदूषित लोचना अपि अश्रुजलं मुमोच । हंसपक्षतालवृन्तचय विधुतैः शोणशीकरैः असिक्ताऽपि आर्द्रतामगात् । प्रेङ्खत्कादम्बमिथुनाभिरनूढाऽप्यघूर्णत वनकमलिनीकल्लोलदोलाभिः । विघटमानचक्रवाक युगलविसृष्टैः अस्पृष्टाऽपि श्यामताम् आततान विरहनिश्वासधूमैः । पुष्पधूलीधूसरैरदष्टाऽपि व्यचेष्टत मधुकर कुलैः । अथ गणरात्रापगमे निवर्तमानस्तेनैव वर्त्मना तं देशमागत्य तथैव निवारित परिजनश्छ-

---

रनुविपरीतमेवेत्यर्थः) मन्दं मन्दं, शनैः शनैः, यथास्यात्तथा, मारुत विधुतैः, वायु प्रकम्पनैः, कुसुमरजोभिः, पुष्पधूलिभिः, अदूषित लोचना, अकलुषितनेत्रा अपि, (अपीति संभावनायाम्) अश्रुजलं, मुमोच, त्यत्याज । **हंसेति**—हंसानां, पक्षाएव तालवृन्तचयाः, व्यजन समूहाः, तैः, विधुताः, क्षिप्ताः, तैः, शोणशीकरैः, शोणस्य, तन्नाम नदस्य, शीकराः, जलकणाः, तैः, असिक्ताऽपि, असेचिताऽपि, आर्द्रतां, जाड्यं, अगात् । **प्रेङ्खदिति**—प्रेङ्खन्ति, सञ्चरन्ति, कादम्बानां, कलहंसानां, मिथुनानि, युग्मानि, यासु, तथोक्ताभिः, वन कमलिनी कल्लोल दोलाभिः, वनेषु, याः, कमलिन्यः, पद्मिन्यः, ताः, एव, कल्लोलदोलाः, लहरि रूपाः, दोलन यंत्राणि, ताभिः, अनूढाऽपि, अनुपवेशिताऽपि, अघूर्णत, प्रकम्पत । **विघटमानेति**—विघटमानैः, विरहंप्राप्यमाणैः, चक्रवाकानां, युगलैः, मिथुनैः, विसृष्टाः, त्यक्ताः, तैः, विरहनिश्वासधूमैः, विरहे, वियोगे, ये, निश्वासाः, ते धूमाइव, तैः, अस्पृष्टाऽपि, अस्पर्शिताऽपि, श्यामतां, कालुष्यं, (शृंङ्गाररसमलिनताज्ञापकमितिभावः) आततान, विस्तारितम् । **पुष्पेति**—पुष्पाणांधूलिभिः, रजैः, धूसराः, कपिशाः, तैः, मधुकरकुलैः, षट्पदसमूहैः, अदष्टाऽपि, अदंशिताऽपि, व्यचेष्टत (तेषांरवैःपीड़िताभूमौ विलुलित वतीत्यर्थः) **अथेति**—गणरात्रापगमे, बह्वीनिशाः, गणरात्रं, तस्यापगमे, अतिक्रान्ते, तेनैव वर्त्मना, मार्गेण, निवर्तमानः, प्रतिनिवृत्तः, तं देशं, (शोणप्रान्तमितियावत्) आगत्य, तथैव (पूर्वनिर्दिष्टमिव) निवारितः,

त्रधारद्वितीयो विकुक्षिर्ढुढौके। सरस्वती तु तं दूरादेव संमुखमागच्छन्तं प्रीत्या सम्यक्समुत्थाय वनमृगीवोद्ग्रीवा विलोकयन्ती मार्गपरिश्रान्तमस्नपयदिवधवलितदशदिशा दृशा। कृतासनपरिग्रहं तु तं प्रीत्या सावित्री, पप्रच्छ—आर्य, कच्चित्कुशली कुमारः' इति। सोऽब्रवीत्—आयुष्मति, कुशली। स्मरति च भवत्योः। केवलममीषुदिवसेषु तनी-

परिजनः, सहचरजनः, येन, तथाभूतः, छत्रधार द्वितीयः, (छत्रधारेणसहेत्यर्थः) विकुक्षिः, तन्नामदधीचसहचरः ढुढौके, प्राप्तः, (आगत इतियावत्) सरस्वती तु, तंदूरादेव, दूरतः, एव, सम्मुखं आगच्छन्तं, आयान्तं, प्रीत्या, प्रेम्णा, सम्यक्, यथास्यात्तथा, उत्थाय, वनमृगीव, हरिणीव, उद्ग्रीवा, ऊर्ध्वंनीता ग्रीवा यया तथाभूता, विलोकयन्ती, पश्यन्ती, मार्गपरिश्रान्तं, क्लिन्नं, धवलिता, शुभ्रतांनीता, दशदिशः यया तथाभूतया, दृशा, दृष्ट्या, अस्नपयत्, इव, (स्नापितवतीत्यर्थः) **कृतेति**—कृतासनपरिग्रहं तु, (तिष्ठन्तमितियावत्) तं, (विकुक्षिणं) प्रीत्या, प्रेम्णा, पप्रच्छ, अपृच्छत्। आर्यकुशलं कुमारस्य। इति। केवलं, अमीषुदिवसेषु, दिनेषु, तनीयसीं, (अतिकृशमितियावत्) तनुं शरीरं, बिभर्ति, धारयति। अविज्ञायमानां, अज्ञातां, अनिमित्तां, कारणरहितां, शून्यतां, अभावं, इव, आधत्ते, अनुभवति। (सर्वदाभवत्योः स्मरणमेवकरोतीत्यर्थः) अन्वक्, मत्पश्चात्, (सत्वरमेवेत्यर्थः) वः, युष्माकं, वार्तां, वृत्तं, विज्ञातुं, ज्ञानाय, मालतीतिनाम्ना, मालतीनामधेया, वाणिनी, दूती, आगमिष्यति। सा, मालती, कुमारस्य, दधीचस्य, उच्छ्वसितं, जीवनम्, (प्राणसदृशीत्यर्थः) तच्छ्रुत्वा, तदाकर्ण्य, सावित्री, पुनः, अभाषत, उवाच। खलु, (खल्विति निश्चयार्थबोधकमव्ययम्) कुमारः, अतिमहानुभावः, अत्यौदार्यशीलः, यत्, अविज्ञायमाने, अविज्ञातकुलशीले, क्षणदृष्टेऽपि जने, परिचितिं, परिचयं, अनुबध्नाति, दधाति। (महानुभावा हि स्वपरभेदरहिताः विश्वमेवस्वं मन्यन्ते—इतिभावः) तस्य हि (हीतिनिश्चयार्थबोधकमव्ययम्) यदृच्छया, स्वे-

यसीमिव तनुं बिभर्ति । अविज्ञायमानां चानिमित्तां शून्यतामिवाधत्ते । अपिच । अन्वक्षसमागमिष्यति मालतीतिनाम्ना वाणिनी वर्ता वो विज्ञातुम् । उच्छ्वसितं सा कुमारस्य' इति । तच्छ्रुत्वा पुनरपि सावित्री समभाषत—'अतिमहाऽनुभावः ख शुकुमारः यदेवमविज्ञायमानेक्षणादृष्टेऽपि जने परिचितिमनुबध्नाति । तस्याहि गच्छतो यदृच्छया कथमप्यंशुकमिव मार्गलतासु मानसमस्मासु मुहूर्तमासक्तमासीत् । अमूल्यं हि सौजन्यमाभिजात्येन वः स्वामिसूनोः । अलसः खलुलोको यदेवं सुलभसौहार्दानि येनकेनचिन्न क्रीणाति महतां मनांसि । सोऽयमौदार्यातिशयः कोऽपिमहात्मनामितरजनदुर्लभो येनोपकरणी कुर्वन्तित्रिभुवनम्'

च्छया, गच्छतः गतवतः, कथं कथमपि, केनापि, प्रकारेण, मार्गलतासु, मार्गवल्लरिपु, (लग्नमितिशेषः,) अंशुकमिव, वस्त्रमिव, अस्मासु, मानसं, चित्तं, मुहूर्तं, घटिकाद्वयं, आसक्तं, अनुरक्तं, आसीत् । (मार्गचलनशीलस्य अनवधानतया लतासु वस्त्रलग्नंसंभाव्यते तथैव मार्गगतः, वल्लरीरूपासु अस्मासु हृदयवस्त्रमासक्तमभूदित्यर्थः) वः, युष्माकं, स्वामि सूनोः, प्रभु कुमारस्य, सद्वंश प्रसूतत्वेन, सौजन्यं, हृदयग्राहिता, अमूल्यंहि, (नहिकेवलं वाचिकं आन्तरभावेनापिसौहार्द्रता विद्यतेतस्यमनसीत्यर्थः) **अलसेति**—अलसः, चेष्टारहितः, (मूर्खोवा) लोकः, संसारः । **सुलभेति**—सुलभानि, सुप्राप्याणि, सौहार्दानि, मित्रताः, येषां, तानि, महतां, सज्जनानां, मनांसि, चित्तानि, येन, केनचित् (साधारणेन वस्तुनेत्यर्थः) नक्रीणाति, नक्रेतुंप्रभवति । सोऽयं, औदार्यातिशयः, अतिशयेन औदार्यम् । महात्मनां, विदुषां, कोऽपि, कश्चिदपि, (अनिर्वचनीयइतियावत्) इतर जनदुर्लभः, क्षुद्रजनदुर्लभ्यः, येन, त्रिभुवनं उपकरणीकुर्वन्ति, अलंकुर्वन्ति (वशीकुर्वन्तीतियावत्) विकुक्षिः, उच्चावचैः, नानाविधैः, आलापैः, वचनैः, सुचिरं, चिरकालं, स्थित्वा, यथाभिलषितं, इच्छितं, प्रदेशं, स्थानं, अयासीत् , जगाम । (सुचिरं वार्तालापंविधायग-

इति । विकुक्षिरुच्चावचैरालापैः सुचिरमिवस्थित्वा, यथाभिलषितं देशमयासीत् ।

अपरेद्युरुदिते भगवतिद्युमणावुद्दामद्युतावभिद्रुततारके तिरस्कृततमसि तामरसव्यसनिनि सहस्ररश्मौ शोणामुत्तीर्यायान्ती, तरलदेहप्रभावितानच्छलेनात्यच्छं सकलं शोणसलिलमिवानयन्ती, स्फुटितातिमुक्तककुसुमस्तबक समत्विषि सटाले महति मृगपताविव गौरी तुरङ्गमेस्थिता, सलीलमुरोबध्रारोपितस्य तिर्यगुत्कर्णतुरगाकर्ण्यमाननूपु-

तवानित्यर्थः ।

अपरेद्युरित्यतः मालतीममद्रश्यत, इत्यनेनान्वयः । उदिते, उदयंप्राप्ते, भगवति, कल्याण करे, द्युमणौ, आकाशरत्ने (सूर्येइत्यर्थः) उद्दामद्युतौ, उद्दामा, उत्कटा, द्युतिः, कान्तिः, यस्य तस्मिन् , अभिद्रुताः, ताडिताः, (तिरोहिता इतियावत्) तारकाः, नक्षत्राणि, येन तथाभूते, तिरस्कृततमसि, विमानिता न्धकारे, (दूरीकृतेइत्यर्थः) तामरसव्याख्व्यसनिनि, तामरसस्य, रक्तोत्पलस्य, "यत्" व्यासः विकासः, तत्र व्यसनिनि, आसक्ते, सहस्ररश्मौ, सूर्ये, शोणां, पूर्वोक्तनदं, उत्तीर्य, अवतरणं विधाय, आयान्तीं, आगच्छन्तीं । **तरलेति**—तरलाः, चञ्चलाः, याः, देहप्रभाः, तासां, वितानः, विस्तारः, स, एव, छलं, तस्य वा, तेन, अत्यच्छं, अतिशुद्धं, (अमलमितियावत्) सकलं, सम्पूर्णं, शोणसलिलं, जलं, इव, आनयन्ती, सहचररूपेण आकर्षयन्ती । **स्फुटितेति**—स्फुटितः, विकाशंगतः, यः, अति मुक्तककुसुमस्तवकः, अतिमुक्तकः, माधवीलता, तस्या, पुष्पगुच्छः, तत्, समाः, सदृशाः, त्विषः, कान्तयः, यस्य तथाभूते, सटाले । **जटावति**—मृगपताविव, सिंह इव, गौरी, गौरवर्णा, (पार्वतीच) तुरङ्गमे, अश्वे, स्थिता, सलीलं, लीलयासहितं, यथास्यात्तथा, उरोबध्रा, अश्वारूढस्य चरण स्थापनाय द्रव्य विशेषः (रकेव इति प्रसिद्धः) तत्र आरोपितस्य, स्थापितस्य, (पाद युगलस्येतियावत्) । **तिर्य्य-**

रपटुरणितस्यातिबहलेन पिण्डालक्तकेन पल्लवितस्य कुंकुमपिञ्जरितपृष्ठस्यचरणयुगलस्य प्रसरद्भिरतिलोहितैः प्रभाप्रवाहैरुभयतस्ताडनदोहदलोभागतानि किसलयितातिरिक्तरक्ताशोककवनानीवाकर्षयन्ती, सकलजीवलोकहृदयहठहरणघोषणयेवरशनया शिञ्जानजघनस्थला, धौतधवलनेत्रनिर्मितेननिर्मोकलघुतरेणाप्रपदीनेनकंचुकेन तिरोहिततनुलता,

गिति—तिर्यक्, वक्रं, यथास्यात्तथा, उत्कर्णेन, ऊर्ध्वंनीतेन कर्णेन, तुरगेण, अश्वेन, आकर्ण्यमानं, श्रूयमाणं, (श्रुतिमधुरत्वादित्यर्थः) नूपुरयोः, पादभूषणयोः, पटुः, स्पष्टं, रणितं, शब्दं, यस्य, तथाविधस्य, अतिवहलेन, अधिकेन पिण्डालक्तकेन, लाक्षारसेन, पल्लवितस्य, किसलय इवाचरतः। **कुंकुमेति**—कुंकुमेन, (तदाख्यरक्तद्रव्य विशेषेण), (कुंगू इत्याख्येन) पिञ्जरितं, ईषद्रक्ततांनीतं, पृष्ठं यस्य, तथाभूतस्य, चरणयुगलस्य, पादयुग्मस्य, प्रसरद्भिः, चलद्भिः, अतिलोहितैः, रक्तवर्णैः, प्रभाप्रवाहैः, कान्तिप्रसरैः,। **ताड़नेति**—ताड़नं, प्रहारः एव, दोहदः, गर्भाभिलाषः, तत्र, यः लोभः, इच्छा, तेन, आगतानि, किसलयानि, पल्लवानि, अत एव, अतिरिक्तानि, विस्तृतानि, रक्ताशोकवनानि, काननानि तानि, आकर्षयन्ती, आकृष्यनयन्ती, इव। **सकलेति**—सकलानां, जीवलोकानां, हृदयानि, मनांसि, तेषां, हठेन, सहसा, (औद्धत्यपूर्णत्वमितियावत्) यत्, हरणं, स्ववशीकरणं, तस्य, घोषणा, वाद्यविशेषानुगता (वचनानीत्यर्थः) तयेव, रशनया, काञ्च्या, (मेखलयेतिभावः) शिञ्जानं, रणत्, (सशब्दमितियावत्) जघनस्थलं, यस्याः, तथाविधा। **धौतेति**—धौतं, प्रक्षालितं, अतएव, धवलं नेत्रं, वसनविशेषः, तेन, निर्मितः, रचितः, निर्मोकः, सर्पकञ्चुकः, तद्वत्, लघुतरः, सूक्ष्मः, तेन, **आप्रपदीनेन, प्रपदं**, पादाग्रं, प्रपदात्, आ, (समन्तादित्यर्थः) आप्रपदं, **पादाग्रपर्यन्तं**, (पादाग्रमाच्छादितमित्यर्थः) कञ्चुकेन, वारबाणेन, तिरोहिता, आच्छादिता, तनुरेव, शरीरमेव, लता, वल्लरी, यया, तथाभूता। **छातेति**—छातः, सूक्ष्मः, कञ्चुकस्य, वर्मणः, (शरीराच्छादनस्येति-

च्छातकच्छुकान्तरदृश्यमानैराश्यानचन्दनधवलैरवयवैः स्वच्छसलिलाभ्यन्तरविभाव्यमानमृणालकाण्डेव सरसी, कुसुम्भरागपाटलं पुलकबन्धचित्रंचण्डातकमन्तः स्फुटं स्फटिकभूमिरिव रत्ननिधानमादधाना, हारेणामलकीफल निस्तुलमुक्ताफलेन स्फुरितस्थूलग्रहगणशारा, शारदीव श्वेतविरलजलधरपटलावृता द्यौः, कुचपूर्णकलशयोरुपरि, रत्नप्रालम्बमालिकामरुणहरित किरणकिसलयिनीं कस्यापिपुण्यवतो हृदय-

भावः) अन्तरे, मध्ये, दृश्यमानाः, दृष्टिगताः। आश्यानेति—आश्यानानि, ईषत्-शुष्काणि, चन्दनानि, मलयजानि, तैः, धवलाः, शुभ्राः, तैः, अवयवैः, अङ्गैः, (शरीरभागैरित्यर्थः) स्वच्छेति—स्वच्छानि, अमलानि, सलिलानि, जलानि, तेषां, अभ्यन्तरेषु, मध्यभागेषु, विभाव्यमानः, लक्ष्यमाणः, मृणालकाण्डः, पद्मलता, यस्याः, यस्यां वा, सरसीव। कुसुम्भेति—कुसुम्भरागेण, कुसुम्भः, पुष्पविशेषः, तस्यरागेण, वर्णेन, पाटलं, ईषद्रक्तं, पुलकबन्धेन, नानावर्णं निर्मितबिन्दुविन्यासेन, चित्रं, (मनोज्ञमितियावत्) चण्डातकं, अर्द्धोरुकम्, (उरोरधः पातिवस्त्रविशेषः) अन्तः स्फुटं, (अभ्यन्तरो ज्वलनमिति यावत्) रत्ननिधानं, कोशं, आदधाना, धारयन्ती। हारेण, मुक्ताफलस्रजा। आमलकीति—आमलकीफलानि, (आमलाइति प्रसिद्धं) निस्तुलानि, तुलारहितानि, (उपमारहितानीत्यर्थः) मुक्ताफलानि, (यत्र तादृशेनत्यर्थः)। स्फुरितेति—स्फुरितैः, राजितैः, स्थूलैः, (सुस्पष्टैरितियावत्) ग्रहगणैः, नक्षत्रमण्डलैः, शारा, विचित्रा, शारदीव, शरत्समयमिव। श्वेतेति—श्वेतैः, शुभ्रैः, (जलापगमादितियावत्) विरलैः, अत्यल्पैः, जलधराणां, मेघानां, पटलैः, समूहैः, आवृता, अच्छादिता, द्यौः, अन्तरीक्षम्। कुचेति—कुचौ, स्तनौ, पूर्णकलशाविव, कुम्भाविव, तयोरुपरि, रत्नप्रालम्ब मालिकां, रत्नस्रजं। अरुणेति—अरुणेन, रक्तवर्णेन, हरितेन, श्यामलेन, किरणेन, मयूखेनन, (मरकतमणीनामिति यावत्) किसलयाः, पल्लवाः, सन्ति अस्यां, तादृशी

प्रवेशवनमालिकामिव बद्धां धारयन्ती, प्रकोष्ठनिविष्टस्यैकैकस्य हाटककटकस्य मरकतमकरवेदिकासनाथस्य हरितीकृतदिगन्ताभिर्मयूखसन्ततिभिः स्थलकमलिनीभिरिव लक्ष्मीशङ्कयानुगम्यमाना, बहलताम्बूलकृष्णिकान्धकारितेनाधर संपुटेन मुखशशिपीतं ससन्ध्यारागं तिमिरमिव वमन्तीं, विकच नयनकुवलय कुतूहलालीनयालिकुलसंहत्या

(सञ्जातपत्रामित्यर्थः) कस्यापिपुण्यवतः, पुण्यभाजः । **हृदय प्रवेशेति**—हृदये, चित्ते, प्रवेशः, तस्मै, वनमालिका, पत्रपुष्परचिता माला, तामिव, (पूर्णकलशे वनमाला प्रदानं लोकेप्रसिद्धम्) बद्धां, ग्रथितां, धारयन्ती, । (कश्चित् पुण्यवान् जनः, अस्याः हृदयं प्रविशतीति मङ्गलाय पूर्णकुम्भस्थापन मित्यर्थः) **प्रकोष्ठेति**—प्रकोष्ठः, मणिबन्धपर्यन्तहस्तावयवः, तस्मिन्, निविष्ठः, धृतः, तस्य, हाटककटकस्य, सुवर्णकङ्कणस्य, **मरकतेति**—मरकतस्य, मरकतमणेः, मकरवेदिका, मकराकृतिग्रन्थिः, तया सनाथः, युक्तः, तस्य, (तद्भूषितस्येति यावत्) **हरिती कृतेति**—हरिती कृताः, श्यामतांप्राप्ताः दिगन्ताः, दिग्भागाः, याभिः, तथाभूताभिः, मयूखसंततिभिः, किरणसमूहैः, स्थलकमलिनीभिरिव, भूपद्मिनीभिरिव, (पत्रपुष्पसहिताभिरित्यर्थः) लक्ष्मीः शङ्कया, लक्ष्मीरियंकमलहस्ता (पद्मविलासिनीतिभावः) इति बोधेन, अनुगम्यमाना, अनुस्रियमाणा, **बहलेति**—बहलेन, बारम्बारं (चर्वितेनेतियावत्) ताम्बूलेन, या, कृष्णिका, कृष्णवर्ण रेखा, तथा, अन्धकारितः, सञ्जाततमः, तेन, अधर संपुटेन, अधरोष्ठेन । **मुखेति**—मुखमेव, शशीः,चन्द्रः, तेन, पीतं, कृत पानं, यद् संध्या रागं सन्ध्यासमय लौहित्यम् (तेन सहवर्तमानं) (स्वभावारुणस्याधरस्य ताम्बूलयोगादुत्प्रेक्षितम्) तिमिरं, अन्धकारं, इव, वमन्ती, उद्गिरन्ती (भुक्तोद्गीर्णभोजनं वमनं, तमित्यर्थः) **विकचेति**—विकचे, विकस्वरे, नयने, नेत्रे, कुवलये, नीलोत्पले, इव, तयोः, कुतूहलात्, कौतुकात्, आलीना, सक्ता, तयैव, अलि कुलसंहत्या, भ्रमरसंतत्या, नीलांशुक जालिकया, नीला,

नीलांशुक जालिकयेवनिरुद्धार्धवदना, नीलीरागनिहित नीलिम्ना शिति-गलशितिना वामश्रवणाश्रयिणासादन्तपत्रेण कालमेघ पल्लवेनेव विद्यु-दिवद्योतमाना, वकुलफलानुकारिणीभिस्त्रिसृभिर्मुक्ताभिः कल्पितेन वालिकयुगलेनाधोमुखेनालोकजलवर्षिणा सिञ्चन्तीवातिकोमले भुज-लते, दक्षिणकर्णावतंसितया केतकीगर्भपलाशलेखया रजनिकर जिह्वयेव लावण्यलोभेन लिह्यमानकपोलतला, तमालश्यामलेन मृग-मदामोदनिष्यन्दिना तिलकबिन्दुना मुद्रितमिवमनोभवसर्वस्वं वदन-

नीलवर्णा, या, अंशुकजालिका, वसनग्रन्थिका, तया, निरुद्धं, आच्छादितं, अर्द्धवदनं, मुखं, यया, तथाविधा। (मार्गेचक्षुषि कीटादिपतनभयादित्यर्थः) **नीलीति**—नीलीरागेण, (नील' इतिप्रसिद्धः) तस्य, रागेण, वर्णेन, निहितः अर्पितः, नीलिमा, नीलत्वं, यत्र, तथाभूतेन। **शितिगलेति**—शितिगलः, नीलकण्ठः, (शङ्कर इत्यर्थः) तद्वत्, शितिः, नीलं, तेन, वामश्रवणाश्रयिणा, वामकर्णाश्रितेन, दन्तपत्रेण, कुन्दपुष्पाकारालङ्कारविशेषेण, कालमेघपल्लवेन, नीलमेघविस्तारेण, विद्युदिव, तडिदिव, द्योतमाना, दीप्यमाना। **वकुलेति**—वकुलफलानुकारिणीभिः, अनुकर्तृभिः, (तद्वदाचरणशीलैरित्यर्थः) त्रिसृभिः, त्रिभिः, मुक्ताभिः, मुक्ताफलैः, कल्पितेन, रचितेन, वालिकायुगलेन, वलयद्वयेन, अधोमुखेन, नताननेन। **आलोकेति**—आलोकः, उद्योतः, एव, जलं, पानीयं, तं वर्षतीति, तेन, अतिकोमले, भुजएव लते, ते, सिञ्चन्तीव, सेचनकुर्वाणा, इत्यर्थः। **दक्षिणेति**—दक्षिणेकर्णे, अवतंसितया, अलंकृतया। **केतकीति**—केतक्यागर्भपलाशः, मध्यपत्रं, स, एव, लेखा, रेखा, तया, रजनीकर जिह्वयेव, रजनीकरस्य, चन्द्रस्य, जिह्वा, रसना, तयेव, लावण्यलोभेन, सौन्दर्यलोभेन, लिह्यमानं, चुम्ब्यमाणं, कपोलतलं, गण्डस्थलं, यस्याः, तथाभूता। तमाल-श्यामलेन, तमालवत् श्यामलः, कृष्णवर्णः, तेन। **मृगमदेति**—मृगमदस्य, कस्तूरिकायाः, आमोदः, सौरभं, तं, निष्यन्दते, स्रवतीति तया विधेन, बिन्दुना

मुद्वहन्ती, ललाटलासकस्य सीमन्तचुम्बिनश्चटुलतिलकमणेरुदञ्चता चटुलेनांशुजालेन रक्तांशुकेनेवकृतशिरोवगुण्ठना. पृष्ठप्रेङ्खदनादर संयमन शिथिलजूटिकाबन्धा, नीलचामरावचूलिनीव चूडामणिमकरिकासनाथा, मकरकेतुकेतुपताका, कुलदेवतेव, चन्द्रमसः, पुनः संजीवनौषधिरिव पुष्पधनुषः, वेलेवरागसागरस्य, ज्योत्स्नेव यौवन चन्द्रो-

---

दयेन, मुद्रितं, चिन्हितं, इव, मनोभव सर्वस्वं, कामसर्वस्वधनं, वदनं, मुखं, (मुखस्य सर्वोत्कृष्टेन, कामोद्दीपकत्वादित्यर्थः) उद्वहन्ती, धारयन्ती । **लला— टेति**—ललाटे, मस्तके, लासकः, नर्तकः, (स्फुरन्नितियावत्) तस्य, सीमन्तचुम्बिनः, सीमन्तः, केशपाशमध्यवर्तिरेखा (सीमन्तो केशवेशे) कौसीमान्तोऽन्यः) तं, चुम्बति, स्पृशति, तस्य, (सीमन्तस्पर्शिन इतियावत्) चटुलः, चञ्चलः, यः, तिलकमणिः, तिलकाकार पद्मरागमणिः, (मस्तकभूषणमित्यर्थः) तस्माद्, उदञ्चता, उद्गच्छता, चटुलेन, चञ्चलेन, (तरलेनेत्यर्थः) अंशुजालेन, किरणसमूहेन, रक्तांशुकेनेव, रक्तवसनेनेव, कृतं, रचितं, शिरसः, अवगुण्ठनं, आवरणं, यया, तथाभूता । **पृष्टेति**—पृष्ठे, पृष्ठदेशे, प्रेङ्खत्, लम्बमानः, अनादरसंयमनेन, हेलाबन्धनेन, शिथिलः, स्खलितः, यः, जूटिकाबन्धः, केशजालः, यस्याः, तथाविधा । **नीलेति**—नीलं, नीलवर्णं, चामरमेव अवचूलं, पताकाधोवर्ति वसनं, चिन्हं वा, विद्यतेऽस्याः, तथाभूता । **चूडामणीति**—चूडायां, मस्तके, या मणि मकरिका, मकराकारमणिः, तया सनाथा, युक्ता, (सहितेत्यर्थः) अतएव मकरकेतोः, मदनस्य, केतुपताकेव, ध्वजकेतनमिव, कुलदेवतेव, कुलस्य, वंशस्य, या, देवता, अधिष्ठातृदेवीव, चन्द्रमसः, इन्दोः, पुष्पधनुषः, कामस्य, पुनः, सञ्जीवनं, हरक्रोधाग्नि ज्वलितस्यपुनर्जन्मप्राप्तिः, तस्यौषधिरिव, सञ्जीवनाख्यलतेव । **रागेति**—रागः, प्रेम, (स्नेहातिशय इत्यर्थः) सैव सागरः, समुद्रः, तस्यवेलेव, तीरमिव, यद्वा, प्रवाहमिव, (यथैवसमुद्रः—वेलामनतिक्रम्यनप्रसरति, तथैव, सौन्दर्यातिशयाद्यनां

दयस्य, महानदीव रतिरसामृतस्य, कुसुमोद्गतिरिव सुरततरोः, बालविद्येव वैदग्ध्यस्य, कौमुदीपकान्तेः, धृतिरिव धैर्यस्य, गुरुशालेव गौरवस्य, बीजभूमिरिव विनयस्य, गोष्ठीवगुणानाम्, मनस्वितेव महानुभावतायाः तृप्तिरिव तारुण्यस्य, कुवलयदलदामदीर्घलोचनया पाटलाधरया कुन्दकुड्मलस्फुटदशनया शिरीषमाला कुसुमारभुजयुगलया

दृष्टिर्नान्यापुस्त्रीपुप्रसरति, अस्यामेवस्थितेत्यर्थः) **ज्योत्स्नेवेति**—यौवनं, प्रौढावस्था, तदेव, चन्द्रोदयः, तस्य ज्योत्स्नेव, कान्तिरिव। (यथा चन्द्रोदयेऽपि यावन्नहि ज्योत्स्ना विकसति, तावन्नकिमपि विलसति, तथैवेतां विना यौवन सुषमा न कुत्रापि शोभमाना दृश्यते इतिभावः) रतिरसामृतस्य, रत्यायद्रसं, तदेवामृतं, तस्य, महानदीव, महासरिदिव। सुरततरोः, सुरतं, स्त्री पुरुष संगमं, तदेव, तरुः, वृक्षः, तस्य, कुसुमोद्गतिरिव, पुष्पोद्गम इव। वैदग्ध्यस्य चातुर्यस्य, बालविद्येव, नवशिक्षितेव, (बालकाले पठिता मिवेतिभावः) (वाल्य संस्कारः नहि त्यक्तुं शक्यते कदापि, तथैवैनां, वैदग्ध्यमपि) कान्तेः, प्रभायाः, कौमुदीव, चन्द्रिकेव। धैर्य्यस्य, धीरतायाः, धृतिरिव, धारण कर्त्रीव। गौरवस्य, उत्कर्षस्य, गुरुशालेव, गुरुगृहमिव, यद्वा, गुर्वी महती, शाला, गुरुशाला, सेव। विनयस्य, नम्रतायाः, बीजभूमिरिव, वपनक्षेत्रमिव। गुणानां, सौजन्यादिनां, गोष्ठीव, समाज इव। महानुभावतायाः, महद्गौरवस्य, मनस्वितेव, प्रशस्तमनशालित्वमिव। तारुण्यस्य, यौवनस्य, तृप्तिरिव, संतोषमिव। **कुवलयेति**—कुवलयदलदाम, नीलकमलदलमाला, तद्वत्, दीर्घे, आयते, लोचने, नेत्रे, यस्याः, तथाभूतया। पाटलाधरया, ईषद्रक्ताधरोष्ठया। **कुन्देति**—कुन्दानां, माध्य पुष्पाणां, कुड्मलानि, मुकुलानि, तानीव, स्फुटाः, उज्ज्वलाः, दशनाः, दन्ताः, यस्याः, तथोक्तया। **शिरीषेति**—शिरीषाणां, तन्नाम कुसुमानां, मालावत्, स्रगिव, सुकुमारं, कोमलं, भुजयुगलं, वाहुयुग्मं, यस्याः, तथभूतया। **कमलेति**—कमलं, पद्मं, तद्वत् कोमलौ, करौ,

कमलकोमलकरया बकुलसुरभिनिःश्वसितया चम्पकावदातया कुसुममय्येवताम्बूलकरङ्कवाहिन्या महाप्रमाणाश्वतरारूढयानुगम्यमाना, कतिपयपरिचारकपरिकरा मालती समदृश्यत। दूरादेव च दधीच प्रेम्णा सरस्वत्या लुण्ठितेव मनोरथैः, आकृष्टेव कुतूहलेन, प्रत्युद्गतेवोत्कलिकाभिः, आलिङ्गितेवोत्कण्ठया, अन्तः प्रवेशितेव हृदयेन, स्नपितेवानन्दाश्रुभिः विलिप्तेव स्मितेन, वीजितेव उच्छ्वसितैः, आच्छादितेव चक्षुषा, अभ्यर्चितेव वदनपुण्डरीकेण, सखीकृतेवाशया, सविधमुप-

हस्तौ, यस्याः, तथोक्तया। बकुलेति—बकुलवत्, तदाख्यपुष्पवत्, सुरभिः, सुगन्धिः, निश्वसितं, श्वसनं, यस्याः, तथाविधया। चम्पकावदातया, चम्पकपुष्पवत्, अवदातया, गौर वर्णया, अतएव, कुसुममय्येव, पुष्पमय्येव, ताम्बूलकरङ्कवाहिन्या, ताम्बूलानां, करङ्कः, पात्रं, तं, वहति, धारयतीति, तथोक्तया। महेति महत् अधिकं, प्रमाणं, परिमाणं, यस्य तादृशः, (अत्युन्नतमितियावत्) योऽश्वतरः, अश्वायांगर्दभेनजातः, अश्वाकारः पशुः (खच्चर इतिप्रसिद्धः) यद्वा, तरुणः, प्रौढः, अश्वः, तुरङ्गमः (वत्सोक्षाश्वर्षभेभ्यश्चतनुत्वे" ५। ३। ९१। पा० इतितनुत्वे तरप्। तं, आरूढा, आश्रिता, तथा, अनुगम्यमाना, अनुश्रिता। कतिपयेति—कतिपयाः, केचनः, परिचारकाः, भृत्याः, परिकराः, (परिवाराः, सहचरा इत्यर्थः) यस्याः, तथोक्ता मालती समदृश्यत् दूरादेवच, रदूत एव, दधीच प्रेम्णा, स्नेहेन, सरस्वत्या (कर्तृभूतयेत्यर्थः) लुण्ठितेव, हृतेव, मनोरथैः, इच्छितैः, कुतूहलेन, औत्सुक्येन, आकृष्टेव, आकर्षितेव, उत्कलिकाभिः, औत्सुक्यैः, प्रत्युद्गतेव, उद्गच्छदेव, उत्कण्ठया, स्पृहया, आलिङ्गितेव, कृतालिङ्गनेव, हृदयेन, चेतसा, अन्तः, अभ्यन्तरं, प्रवेशितेव, कृतप्रवेशा इव, स्नपितेव, कृतस्नानमिव, आनन्दाश्रुभिः, आनन्दाश्रुजलैः, स्मितेन, ईषद्धास्येन, विलिप्तेव, कृतलेपनेव, उच्छ्वासितैः, निश्वासैः, वाजितेव, कृतव्यजनेव, चक्षुषा, नेत्रेण, आच्छादितेव, आवृतेव, वदन पुण्ड-

ययौ। अवतीर्य च तुरगाद्दूरादेवावनतेन मूर्ध्ना प्रणाममकरोत्। आलिङ्गिता च ताभ्यां सविनयमुपाविशत्। सप्रश्रयं ताभ्यां संभाषिता च पुण्य भाजमात्मानममन्यत। अकथयच्च दधीच संदिष्टं शिरसि विनिहितेनाञ्जलिना नमस्कारम्। अगृह्णाच्चाकारतः प्रभृत्यग्राम्यतया तैस्तैरपि पेशलैरालापैः सावित्री सरस्वत्योर्मनसी।

क्रमेण चातीतेमध्यंदिनसमये शोणमवतीर्णायां सावित्र्यांस्नातुमुत्सारितपरिजना साकूता मालती कुसुमप्रस्तरशायिनीं समुप-

---

रीकेण, मुखकमलेन, अभ्यर्चितेव, पूजितेव, आशया, स्पृहया, सखीकृतेव, कृतसौहृदेव, सविधं, पार्श्वं, उपययौ, प्राप्ता। **अवतीर्येति**—दूरादेव, दूरत एव, तुरगात्, अश्वात्, अवतीर्य, अवतरणंविधाय, अवनतेनमूर्ध्ना, नतशिरसा, प्रणाममकरोत्, प्रणतिं चकार। ताभ्यां, (सरस्वतीसावित्रीभ्यां) आलिङ्गिता, कृतालिङ्गना, सविनयं, यथास्यात्तथा, उपाविशत्, उपविष्टा। **सप्रश्रयेति**—स प्रश्रयं, सविनयं, ताभ्यां, संभाषिता, कृतवार्तालापा, आत्मानं, स्वं, पुण्यभाजं, पुण्यवंतं, (कृतार्थं मितियावत्) अमन्यत,। शिरसि, मस्तके, विनिहितः, कृतः, अञ्जलिः, यया, एवंभूता, दधीचसंदिष्टं, संदेशं, नमस्कारं, अकथयत्, उवाच। **आकारेति**—आकारतः प्रभृति, आकारात्, तथाविधात् पूर्वोक्तात्, (सौम्यादित्यर्थः) प्रभृति (दर्शनादारभ्येत्यर्थः) अग्राम्यतया, (ग्राम्यत्वदोष रहितयेतिभावः) अतिपेशलैः, अतिसुकुमारैः (सौजन्यपूर्णैरित्यर्थः) आलापैः, वचनैः, सावित्रीसरस्वत्योः (द्वयोरित्यर्थः) मनसी, चित्ते अगृह्णात्, स्व, वशवर्तिनमकरोत्।

क्रमेण च अतीते, मध्यन्दिनसमये, मध्यान्हकाले, शोणं, तन्नामनदं, स्नातुं, स्नानाय, अवतीर्णायां, अवतरितायां, सावित्र्यां, उत्सारितपरिजना, दूरीकृतसेवका, साकूता, साभिप्राया, (हृदयान्तरित निगूढभावा) मालती, **कुसुमेति**—कुसुमं, पुष्पं, एव, प्रस्तरः, शयनं, (प्रस्तीर्यतेऽसाविति प्रपर्दकात्,

सृत्य सरस्वतीमावभाषे—'देवि' विज्ञाप्यं नः किंचिदस्ति रहसि। अतो मुहूर्तमवधान दानेन प्रसादं क्रियमाणमिच्छामि' इति। सरस्वती तु दधीच संदेशाशङ्किनी, किं वक्ष्यतीति स्तनविनिहितवामकरनखकिरण-दन्तुरितमुद्भिद्यमानकुतूहलांकुरनिकरमिव हृदयमुत्तरीयदुकूलवल्कलैक-देशेन संछादयन्ती, गलतावतंसपल्लवेन कुतूहलात् श्रोतुं श्रवणेनेव धाव-मानेनानवरतश्वाससंदोहदोलायितां जीविताशामिव समासन्नलतामव-

---

स्तरतः कर्मण्यल्) तत्रशेते या इति तथाभूताम्। सरस्वतीं समुपसृत्य, पार्श्व वर्तिनीभूय, आवभाषे, अवादीत्। देवि? रहसि, एकान्ते, किञ्चित्, विज्ञाप्यं, कथनीयं, अस्ति। अतः, अनेनकारणेन, मुहूर्तं, घटिकाद्वयं, अवधानदानेन, सावधानेन, प्रसादं, प्रसन्नतां, क्रियमाणं, संपाद्यमानं, इच्छामि, ईहे। सरस्वतीतु, (वाग्देवी) दधीच संदेशं, वृत्तं, (वाचिकं वा) तदाशङ्किनी, आशङ्कयमाना, किंवक्ष्यतीति, किंकथयिष्यतीति। **स्तनेति**—स्तने, पयोधरे, विनिहितस्य, दत्तस्य, वामकरस्य, वामहस्तस्य, नखानां किरणैः, कान्तिभिः, दन्तुरितं, सञ्जातदंतं (इव) (वर्तमानमितियावत्) **उद्भिद्यमानेति**—उद्भिद्यमाना, उच्छेद्यमानाः (कर्म कर्तरिशानच्) कुतूहलांकुराणां, कौतुकप्ररोहाणां, निकराः, निचयाः, यस्य, तथाभूतं, हृदयं, चित्तं, **उत्तरीयेति**—उत्तरीयं, यत् दुकूलं, वसनं, तदेववल्कलं, तस्य, एकदेशः, एकांशः, तेन, संछादयन्ती, आच्छादयन्ती, गलता, स्खलता, अवतंशपल्लवेन, कर्णालङ्कारपत्रेण, (इत्थंभूतलक्षणे इत्यनेनतृतीया) श्रोतुं, कर्णविषयीकर्तुं, श्रवणेन, इव, श्रोत्रेन्द्रियेणेव, धावमानेन, प्रधावता। **अनवरतेति**—अनवरतानां, निरन्तराणां, श्वासानां, संदोहः, समूहः, एव, दोला, दोलनयंत्रं, तां, आपिता, प्राप्ता, तां, (यथा दोलनयन्त्रं स्वस्थानादपगच्छतिपुनरागच्छतिच, तथैवनिश्वासः शरीरान्तराद् गच्छति पुनश्चोच्छ्वास रूपेण शरीराभ्यन्तरमागच्छति, इति दोलास्थितामित्यर्थः) जीविताशामिव, समासन्नलतां, सन्निहित वल्लरीं, अवलम्बमाना,

लम्बमाना, समुत्फुल्लस्य मुखशशिनो लावण्य प्रवाहेण शृंगाररसेनेव प्लावयन्ती जीवलोकम्, शयनकुसुमपरिमललग्नैर्मधुकरकदम्बकैर्मदनानलदाहश्यामलैर्मनोरथैरिव निर्गत्य मूर्तैरुत्क्षिप्यमाणा, कुसुम शयनीयात्स्मरशरसंज्वरिणी, मन्दं मन्दमुदगात्। 'उपांशु कथय' इति कपोलतल प्रतिबिम्बितां लज्जयेव कर्णमूलं मालतीं प्रवेशयन्ती मधुरया गिरासुधीरमुवाच।

'सखि! मालति! किमर्थमेवमभिदधासि। काहमवधानदानस्य शरीरस्य प्रणानां वा। सर्वस्याप्रार्थितोऽपि प्रभवत्येवातिवेलं चक्षुष्यो जनः। सा न काचिद्या न भवसि मेस्वसा सखी प्रणयिनी प्राणसमा

आश्रयन्ती। लावण्य प्रवाहेण, सौन्दर्यस्रोतसा, शृङ्गार रसेनेव, (रतिप्रधानोहि रसः शृङ्गारः) तेनेव, जीवलोकं, प्राणिजातं, प्लावयन्ती, उत्प्लवनंकारयन्ती। **शयनेति**—शयनकुसुमानां, परिमलेन, सुगन्धिना, लग्नानि, संसक्तानि, तैः, मधुकरकदम्बकैः, भ्रमरसमूहैः। **मदनानलेति**—मदनानलेन, कामाग्निना, यः, दाहः, ज्वलनं, तेन, श्यामलाः, कृष्णवर्णाः, तैः, मूर्तैः, मूर्तिमद्भिः, उत्क्षिप्यमाणा, प्रक्षिप्यमाणा, कुसुमशयनीयात्, पुष्पपर्यङ्कात्। **स्मरेति**—स्मरस्य, कामस्य, शरैः, बाणैः, (शरप्रहारैरित्यर्थः) (संभूतविशेषः) यः, संज्वरः, सन्तापः, तद्वती। मन्दं, मन्दं, शनैः, शनैः, उदगात्, चचाल। उपांशु, सुगूढं, (सत्यमितियावत्) कथय, वद। **कपोलेति**—कपोलतले, गण्डस्थले, प्रतिबिम्बिता, प्रतिफलिता, तां, लज्जयेव, व्रीडेव, कर्णमूलं, श्रोत्रतटं, मालतीं, तन्नाम दूतिं, प्रवेशयन्ती, अभ्यन्तरं नयन्ती, मधुरयागिरा, मधुरवाण्या, सुधीरं, यथास्यात्तथा, उवाच, उक्तवती।

अभिदधासि, कथयसि अप्रार्थितोऽपि, प्रार्थना रहितोऽपि, अतिवेलं, अतिमात्रं, चक्षुष्यः, नयनरञ्जनः, जनः, सर्वस्य, प्रभवति, योग्यः। सा न काचित्, कापि, या, मे, मम, स्वसा, भगिनी, सखी, प्रणयिनि, प्रेमास्पदा,

च। नियुज्यतां यावतः कार्यस्य क्षमं क्षोदीयसो गरीयसो शरीरकमिदम्। अनवस्करमाश्रवं त्वयि मे हृदयम्। प्रीत्या प्रतिसरा विधेयास्मि ते। व्यावृणु वरवर्णिनि! विवक्षितम्' इति। सा त्ववादीत्—देवि जानास्येव माधुर्यं विषयाणाम्, लोलुपतां चेन्द्रियग्रामस्य, उन्मादितां च नवयौवनस्य, पारिप्लवतां च मनसः। प्रख्यातैव मन्मथस्य दुर्निवारता। अतो न मामुपालम्भेनोपस्थातुमर्हसि। न च बालिशता चपलता चारणता वा वाचालतायाः कारणम्। न

प्राणसमा च, प्राण सदृशी च। नियुज्यतां, नियोक्तव्यं, क्षोदीयसः, अतिक्षुद्रस्य, गरीयसः, अतिगुरुणः, कार्यस्यक्षमं, योग्यं, इदं, शरीरकं, देहं। अनवस्करं, अवस्करः, मलः, तद्रहितः, (परिशुद्धमितियावत्) आश्रवे, वचने, स्थिते, मे, मम, त्वयि, हृदयं, चित्तं, (अकपटत्वेनकर्तव्यं त्वद्वचोमयेत्यर्थः) पीत्या, प्रेम्णा, प्रतिसरा, नियोज्या, (अनुकूलवर्तिनीनियावत्) ते, तव, विधेया, विधीयते, दीयते, (आज्ञा इतियावत्) यया, सा, (वश्या) (आज्ञाकारिणीतियावत्) अस्मि, इत्यनेनान्वयः। वरवर्णिनि?, सुन्दरि! व्यावृणु, प्रकाशय, विवक्षितं, कथनार्हं, (इच्छितमितियावत्) देवि?, विषयाणां, स्रक् चन्दनाद्युपभोग्यवस्तूनां, माधुर्यं, मनोहारित्वं. इन्द्रियग्रामस्य. चक्षुरादीन्द्रिय समूहस्य, लोलुपतां, लालसतां, जानासि. वेत्सि, एव। नवयौवनस्य, प्रौढावस्थायाः, उन्मादितां, उन्मादकारित्वं, च, मनसः, चेतसः, पारिप्लवतां, चाञ्चल्यं, जानास्येवेति पूर्वेण सम्बन्धः। मन्मथस्य, कामस्य, दुर्निवारता, अबाध्यता, प्रख्याता, प्रसिद्धा, एव, अतः, माम्, (मालतीमितियावत्) उपालम्भेन, उपालम्भदानेन, (तिरस्कारेणेत्यर्थः) उपस्थातुं, प्रहीतुं, न, अर्हसि, योग्यासि। बालिशता, अज्ञता, चपलता, चाञ्चल्यं, चारणता, दौत्यं, (यशः-घोषणशीलतेतियावत्) वाचालतायाः, बहुभाषितायाः, कारणं, हेतुः. न, च, (त्वदग्रेयदहंवच्मि तन्मम

किञ्चिन्न कारयत्यसाधारणा स्वामिभक्तिः । सा त्वं देवि, यदैव दृष्टासि देवेन, तत एवारभ्यास्य कामो गुरुः, चन्द्रमा जीवितेशः, मलयमरुदुच्छ्वास हेतुः, आधयोऽन्तरङ्गस्थानेषु, संतापः परमसुहृत्, प्रजागर आप्तः, मनोरथाः सर्वगताः, निःश्वासा विग्रहाग्रेसराः, मृत्युः पार्श्ववर्ती, रणरणकः सञ्चारकः, संकल्पाबुद्ध्युपदेशवृद्धाः । किं वा वि-

वालिशतादयः, नैव हेतवरितितात्पर्यार्थः) किंनादित्यपेक्षायामाह । **नेति**— असाधारणा, अनन्यसदृशी, स्वामिभक्तिः, प्रभौ अनुरागः, किंचित्, किमपि, न, कारयतीति न, अपितु सर्वमेव कारयतीतिभावः । सा त्वं, (सरस्वतीरूपा) यदा, एव, देवेन दधीचेन, दृष्टासि, अवलोकितासि, तत एवारभ्य, ततः प्रभृति अस्य, कुमारस्य, कामः, मन्मथः, गुरुः, आचार्यः, (उपदेष्टा इति यावत्) यथैवाज्ञापयति तथैव करोति, वशवर्तित्वादित्यर्थः । चन्द्रमा, जीवितेशः, प्राणेश्वरः, (शिशिरतया कामाग्नि निर्वापण कारणत्वात्, अमृतमयत्वेन च जीवन रक्षण क्षमत्वादित्यर्थः) यद्वा, जीवितेशः मृत्युः (चन्द्रोदयसमयेकामिनां सततमुपास्यमानाः कामाग्निवर्द्धकतया मृत्युं दिशन्तीतितात्पर्यार्थः) मलयमरुत्, मलयवायुः, उच्छ्वास हेतुः, उच्छ्वास कारणं, (यदाहिमलयमरुद्वहतितदैवासौनिश्वसितीत्यर्थः) अन्तरङ्गस्थानेषु, अभ्यन्तरस्थानेषु, आधयः, मानसीव्यथाः, (स्वजनाः यथासर्वदा परिचरन्ति तथैवाधयः एनंनिरन्तरमाश्रयन्तीत्यर्थः) सन्तापः, परमसुहृत्, मित्रं, (सतत सहचरमितिभावः) यद्वा-परम्-असुहृत्, प्राणहरः । प्रजागरः, जागरणं, आप्तः, विश्रम्भभाजनः, (आत्मीयइत्यर्थः) नैनंत्यजतीतिशेषः । मनोरथाः, अभिलाषः, सर्वगताः, सर्वगामिनः, निश्वासाः, श्वसनानि, विग्रहाग्रेसराः, विग्रहस्य, विशिष्टज्ञानस्य, देहस्य वा, अग्रगामिनः, शरीरं परित्यज्य गन्तुमिच्छन्तीत्यर्थः, मृत्युः, मरणं, पार्श्ववर्ती, पार्श्वचरः (त्वदनङ्गी क्रियमाणे, मरणंनिश्चितमितितात्पर्यम्) रणरणकः, उत्कण्ठा, एव, सञ्चारकः, प्रेरकः । सङ्कल्पाः, मनसो कल्पनाः,

ज्ञापयामि। अनुरूपोदेवोदेव्या इत्यात्म संभावना, शीलवानिति प्रक्रम विरुद्धम्, धीरइत्यवस्था विपरीतम्, स्थिरप्रीतिरिति निपुणोपक्षेपः, जानाति सेवितुमित्यस्वामिभावोचितम, इच्छति दासभावमामरणात्कर्तुमितिधूर्तालापः, भवनस्वामिनी भवसीत्युपप्रलोभनम्, पुण्य भागिनी भजतिभर्तारं तादृशमितिस्वामिपक्षपातः, त्वं तस्य मृत्युरित्यप्रियम्, अगुणज्ञासीत्यधिक्षेपः, स्वप्नेऽस्यबहुशः कृतप्रसादासी-

---

वुद्धेः, ज्ञानस्य, उपदेशः "इदं कुरु" एवंकरणीयं" इत्येवंरूपः, तस्मिन्, वृद्धाः, महान्तः, स्थविराश्च। किं वा, विज्ञापयामि, कथयामि, अनुरूपः, सुयोग्यः, देवः, दधीचः, (उक्तेइतिशेषः) (एवं सर्वत्रैवज्ञेयम्) इति, आत्मसंभावना, आत्मश्लाघा। शीलवान्, सुशीलः, (असावितियावत्) प्रक्रमविरुद्धं, प्रसङ्गविपरीतम् (ईदृग्व्यापारवतः कुतः शीलवत्वमित्यर्थः) धीरः, धैर्यवान्, इति, अवस्था विपरीतम्, अवस्थाकामजनितदशा, तस्याः, विपरीतं विरुद्धं, (धीराः नह्येवं विलपन्तीत्यर्थः) स्थिरप्रीतिः, अचलप्रेमा, इति, निपुणोपक्षेपः, निपुणस्य, चतुरस्य, (यथाकथञ्चित् कर्मणि दक्षस्येत्यर्थः) उपक्षेपः, उपक्रमः (आलापइतियावत्) (स्थायित्वकीर्तनं विना नास्य कार्यसिद्धिरित्येव मुक्तिः युज्यते इत्यर्थः) सेवितुं परिचरितुं, जनाति। (प्रणयानुगमनमितियावत्) अस्वामिभावोचितं, स्वामित्वानुपयुक्तं, (नहिसेवन्तेस्वामिनः सेवकान् प्रत्युतः सेवकैरेव स्वामी सेव्येते) आमरणात्, आजीवनं, दासभावं, सेवकत्वं, इच्छति, इति, धूर्तालापः, प्रतारकवचनं, (धूर्तैः स्वकार्यसिध्यैरेवं, कथ्यते इत्यर्थः) भवनस्वामिनी, गृहकर्त्री, भवसि, इति, प्रलोभनं, लोभप्रदर्शनं। पुण्यभागिनी, धन्या, तादृशं, (सुयोग्यमित्यर्थः) भर्तारं, पतिं भजति, इति, स्वामि पक्षपातः, स्वामिनि (यदर्थमहमागता) तस्मिन्, प्रभौ, इतिभावः। पक्षपातः, अतिप्रणयः। त्वं, तस्य, मृत्युः; (त्वां विनामरिष्यत्यसावित्यर्थः) इति; अप्रियं; निष्ठुरवचनं। अगुणज्ञा; गुण परिज्ञाने-

त्यसाक्षिकम्, प्राणरक्षार्थमर्थयत इति कातरता, तत्रागम्यतामित्याज्ञा, वारितोऽपि बलादागच्छतीति परिभवः। तेदवमगोचरे गिरामसीतिश्रुत्वा देवी प्रमाणम्' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत्।

अथ सरस्वती प्रीति विस्फारितेन चक्षुषा प्रत्यवादीत्—'अयि' नशक्नोमि बहु भाषितुम्। एषास्मि ते स्मितवादिनि वचसि स्थिता। गृह्यन्ताममी प्राणाः, इति। मालती तु 'यदाज्ञापयिस्यति प्रसादः' इति

असमर्था, इति, अधिक्षेपः, अपमानः, स्वप्ने, निद्रावस्थायां, बहुशः, बारं बारं, कृतप्रसादा, कृतः, विहितः, प्रसादः, अनुग्रहः, यया, तथाभूता। (त्वां स्वप्ने, दृष्ट्वा, असांमहतीं प्रीतिमलभतेत्यर्थः) इति, असाक्षिकम्। साक्षिरहितं, (स्वप्नेसाक्षिणामभावादित्यर्थः) प्राणरक्षार्थं, जीवनरक्षितुं, अर्थयते, प्रार्थयते, (त्वत्प्रसादमित्यर्थः) इतिकातरता, दैन्यं, (दीनानामेवालापमेतदितिभावः) तत्र, तत्पार्श्वं, आगम्यतां, इति, आज्ञा, आदेशः। वारितः, निषिद्धः, (मागन्तव्यंत्वयाम-समीपं, इति) अपि, संभावनायां, बलात्, हठात्, आगच्छतीतिपरिभवः तिरस्कारः। तत, तस्मात्, गिरां, वाचां, अगोचरे, अविषये, असि, (नहिकिमपिवक्तुं समर्था इतिभावः) इतिश्रुत्वा, निशम्य, देवी, भवती, प्रमाणं, (प्रमीयते, अनुमीयते, इतिप्रमाणं। इत्यभिधाय, कथयित्वा, तूष्णीमभूत्, मौनं लेभे।

अथ, अनन्तरं, प्रीतिविस्फारितेन, प्रीत्या, प्रेम्णा, विस्फारितं, विस्तारितं, (उन्मीलितमित्यर्थः) तेन, चक्षुषा, नेत्रेण, प्रत्यवादीत्, उक्तवती अपि? बहु, अधिकं, भाषितुं, कथयितुं, नशक्नोमि (असमर्थास्मि) स्मितवादिनि? मधुरभाषिणि?, एषा, अहं, ते, तव, वचसि, आज्ञायां, स्थिता, अस्मि अमीप्राणाः, (मदीयं जीवनमित्यर्थः) गृह्यन्तां, स्वीकुरु। मालतीतु, यदाज्ञापयसि, आज्ञां करोसि, अतिप्रसादः, अनुग्रहः, (भवत्या इतिशेषः) इति, व्याहृत्य, कथयित्वा, प्रहर्षः, आनन्द विशेषः, तेन, परवशा, पराधीना, (सुखे-

व्याहृत्यप्रहर्षपरवशा प्रणम्य प्रजविना तुरगेण ततार शोणम्। अगाच्च दधीचमानेतुं च्यवनाश्रमपदम्। इतरा तु सखी स्नेहेन सावित्रीमपि विदित वृत्तान्तामकरोत्। उत्कण्ठाभारभृता च ताम्यता चेतसा कल्पायितं कथंकथमपि दिवसशेषमनैषीत्। अस्तमुपगतवति भगवति गभस्तिमति, स्तिमिततरमवतरति तमसि, प्रहसितामिव सितां दिशं पौरन्दरीं दरीमिव केसरिणिमुञ्चति चन्द्रमसि, सरस्वती शुचिनि चीनांशुकसुकुमारे तरङ्गिणी दुकूलकोमले, शयन इव शोणसैकते

नेतियावत्) प्रणम्य, नत्वा, प्रजविना, द्रुतगामिना, तुरगेण, अश्वेन, शोणं, नदं, ततार, अवतीर्णा। दधीचमानेतुं, आनयनाय, च्यवनाश्रमपदं, च्यवनस्थानं, अगात्, च, अगमत्। इतरातु (सरस्वती) सखीस्नेहेन, प्रेम्णा, सावित्रीमपि, स्व सहचरीमपि, विदित वृत्तान्तां, विदितः, ज्ञातः, वृत्तान्तः, (दधीचेसरस्वत्याः अनुरागवृत्तं यस्यास्ताम्) एवं भूतां, अकरोत्। चकार (सावित्रीसविधेसर्ववृत्तमकथयदितिभावः) उत्कण्ठाभारभृता, उत्कण्ठानां, औत्सुक्यानां, भारः, अतिशयः, तं, बिभर्तीति, तेन, ताम्यता, क्लिश्यता, चेतसा, मनसा, कल्पायितं, ब्राह्मं दिनं कल्पः, तद्वदाचरति, तं, (कल्प शदृशमितिभावः) कथंकथमपि, केनापि प्रकारेण, दिवसं, दिनं, अनैषीत्, व्यतीतयत्। गभस्तिमति, किरणशालिनि (सूर्ये इतियावत्) भगवति, कल्याणकरे, अस्तं, अस्ताचलं, उपगतवति, प्राप्ते, (अस्तंगते इत्यर्थः) स्तिमिततरं, मन्दं मन्दं, अवतरति, आविर्भवति, प्रहसितामिव, प्रकर्षेण, कृद्धास्यामिव, सितां, शुभ्रां, पौरन्दरींदिशं, पुरन्दरस्य, इन्द्रस्य, इयं, यद्वा, पुरन्दरः, अधिष्ठाता, यस्याः, सा पौरन्दरी, ता, दिशं, (पूर्वामितिभावः) दरीमिव, गुहामिव, केसरिणि, सिंहे, मुञ्चति, त्यजति, (उदयमाने इत्यर्थः) चन्द्रमसि, शशिनि। सरस्वती-शुचिनि, स्वच्छे, चीनांशुकं, चीनदेशोद्भवं वस्त्रं, तद्वत्, सुकुमारः, अति कोमलः, तस्मिन्, तरङ्गिणि, (प्रतिदिवसक्षीयमाणेनजलेन कृतरेखेत्यर्थः)

समुपविष्टास्वप्नकृतप्रार्थनापादपतनलग्नां दधीचचरणनखचन्द्रिकामिव ललाटिकां दधाना, गण्डस्थलादर्शे प्रतिबिम्बितेन, "चारुहासिनि ?", अयमसावाहृतो हृदयदयितो जनः' इति श्रवणसमीपवर्तिना निवेद्यमान मदन सन्देशेवेन्दुना, विकीर्यमाणनखकिरणचक्रवालेनबालव्यजनी-कृतचन्द्रकलाकलापेनेवकरेणवीजयन्ती स्वेदिनं कपोलपट्टम्, 'अत्र दधीचादृते न केनचित्प्रवेष्टव्यम्' इति तिरश्चीनं चित्तभुवापतितां विला-

दुकूलकोमल, दुकूलवत् सुकुमारे, शयन, शय्यायां, इव, शोणसैकते, शोणनद-पुलिने, समुपविष्टा, स्थिता। **स्वप्नेति**—स्वप्ने, स्वप्नावस्थायां, कृता, या, प्रार्थना, "मामनुगृहाण," इत्यभ्यर्थना, तस्या, यत्, पादयोः, (दधीचस्येत्यर्थः) पतनं, तेन, लग्ना, संसक्ता, ताम्। **दधीचेति**—दधीचस्य, यः, चरणनखः, तस्य, या, चन्द्रिका, ज्योत्स्ना, तामिव, ललाटिकां, शिरोभूषणं, (तिलक-मितियावत्) दधाना, धारयन्ती। **गण्डेति**—गण्डस्थलं, कपोलतलं, एव, आदर्शः, दर्पणः, (अतिस्वच्छमितियावत्) तत्र, प्रतिबिम्बितः, प्रतिफलितः, तेन, चारुहासिनि ?, मधुरभाषिणि ? अयमसौ, (पूर्वनिर्दिष्टः) हृदयदयितो-जनः, हृदयवल्लभः, आहृतः, आनीतः, (मयेतिशेषः) "इति" श्रवणसमीप वर्तिना, कर्ण पार्श्ववर्तिना, **निवेद्यमानेति**—निवेद्यमानः, विज्ञाप्यमानः, मदन-स्य, कामस्य, सन्देशः, वाचिकं, यस्यै, तथोक्ता, इन्दुना, चन्द्रेण। **विकीर्य-माणेति**—विकीर्यमाणं, इतस्ततः प्रसार्यमाणं, नखकिरणानां, मयूखानां, चक्रबालं, मण्डलं, यस्य तथोक्तेन अतएव, बालव्यजनीकृतः, नवचामरत्वेनभृतः अथवा, बालकृतं व्यजनं, चामरं, तत्कृतः, चन्द्रकला कलापः, चन्द्रकलानिचयः, येन, तथोक्तेन, स्वेदिनं, (कामोद्भूत घर्माक्तमितियावत्) कपोलपट्टं, गण्ड-स्थलं, करेण, हस्तेन, उपवीजयन्ती, व्यजनं कुर्वन्ती। अत्र (हृदये इति यावत्) दधीचादृते, दधीचंविना, न, केनचित्, केनापि, प्रवेष्टव्यं। इति, तिरश्चीनं, तिर्यकूयथास्यात्तथा, चित्तभुवा, कामेन, पातितां, निक्षिप्तां, विलास

सवेत्रलतामिव बालमृणालिकामधिस्तनं स्तनयन्ती कथमपि हृदयेनव-हन्ती प्रतिपालयामास। आसीच्चास्यामनसि—'अहमपि नाम सरस्वती यत्रामुना मनोजन्मना जघन्येव परवशीकृता। तत्र का गणनेतरासुनपस्विनीष्वति तरलासु तरुणीषु' इति।

आजगाम च मधुमास इव सुरभिगन्धवहः, हंस इव कृतमृणालधृतिः, शिखण्डीव घनप्रीत्युन्मुखः, मलयानिल इवाहितसरसचन्दन

वेत्रलतामिव, विलासाय वेत्रयष्टिमिव, (द्वारपालः अन्यप्रवेशनिवारणाय वेत्रयष्टिं तिरश्चीनं स्थापयतीतिलोक प्रसिद्धिः) बालमृणालिकां, नव मृणाललतां, (विरहसन्ताप शान्त्यै धारितामित्यर्थः) अधिस्तनं, स्तनोपरि, स्तनयन्ती कलयन्ती। कथमपि, हृदयेन, चेतसा, वहन्ती, धारयन्ती, प्रतिपालयामास, प्रतिज्ञां चकार। **आसीदिति**—अस्याः, सरस्वत्याः, मनसि, हृदि, आसीच्च, अहमपि (अतिधीरादेवताऽपीति यावत्) नाम, यत्र, अमुना, अनेन, मनोजन्मना, कामेन जघन्येव, नीचेव, परवशी कृता, परवशतांनीता। तत्र, का गणना, गणनं, (किंकथनीयमित्यर्थः) इतरासु, अन्यासु, तपस्विनीषु, तपःशीलासु, अतितरलासु चञ्चलासु तरुणीषु, युवतीषु। (अन्ययुवतीनांतुकिंकथनं, यदयं किंकरोतीति)।

आजगामेति—आजगाम इत्यतः मालतीद्वितीयोदधीचः, इत्यनेनान्वयः। मधुमासइव, वसन्तइव, सुरभिः, सौरभशालिनं, गंधंवहति, धारयतीति, तथोक्तः (पक्षे) सुरभिः, सौरभवान्, गन्धवहः, पवनः, यत्रतथाभूतः। हंसइव, कृता, विहिता, मृणालेन, (कामसन्ताप निवृत्त्यर्थमितिभावः) धृतिः, धैर्यं, येन, तथाभूतः, यद्वा, कृता मृणालेन, धृतिः, जीवन रक्षणं, येन, तथोक्तः, शिखण्डीव, मयूर इव, घना, सान्द्रा प्रीतिः (स्नेहातिशयः) तस्यां, उन्मुखः (तत्प्राभिलेलुप इतियावत्) (पक्षे) घने, मेघे, (तद्दर्शने इतिभावः) या, प्रीतिः, प्रेम, तस्यै, उन्मुखः, ऊर्ध्वमुखः। मलयानिल इव, मलयमरुदिव, आहितः,

धवलतनुलतोत्कम्पः, कृष्यमाण इव कृतकरकचग्रहेणग्रहपतिना, प्रेर्य-माण इव कंदर्पोद्दीपनदक्षेण दक्षिणानिलेन, उह्यमान इवोत्कलिका-बहलेन रतिरसेन, परिमलसंपातिना मधुपपटलेन पटेनेव नीलेनाच्छा-दिताङ्गयष्टिः, अन्तःस्फुरता मत्तमदनकरिकर्णशङ्खायमानेन प्रतिमे-न्दुना प्रथमसमागमविलासविलक्षस्मितेनेव धवलीक्रियमाणैककपोलो-दरो मालतीद्वितीयो दधीचः।

जनितः, सरसेन, सान्द्रेण, (घृष्टेनेतियावत्) चन्दनेन, धवलायाः, शुभ्रायाः, तनुलतायाः, अङ्गयष्टेः, उत्कम्पः, कम्पनं (कामज्वरेणेत्यर्थः) यस्य, तथा-भूतः (पक्षे) आहितः, जनितः, सरसानां, स्निग्धानां, चन्दनानां, धवाः, वृक्ष-विशेषाः, तान्लान्ति, आश्रयन्तीति, तथाभूताः। याः, तनुलताः, सूक्ष्मवल्ल्यः, तासाञ्चउत्कम्पः, कम्पनं, येन, तथाविधः। कृष्यमाण इव, आकृष्ट इव, कृतः, करेण, हस्तेन, मयूखेन च, कचग्रहः, केशग्रहणं, येन, तथाभूतेन, ग्रहपतिना, चन्द्रमसा। प्रेर्यमाण इव, प्रेरित इव, कंदर्पोद्दीपनदक्षेण, कन्दर्पस्य, कामस्य, उद्दी-पने, उत्तेजने, दक्षेण, चतुरेण, दक्षिणानिलेन, दक्षिण वायुना। उह्यमान इव, नीयमान इव, उत्कलिका, बहलेन, रणरणकभूयिष्ठेन, रतिरसेन, रत्यास्वादेन। **परिमलेति**—परिमलेन, गात्रसौरभेण, सम्पतति, निपततीति तथाभूतेन। मधुप पटलेन, भ्रमर समूहेन, पटेनेव, वसनेनेव, नीलेन, नीलवर्णेन, आच्छादिता, आवृता, अङ्ग यष्टिः, शरीर, यस्य, तथाभूतः। अन्तः स्फुरता, अन्तर्विराजमा-नेन, मत्तः, दुर्मदः, मदनः, कामः, एव, करी, हस्ती, तस्य, कर्णे, श्रवणे, यः, शङ्खः, (शङ्खनिर्मितभूषणविशेषः) स इवाचरतीति, तेन, प्रतिमेन्दुना, प्रतिबिम्बि-तशशिना, **प्रथमेति**—प्रथमः, आद्यः, समागमः, सङ्गः, तस्मिन्, यः, विलासः, तेन, विलक्षं, सलज्जं, यत्, मृदु हास्यं, तेन इव, धवलीक्रियमाणं, शुभ्रतांनीय-मानं, एकस्य, कपोलस्य, गण्डप्रदेशस्य, उदरं, अभ्यन्तरं, यस्य, तथाभूतः, माल-तीद्वितीयः, (मालत्यासहेत्यर्थः) दधीचः,(पूर्वनिर्दिष्टःकुमारः) आजगाम, प्राप्तः।

आगत्य च हृदयगतदयितानूपुररवमिश्रयेव हंसगद्गदया गिरा कृतसंभाषणो यथा मन्मथः समाज्ञापयति, यथा यौवनमुपदिशति, यथानुरागः शिक्षयति, यथा विदग्धताध्यापयति, तथा तामभिरामां रामामरमयत्। उपजातविस्रम्भा चात्मानमकथयदस्य सरस्वती। तया तु सार्धमेकं दिवसमिवानयत्संवत्सरमधिकम्।

अथ दैवयोगात् सरस्वती बभार गर्भम्। असूत चानेहसा सर्वलक्षणाभिरामं तनयम्। तस्मै च जातमात्रायैव 'सम्यक्सरहस्याः सर्वे-

हृदयेति—हृदयंगता, (मनसिप्रविष्टा इति यावत्) या, दयिता, प्रिया, तस्याः, नूपुररवः, रणरणक शब्दविशेषः, तेन, मिश्रा, मिलिता, (एकत्वंगतेत्यर्थः) तयेव, हंसगद्गदया, (हंसशब्द मधुरयेतिभावः) गिरा, वाचा, कृतसम्भाषणः, विहित वार्तालापः, (देवि ? ते कुशलमेवंविधमालपन्) **यथेति**—यथा, येनप्रकारेण, मन्मथः, कामः, समाज्ञापयति, आज्ञांकरोति। यौवनं, उपदिशति, अनुशाशति। अनुरागः, प्रेम, शिक्षयति, शिक्षां ददाति। विदग्धता, चतुरता, अध्यापयति, पाठयति। तथा, तां, (सरस्वतीं) अभिरामां, मनोरमां, रामां, प्रियां, अरमयत्। (अनौचित्यंहि देवता विषयक शृङ्गारप्रदर्शन मतः नात्र विस्तारेण प्रदर्शितं) कुमारादौ गान्धर्व विवाह वर्णनौचित्येऽपिनात्र-तद्वर्णनं, शापावसान मात्रपरत्वादाख्यायिकायाः, अन्यथा, तथा, निन्दनीयः पतिपरित्यागः कथमकारि, इत्यादिकुतर्कप्रसङ्गात्) उपजात विश्रम्भा, समुत्पन्न विश्वासा, अस्य, दधीचस्य, आत्मानं, (स्वीयंभावमित्यर्थः) सरस्वती, अकथयत्। तया, सरस्वत्या, (शापादिकमिति यावत्) सार्धं, सह, अधिकंसम्वत्सरं, वर्षमेकं, एकंदिनमिव, वासरमिव, अनयत्, व्यतीतयत्। **अथेति**—अथ, अनन्तरं, दैवयोगात्, भाग्यात्, सरस्वती, गर्भं, बभार, दधार। अनेहसा, कालेन, सर्वलक्षणाभिरामं, **मनोज्ञं**, तनयं, पुत्रं, असूत। तस्मै, तनयाय जातमात्राय, (उत्पन्नायेत्यर्थः) सम्यक्, यथास्यात्तथा, सरहस्याः, रहस्यं,

वेदाः सर्वाणि च शास्त्राणि सकलाश्च कलाः मत्प्रसादात्स्वयमाविर्भविष्यन्ति' इतिवरमदात्। सद्भर्तृश्लाघया दर्शयितुमिव हृदयेनादाय दधीचं पितामहादेशात्समं सावित्र्या ब्रह्मलोकमारुरोह। गतायां च तस्यां दधीचोऽपि हृदये ह्रादिन्येवाभिहतो, भार्गववंशसंभूतस्य भ्रातुर्ब्राह्मणस्य जायामक्षमालाभिधानां मुनिकन्यकामात्मसूनोः सम्वर्धनाय नियुज्य विरहातुरस्तपसे वनमगात्। यस्मिन्नेवावसरे सरस्वत्यसूत तनयं तस्मिन्नेवाक्षमालापि सुतं प्रसूतवती। तौ तु सा निर्विशेषं सामान्यस्तन्या शनैः शनैः शिशू समवर्धयत्। एकस्तयोः सारस्वताख्य एवाभवत्, द्वितीयो-

उपनिषत, तेन, सहवर्तमानाः, सर्वेवेदाः, ऋग्यजुः सामाथर्वाणः, सर्वाणि च, शास्त्राणि, मीमांसादीनि, कलाः, चतुः षष्टिसंख्याकाः कामविद्याः। मत्प्रसादात्, स्वयं, आविर्भविष्यन्ति, प्रकटिष्यन्ति। इति, एवं, वरमदात्, वरं दत्तवती। सद्भर्तृश्लाघया. सत्, उत्तमः, यः, भर्ता, पतिः, तस्मिन्, श्लाघा, गौरवं, तया, दर्शयितुं, प्रदर्शनाय, इव, दधीचं, हृदयेन, चेतसा, आदाय, नीत्वा, पितामहादेशात्, (पुत्र मुखदर्शनानन्तरं ते शाप विरतिः, इत्यादेशात्) सावित्र्यासमं, ब्रह्मलोकं, पितामह स्थानं, आरुरोह, गता। गतायां च तस्यां, (सरस्वत्यामितिभावः) दधीचोऽपि, हृदये, चेतसि, ह्रादिन्या, वज्रेण, इव, अभिहतः, ताडितः, भार्गववंशसम्भूतस्य, भार्गवकुलोद्भवस्य, भ्रातुः, ब्राह्मणस्य, जायां, दयितां, अक्षमालाऽभिधानां, अक्षमाला, नाम्नीं, मुनिकन्यकां, पुत्रिं, आत्मसूनोः, स्वतनयस्य, संवर्धनाय, वर्धितुं, नियुज्य, विरहातुरः, विरह पीड़ितः, तपसे, तपः कर्तुं, वनम्, अगात्, गतवान्। यस्मिन्नेवावसरे, समये, सरस्वती, तनयं. पुत्रं. असूत, तस्मिन्नेव, (समये-इतियावत्) अक्षमालापि, सुतं, पुत्रं, प्रसूतवती, प्रसवंचकार। तौ तु, वालकौ, सा, अक्षमाला, निर्विशेषम्, (स्वपुत्रादभिन्न भावेनेत्यर्थः) सामान्यस्तन्या, (उभयोः साधारणमितियावत्) स्तन्यं, दुग्धं, यस्याः, तथोक्ता। शनैः शनैः, समवर्धयत्,

ऽपि वत्सनामाभवत् । आसीच्च तयोः सोदर्ययोरिव स्पृहणीया प्रीतिः । अथ सारस्वतो मातुर्महिम्ना यौवनारम्भ एवाविर्भूताशेषविद्या संभारस्तस्मिन्सवयसि भ्रातरिप्रेयसि प्राणसमेसुहृदि वत्से वाङ्मयं समस्तमेव संचारयामास । चकार च कृतदारपरिग्रहस्यास्य तस्मिन्नेवप्रदेशे प्रीत्या प्रीतिकूटनामानं निवासम् । आत्मनाप्याषाढी, कृष्णाजिनी, वल्कली, अक्षवलयी, मेखली, जटी च भूत्वा तपस्यतो जनयितुरेव जगामान्तिकम् । अथ तस्मात्प्रवर्धमानादिपुरुषात्जनितात्मचरणोन्नति-

---

पालितवती । तयोः (पूर्वनिर्दिष्टयोः) एकः, सरस्वतीपुत्रः, सारस्वताख्यः, सारस्वत नामा, अभवत् । द्वितीयः, अक्षमाला पुत्रः, वत्सनामा, वत्साभिधेयः, तयोः, वालकयोः, सोदर्ययोः, एक-उदरोद्भवयोरिव स्पृहणीया, प्रशंसनीया, प्रीतिः, प्रेम, आसीत् । अथ, अनन्तरं, सारस्वतः, मातुः (सरस्वत्याः) महिम्ना, प्रभावेण, यौवनारम्भएव, प्रौढावस्थायामेव, आविर्भूताः, प्रादुर्भूताः, अशेषाः, सकलाः, विद्याः, तासां, संभारः, सन्घः, तस्मिन् , सवयसि, समान वयस्के, भ्रातरि, प्रेयसि, प्राणसमे, सुहृदि, मित्रे, वत्से, वाङ्मयं, शास्त्रं, समस्तं, सम्पूर्णं, एव, संचारयामास । प्रवेशयामास, (सर्वास्ताविद्याः वत्समशिक्षयदित्यर्थः) कृतदारपरिग्रहस्य, कृतविवाहस्य, अस्य (वत्सस्येत्यर्थः) तस्मिन्, एव, प्रदेशे, स्थाने, प्रीत्या, प्रेम्णा, प्रीतिकूट नामानं, तदाख्यं, निवासं, स्थितिं, चकार, अकरोत् । आत्मना, स्वयं, (अपीतिसंभावनायां) आषाढी, पालाश दण्डधारी, कृष्णाजिनी, कृष्णशार मृगचर्मावरणमितिभावः । वल्कली, वल्कलं वृक्षत्वक्, तद्वान् (तरुत्वग्धारीत्यर्थः) अक्षवलयी, रुद्राक्ष जपमालाधारी, मेखली, मेखला, काञ्ची (मुञ्जतृणरचित तड़ागी) तद्वान् । जटी, जटा, रुक्ष संहतकेशः, तद्वान् । (जटिल इति यावत्) भूत्वा, एवं मुनिवेषंविधाय, तपस्यतः, तपस्यां कुर्वतः, जनयितुः, पितुः (दधीचस्येतियावत्) अन्तिकं, पार्श्वं, जगाम, अगमत् । **अथेति**—तस्मात्, प्रवर्धमानात्, वृद्धिंगच्छतः,

निर्गतप्रघोषः, परमेश्वरशिरोधृतः, सकलकलागमगम्भीरः, महामुनिमान्यः, विपक्षक्षोभक्षमः, क्षितितललब्धायतिः, अस्खलितप्रवृत्तोभागी-

आदिपुरुषात्, पूर्वपुरुषात्, (वत्सादितियावत्) अथवा, प्रवर्धमानात्, सन्तत्यावृद्धिंगच्छतः, आदि पुरुषात्, पूर्वजात्, (भार्गवादित्यर्थः) (पक्षे) नारायणात्। **जनितेति**—जनिता, वृद्धिंनीता, आत्मचरणेन, आज्ञानेन, या, उन्नतिः, अभ्युदयः, तया, निर्गतः, (दिगन्तगत इत्यर्थः) प्रघोषः, ध्वनिः, (कीर्तिरित्यर्थः) यस्य, तथोक्तः। अथवा, जानिता, कृता, आत्मनां, स्वेषां, (स्ववंशीयानामितियावत्) चरणानां, कठादि शाखाध्यायिनां। उन्नतिः, उत्कर्षः, तया, निर्गतः, प्रघोषः, यशः यस्य, तथाभूतः (पक्षे) जनितस्य, उत्पादितस्य, आत्मचरणस्य, (बलिछलनसमये, स्वकीयतृतीयपादस्येतिभावः) उन्नत्या, उर्ध्वगत्या, निर्गतः, प्रघोषः, कलकल शब्दः, यस्य, तथोक्तः। (तदानीन्तनचरण स्पर्शेन, ब्रह्मकटाहभेदादित्यर्थः) ब्रह्मकटाहस्थिता गङ्गा भगवच्चरण स्पर्शात् कटाहभङ्गे महीतले पपात, इत्यस्या विष्णोश्चरणोद्भवेति प्रसिद्धिः) परमेश्वरशिरोधृतः, परमेश्वरः, सम्राट्, तेन, शिरसाधृतः, (सम्मानित इतियावत्) (पक्षे) परमेश्वरेण, शङ्करेण, शिरसाधृत, धारितः, (हरशिरश्चारीत्यर्थः) **सकलेति**—सकलाः, सर्वाः, कलाः, विद्याः, तासां, आगमेन, प्राप्तेन, (ज्ञानेनेतियावत्) गम्भीरः, पूर्णः, (पक्षे) सकलकलेन, शब्दविशेषेण, सह, यः, आगमः, प्रवहणं, तेन, गम्भीरः, । महा मुनिमान्यः महान्तश्च ये मुनयः, तैः, मान्यः, आदरणीयः, अथवा, महामुनिवत्, मान्यः, मानार्हः (पक्षे) महामुनिः, जन्हुः, तेन, मान्यः, सेव्यः, (पवित्र बुध्या उदरेण धृतत्वादितियावत्) **विपक्षेति**—विपक्षक्षोभक्षमः, विपक्षाणां, शत्रूणां क्षोभे, पराजये, क्षमः, समर्थः। (पक्षे) विपक्षाः, पक्षरहिताः, (पर्वता इति यावत्) तेषां, क्षोभे, तरङ्गाघातेन, खण्डने, क्षमः, शक्तः। **क्षितितलेति**—क्षितितलेषु, पृथ्वी भागेषु, लब्धा, प्राप्ता, आयतिः, प्रतिष्ठा, (पक्षे) आयतिः,

रथीप्रवाह इव पावनः प्रावर्तत विपुलो वंशः । यस्मादजायन्त वात्स्यायना नाम गृहमुनयः, आश्रितश्रौता, अप्यनालम्बितालीकबककाकवः, कृतकुक्कुटव्रता, अप्यवैडालवृत्तयः, विवर्जितजनवृत्तयः, परिहृतकपट-

विस्तारः, येन, तथाभूतः । अस्खलितप्रवृत्तः, नास्तिरस्खलितं, सदाचारभ्रंशः, यस्मिन् , तद्, यथास्यात्तथा, प्रवृत्तः, ख्यातः, (पक्षे) अस्खलितं, अनिरुद्धं, प्रवृत्तः, प्रवहणं, यस्य, तथाभूतः । भागीरथी प्रवाहइव, गङ्गास्रोतइव, विपुलः, महान् , पावनः, पवित्रः, वंशः, कुलं, प्रावर्तत (ख्यातिंलेभे-इतिभावः) यस्माद् (वंशादितियावत्) वात्स्यायननाम, वत्सवंशोद्भवाः, गृहमुनयः, गृहस्थिताः, मुनयः, (मुनिवदाचरन्त इतिभावः) आश्रितश्रौताः, आश्रितः, अवलम्बितः, श्रौतः, वेदविहितः, आचारः यैः, तथोक्ता, (कपटभावं परित्यज्यवेदानुष्ठानकर्तार इतिभावः) पक्षे, श्रौतं, श्रुतौ, कर्णएव, आश्रितं, स्थितं, (चिरवृत्तमितिभावः) आलम्बितः, स्वीकृतः वकस्य, पक्षिविशेषस्य, काकुः, ध्वनिः, (भिन्नकण्ठध्वनिर्धीरैःकाकु रित्यभिधीयते) यैः, तथाभूताः, । (यैः वकवृत्तिः (छद्म) स्वीकृता तैःकथं वेदमार्गमनुसर्यते) इतिविरोधः । परिहारे-अलीकं, तुच्छम परिछन्नं" अनालम्बितः, अस्वीकृतः, वकस्य काकुः, ध्वनिः, यैः तथोक्ताः, । **कृतेति**—कृतं, कुक्कुटानां व्रतं, भक्षणं, यैः तथोक्ताः, अपि, अवैडालवृत्तयः, नास्ति वैडाली, विडाल सम्बन्धीनिवृत्तिः, व्यवहारो येषां तथाभूताः, । यैः कुक्कुटभक्षणं कृतं ते कथं, अवैडालवृतयः, इतिविरोधः, परिहारे, कुक्कुटव्रतं, कुक्कुटाण्डप्रमाणं ग्रासभोजनं, एवंभूताः । चान्द्रायणादि व्रतेषु कुक्कुटाण्ड प्रमाणं ग्रास भोजनं क्रियते, एव । **विवर्जितेति**—विवर्जिता, जनानां, दुर्जनानां, अथवा, जनेषु, दुराचारपुरुषेषु, वृत्तिः, व्यवहारः, यैः, तथोक्ताः । **परिहृतेति**—परिहृतं, परित्यक्तं, कपटकीरस्य, दुष्टशुकस्य, कुचीकूर्चाकृतं, "किचरमिचिर" इति अव्यक्त शब्दोः, यैः, तथाभूताः, यद्वा, परिहृतं. कपटं, व्याजस्तुतिः, (निन्दास्तुतिरितियावत्)

कीरकुचीकूर्चाकूताः, अगृहीतगह्वराः, न्यक्कृतनिकृतयः, प्रसन्नप्रकृतयः, विगतविकृतयः, परपरिवादपराचीन चेतसः, वर्णत्रयव्यावृत्तिविशुद्धान्धसः, धीरधिषणावधूताध्येषणाः, असङ्कसुकस्वभावाः, प्रणतप्रणयिनः शमितसमस्तशाखान्तर संशीतयः, उद्घाटितसमस्तग्रंथार्थग्रन्थयः, कवयः,

---

कीराणां, कुर्चाकूर्चाः, अनर्थकशब्दालापाः, तेषु, आकूतं, अभिप्रायः, यैः, तथोक्ताः। (यथापाठिताहिशुकाः, रञ्जयन्तिलोकानां मनांसि, परं नहि तेषां तादृशी प्रवृत्तिः, परमंतेब्राह्मणास्तुसमव्यवहारिणोनकापटिका वाचाला इतिभावः) **अगृहीतेति**—अगृहीतगह्वराः, न गृहीतं, धृतं, गह्वरं, पापं, यैः, तथोक्ताः। **न्यक्कृतेति**—न्यक्कृता, तिरस्कृता निकृतिः, शाठ्यं, यैः, तथाभूताः। **प्रसन्नेति**—प्रसन्ना, शुद्धा प्रकृतिः, स्वभावः, येषां (सौम्या इतियावत्) **विगतेति**—विगता, विकृतिः, विकारो येषां ते, (अविकृतचित्ता इतिभावः) **परेति**—परेषां, परिवादे, निन्दायां, पराचीनं, पराङ्मुखं, चेतः, येषां (परनिन्दा रहिता इत्यर्थः) **वर्णेति**—वर्णत्रयाणां, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्राणां, व्यावृत्त्या, विवर्जने (प्रतिग्रहादि वैमुख्येनेतिभावः) विशुद्धानि, पवित्राणि, अन्धांसि, अन्नानि, येषां तथाभूताः। **धीरेति**—धीरा, धैर्यशालिनी, या, धीषणा, बुद्धिः, तया, अवधूता, तिरस्कृता, अध्येषणा, याञ्चा, यैः, तथाभूताः, (परित्यक्तयाचनमित्यर्थः) असङ्कसुकस्वभावाः, असङ्कसुकः, स्थिरः मृदुश्च, स्वभावः, येषां, तथोक्ताः। प्रणत प्रणयिनः, प्रणतेषु, नम्रेषु जनेषु, अनुरागिणः। **शमितेति**—शमिता, शान्तिनीता, (सिद्धान्तेन निराकृतेत्यर्थः) समस्ताः, समग्राः, शाखान्तराणां, कठादि वैदिक शाखाविशेषाणां, शंशीति, संशयः, यैः, तथाभूताः। **उद्घाटितेति**—उद्घाटिताः, स्फुटिकृताः, (व्याकृताइतियावत्) समग्राणां, सम्पूर्णानां, ग्रन्थानां, शास्त्राणां, अर्थग्रन्थयः, गूढार्थाः यैः, तथोक्ताः, (शास्त्र संशयदूरीकरणशीला इतियावत्) कवयः, काव्यनिर्मातारः, वाग्मिनः, सुवक्तारः, विमत्सराः, वि-विगतः, मत्सरः, द्वेषभावः

वाग्मिनः, विमत्सराः, सरसभाषितव्यसनिनः, विदग्धपरिहासवेदिनः, परिचयपेशलाः, नृत्यगीतवादित्रेष्वबाह्याः, ऐतिह्यस्याविवृष्णाः, सानुक्रोशाः, सत्यशुचयः, साधुसंमताः, सर्वसत्त्वसौहार्दद्रवार्द्रहृदयाः, तथा सर्वगुणोपेता राजसेनानभिभूताः, क्षमाभाज आश्रितनन्दनाः, अनिस्त्रिंशा विद्याधराः, अजडाः कलावन्तः; अदोषास्तारकाः; अपरोपतापिनो भास्व-

---

मेषां तथोक्ताः। सरसेति—सरसं, रसयुक्तं, भाषितं, वचनं, तत्र, व्यसनिनः, (सक्ताश्चेव इतियावत्) विदग्धेति—विदग्धः, चतुरः, यः, परिहासः, केलिः तद्वेदिनः, ज्ञातारः। परिचयपेशलाः, परिचयेषु, संस्तवेषु (सज्जनैरितियावत्) पेशलाः, निपुणाः। नृत्यवादित्रेषु, नर्तनगानादिषु, अवाह्याः, वहिर्भाव रहिताः, (सर्वज्ञा इतिभावः) ऐतिह्यस्य, इतिहासस्य, अवितृष्णाः, आसक्ताः, (इतिवृत्त ज्ञानिन इतिभावः) सानुक्रोशाः, सदयाः। सत्यशुचयः, सत्येन शुचयः, पूताः। साधुसम्मताः, सज्जनमान्याः। सर्वेति—सर्वेषु, सत्त्वेषु, जीवेषु, सौहार्द्रवेण, मैत्रीभावेन, आर्द्रं, स्निग्ध, हृदयं, येषां तथाभूताः। सर्व गुणोपेताः, सर्वैः गुणैः, दाक्षिण्यादिभिः, उपेताः, युक्ताः, राज्ञः, नृपस्य, सेनया, सैन्येन, अनभिभूताः,। अनाक्रान्ताः, (ये तु सर्वैर्गुणैः सत्वरजस्तमादिभिर्युक्तास्ते राजसेन रजः सम्बन्धिगुणेनदम्भाहंकारादीना इतिभावः) अनभिभूताः, अपराजिताः, रजोगुण रहिता भवन्ति इति विरोधः। परिहारस्तुप्राक्। क्षमाभाजः, क्षमा, पृथ्वी, तां, भजन्ते, ते, आश्रितनन्दनाः, आश्रितं, सेवितं, नन्दनं, तदाख्यं सुरोद्यानं यैः तथाभूताः। पृथ्वी स्थितानां नन्दनाश्रयणमिति विरोधः असाम्यत्वात्। परिहारे, क्षमा, शक्तौ सहिष्णुता, तद्भाजः (तद्वन्त इतियावत्) आश्रितनन्दनाः, आश्रितान्, अनुगतान् जनान्, नन्दयन्ति, आमोदयन्ति, तथाभूताः। अनिस्त्रिंशाः, खड्गवर्जिताः, विद्याधराः, देवयोनिविशेषाः; इतिविरोधः, तेषांखड्गसामिप्यत्वात्। परिहारे-अनिस्त्रिंशाः, अनिर्दयाः, विद्याधराः, विद्वांसः। अजडाः, अशीताः, (उष्णाइतियावत्) कलावन्तः, चन्द्राः।

न्तः; अनुष्माणो हुतभुजः, अकुसृतयो भोगिनः, अस्तम्भाः, पुण्यालयाः, अलुप्तक्रतुक्रिया दक्षाः, अव्यालाः कामजितः, असाधारणा द्विजातयः ।

(ये उष्णाभवन्तितेकथं चन्द्राः, इतिविरोधः, तस्य शीतरश्मित्वात्) परिहारे-अजडाः, अमूर्खाः, कलावन्तः, नृत्यगीतादिषुनिपुणाः । अदोषाः, दोषारात्रिस्तद्रहिताः, तारकाः, नक्षत्राणि, इतिविरोधः, रात्रिंविना तारकोद्गमत्वात् । परिहारे-अदोषाः, दोषरहिताः, तारकाः, तारयन्ति, उद्धरन्ति लोकानिति, तथाभूताः (उपदेष्टार इतिभावः) अपरोपतापिनः, नपरान्, उपतापयन्ति, सन्तापयन्ति, इति, तथाभूताः, भास्वन्तः, सूर्याः, (ये, सूर्यास्तेकथं नापरसंतापकराः,) इति विरोधः । सूर्यस्यतापहेतुत्वात् । परिहारे-अपरोपतापिनः, परान् न उपतापयन्ति, पीड़यन्तीति तथाभूताः । भास्वन्तः, प्रभाशालिनः, (लोकसमाजेषु दीप्यमाना इतिभावः) अनुष्माणः, शीताः, हुतभुजः, अग्नयः, इति विरोधः, अग्नेः, उष्णत्वात् । परिहारे अनुष्माणः, उष्मरहिता, (अगर्वाइतियावत्) हुतभुजः, हुतं, यज्ञेषु देवेभ्योदत्तं, तं भुञ्जते, इति तथाभूताः (यज्ञावशिष्टाशिनइतिभावः) अकुसृतयः, नास्ति, कौ, पृथिव्यां, विवरे वा, सृतिः, गतिः, स्थितिः, वा येषां, तथाभूताः, भोगिनः, सर्पाः, इति विरोधः, (सर्पाणां-विवरेपृथिव्यां वा अनवस्थानमसम्भवत्वात्) परिहारे-अकुसृतयः, अकु-अकुत्सिता, सृतिः, गतिः, आचारः, येषां, तथाभूताः, भोगिनः, संसार सुखभोगवन्तः । अस्तम्भाः, स्तम्भः, स्थूणा, तद्रहिताः, पुण्यालयाः, पुण्यस्थानानि (मन्दिराणीतिभावः) इति विरोधः । स्तम्भैर्विना गृहस्थिते रसम्भवात् । परिहारे-स्तम्भः, कामजनित सात्विकभावः, तद्रहिताः, पुण्यालयाः, पुण्यवन्तः । **अलुप्तेति**—न लुप्ता, अनष्टा, क्रतुक्रिया, यज्ञानुष्ठानं, येषां तथाभूताः, दक्षाः दक्षः, प्रजापतिः, सः, इतिविरोधः, (हरकोपेन तस्य यज्ञ विध्वंसितत्वात्) परिहारे-दक्षाः, चतुराः । अव्यालाः, सर्परहिताः, कामजितः, रूद्राः, इतिविरोधः, महादेवेसततंसर्पसान्निध्यात् । परिहारे-अव्यालाः, अहिंस्राः, कामजितः,

तेषु चैवमुत्पद्यमानेषु; संसरति संसारे, यात्सुयुगेषु, अवतीर्णे कलौ वहत्सु वत्सरेषु, व्रजत्सु वासरेषु, अतिक्रामति च काले, प्रसव-परम्पराभिरनवरतमापतति विकासिनि वात्स्यायनकुले, क्रमेण कुबेर नामा वैनतेय इव गुरुपक्षपातीद्विजो जन्म लेभे। तस्याभवन्नच्युत ईशानो हरः पाशुपतश्चेति चत्वारो युगारम्भा इव ब्राह्मतेजो जन्यमान-

कामजयिनः, (निरभिलाष, इत्यर्थः) असाधारणाः, असामान्याः, द्विजातयः ब्राह्मणाः, द्विजन्मानः, द्वाभ्यां गर्भसंस्काराभ्यां जायते इति द्विजन्मा। तेषु च, एवं, अनेनप्रकारेण, उत्पद्यमानेषु, जायमानेषु, संसरति, चलति, संसारे, जगति, यात्सु, गच्छत्सु, सत्यद्वापर त्रेतादिषु, अवतीर्णे, प्रादुर्भूते, कलौ, कलियुगे, वहत्सु, अतिक्रामत्सु, वत्सरेषु, व्रजत्सु, गच्छत्सु. वासरेषु, दिवसेषु, अतिक्रामति, गच्छति, च, काले, समये, (प्रागभिहिते इतियावत्) प्रसव परम्पराभिः, अपत्यजन्मप्रवाहैः, अनवरतं, निरन्तरं, आपतति, परि-वर्द्धमाने, विकासिनि, विराजमाने, वात्स्यायनकुले, वंशे, क्रमेण, जनपरम्पर या, वैनतेय इव, "विनतायाः अपत्यं पुमान् वैनतेयः" गरुडः, स इव, गुरु पक्षपाती, गुरौ, आचार्ये, पितरि वा, पक्षपातः, भक्तिः, विद्यते अस्येति तथा-भूतः, (पक्षे) गुरुभ्यां, महद्भ्यां, पक्षाभ्यां, पतति, उड्डच्छतीति तथाभूतः, द्विजः, (द्वाभ्यां जन्म संस्काराभ्यां जायते इति द्विजः, ब्राह्मणः) (पक्षे) द्वाभ्यां जन्मागडजाभ्यां जायते इतिद्विजः, पक्षी। कुबेरनामा कुबेराभिधेयः, जन्म लेभे, अजायत। तस्य, कुबेरस्य, युगारम्भा इव, युगानां, सत्यादीनां, चतुर्णां, आरम्भाः, प्रथम प्रवृत्तयः, ते, इव। **ब्राह्मेति**—ब्राह्मं, वैदिकं, तेजः, तेन, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, प्रजानां, सन्ततीनां, विस्तारः येषां, तथोक्ताः, (पक्षे) ब्राह्मणः, विधातुरिदं ब्राह्मं, यत् तेजः, तेन, (मनः प्रभावेणेतिभावः) जन्यमानः, प्रजाविस्तारः, येषु, तथाभूताः। **युगादौ** ब्रह्मणः सनकसनन्दना-दीनां चतुर्णांपुत्राणां मानससृष्टिः, ततः जन्म हास कारणात्, सङ्कल्पान्मै-

प्रजाविस्तारा नारायणबाहुदण्डा इव सच्चक्रनन्दकास्तनयाः । तत्र पाशुपतस्यैक एवाभवद्भूभार इवाचल कुलस्थितिश्चतुरुदधिगम्भीरोऽर्थपतिरितिनाम्ना, समग्राग्रजन्मचक्रचूडामणिर्महात्मा सूनुः ।

सोऽजनयद्भृगुं हंसं शुचिं कविं महीदत्तं धर्मं जातवेदसं चित्रभानुं त्र्यक्षम् . अहिदत्तं विश्वरूपञ्चेति—एकादश रुद्रानिव सोमामृतरसशीक-

---

धुनाच्चरुष्टि रिति शास्त्रेऽवधेयम् । नारायणस्य, विष्णोः, वाहुदण्डा, भुजदण्डा, इव, (विष्णोश्चतुर्भुजत्वात्) सच्चक्रनन्दकाः, सतां सज्जनानां, चक्रं, समाजं, नन्दयन्ति, आह्लादयन्ति, इति तथाभूताः, (पक्षे) सत्, तिष्ठत्, चक्रं, सुदर्शनं, नन्दकः, खड्गः येषुतथोक्ताः । तनयाः, अच्युतादयः, एकादशपुत्राः, अभवन् , बभूवुः । तत्र (कुले इतियावत्) पाशुपतस्य, एकः-एव, भूभार इव, भुवः पृथिव्याः, भार इव, अचल कुलस्थितिः, अचला, स्थिरा, कुलस्य; वंशस्य, स्थितिः, यस्य, तथाभूतः (पक्षे) अचलानां, पर्वतानां, कुलैः, समूहैः. (सप्तभिः कुलपर्वतै रितिभावः) एवं स्थितिर्यस्य तथोक्तः । (शेषशिरःस्थायाः, भूमेः नमनोन्नमन निवृत्यर्थं परितः पर्वतानामवस्थापनादितिभावः) चतुरुदधिगम्भीरः, चत्वारः, उदधयः, समुद्राः, तद्वत् गम्भीरः (महाप्रभावत्वादविकार्यस्य) (पक्षे) चतुर्भिः, उदधिभिः, समूहैः, गम्भीरः, वेष्टितः, इतिभावः । अर्थपतिनाम्ना **समग्रेति**—समग्राणां, अग्रजन्मनां, ब्राह्मणानां, चक्रस्य समूहस्य, चूडामणिः, शिरोरत्नभूतः. (अग्रगण्य इतियावत्) महात्मा-सूनुः, पुत्रः. अभवत् , बभूव ।

सः, अर्थपतिः, भृगुंहंसादीनेकादशरुद्रानिव, **सोमेति**—सोमः, तन्नाम लता; तस्य, अमृतमिवरसः, (यज्ञशिष्ट इत्यर्थः) तस्य, शीकरैः, विन्दुभिः, छुरितं, (पूर्णमितियावत्) मुखं, येषां, (यज्ञकर्तृत्वात् सोमरस पायिन इतिभावः) (पक्षे) सोमस्य, चन्द्रस्य, अमृतरसानां, निःसृत किरणद्रवाणां, शीकरैः, छुरितमुखान् , आवृतवदनान् , पवित्रान्, विशुद्ध प्रवृत्तीन् , पुत्रान्,

रच्छुरितमुखान्पवित्रान्पुत्रान् । अलभत च चित्रभानुः स्तेषां मध्ये राजदेव्यभिधानायां ब्राह्मण्यां बाणमात्मजम् । स बाल एव विधेर्बलवतो वशादुपसम्पन्नया व्ययुज्यत जनन्या । जातस्नेहस्तु नितरां पितैवास्य मातृतामकरोत् । अवर्धत च तेनाधिकतरमेधीयमानधृतिर्धाम्नि निजे । कृतोपनयनादिक्रियाकलापस्य समावृत्तस्य चतुर्दशवर्षदेशीयस्य पितापि श्रुतिस्मृतिविहितं कृत्वा द्विजजनोचितं निखिलं पुण्यजातं कालेनादशमीस्थ एवास्तमगात् । संस्थिते च पितरि महता शोकेनाभी-

---

तनयान्, अजनयत् । तेषां (पुत्राणांमध्ये) चित्रभानुः, तदाख्यः, राजदेव्यभिधानायां, राजदेवी समाख्यायां, ब्राह्मण्यां, बाणं, बाण नामानं, आत्मजं, पुत्रं, अलभत, प्राप्तवान् । सबाणः, विधेः, दैवस्य, बलवतः, प्रबलस्य (महादुर्भाग्यस्येतिभावः) वशात्, प्रभावात्, उपसम्पन्नया, मृतया, जनन्या, मात्रा, व्ययुज्यत, वियोगितः । जातेति—जातः, उत्पन्नः, स्नेहः, प्रेम, एवंभूतः, पिता एव, अस्य (बाणस्य) मातृतां, मातृभावं, अकरोत्, चकार । तेन, (चित्रभानुना) अधिकतरं, बहुविधं, यथास्यात्तथा, एधीयमाना, (इध्यतेअग्निरनेनेतिएधः, अग्निप्रज्वालन काष्ठं, तद्वदाचर्यमाना, उद्दीप्यमाना, धृतिः, धैर्यं, यस्य, तथाभूतः, स, निजधाम्नि, स्वकीयेगृहे, अवर्धत, अपालयत्, (च-इतिसमुच्चयार्थ बोधकमव्ययम्) कृतेति—कृतं, विहितं, उपनयनादि, क्रिया कलापं, क्रिया समूहं, यस्य, समावृत्तस्य, स्नातकस्य, (वेदाध्ययनात्परं समावर्तनंनामसंस्कार संस्कृतस्येतिभावः) चतुर्दशवर्षदेशीयस्य, चतुर्दशवर्षीयस्य, श्रुति स्मृति विहितं, श्रुतिः, वेदः, स्मृतिः, धर्मशास्त्रं, तद् विहितं, कथितं, द्विजजनोचितं, ब्राह्मणजन योग्यं, निखिलं, सम्पूर्णं, पुण्यजातं, (श्रौतस्मार्तक्रियानिचयमितिभावः) अदशमीस्थः, "शतायुर्वैपुरुषः," इत्युक्तेः, आयुषो दशधाविभागे दशमीनाम अन्तिमावस्था, तत्र, तिष्ठतीतिदशमीस्थः, स न विद्यते अस्येति-अदशमीस्थः (अपूर्णावस्थायामेवेतिभावः) अस्तमगात्,

लमनुप्राप्तो दिवानिशं दह्यमानहृदयः कथंकथमपि कतिपयान्दिवसाना-त्मगृहे एवानैषीत्। गते च विरलतांशोके शनैः शनैरविनयनिदानतया स्वातंत्र्यस्य, कुतूहलबहलतया च बाल भावस्य, धैर्यप्रतिपन्नतया च यौवनारम्भस्य, शैशवोचितान्यनेकानि चापलान्याचरन्नित्वरो बभूव। अभवंश्चास्य वयसा समानाः सुहृदः सहायाश्च। तथा च। भ्रातरौ पारशवौ चन्द्रसेनमातृषेणौ, भाषाकविरीशानः परंमित्रम्, प्रणयिनौ

परलोकमगमत्। संस्थिते, मृते, पितरि, महता शोकेन, अतिदुःखेन, आभीलं, कष्टं, अनुप्राप्तः, पतितः, दिवानिशं, नक्तं दिनं, दह्यमानहृदयः, प्रज्वलित-चित्तः, कथंकथमपि, केनापिप्रकारेण, कतिपयान्दिवसान्, दिनान्, आत्मगृहे, स्ववेश्मनि, एव, अनैषीत्, व्यतीतयत्। विरलतां, अल्पतां, गते, प्राप्ते, शोके, शनैः शनैः, मन्दं मन्दं, अविनय निदानतया, अविनयः, दुराचारः, (मदोद्ध-त्यमितियावत्) तस्य, निदानं, मूलकारणं, तस्यभावः, तत्ता, तया, स्वातन्त्र्य-स्य, स्वाधीनतायाः, कुतुहलं, आश्चर्यं, तस्य, बहलतया, आधिक्येन, बालभावस्य शिशुत्वस्य, धैर्यप्रति पन्नतया, धैर्यविरोधितया, यौवनारम्भस्य, प्रौढावस्थायाः। शैशवोचितानि, बाल्योचितानि, अनेकानि, बहूनि, चापलानि, आचरन्, इत्वरः गमनशीलः, बभूव, अभवत्। अभवंश्चेत्यादिना आत्मनः सर्वविध कला विशारदत्वं प्रकटयति। अस्य, बाणस्य, वयसा समानाः, समान वयस्काः, (ब्राह्मणात् शूद्र कन्याया मूढायां जातौ पारशवौ) सुहृदः, मित्राणि, सहा-याश्च, अभवन्, बभूवु,। भ्रातरौ, पारशवौ, चन्द्रसेनमातृषेणौ, तन्नामाभि-धेयौ. भाषाकविः, भाषायां. (संस्कृतादिवाक्ये इति यावत्) कविः, काव्यर-चयिता, यद्वा, भाषाः, गेयवस्तुवाचः, तासु कविः, गाथादिषुगीतिनिर्माता, ईशानः, तन्नामधेयः, परं, उत्कृष्टं, मित्रं, सुहृत्। रुद्र नारायणौ, तन्नामकौ, यद्वा, विष्णु महेशौ, प्रणयिनौ, प्रेमपात्रौ, वार बाण बासबाणौ, तदाख्यौ, विद्वांसौ, पण्डितौ, वर्णकविः, वर्ण रचनायां कविः, वेणीभारतः, तदाख्यः।

रुद्रनारायणौ, विद्वांसौवारबाणवासबाणौ, वर्णकविर्वेणीभारतः, प्राकृतकृत्कुलपुत्रो वायुविकारः, बन्दिनावनङ्गबाणसूचीबाणौ, कात्यायनिका चक्रवाकिका, जांगलिकोमयूरकः, ताम्बूलदायकश्चण्डकः, भिषक्पुत्रो मन्दारकः, पुस्तकबाचकः सुदृष्टिः, कलादश्चामीकरः, हैरिकः सिन्धुषेणः, लेखकोगोविन्दकः, चित्रकृद्वीरवर्मा, पुस्तकृत्कुमारदत्तः, मार्दङ्गिको जीमूतः, गायनौसोमिलग्रहादित्यौ, सैरिन्ध्री कुरङ्गिका, वांशिकौ मधुकरपारावतौ, गान्धर्वोपाध्यायो दर्दुरकः, संवाहिका केरलिका, लासकयुवा ताण्डविकः, आक्षिक आखण्डलः, कितवो

प्राकृतकृत्, प्राकृतभाषानिर्माता, वायुविकारः, तन्नामा। वन्दिनौ, स्तुतिपाठकौ, वाणसूचीबाणौ, तदाख्यौ। कात्यायनिका, विधवास्त्री। चक्रवाकिका, तदाख्या। जाङ्गलिकः, विषवैद्यः, मयूरकः, तदाख्यः, ताम्बूल दायकः, पर्णविक्रेता चन्द्रकः, तदाख्यः। भिषक्पुत्रः, वैद्यसुतः, मन्दारकः, तन्नामा। पुस्तकचवाकः वक्ता, सुदृष्टिः, तदाख्यः। कलादः, स्वर्णकारः, (स्वर्णकारः कलादः स्यात्तध्यक्षस्तु हैरिकः) चामीकरः, तन्नामा। हैरिकः, हीरकपण्योपजीवी, सिन्धुषेणः, तदाख्यः। लेखकः (पुस्तकस्येतियावत्) गोविन्दकः, तन्नामधेयः। चित्रकृत आलेख्यकर्ता, वीरवर्मा, तन्नामा। पुस्तकृत्, ग्रन्थकर्ता, यद्वा, पुस्तं, लेप्यादि शिल्प कर्म, तत्कृत्, शिल्पकर्मकारी, कुमारदत्तः, तदाख्यः। मार्दङ्गिकः, मृदङ्गवादकः, जीमूतः, तन्नामा, गायनौ, गायकौ, सोमिलग्रहादित्यौ, तन्नामानौ सैरिन्ध्री, प्रसाधनोपचारज्ञा, कुरङ्गिका, तन्नाम्नी। वांशिकौ, वंशीवादकौ, मधुकरपारावतौ, तन्नामानौ, गान्धर्वोपाध्यायः, गान्धर्व सङ्गीतशास्त्रं, तस्य, उपाध्यायः, पाठकः, दर्दुरकः, तदाख्यः। संवाहिका, सेविका, केरलिका, तन्नाम कापि स्त्री। लासकः, नर्तकः, स च, असौ, युवा, तरुणः, ताण्डविकः, तदाख्यः। आक्षिकः, अक्षैः, पाशकैः, दीव्यति, क्रीडतीति, आक्षिकः, द्यूतकरः, आखण्डलः, तदाख्यः। कितवः, धूर्तः, भीमकः, तन्नामा। शैलाली,

भीमकः, शैलालियुवा शिखण्डकः, नर्तकी हरिणिका, पाराशरी सुमतिः, क्षपणको वीरदेवः, कथको जयसेनः, शैवो वक्रघोणः, मन्त्रसाधकः करालः, असुरविवरव्यसनी लोहिताक्षः, धातुवादविद्विहङ्गमः, दार्दुरिको दामोदरः, ऐन्द्रजालिकश्चकोराक्षः, मस्करी ताम्रचूडः। स एतैश्चान्यैश्चानुगम्यमानो बालतया निघ्नतामुपगतो देशान्तरालोकन कौतुकाक्षिप्तहृदयः सत्स्वपि पितृपितामहोपात्तेषु ब्राह्मणजनोचितेषु

स्वयंनर्तकः, सचासौ युवा, तथोक्तः, (तरुणशैलूष इति यावत्) शिखण्डकः, तन्नामा। हरिणिका, तदाख्या, नर्तकी। सुमतिः, तन्नाम्नी, पाराशरी, भिक्षुः। वीरदेवः, तदाख्यः, क्षपणकः, भिक्षुः जयसेनः, तन्नामा, कथकः, पुराणव्याख्याता। वक्रघोणः, तदाख्यः, शैवः, शिवभक्तः। करालः, तन्नामा, मन्त्र साधकः, साधित मन्त्रः। लोहिताक्षः, तन्नामा, असुर विवर व्यसनी, असुराणां, विवर, पातालमितिभावः। अथवा-असुराणां, विवरं, रन्ध्रं, (दोष इति यावत्) तस्मिन्व्यसनी, (तज्ज्ञानानुशीलकइतिभावः) विहङ्गमः, तदाख्यः, धातुवादविद्, धातवः, स्वर्ण रजतादयः, तेषां, उद्यते अनेनेतिवादः, गुणः, तं वेत्तीति तथाभूतः। (रसायन ज्ञाता इतिभावः) दामोदरः, तदाख्यः दार्दुरिकः, वाद्यविशेष वादकः, अथवा-दर्दुराः, भेकाः, तान् वेत्तीति, दार्दुरिकः, (भेकगुणज्ञ इतियावत्) चकोराक्षः, तदाख्यः, ऐन्द्रजालिकः, इन्द्र जालविद्यावित्। ताम्रचूडः, तन्नामा। मस्करी, परिव्राट्, (सन्यासीति यावत्) सः, बाणः, एतैः, पूर्वोक्तैः, (सहचरैरितियावत्) अन्यैश्च, अनुगम्यमानः, अनुसर्यमाणः, बालतया, शैशवत्वेन, निघ्नतां, वश्यतां, उपगतः, प्राप्तः। देशान्तरेति—देशान्तराणां, विभिन्नदेशानां, अवलोकने, दर्शने, यत्, कौतुकं, औत्सुक्यं, तेन, आक्षिप्तं, आकृष्टं, (नचधनलोभादित्यर्थः) हृदयं, यस्य, तथाभूतः। सत्सु, विद्यमानेषु, अपि, पितृ पितामहोपात्तेषु, पैत्रिकेषु, ब्राह्मण जनोचितेषु, योग्येषु, विभवेषु, सम्पत्सु, अविच्छिन्ने, अत्रुटिते, विद्या प्रसङ्गे,

विभवेपु सति चाविच्छिन्ने विद्याप्रसङ्गे गृहान्निरगात्। अगाच्च निरवग्रहो ग्रहवानिव नवयौवनेन स्वैरिणा मनसा महतामुपहास्यताम्।

अथ शनैः शनैरत्युदारव्यवहृतिमनोहन्ति वृहन्ति राजकुलानि वीक्ष्यमाणः निरवद्यविद्याविद्योतितानि च गुरूकुलानिसेवमानः, महार्हाऽलापगम्भीर गुणवद्गोष्ठी उपतिष्ठमानः, स्वभावगम्भीरधीर्धनानि विदग्धमण्डलानि च गाहमानः, पुनरपि तामेव वैपश्चितीमात्मवंशोचितां प्रकृतिमभजत्। महतश्च कालात्तामेव भूयो वात्स्यायनवंशाश्रयामात्मनो जन्मभुवं ब्राह्मणाधिवासमगात्। तत्र च चिरदर्शनादभिनवीभूतस्नेह-

विद्याऽनुशीलने, सति, गृहात्, निरगात्, अगमत्। निरवग्रहः, स्वतन्त्रः, ग्रहवानिव, भूताविष्ट इव, स्वैरिणा, स्वेच्छाचारवता, मनसा, चेतसा, महतां, सज्जनानां, उपहास्यतां, उपहास पात्रतां, अगात्, प्राप, च,।

अथेति—शनैः शनैः, क्रमेण, अत्युदारा, महती, या, व्यवहृति, व्यवहारः, (आचारइतिभावः) तया, मनोहन्ति, यानि, तद्वन्ति, वृहन्ति, राजकुलानि, राजकानि, वीक्ष्यमाणः, पश्यन, **निरवद्येति**—निरवद्याभिः, अनिन्दनीयाभिः, विद्याभिः, कौशलादिभिः, विद्योतितानि, शोभमानानि, गुरूकुलानि, अध्ययनस्थानानि, सेवमानः। **महार्हेति**—महार्हाः, मधुराः, आलापाः, वचनानि, तैः, गम्भीराः, प्रदीप्ताः, गुणवत्यः, विविधगुणशालिन्यः गोष्ठ्यः, समाजाः, ताः, उपतिष्ठमानः, सेव्यमानः। **स्वभावेति**—स्वभावेन, प्रकृत्या, गम्भीराणि, धीराणि, धीर्धनानि, प्रज्ञाधनानि, येषां तानि, विदग्धमण्डलानि, विद्वज्जनसमूहानि, गाहमानः, आश्रयन्। गाहमानः इत्यनेन, सूचितमात्मनस्तेजस्त्वम्। पुनरपि, पुनश्च, तामेव, वैपश्चितीं, विद्वज्जनोचितां, प्रकृतिं, स्वभावं, अभजत्, **अदधत्**। महतश्च कालात्, अति समयानन्तरं, भूयः, पुनः, तामेव, वात्स्यायन वंशाश्रयां, वात्स्यायन वंशोद्भवैरलंकृतां, आत्मनः, स्वस्य, जन्मभूमिं, ब्राह्मणाधिवासं, विप्राध्युषितं, पुरं, नगरं, अगात

सद्भावैः ससंभ्रमप्रकटितज्ञातेयैराप्तैरुत्सवदिवस इवानन्दिताभिगमनो बालमित्रमण्डलस्य मध्यगतोमोक्षसुखमिवान्वभवत् ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते वात्स्यायन,

वंशवर्णनंनाम प्रथम-उच्छ्वासः ।

तत्र, पुरे, चिरदर्शनात्, कालान्तरावलोकनात् । अभिनवीभूताः, नूतनतांयाताः स्नेहसद्भावाः, येषां, तथाभूतैः । ससंस्तवेति—ससंस्तवं, सपरिचयं, (सादरमितियावत्) प्रकटितं, प्रकाशितं, ज्ञातेयैः, कुटुम्बिजनैः, आप्तैः, आत्मीयैः, (पक्षे) योगिभिः, उत्सवदिवस इव, आनन्दितः, आल्हादितः, अभिगमनः, सहचराः, येन, एवंभूतः, बालमित्रमण्डलस्य, शैशवसखसुहृस्य, (पक्षे) बाल-इव (निस्तेजस्त्वादितियावत्) यः मित्रः, नवसूर्यः, तस्यमण्डलं, विम्बं, तस्य, मध्यगतः, मोक्षसुखमिव, निर्वाणानन्दमिव, अन्वभवत्, अनुभूतवान् । आख्यायिकासुकविभिर्निजवंश वर्णनंक्रियते, अतः पूर्वप्रसङ्गेन, बाणेनाऽपि, हर्षचरित पूर्व प्रसङ्गेकिमप्यालेखि स्वकीयं वृत्तमिति ।

इति श्रीबाणभट्ट कृतहर्षचरित व्याख्यायां,

आशुतोषिण्यां प्रथम-उच्छ्वासः ।





श्री कृष्ण जी

द्वितीय-उच्छ्वासः

अतिगम्भीरे भूपे कूप इव जनस्य निरवतारस्य।
दधातिसमीहितासिद्धिं गुणवन्तः पार्थिवा घटकाः॥ १॥
रागिणि नलिने लक्ष्मीं दिवसो निदधातिदिनकर प्रभवाम्।
अनपेक्षित गुणदोषः परोपकारः सतां व्यसनम्॥ २॥

अनुकूलमुपायमाश्रित्याशङ्कते श्रीहर्षात् स्वभिप्सितम्—**अतिगम्भीरेति**—अत्यधिकं यद् गाम्भीर्यं, तस्मिन्, एवं भूते "पक्षे" दुरवगाहत्वं, यत्र, भूपे, राजनि, कूपइव, निरवतारस्य, निः-नास्ति, अवतारः,अवतरणं, सुसहायकादीनामाश्रयो यस्य, तथाभूतस्य, "पक्षे" सोपानादि विरहितस्य, जनस्य, लोकस्य, गुणवन्तः, गुणाः विद्याविनयादयस्तैर्युक्ताः, (पक्षे) रज्जुवन्तः, पार्थिवाः, राजनः, एव, घटकाः, योजकाः, (सहायभूता इतिभावः) (पक्षे) पार्थिवाः, पृथिव्या, भुवः सम्भूताः (मृण्मया इतिभावः) घटाः, एव, घटकाः, कलसाः, समीहितसिद्धिं, राजभवनेप्रवेशरूपमिष्टसाफल्यं (पक्षे) सलिलोत्तोलन रूपमिष्टसिद्धिं, दधाति, सम्पादयन्ति। अवतरणिकादि-रहितेनाति दुरवगाहादतिगम्भीरादपि कूपात् रज्ज्वादिमुक्तेन कुम्भेन यथा जलमधिगम्यते, तथैवातिगम्भीरतया दुरधिगम्यादपिराज्ञोगुणवतां सहायकानां सम्पर्केण जनस्याभिवाञ्छितसिद्धिर्जायते इतिभावः। एतेन भूपतौ गुणवान् कृष्ण एव सहाय भूतो बाणस्येष्टसिद्धिं सम्पादयिष्यतीतिध्वनितम्। भूपे कूपस्यावैधर्म्यसाम्यप्रतीतेरत्र, श्लेषोपमालङ्कारः। अर्यावृत्तम्॥ १॥

परोपकार प्रिया हि मानवाः गुणदोषाननवलोक्यैवपरेषामुप कुर्वते। **रागिणीति**—दिवशः, (दिवाभागे इतियावत्) रागिणि,

अथ तत्रानवरताध्ययनध्वनिमुखराणि, भस्मपुण्ड्रक-पाण्डुरललाटैः कपिलशिखाजालजटिलैः कृशानुभिरिव क्रतु-

रागमस्मिन्—अस्ति रागिणि, लोहितरागवति, (पक्षे) अनुरागयुते, नलिने, कमले दिनकरप्रभवां, दिनङ्करोतीति दिनकरः सूर्यस्तस्य, प्रभोत्पन्नां, लक्ष्मीं, श्रियं, (शोभामितिभावः) (पक्षे) सम्पदं, निदधाति, ददाति, तथाहि, अनपेक्षितौ, अविचारितौ, गुणा दोषौ यत्र, तथोक्तः, परोपकारः, परेषामुपकृतिः, सतां, सज्जनानां, व्यसनं, (व्रतमितिभावः) भवति। साधवः न विचारयन्ति गुणदोषान् परेषामुपकृतिरेवाश्रयते तैः । अनेन परोपकारीकृष्णः—एवं विध गुणसम्पन्ने बाणेराजसम्पदमाधास्यति-इति-सूचितम् । पूर्वार्धेचात्र अप्रस्तुतस्य नलिनेदिनकृत लक्ष्मी निधानस्योपन्यासेन, बाणभट्ट कृष्णविहितायाः, श्रीहर्षस्य सभापण्डितसौभाग्यलक्ष्मीः निधानरूपस्य प्रस्तुतस्य प्रतीतेर प्रस्तुतप्रशंसाऽलंकारः, "अप्रस्तुत प्रशंसास्यात्सायत्र प्रस्तुताश्रया ।" उत्तरार्धे च सामान्यतया प्रथमार्धगतस्य सोपपत्तिकत्व विधानात् सामान्येन विशेषसमर्थनरूपोऽर्थान्तरन्यासोऽलंकारः, अनयोश्चाङ्गाङ्गिभावत्वेनसंकरः ।। २ ।।

अथेति—अथ-ब्राह्मणाधिवासगमनानन्तरम्, तत्र (ब्राह्मणाधिवासे) **अनवरतेति**—अनवरतं, निरन्तरं, यत्, अध्ययनं, अधीतिः, तस्य, या ध्वनिः, शब्दः, तेन, मुखराणि, शब्दायमानानि, (बान्धवानां भवनानि, इत्यनेनान्वयः) **भस्मेति**—भस्मपुण्ड्रकेण, भस्मना कृतं यत् पुण्ड्रकं तिलकं, तेन, पाण्डुराणि, धवलानि, ललाटानि, मस्तकानि, येषां, तथोक्तैः, (बटुभिरित्यनेनान्वयः) **कपिलेति**—कपिलाः, पिङ्गलाः, ये, शिखाजालाः, चूड़ासमूहाः, (पक्षे) शिखाजालाः, अर्चिसङ्घाः, तैः, जटिलाः, जटावन्तः, तैः (पक्षे) युक्ताः तैः

लोभागतैर्बटुभिरध्यास्यमानानि, सेकसुकुमारसोमकेदारिका-हरितायमानप्रघनानि, कृष्णाजिनविकीर्णशुष्यत्पुरोडाशीयश्यामाकतण्डुलानि, बालिकाविकीर्यमाणनीवारबलीनि, शुचि-शिष्यशतानीयमानहरितकुशपूलीपलाशसमिन्धि, इन्धन गोमय-पिण्डकूटसंकटानि, आमिक्षीयक्षीरक्षारिणीनामग्निहोत्रधेनूनां खुरवलयैर्विलिखिताजिरवितर्दिकानि, कामण्डलव्यमृत्पिण्ड-

कृशानुभिरिव, अग्निभिरिव, क्रतोः, यज्ञस्य, लोभात्, मिषात्, आगतैः, समुपस्थितैः, वटुभिः, ब्रह्मचारिभिः, अध्यास्यमानानि, अधिष्ठीयमानानि। सेकेति— सेकेन, सलिलसेचनेन, सुकुमारा, मृदु (स्निग्धा वा) सोमकेदारिका, यज्ञार्थरोपितसोमवल्ल्याः स्वल्पंक्षेत्रं, यत्र तया, (प्रघनेषु —अल्पक्षेत्रसम्भवत्वादितिभावः) हरितायमानानि, श्यामायमानानि, प्रघनानि, अङ्गणानि, येषां, तानि। कृष्णाजिनेति— कृष्णाजिनेषु, असित हरिणचर्म्मसु, विकीर्णाः, प्रक्षिप्ताः, शुष्यन्तः, शोषमाप्नुवन्तः, ये, पुरोडाशीयाः, हव्याः, श्यामकाः धान्यविशेषाः, तण्डुलाः, येषु, तानि। बालिकेति —बालिकाभिः, कन्यकाभिः, विकीर्यमाणाः, प्रक्षिप्यमाणाः, नीवाराः, धान्यविशेषाः, एव, वलयः, पूजार्थं द्रव्याणि, येषु तानि। शुचीति— शुचयः, पूताः, ये, शिष्याः, अन्तेवासिनः, तेषां, शतैः, शतसंख्याकैः, आनीयमानाः, आह्रियमाणाः, हरिताः, श्यामवर्णाः, ये, कुशानां, दर्भाणां, पूल्यः, समूहाः, पलाशसमिधः, काष्ठानि, येषु तानि। इन्धनेति— इन्धनानां, काष्ठानां, गोमयपिण्डानां, उपलानां, च, ये कूटाः, राशयः, तैः, सङ्कटाः, सङ्कुलाः, येषु, तानि। आमिक्षीयेति— आमिक्षा, दुग्धदधियोगः, (छाना इति प्रसिद्धा) तस्यै, हितानि, आमिक्षीयाणि, यानि क्षीराणि, दुग्धानि, तानि, क्षरन्ति, तासां अग्निहोत्र धेनूनां, क्रतवेपालितानांगवां,

मर्दनव्यग्रयतिजनानि, वैतानवेदीशङ्कव्यानामौदुम्बरीणां शाखानां राशिभिः पवित्रितपर्यन्तानि, वैश्वदेवपिण्डपंक्तिपाण्डुरितप्रदेशानि, हविर्धूमधूसरिताङ्गनविटपिकिसलयानि, वत्सीयबालकलालितललत्तरलतर्णकानि, क्रीडत्कृष्णशारच्छागशावकप्रक-

खुरवलयैः, शफसमूहैः, विलिखितानि, कुट्टितानि, अजिरेषु, अङ्गन वसुधासु, वितर्दिका, वेदिका, येषां, तानि। **कामण्डलव्येति**— कमण्डलुः, मुनीनांजलपात्रं, तदर्थमिदं, कामण्डलव्यं, यत्, मृत्पिण्डं, तस्य, मर्दने, पेषणे, व्यग्रः, संलग्नः, यतिजनः, संन्यासिसमूहः, येषु तानि। **वैतानेति**—वितानः, क्रतुः, तस्मै, इयं, वैतानी, यज्ञीयाग्निभूः, तादृशा, या, वेदिः, तत्र शङ्कव्यानां, शङ्कवः, कीलकाः, तेभ्यो हितानां, (शंकुसम्पादिनीनामितिभावः) औदुम्बरीणां, तदाख्यवृक्षाणां (जन्तुफलकानामितियावत्) याः, शाखाः, तासां, राशिभिः, समूहैः। **पवित्रेति**—पवित्रितानि, पूतानि, यानि, पर्यन्तानि, प्रान्तभागाः, येषां तानि। **वैश्वदेवेति**—विश्वेभ्योः, देवेभ्यः, देयानि, पिण्डानि, अन्नानि, तेषां, पंक्तिभिः, राजिभिः, पाण्डुरिताः, धवलिताः, प्रदेशाः, येषु, तानि। **हविरिति**—हविषां, क्रतूनां, धूमैः, धूसरिताः, धूसरतांनीताः, अङ्गनविटपिनां, अजिर वृक्षाणां, किसलयाः, पल्लवाः, येषु तानि। **वत्सीयेति**—वत्सीयाः, वत्सेभ्योहिताः, (वत्ससेवाकुशला इतिभावः) ये बालकाः, मुनिशिशवः, तैः, लालिताः, प्रेमेणपोषिताः, ललन्तः, लम्फन्तः, तरलाः, चञ्चलाः, तर्णकाः, सद्योजातावत्सा, येषु तानि। **क्रीड़दिति**—क्रीडन्तः, चरन्तः, कृष्णशाराः, कृष्णवर्णाः, येछागाः, (पशुविशेषाः) तेषां, शावकैः, शिशुभिः, प्रकटितः, प्रकाशितः, पशुबन्धः, (पशवो बध्यन्ते यस्मिन् तथा भूतोयज्ञः) तस्य प्रबन्धः (सातत्यमितियावत्) येषु

टितपशुबन्धप्रबन्धानि, शुकसारिकारब्धाध्ययनदीयमानोपाध्यायविश्रान्तिसुखानि, साक्षात्त्रयीतपोवनानीवचिरदृष्टानां बान्धवानां प्रीयमाणो भ्रमन्भवनानि, बाणः सुखमतिष्ठत्।

तत्रस्थस्य चास्य कदाचित्कुसुमसमययुगमुपसंहरन्नजृम्भत ग्रीष्माभिधानः संफुल्लमल्लिकाधवलाट्टहासो महाकालः। प्रत्यग्रनिर्जितस्यास्तमुपगतवतो वसन्तसामन्तस्य बालापत्ये-

तानि। शुकेति—शुकशारिकाभिः, कीरशारिकाभिः, आरब्धं, प्रक्रान्तं, यद् अध्ययनं, वेदानांपठनं, तेन, दीयमानं, सम्पाद्यमानं, उपाध्यायानां आचार्याणां, विश्रान्ति, सुखं, येषु तानि। त्रयी, ऋग्यजुः साम्नांत्रितयं, येषु तानि। तपोवनानीव। चिरदृष्टानां, बहुकालेनावलोकितानां, बान्धवानां, कुटुम्बिनां, प्रीयमाणः, अत्यन्तप्रीतिमुपागतः, भ्रमन्, परिभ्रमन्, भवनानि, गृहाणि, सुखं, अतिष्ठत्, तस्थौ। तत्रेति—तत्रस्थितस्य, अस्य, बाणस्य, कदाचित्, कस्मिंश्चित्समये, कुसुमसमयस्य, वसन्तस्य, युगं, युग्मं, (मासद्वयमितिभावः) उपसंहरन्, दूरीकुर्वन्, ग्रीष्माभिधानः, घर्मसमयः, अजृम्भत, प्रादुर्बभूव।

सम्फुल्लेति—सम्फुल्ला, पुष्पिता, मल्लिका, तदाख्या, लता एव, धवलाः, शुभ्राः, अट्टहासाः, हासविशेषाः, यत्र, तथाभूतः, महाकालः, ग्रीष्मः (पक्षे) भयङ्करः। प्रत्यग्रनिर्जितस्य, अचिरविजितस्य, अस्तं, क्षयं, उपगतवतः गच्छतः, वसन्तः कुसुमाकरः, एव, सामन्तः, सम्राट्, तस्य, बालापत्येषु, शिशुतनयेषु, इव, पयः पायिषु, सलिलपान योग्येषु (पक्षे) दुग्धपायिषु। नवोद्यानेषु, विहारेषु, (पक्षे) नवं, नवीनं यदुद्गमनं येषां, तेषु (पूर्वमेव संसारे आगमन प्रवृत्तष्वितिभावः) दर्शितस्नेहः, दर्शितः; प्रकटितः, स्नेहः, प्रीतिः, येन, सः; मृदुः, कोमलः (पक्षे) सदयः (ग्रीष्मसमयेनूतनानि, उद्यानानिसिच्यन्ते-इतिभावः)

ष्विव पयः पायिषु नवोद्यानेषु दर्शितस्नेहो मृदुरभूत्। अभिनवोदितश्च सर्वस्यां पृथिव्यां सकलकुसुमबन्धनमोक्षमकरोत्प्रतपन्नुष्णसमयः। स्वयमृतुराजस्याभिषेकार्द्राश्चामरकलापा इवागृह्यन्त कामिनीनां चिकुरचयाः कुसुमायुधेन। हिमदग्धसकलकमलिनीकोपेनेव हिमालयाभिमुखीं यात्रामदादंशुमाली।

अथ ललाटंतपे तपति तपने चन्दनलिखितललाटिका-

अभिनवोदितेति—अभिनवोदितः, सद्योजातः; सर्वस्यां, अखिलायां; पृथिव्यां, भूमौ; सकलानां, सर्वेषां, कुसुमानां, पुष्पानां; (वासन्तिकानामितिभावः) बन्धनमोक्षं, वृन्तस्खलनं, उष्णसमयः ग्रीष्मकालः, प्रतपन्, (नवाभिषिक्तो हि नृप आनन्दातिशयात्कारासु पूर्वनिबद्धानां बन्धनमोक्षं सम्पादयति) स्वयं, आत्मनः ऋतुराजस्य, ग्रीष्मस्य, अभिषेकार्द्राः, अभिषेकेन, स्नानेन; आर्द्राः, (पक्षे) माङ्गलिकसलिलसिञ्चनसबन्धादार्द्रत्वम्। चामरकलापाः, चामर बालव्यजनसमूहाः, इव, कुसुमायुधेन, कामेन, कामिनीनां, युवतिनां, चिकुरचयाः, केशकलापाः, अगृह्यन्त। (ग्रीष्मसमये स्नानार्द्रतया असंयमनात् अतिकोमलत्वेन प्रतीयमानाः युवतिनां विशेषेण काममुद्दीपयन्तीति भावः) हिमेन, तुषारेण; दग्धः, भस्मीकृतः; सकलानां, सर्वासां; कमलिनीनां, पद्मिनीनां; कोपेन, क्रोधेन; इव, हिमालयाभिमुखीं, तदाख्यपर्वतानुगामिनीं, यात्रां, गमनं; अंशुमाली, सूर्यः; अदात् (उत्तर दिशिमगमदितिभावः)

अथेति—ललाटं, मस्तकं; तपति, पीड़यति, तस्मिन् (कठोरे—इति यावत्) तपने, सूर्ये तपति, द्योतमाने। "असूर्यललाटयोर्दृशितपोः" अनेन खच्। चन्दनेन, लिखितः, रचितः,

पुण्ड्रकैरलकचीरचीवरसंवीतैः स्वेदोदबिन्दुमुक्ताक्षवलयवाहिभिर्दिनकराराधननियमा इवागृह्यन्त ललनाललाटेन्दुभिः। चन्दनधूसराभिरसूर्यंपश्याभिः कुमुदिनीभिरिव दिवसमसुप्यत सुन्दरीभिः। निद्रालसा रत्नालोकमपि नासहन्त दृशः, किमुत जरठमातपम्। अशिशिरसमयेन चक्रवाकमिथुनाभिनन्दिताः सरित इव तनिमानमानीयन्त सोडुपाः शर्वर्यः। अभिनवपटु-

ललाटिका, भालालंकार एव, पुण्ड्रकं, तिलकं येषु तैः अलकाः, केशाः, एव, चीरचीवरं, वसनं, तेन, संवीताः; वेष्टिताः, तैः। स्वेदोदकस्य, घर्मजलस्य, बिन्दवः, कणाः, एव, मुक्ताक्षवलया, मौक्तिक जपमालिकाः, तान्, वहन्ति, धारयन्ति, तैः। दिनकरस्य, यद्, आराधनं, पूजनं, तस्य ये नियमाः, विधयः, (व्रतानि वा) ललनानां, स्त्रीणां, ललाटेन्दुभिः मस्तकचन्द्रैः, अगृह्यन्त, इव। (गृहीतमितियावत्) (धृत् पुण्ड्रको जपमालां गृह्णतीतितत्साम्यम्) चन्दनेति—चन्दनेन, यद्वा, चन्दनवत्, धूसराः, ताभिः, सूर्यं न पश्यन्तीति, ताभिः, (सूर्योदयादारभ्यास्तसमयान्तंकामिन्य आतप भिया स्वपन्ति सद्मसु कुमुदिन्यस्तुदिवा संकुचिता इत्युभयोः साम्यम्) स्वापाधिक्ये अवस्थां वर्णयति-निद्रेति-निद्रया अलसा, दृशः, रत्नालोकं, रत्नप्रकाशं, अपि, (इति संभावनायाम्) नासहन्त, न सोढुंसक्ताः। किमुत, जठरं, कठोरं, आतपं, घर्मं। अशिशिरसमयः ग्रीष्मः, तेन, चक्रवाकमिथुनैः, चक्रवाकयुगलैः, अभिनन्दिताः, स्तुताः (तेषां रात्रिषु वियोगात्स्वल्प रात्र्यभिनन्दनं युक्तमेव) सोडुपाः, स चन्द्राः (नक्षत्राणि) सनौकाश्च। (नदीषु जलाभावान्नौ सहिता नद्यः क्षयंयान्तीतिभावः) शर्वर्यः, रात्रयः, तनिमानं, अल्पतां, आनीयन्त, नीयन्ते। अभिनवेति—अभिनवः,

पाटलामामोदसुरभिपरिमलं न केवलं जलम् , जनस्य पवनमपि पातुमभूदभिलाषो दिवसकरसंतापात् ।

क्रमेण च खरखरमयूखे, खण्डिततडिच्छैशवे, शुष्यत्सरसि, सीदत्स्रोतसि, मन्दनिर्झरे, झिल्लिकाझांकारिणि, कातरकपोत-कूजितानुबन्धबधिरितविश्वे, विश्वसत्पतत्रिणि, करीषंकषम-

---

नूतनः पटुः, प्रसरन्, पाटलामोदः, पाटलस्याति निर्हारी परिमलः, तेन, सुरभिः, सुगन्धिः, परिमलः सुवासः, यस्य तत् न केवलं जलं, पयः, पवनं, वायुं, अपि, पातुं, पानाय, जनस्य, प्राणिनः दिवसकर-सन्तापात् , सूर्यतापात् , अभिलाषः अभिलषनं-अभिलाषः, (घञ् चपापुंसि) ईच्छा अभूत् ।

क्रमेण इत्यतः—प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातरिश्वानः—इत्यनेनान्वयः । क्रमेण, खरखर मयूरवे,—खरः, तीक्ष्णः, खरमयूरवः, सूर्यः, यस्मिन् , तथाभूते, (निदाघकाले) इत्युत्तरस्थितेन संबंधः । खण्डितेति—खण्डितं, निर्जितं, तड़ितां, विद्युतां, शैशवं, बाल्यं, (शिशु चापल्य-मितिभावः) येन, तथाभूते । (विद्युदालोकादपि अतितीक्ष्णालोक-शालिनीत्यर्थः) । शुष्यदिति—शुष्यन्ति शोषं गच्छन्ति, सरांसि, तड़ागानि, यस्मिन् तथोक्ते । सीददिति—सीदन्ति, अवसादंगच्छन्ति, स्रोतांसि, यस्मिन् तादृशे । मन्दनिर्झरे—मन्दाः, स्वल्पाः, निर्झराः, प्रस्रवणानि, यत्र तथाभूते । झिल्लिकेति—झिल्लीकाः, क्षुद्राः कीट-विशेषाः, तासांझङ्कारो विद्यते यस्मिन् तथोक्ते । कातरेति—कातराणां, ग्रीष्मार्त्तानामित्यर्थः । कपोतानां, कूजितानुबन्धेन, कूजनसातत्येन, बधिरितं, बधिरीकृतं, विश्वं, जगत् , येन तथाभूते । (अतीवमेदोमय-त्वात् दुःसहः ग्रीष्मतापः कपोतानांकृते, अतः पतत्रित्वेऽपिपृथग्ग्रहण-मेतेषां) विश्वसत्पतत्रिणि-विशेषेणाश्वसन्तः, क्लान्ततयेतिभावः, पत-

रुति, विरलवीरुधि, रुधिरकुतूहलिकेसरिकिशोरकलिह्यमान-कठोरधातकीस्तबके, ताम्यत्स्तम्बेरमयूथवमथुतिम्यन्महामही-धरनितम्बे, दूयमानद्विरददीनदानाश्यानश्यामिकालीनमूकमधु-लिहि, लोहितायमानमन्दारसिन्दूरितसीम्नि, सलिलस्यन्दसं-

त्रिणः, पत्त्रिणः, (कपोतेभ्योऽन्येइतिभावः) यस्मिन् तथोक्ते। **करीषङ्कषेति**—करीषाणि, गोमयानि, कषन्ति, शोषयन्तीतिताद्दशाः, मरुतः, वायवः, यस्मिन्, तथाभूते। विरलवीरुधि, विरलाः, अल्पाः, वीरुधः, लताः यत्र ताद्दशे। **रुधिरेति**— रुधिरेषु, रक्तेषु, कुतूहलिनः, लोलुपाइतिभावः। ये केशरिकिशोरकाः, सिंहशिशवः, तैः, लिह्यमानः, आस्वाद्यमानः, (रक्तधियेतिभावः) कठोरः, परिणतः, धातकीस्तबकः, धातकीलतायाः पुष्पगुच्छः, यस्मिन् तथोक्ते। **ताम्यदिति**—ताम्यताम्, आतपतापेनक्लिश्यताामितियावत्। स्तम्बेरमयूथानां, हस्तिसङ्घानां, वमथुभिः, उद्गारैः, (करशीकरैरित्यर्थः) तिम्यन्तः, आर्द्रीभवन्तः, महतांमहीधराणां, पर्वतानां, नितम्बाः, कटप्रकदेशाः यस्मिन् तथाभूते। **दूयमानेति**—दूयमानानां, ताम्यतां, द्विरदानां, हस्तीनां, दीनस्य, क्षीणतांगतस्य, दानस्य, मदस्य, आश्याना, ईषच्छुष्का, या श्यामिका, मदलेखा, तस्यां लीनाः, अतितर्षात् संसक्ताः, मूकाः, आर्ततयानिःशब्दाः, मधुलिहः, भ्रमराः, यस्मिन् तथोक्ते। **लोहितायमानेति**—लोहितायमानैः, आलोहिता लोहिताः भवन्तः तैः (पुष्पविकासात् रक्तायमानैरित्यर्थः) मन्दारैः, पारिजाताख्यतरुविशेषैः, "मन्दारः पारिजातकः" इत्यमरः। सिन्दूरिताः, सञ्जातसिन्दूराः, (दत्तसिन्दूराइवेत्यर्थः) सीमानः, प्रान्तभागाः, (ग्रामाणामितिशेषः) यस्मिन् तथोक्ते। **सलिलेति**—सलिलानां, जलानां, स्यन्दाः, स्रवाः, तेषां सन्दोहः, समूहः, तस्य सन्देहेन,

दोहसंदेहमुह्यन्महामहिषविषाणकोटिविलिख्यमानस्फुटत्स्फटिकदृषदि, घर्ममर्मरितगर्मुति, तप्तपांशुकुकूलकातरविकिरे, विवरशरणश्वाविधि, तटार्जुनकुररकूटज्वरविवर्तमानोत्तानशफरशारपङ्कशेषपल्वलाम्भसि, दावजनितजगन्नीराजने, रजनीराजयक्ष्मणि, कठोरीभवति निदाघकाले, प्रतिदिशमाढौकमाना

भ्रमेण, मुह्यद्भिः, चित्तविकृतिंगच्छद्भिः, महद्भिः महिषैः विषाणानां, शृङ्गणां, कोटिभिः, अग्रभागैः, विलिख्यमानाः, संघृष्यमाणाः, स्फुरन्त्यः, (सौरातपेन उद्भासमाना इति यावत्) स्फटिकदृषदः, स्फटिकशिलाः यस्मिन् तथाभूते ।

घर्मेति–घर्मेण, उष्मणा, मर्मरिताः, शुष्कत्वेन मर्मर ध्वनियुक्ताः, गर्मुतः, लताविशेषाः यस्मिन् तादृशे । (गर्मुत् स्त्री स्वर्णनड्योर्गोपति शिवषण्डयोः, नृपभास्करयोः पुंसि, इति मेदिनी) तप्तेति—तप्ताः पांशवः, रजांसि एव कुकूलाः, तुषानलाः, तैः कातराः, विकिराः, कुकुटादिपक्षिभेदाः यस्मिन् तादृशे । विवरेति—विवराणि-गर्ता एव शरणम् आश्रयः येषां ते श्वाविधः-शल्याः (मृगविशेषाः) यस्मिन् तादृशे । तटेति—तटेषु-तीरेषु ये अर्जुनाः-तरुभेदाः तेषु ये कुररा:-पक्षिभेदाः (कूंज इति हिन्दी भाषायाम्) तेषां कूटज्वरेण श्रुतिकटुरवसन्तापेन, विवर्तमानाः उत्प्लवमानाः उत्तानाः-उर्द्धमुखाः ये शफराः-मत्स्याः तैः शाराः-शवलाः, पङ्काः-कर्दमा, एव शेषाः येषु तथाविधानां पल्वलानां क्षुद्रजलाशयानाम्, अम्भांसि-जलानि, यस्मिन् तथोक्ते । दावेति—दावेन-वनाग्निना, जनितं-उत्पादितं, यत् जगतां नीराजनम् आरात्रिकाख्यं शान्ति कर्मविशेषः, यस्मिन् तथाविधे । रजनीति—रजन्याः निशायाः राजयक्ष्मा-क्षयरोगः यस्मिन् । कठोरी भवति वृद्धिंगच्छति, निदाघकाले-ग्रीष्मावसरे

इवोषरेषु प्रपावाटकुटीपटलप्रकटलुण्ठकाः, प्रपक्वकपिकच्छू-गुच्छच्छटाच्छोटनचापलैरकाण्डकण्डूला इव कर्षन्तः शर्करिलाः कर्कर स्थलीः, स्थूलदृषच्चूर्णमुचः, मुचुकुन्दकन्दलदलनदन्तुराः, समन्ततः पतन्मुखरचीरीगणमुखशीकरशीक्यमानतनवः, तरुणतरतरणितापतरले तरन्त इव तरङ्गिणि मृगतृष्णिकातरङ्गिणी-

प्रतिदिशम्-दिशिदिशि । आढौकमानेति—ऊपरेषु-मरुभूमिषु, आढौकमाना इव गम्यमाना इव । प्रपेति—प्रपा-पानीयशाला, वाटः-पन्था, कुटी-क्षुद्रगेहम् , पटलम्-छदिः, एतेषां प्रकटं-प्रकाशम् , यथा स्यात्तथा लुण्ठकाः-अपहारकाः, इति यावत् । प्रपक्वेति—प्रपक्वा-पक्वतांगता या कपिकच्छुः-मर्कटी (मर्कट सदृश लोमत्वात् कपि-कच्छुरपि मर्कटी भवति) (ऋष्यप्रोक्ता शूकशिंबिः कपिकच्छुश्च मर्कटी) तस्याः गुच्छच्छटाः-स्तबकराशयः, तासां छोटने-लूने, चापलैः । अकाण्डे-अनवसरे कण्डुलाः-खर्जनरोगग्रस्ता इव । कर्षन्तेति—शर्करिलाः-पाषाणकणिकायुताः, कर्करस्थलीः-पाषाण-खण्डयुतामहीः (कंकरभूमी) कर्षन्तः-कण्डुं कुर्वन्तः । स्थूलेति—स्थूलानि-विपुलानि, दृषदां-शिलानां चूर्णानि-कणिकाः तानि मुञ्चन्ति-प्रक्षिपन्ति इति तथोक्ता । मुचुकुन्देति—मुचुकुन्दानां-माघ्यपुष्पाणां, कंदलानां-तन्नामपुष्पाणाम् । दलनेन, दन्तुराः-संजातदन्ता इव । समन्ततः-चतुर्दिक्षु । पतदिति—पतन्तः-उड्डीय-मानाः, मुखराः-क्वणन्तः, ये चीरीगणाः-पक्षिभेदाः (चील या ईल) तेषां मुखशीकरैः-आननजलकणैः शीक्यमानाः सीच्यमानाः तनवः-शरीराणि येषां तथा विधाः ।

तरुणेति—तरुणेन-अतिप्रौढेन, तरणितापेन-सूर्यातपेन, तरङ्गिणि-संजाततरङ्गे, मृगतृष्णिकाः-मरीचिकाः (मृगतृष्णा मरीचिका इत्य-

नामलीकवारिणि, शुष्यच्छमीमर्मरमारवमार्गलङ्घनलाघवजव-जङ्घालाः, रैणवावर्तमण्डलीरेचकरासरसरभसारब्धनर्तनारम्भा-रभटीनटाः, दावदग्धस्थलीमषीमिलनमलिनाः, शिक्षितक्षपण-कवृत्तय इव वनमयूरपिच्छचयानुच्चिन्वन्तः, सप्रयाणगुञ्जा इव शिञ्जानजरत्करञ्जमञ्जरीबीजजालकैः सप्ररोहा इवातपातुरवन-महिषनासानिकुञ्जस्थूलनिः श्वासैः, सापत्या इवोड्डीयमानजवन-

मरः) एव तरङ्गिण्यः-नद्यः, तासाम् अलीकवारिणि-अलीकजले, तरन्त इव-प्लवमाना इव । शुष्यदिति—शुष्यन्ती-शुष्कतांयान्ती, शमीवत्-तरुविशेषवत्, मर्मरः-विशेषध्वनियुक्तः, मारवः-मरुदेशीयः, मार्गः-पन्था तल्लंघने, लाघवं यस्य तथाविधेन जवेन-वेगेन, जंघालाः-जंघायुक्ताः । रैणवेति—रैणवी-तत्सम्बन्धिनी, आवर्त्तमण्डली, तस्याः रेचकस्य (रेचयति बहिष्करोति तथाभूतस्य) लासकस्य-नर्त-कस्य, रसरभसेन-रागवेगेन, आरब्धं यन्नर्तनं तस्यारम्भे, आर-भटीआराश्च = भटाश्च तेषामियमारभटी-वीररसप्रधानविशेषः, तत्र नटाः, ताण्डवावसानेनिपुणा इत्यर्थः । दावेति—दावेन-वनानिलेन, दग्धा स्थली एव मसी तस्याः मिलनेन मलिनाः । शिक्षितेति—शिक्षिता-अभ्यस्ता, क्षपणकानां वृत्तिः-व्यवहारो, यैः एवंभूताः, मयूरपिच्छचयान्, उच्चिन्वन्तः-धारयन्तः (पुच्छार्थकत्वलाभात् मयूरपदमत्राधिकम्) (क्षपणकाअपि निजशास्त्राज्ञया मलिनपुच्छधार-यन्ति) प्रयाणे-यात्रायां, गुञ्जाः ढक्काः तैः सह वर्तमाना इत्यर्थः । शिञ्जानेति—शिञ्जानाः-शब्दवन्त्यः, जरतां-प्राचीनानां, करञ्जानां-तरुभेदानां, मंजर्यः, तासां बीजजालकैः बीजसमूहैः, सप्ररोहा इव-सांकुरा इव । आतपेति—आतपेन-संतापेन, आतुराणाम् आर्त्तानाम्, वनमहिषाणां, नासाभ्यः निकुञ्जेभ्य इव-लतापिहितोदरेभ्य इव निर्गतैः-

वातहरिणपरिपाटीपेटकैः, सभ्रुकुटय इव दह्यमानखलधानबुस-कूटकुटिलधूमकोटिभिः, सावीचिवीचय इव महोष्ममुक्तिभिः, लोमशा इव शीर्यमाणशाल्मलिफलतूलतन्तुभिः, दद्रुला इव शुष्कपत्रप्रकराकृष्टिभिः, सिराला इव तृणवेणीविकिरणैः, उच्छ्रयाश्रव इव धूयमाननवयवशूकशकलशंकुभिः, दंष्ट्राला इव

स्थूलनिश्वासैः, सापत्या इव ससन्ताना इव। **उड्डीयमानेति**—उड्डीय-मानानां-उत्पततां, जवनतराणाम्-अतिवेगिनाम्, हरिणानां, परिपा-ट्यः-पर्य्यायाः। तासां पेटकाः-समूहाः तैः सभ्रुकुटय इव-सभ्रूभङ्गा इव। **दह्यमानेति**—दह्यमानानाम्-आतपेन दग्धानाम्, खलधानानां-धान्या-नाम्, ये वुसकुटाः तुषराशयः, कुटिलाः-कुटिलगामिन्यः, धूमकोटय इव- धूमराजय इव, तैः, सावीचिवीचय इव-अवीचिः-नरकविशेषः, तस्य वीचयः-तरङ्गाः-ज्वाला वा तैः सहवर्तमाना इव, महोष्ममुक्तिभिः-महान्तः उष्माणः तेषां मुक्तिभिः-त्यागैः-वृष्टिभिरित्यर्थः।

लोमशेति—लोमशा इव-रोमपूर्णा इव। शीर्यमाणेति-शीर्य-माणानां-विदीर्यमाणानाम्, शालाम्लिफलानाम्, तूलतन्तुभिः-तूलसूत्रैः, दद्रुला इव-दद्रुवन्त इव। शुष्केति-शुष्काणां, पत्राणां, प्रकराः-समूहाः, तेषांम्, आकृष्टयः-आकर्षणानि, ताभिः, शिराला इव-शिरासमूहशालिन इव। **तृणेति**—तृणानां, वेणी-राजिः, तस्याः विकिरणैः-विक्षेपैः, उच्छ्राया-अविरतानि, अश्रूणि-नयन जलानि, येषां तथा भूता इव। **धूयमानेति**—धूयमानानां, कम्पमानानां, यवानाम्, शूकाः-शुङ्गाः, (शिखासूचय-इत्यर्थः) (शूकोऽस्त्री शुङ्गदययोः इति मोदिनी) तेषां शकलाः-खण्डाः, शङ्कवः-कीलाः तैः दंष्ट्रालाः-दंष्ट्रावन्तः इव। **चलितेति**—चलितानां-चलतां, शलला-नाम्-शल्यकीनाम्, सूचीशतैः-सूक्ष्माग्रभागैः, (श्वावित्तु शल्यस्त-

चलितशललसूचीशतैः, जिह्वाला इव वैश्वानरशिखाभिः, उत्सर्पत्सर्पकञ्चुकचूडाला ब्रह्मस्तम्भरसाभ्यवहरणाय कवलग्रहमिवोष्णैः कमलमधुभिरभ्यस्यन्तः सकलसलिलोच्छोषघर्मघोषणापटहैरिव शुष्कवेणुवनास्फोटनपटुरवैस्त्रिभुवनबिभीषिकामुद्भावयन्तः, च्युतचलच्चाषदत्तश्रेणीशारितसृतयः, त्विषिमन्मयूखलतालातप्लोषकल्माषवपुष इव स्फुटितगुञ्जाफलस्फुलि-

---

ल्लोम्नि शलली शललं शलम्-इत्यमरः) जिह्वाला इव-रसनावन्त इव। वैश्वानरेति—वैश्वानरशिखाभिः—अग्निशिखाभिः, । उत्सर्पदिति—उत्सर्पद्भिः-उद्गच्छद्भिः, सर्पाणां कञ्चुकैः-निर्मोकैः, चूडलाः-शिखावन्तः। ब्रह्मेति—ब्रह्मस्तम्भस्य-ब्रह्मखण्डस्य रसाभ्यवहरणाय-रसशोषणाय-रसानां-मधुरादीनांभोजनाय वा कवलग्रहं-ग्रासग्रहणम्, उष्णैः कमलमधुभिः, अभ्यस्यन्तः-पुनः पुनः कुर्वन्तः। सकलेति—सकलनां, सलिलानाम्-जलानाम्, उच्छोषः-अतिशयेन शोषकः यो घर्मः-आतपः, तस्य घोषणा-प्रचारः तस्याः पटहाः, तैरिव। शुष्केति—शुष्काणां, वेणुवनानां, स्फोटनस्य-विदारणस्य, पटुरवाः-महानिनादाः तै रिव। त्रिभुवनेति—त्रिभुवनविभीषिकाम्। त्रिलोकभीतिकाम्, उद्भावयन्तः-जनयन्तः। च्युतेति—च्युताभिः-स्खलिताभिः, अतएव चलिताभिः, उत्पतन्तीभिः, चाषपक्षिश्रेणिभिः-नीलकण्ठपक्षिपङ्क्तिभिः, शारिता-व्याप्ता, सृतयः-मार्गाः यैः तथाविधाः (सृतिः स्त्रीगमने मार्गे इति कोषः) त्विषिमदिति—त्विषिमतः-सूर्यस्य, मयूखलतानां-किरणज्वालानाम्, अलतस्य ज्वलदङ्गारस्य यः प्लोषः-दहनम्, तेन कल्माषं-चित्रमित्कृष्णारक्तम्, वपुः-शरीरं येषां तथाविधाः। स्फुटितेति—स्फुटितानि-विकसितानि, गुञ्जाफलानिवत् ये स्फुलिङ्गाः-अग्निकणाः तेषां अंगारैः अङ्किताङ्गाः,

ङ्गाङ्गाराङ्किताङ्गाः, गिरिगुहागम्भीरझांकारभीषणभ्रान्तयः, भुवनभस्मीकरणाभिचारचरुपचनचतुराः, रुधिराहुतिभिरिव पारिभद्रद्रुमस्तबकवृष्टिभिस्तर्पयन्तस्तारवान्वनविभावसून्, अशिशिरसिकतातारकितरंहसः, तप्तशैलविलीयमानशिलाजतुरसलवलिप्तदिशः, दावदहनपच्यमानचटकाण्डखण्डखचिततरुकोटरकीटपटलपुटपाकगन्धकटवः, प्रावर्तन्तोन्मत्ता मातरिश्वानः।

प्लुषिताङ्गाः। गिरि-इति—गिरिगुहासु-पर्वतकन्दरासु, गम्भीरझंकारेण, भीषणा, भ्रान्तिः-घूर्णनं येषां ते। भुवनेति—भुवनस्य-जगतः, भस्मीकरणं-दहनं, तदेवाभिचारः-वेदविहितनिष्ठुरकर्म, तत्रचरुपचने-हविपाके, चतुराः-पटवः, रुधिराहुतिभिरिव रक्ताहुतिभिरिव, परिभद्रनामद्रुमस्य, स्तबकानां-गुच्छानाम्, वृष्टिभिः-पातैः, तारवान्-वृक्षसम्बन्धिनः, विभावसून्-दावानलान्, तर्पयन्तः-प्रीणयन्तः। अशिशिरेति—अशिशिराभिः-उष्णाभिः, वालुकाभिः, तारकितम्, रंहः, वेगो येषां तथोक्ताः। तप्तेति—तप्तेषु-शैलेषु, गिरिषु, विलीयमानानां-गलतां, शिलाजतूनां-धातुभेदानाम्, रसलवैः-जलकणैः, लिप्ताः-दिशो यैः तथोक्ताः। दावेति—दावदहनेन-वनाग्निना, पच्यमानानां-दग्धानां, चटकानां-पक्षिविशेषाणाम्, अण्डखण्डैः-डिम्बशकलैः, खचितेषु-व्याप्तेषु, तरुकोटरेषु-वृक्षगुहासु यानि कीटपटलानि-तद् भक्षणार्थमागतानि, पिपिलिकावृन्दानि, तेषां पुटपाकस्य-अभ्यन्तरपाकस्य, गन्धेन कटवः-उद्वेजका इत्यर्थः। उन्मत्ताः-उच्छृङ्खलाः, मातरिश्वानः-वायवः, प्रावर्त्तन्तः। सर्वतेति—पुनर्तानेव दावाग्नीन् विशिनष्टि भूरित्यादिभिः। जरठानां वृद्धानां, अजगराणां, सर्पाणां, गम्भीराः गलाः, कण्टप्रदेशाः एव गुहा ताभ्यः, वाहिनः, वहिर्निःसरन्तः, वायवः येषु तथा भूताः। अतएव-भूरिभिः, वृहद्भिः, भस्त्राणां, अग्निसंधूक्षणयंत्राणां सहस्रैः, सन्धुक्षणेन, समुद्दीपनेन, क्षुभिताइव, समुत्तेजिताइव।

सर्वतश्च भूरिभस्त्रासहस्रसंधुक्षणक्षुभिता इव जरठाजगरगम्भीरगलगुहावाहिवायवः क्वचित्स्वच्छन्दतृणचारिणो हरिणाः, क्वचित्तरुतलविवरविवर्तिनो बभ्रवः, क्वचिज्जटावलम्बिनः कपिलाः, क्वचिच्छकुनकुलकुलायपातिनः श्येनाः, क्वचिद्विलीनलाक्षारसलोहितच्छवयोऽधराः, क्वचिदासादितशकुनिपक्षकृत-

---

स्वच्छन्देति—स्वच्छन्दं-स्वैरं, तृणेषु, चरन्ति-प्रसरन्ति, (पक्षे) तृणानिभक्षयन्ति हरिणाः-पाण्डुवर्णाः, (पक्षे) मृगाः। **तरुतलेति**—तरुतलेषु यानि विवराणि-गर्त्तानि तेषु वर्त्तिनः, विभ्रवः-पिङ्गलाः (पक्षे) नकुलाः। **शकुनेति**—शकुनकुलानां-पक्षिविशेषाणाम्, कुलायान्-नीडानि, पातयन्ति-दहन्ति इति यथोक्ताः श्येनाः शुक्लवर्णाः, (पक्षे) पक्षिसमूहकुलायास्थितघातकाः पक्षिभेदाः। **जटेति**—जटाऽवलम्बिनः-जटाः-मूलानि, अवलम्बन्ते-आश्रयन्ति इति तथोक्ताः (पक्षे) जटाधारिणः, कपिलाः-पिङ्गलाः (पक्षे) कपिलमुनिविशेषव्रतधारिणः तापसाः। **विलीनेति**—विलीनः-द्रवीभूतः, यो लाक्षारसः-अलक्तकद्रवः तद्वत्, (अथवा) तेन लोहिताः-रक्ताः छवयः-कान्तयः, येषां, तथा भूताः, अधराः-धर्तुमशक्याः, निम्नौष्ठाः वा (पक्षे) धराः-पर्वताः। **आसादितेति**—आसादितेषु-प्राप्तेषु अवसादंगतेषु, वा शकुनिनां-पक्षिणां, पक्षेषु, कृता-लब्धा पटुगतिः, सम्यक् प्रसरणं यैः अन्यत्र-आसादिता-प्राप्ता, शकुनि-पक्षेण-पक्षिगरुता, कृता-जनिता, पटुगतिः-सत्वरगमनं यैः तथोक्ताः। वि-विविधा, शिखा ज्वाला येषां तथोक्ताः (पक्षे) शराः। **दग्धेति**—दग्धाः-भस्मीकृताः, निश्शेषाः-समस्ताः, जन्महेतवः-स्वोत्पत्तिकारणानि, तृणकाष्ठादीनि यैः (पक्षे) दग्धाः-क्षयिताः समस्ताः पूर्वपूर्व जन्ममर्जिताः संसारागमनकारणानि, पापपुण्यानि

पट्टगतयोविशिखाः, क्वचिद्दग्धनिःशेषजन्महेतवो निर्वाणाः, क्वचित्कुसुमवासिताम्बरसुरभयो रागिणः, क्वचित्सधूमोद्गारा मन्दरुचयः, क्वचित्सकलजगद्ग्रासघस्मराः सभस्मकाः, क्वचिद्वेणुशिखरलग्नमूर्तयोऽत्यन्तवृद्धाः, क्वचिदचलोपयुक्तशिलाजतवः क्षयिणः क्वचित्सर्वरसभुजः पीवानः, क्वचिद्दग्धगुग्गुलोव रौद्राः, क्वचिज्ज्वलितनेत्रदहनदग्धसकुसुमशरमदनाः कृतस्थाणु

यैः तथोक्ता निर्वाणाः शान्ताः (पक्षे) मुक्तिगताः । कुसुमेति- कुसुमैः-धूमैः (पक्षे) पुष्पैः वासितं-छादितं (पक्षे) सुरभितम्, यत् अम्बरं नभः (पक्षे) वस्त्रम्, तेनसुरभयः-शोभनदर्शनाः (पक्षे) सौरभशालिनः । रागिणाःरक्तवर्णाः (पक्षे) रागवन्तः । सधूमेति— सधूमोद्गाराः-धूमनिर्गमेनसहवर्तमानाः अमन्दाः-अतिप्रवृद्धाः, रुचयः कान्तयः येषां, (पक्षे) धूमनामकरोगेण मन्दारुचिः-इच्छा, भोजनादिषु येषाम् ते । सकलेति सकलं, जगदेवग्रासः-कवलम्, तद् घस्मराः, भक्षकाः, सभस्मभूरिकाःभस्मनां, भूरिभिः सहवर्तमानाः । वेणिवति-वेणूनां, वशांनां, शिखरेषु, लग्नाः-संसक्ताः, (पक्षे) वेणुखण्डाग्रेषु, लग्नाः कृतभराः पूतयः अङ्गानि येषां यथोक्ताः । अत्यन्तवृद्धाः अतिप्रवलाः, अतिस्थविराश्च (वृद्धा हि वंश लगुडेन सहगच्छन्ति) अचलेति —अचलेषु पर्वतेषु, उपयुक्तानिभक्षितानि, दग्धानीतिभावः, शिलाजतूनि-शिलाजत्वाख्या धातुविशेषाः यैः, पक्षे अचलम् अविच्छिन्नम्, यथा तथा-उपयुक्तम्, सेवितम्, औषधरूपेणेतिभावः शिलाजतुः यैः तथोक्ता। क्षयिणः निर्माणंगताः-क्षयरोगिणश्च सर्वानितिसर्वाणि-अन्नानि,रसान्, जलादीं भुञ्जते इति तथोक्ताः अतएवपीवानः स्थूलकलेवराः । क्वचिदिति—दग्धगुग्गलवः-भस्मीकृतगन्धद्रव्याणि, यैः तथोक्ताः, रौद्राः-भीषणाः-(पक्षे) शिवसेवकाः । ज्वलितेति—ज्वलि-

स्थितयः, चटुलशिखानर्तनारम्भारभटीनटाः क्वचिच्छुष्ककासारसृतिभिः स्फुटन्नीरसनीवारबीजलाजवर्षिभिर्ज्वालाञ्जलिभिरर्चयन्त इव घर्मघृणिम्, अघृणा इव हठहूयमानकठोरस्थलकमठवसाविस्रगन्धगृध्नवः, स्वमपि धूममम्भोदसमुद्भूतिभियेव भक्षयन्तः, सलिलाहुतय इव स्फुटद्बहलबालकीटपटलाः

तानां, नेत्रा- णाम्-मूलानाम्, दहनेन दग्धाः,सकुसुमाः-सपुष्पाः,शराः-तृणभेदाः, मदनाः-वृक्षभेदाश्च यैः तथोक्ताः। (पक्षे)-ज्वलिततृतीयनयनाग्निना भस्मीकृतः कुसुमशरसहितः मदनः-कामः यैः तथोक्ताः रुद्राः। कृतेति—कृताः-स्थाणुषु-छिन्नशाखासु स्थितिः यैः, (पक्षे) स्थाणोः-हरस्य स्थितयः-व्यवहारा यैः। चटुलेति— चटुलशिखाः-चंचलज्वालाः, येषाम्, (अन्यत्र) चूडाः येषाम्। नर्तनारम्भे यः आरभटी-प्रधानवीररसविशेषः तत्र नटाः उभयत्रतुल्यम्। शुष्केति—शुष्केषु-कासारेषु तडागेषु, सृतिः प्रसारो येषां तैः। स्फुटदिति—स्फुटन्ति निर्-रसानि यानि निवारबीजानि-धान्यविशेषाः तेषां लाजान् वर्षन्ति तथोक्तैः। ज्वालाऽञ्जलिभिः-शिखाऽञ्जलिभिः। घर्मघृणिम्-उष्ण-रश्मिम्, अघृणा इव अजुगुप्सा इव अर्चयन्तः-पूजयन्तः। हठेति—हठात्-बलात्, हूयमानाः-दह्यमानाः, कठोराणां, स्थलकमठानां-स्थलवर्त्तिकच्छपानाम्, याः वसाः-मेदांसि तासां यो विस्रगन्धः-आमगन्धः तस्यगृध्नवः-लोलुपाः। अम्भोदेति—अम्भोदानां पयोदानां, समुद्भूतिभिया-समुत्पत्तिभयेन, धूमं भक्षयन्तः। सलिलाहुतय इव-जलाहुतय इव। स्फुटदिति—स्फुटन्ति-निर्गच्छन्ति, बहलानि-भूरीणि, बालानि-क्षुद्राणि, कीटपटलानि, क्षुद्रप्राणिवृन्दानि, यथा तथोक्ताः श्वित्रिणः कक्षेषु-बहल कृमिवृन्दानि, निसरन्ति। प्लोषेति-प्लोषेण-दहनेन, विचरन्ति-चटत् चटत् इति कुर्वन्ति,यानि बल्कलानि-

कन्दरेषु, श्वित्रिण इव प्रोषविचटद्वल्कलधवलशम्बूकशुक्तयः शुष्केषु सरःसु, स्वेदिन इव विलीयमानमधुपटलगोलगलितमधूच्छिष्टवृष्टयः काननेषु, खलतय इव परिशीर्यमाणशिखासंहतयो महोषरेषु, गृहीतशिलाकवला इव ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु शिलोच्चयेषु, प्रत्यदृश्यन्त दारुणा दावाग्नयः।

तथाभूते च तस्मिन्नत्युग्रे ग्रीष्मसमये कदाचिदस्य स्वगृहावस्थितस्य भुक्तवतोऽपराह्णसमये भ्राता पारशवश्चन्द्रसेननामा प्रविश्याकथयत्—'एष खलु देवस्य चतुःसमुद्राधिपतेः सकलराजचक्रचूडामणिश्रेणीशाणकोणकषणनिर्मलीकृतचरणनखमणेः

तरुत्वचः तैः धवलाः शम्बूकाः शंखाः, शुक्तयः मुक्तास्फोटाख्याजलजन्तुविशेषाः येषां तथोक्ताः स्वेदिन इव घर्मिण इव। शुष्केषु नीरसेषु सरःसु तडागेषु। विलीयमानेति—विलीयमानेभ्यः-विलयंगच्छद्भ्यः, मधुपटलगोलेभ्यः-मधुचक्रेभ्यः, गलिता-निःसृता, मधुच्छिष्टानां, वृष्टिः, यैः तथोक्ताः। खलतय इव-खल्वाटा इव। महोषरेषु-मरुभूमिषु, परीति—परि-प्रान्तभागे, शीर्यमाणाः-प्रसरन्तः, शिखासंहतयः-ज्वालासमूहाः (पक्षे) चूडासमूहाः येषां ते तथोक्ताः। गृहीतेति गृहीतं, शिला एव शकलं ग्रासो यैः तादृशाः। ज्वलितसूर्यमणिशकलेषु-दीप्तसूर्यकान्तमणिखण्डेषु, शिलोच्चयेषु-गिरिषु, दारुणाः भयानकाः, दावाग्नयः-वनानलाः, प्रत्यदृश्यन्त। देवेति—देवानां-राज्ञां, देवस्य-राज्ञः, चतुःसमुद्राधिपतेः, चतुः सागरस्वामिनः। सकलेति—सकलानां, समस्तानां, राजचक्राणां-नृप-मण्डलानाम, याः चूडामणिश्रेण्यः-शिरोरत्न पंक्तयः, ता एव शाणाः, निकषपाषाणविशेषाः, तेषां कोणेषु, प्रान्तभागेषु, यत्कषणं, घर्षणम्, तेन निर्मलीकृताः, विशदीकृता, चरणयोः, नखा एव मणयः, रत्नानि यस्य तथाविधस्य।

सर्वचक्रवर्तिनां धौरेयस्य महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीहर्षदेवस्य भ्राता कृष्णनाम्ना भवतामन्तिकं प्रज्ञाततमो दीर्घाध्वगः प्रहितो द्वारमध्यास्ते' इति। सोऽब्रवीत्—'आयुष्मन्, अविलम्बितं प्रवेशयैनम्' इति। अथ तेनानीयमानम्, अतिदूरगमनगुरुजडजङ्घम्, कार्दमिकचेलचीरिकानियमितोच्चण्डचण्डातकम्, पृष्ठप्रेङ्खत्पटच्चरकर्पटघटितगलितग्रन्थिम्, अतिनिबिडसूत्रबन्धनिम्नितान्तरालकृतव्यवच्छेदया लेखमालिकया परिकलितमूर्धानम्, प्रविशन्तं लेखहारकमद्राक्षीत्। अप्राक्षीच्च दूरादेव—'भद्र, भद्रमशेषभुवननिष्कारणबन्धोस्तत्रभवतः कृष्णस्य' इति। सः 'भद्रम्'

सर्वेति—सर्वेषां, चक्रवर्तिनां सार्वभौमानां, धौरेयस्य अग्रगण्यस्य। महेति—महतां, राजाधिराजानां, परमेश्वरस्य-सर्वनियन्तुः, श्रीहर्षदेवस्य। प्रज्ञाततमः अतिप्रतीतः, (अतिशयेन विज्ञात इत्यर्थः) दीर्घाध्वगः-दीर्घम्, अध्वानं-मार्गं गच्छतीति तथोक्तः। प्रहितः-प्रेषितः। अतिदूरेति—अतिदूरगमनेन, गुरू भारवत्यौ, जडे-चलनाशक्ये, जङ्घे, यस्यतम्। कार्दमिकेति—कार्दमिकस्य-कर्दमेनलिप्तस्य, चेलस्य, चीरिकया-खण्डेन, नियमितं संयमितम्, उच्चण्डम्-कर्कशम्, चण्डान्तकम्-अरूपद्वोर्यन्तव्यापकम् वसनं येन तम्। पृष्ठेति—पृष्ठे, प्रेङ्खत्-चलत्, पटच्चरं-जीर्णवसनम्, कर्पटम् घर्ममज्जनार्थवस्त्रभागम् च ताभ्याम्, घटितः-रचितः, गलितः-शिथिलः, ग्रन्थिः-वस्त्रसन्धिः येन तम्। अतिनिबिडेति—अतिनिबिडेन-अतिघनेन, सूत्रबन्धेन, निम्नितः नमितः, अन्तराले-मध्ये, कृतः, व्यवच्छेदो यस्याः, तया, लेखमालिकया-लिपिसञ्चयेन, परिकलितेति—परिकलितः-वेष्टितः, मूर्द्धा-मस्तकम्, येन तम्, लेखहारकम्-पत्रवाहकम्। अद्राक्षीत्-अपश्यत्- (दृशिरप्रेक्षणे) अप्राक्षीत्-अपृच्छत्। भद्र, साधो! अशेषेति—अशेषाणाम्,

इत्युक्त्वा प्रणम्य नातिदूरे समुपाविशत्। विश्रान्तश्चाब्रवीत्-'एष खलु स्वामिना माननीयस्य लेखः प्रहितः' इति विमुच्य चार्पयत्। अथ बाणः सादरं गृहीत्वा स्वयमेवावाचयत्—'मेखलकात्संदिष्टमवधार्य फलप्रतिबन्धी धीमद्भिरपहरणीयः कालातिपात इत्येतावदत्रार्थजातम्। इतरद्वार्तासंवादनमात्रकम्'। अवधृतलेखार्थश्च समुत्सारितपरिजनः संदेशं पृष्टवान्। मेखलकस्त्ववादीत्—'एवमाह मेधाविनं स्वामी—जानात्येव मान्यः यथैकगोत्रता वा, समानजातिता वा, समं संवर्धनं वा, एकदेशनिवासो वा, दर्शनाभ्यासो वा, परस्परानुरागश्रवणं वा, परोक्षोपकारकरणं वा, समानशीलता वा, स्नेहस्य हेतवः। त्वयि तु विना कारणेनादृष्टेऽपि प्रत्यासन्ने बन्धाविव बद्धपक्षपातं किमपि स्निह्यति मे हृदयं दूरस्थेऽपीन्दोरिव कुमुदाकरे। भवन्तमन्तरेणान्यथा चान्यथा चायं चक्रवर्ती

सर्वेषाम्, भुवननाम्-जगताम्, निष्कारणः- अहेतुकः, बन्धुः, तस्य। प्रहितः प्रेषितः अवाचयत्-अपपठन्, मेखलकः, तदाख्यः प्रागुक्तः पत्रवाहकः। सन्दिष्टम्-वाचिकम्, फलप्रतिबन्धी-फलंकार्यम् बध्नाति। अपहरणीयेति-कार्यव्याघातकः। कालातिपातः, समयविलम्बः, वार्तासम्वादनमात्रकम्, वृतान्तालोचनमात्रम्। अवधृतलेखार्थः, ज्ञातलिपिनिबद्धोदन्तम्। समुत्सारितपरिजनः, परिवर्जितपरिजनः। मेखलकः, पत्रवाहकः। अवादीत्-प्रोवाच। एकगोत्रता, एककुलोत्पत्तिः। समानजातिता, तुल्यजातित्वम्, दर्शनाभ्यासः, पुनः पुनः साक्षात्करणम्, परम्परानुरागश्रवणम्—अन्योऽन्यसद्भावाकर्णनम्। परोक्षोपकारकरणम्—प्रत्यक्षाभावेऽपि उपकारकरणम्। प्रत्यासन्ने, समीपे, कुमुदाकरे, कैरवोत्पत्तिभुवि।

दुर्जनैर्ग्राहित आसीत्। न च तत्तथा। न सन्त्येव ते येषां सतामपि सतां न विद्यन्ते मित्रोदासीनशत्रवः। शिशुचापलापराचीनचेतोवृत्तितया च भवतः केनचिदसहिष्णुना यत्किंचिदसदृशमुदीरितम्। इतरो लोकस्तथैव तद्गृह्णाति वक्ति च। सलिलानीव गतानुगतिकानि लोलानि खलु भवन्त्यविवेकिनां मनांसि। बहुमुखश्रवणनिश्चलीकृतनिश्चयः किं करोतु पृथिवीपतिः। तत्त्वान्वेषिभिश्चास्माभिर्दूरस्थितोऽपि प्रत्यक्षीकृतोऽसि। विज्ञप्तश्चक्रवर्ती त्वदर्थम्—यथा प्रायेण प्रथमे वयसि सर्वस्यैव चापलैः शैशवमपराध्यतीति। तथेति च प्रतिपन्नं स्वामिना। अतो भवता राजकुलमकृतकालक्षेपमागन्तव्यम्। अवकेशीवादृष्टपरमेश्वरो बन्धुमध्यमधिवसन्नासि मे बहुमतः। न च सेवा-

---

चक्रवर्तीसार्वभौमः। ग्राहितः-अवबोधितः। मित्रेति मित्राणि सुहृदः, उदासीनाः, मध्यस्थाः शत्रवः-वैरिणः, न विद्यन्ते न तिष्ठन्ति। शिशिवति शिशोश्चापलम् शैशवचापल्यम्, तत्रपराचीना, अपराङ्मुखी, चित्तवृत्तिर्यस्य तत्ता, तया। असहिष्णुना, सोढुमशक्नुवता, असदृशम्, अयुक्तम्, उदीरितम् उक्तम्। गतानुगतिकानि, गतं गमनम्,अनुगतिः, पश्चाद्गमनम्, अविवेकिनाम्, ज्ञानरहितानाम्। बह्विति बहूनां, मुखानाम्, श्रवणेन निश्चलीकृतः निश्चयः, अवधारणाम् यस्य, तथाभूतः। प्रत्यक्षीकृतः, साक्षात्कृतः। चापलैः, चपलकर्मभिः। अपराध्यतीति, अपराधि, सदोषं भवति इति यावत्। प्रतिपन्नम् विदितम्। अकृतकाल क्षेपम्, समयविलम्बमकृत्वा।

अवकेशीव निष्फलतरुरिव अदृष्टपरमेश्वरः-नदृष्टः, परमेश्वरः-राजाधिराजः रविश्च येन तथाभूतः। अदृष्टरविस्तरुमध्यगतछायाप्रधानः अवकेशी अपि न कस्यचित् प्रियः। बन्धुमध्यम्-बन्धूनां ज्ञातीनां

वैषम्यविषादिना परमेश्वरोपसर्पणभीरुणा वा भवता भवितव्यम् । यतो यद्यपि—

स्वेच्छोपजातविषयोऽपि न याति वक्तुं
देहीति मार्गणशतैश्च ददाति दुःखम् ।
मोहात्समुत्क्षिपति जीवनमप्यकाण्डे
कष्टं मनोभव इवेश्वरदुर्विदग्धः ॥ ३ ॥

मध्यम, अधिवसन् अधितिष्ठन मे मम बहुमतः, वह्वादृतः । **सेवेति**—सेवायां, परिचर्यायां, यद् वैषम्यं तेन विषीदतीति तेन । दुष्टात्प्रभोः मर्यादाऽभावमाशङ्कमानाय बाणाय उपदिशन् कृष्णः स्वकीय स्वामिनं प्रशंसितुं प्रसङ्गात् दुर्विनीतप्रभोः स्वरूपमुपवर्णयन्नाह । **स्वेच्छेति**—ईश्वरदुर्विदग्धः, दुर्विदग्धः, अपण्डितः, ईश्वरः, प्रभुः (निग्रहानुग्रह-असमर्थः, इत्यर्थः) (पक्षे) ईश्वरेण-हरेण दुर्विदग्धः-दुः-दुखं कष्टकरं यथा तथा (विवेकरहित इतियावत्) तथा वि-विशेषेण दग्धः-भस्मीकृतः नेत्रजवह्निनेतिभावः, मनोभव इव, काम इव कष्टं (क्लेशहेतुरित्यर्थः) अल्पबुद्धेः प्रभोः सेवा क्लेशकरीतिभावः । अथ च पादत्रयेण दुःशक्यत्वमुपपादयितुमाह । **स्वेच्छेति**—स्वेच्छया, निजेच्छया, उपजाताः, उपस्थिताः, विषयाः, भोग्यवस्तूनि यस्य तथाभूतः, (पक्षे) स्वेच्छं, यथेष्टम्, उपजाताः, उपगताः, विषयाः, लक्ष्याणि यस्य तथाभूतः । देहीति, प्रयच्छ इति वक्तुं, कथयितुम, न याति न ददाति (धातूनामनेकार्थत्वात् अत्र पा धातु, दानार्थीयः) (पक्षे) देहीति, कायावान् इति वक्तुं वचनं न याति न गच्छति । मार्गणशतैः, यांचाशतैः (पक्षे) शरशतैः, ("मार्गणो याचके शरे" इति मेदिनी) दुःखं ददाति, क्लेशं जनयति, एकत्र, अनुजीविभ्यः (पक्षे) कामिभ्य इति, अकाण्डे, सहसाकारणान्तरे, असत्यपीति यावत्,

तथाप्यन्ये ते भूपतयः, अन्य एवायम्। न्यक्कृतनृगनलनिषधनहुषाम्बरीषदशरथदिलीपनाभागभरतभगीरथययातिरमृतमयः स्वामी। नास्याहंकारकालकूटविषदिग्धदुष्टा दृष्टयः, न गर्वगुरुगरगलग्रहगद्गद्गदा गिरः, नातिस्मयोष्मापस्मारविस्मृतस्थै-

मोहात्, अज्ञानात्, यथायथं दोषादोषयोः बोधशून्यात्, (पक्षे) मोहात् स्वविकारजनितमोहात् जीवनमपि प्राणानपि, एकत्र अनुजीविनाम्, (पक्षे) कामिनामितिशेषः समुत्क्षिपति, समुत्कर्षति दण्डयतीत्यर्थः (पक्षे) हरति। श्लेषानुप्राणितोपमालंकारः वसन्ततिलकं वृत्तं।

न्यक्कृतेति—नृगः, इक्ष्वाकुपुत्रः, नलः, निषधाधिपः, निषधः, रामप्रपौत्र, "रामस्यतनयो जज्ञे कुश इत्यभि विश्रुतः। अतिथिस्तु कुशाज्जज्ञेनिषधस्तस्यचात्मजः। हरिवंशे" नहुषः, आयुषः पुत्रः, (पुरुरवाप्रपौत्रश्च) अम्बरीषः "अम्बरीषस्तुनाभागिः सिन्धुद्वीप पिताभवत्" दशरथः, रामपिता, (रघुवंशे समुत्पन्नः) दिलीपः, रामप्रपितामहः, नाभागोऽम्बरीषपिता, भरतः, दुष्यन्ततनयः, भगीरथः, सगरप्रपौत्रः, (गंगया आनेता) ययातिः, शर्मिष्ठायाभर्ता, च, (द्वन्द्वसमासः) इमे नृपाः, न्यक्कृताः, तिरस्कृताः, येन सः, (अत्र गुणाधिक्यंद्योतितम्) अमृतमयः, अमृतविकारः, (अग्रिमकाल कूटादि राहित्य वर्णनममृत मयत्वादेव सर्वं युज्यते) **नास्येति**—अस्य, हर्षस्य, अहंकारः, अहंभावः, एव कालकूटविषं तेन दिग्धा, उपलिप्ता, अत एव, दुष्टा, दृष्टयः, अवलोकितानि, न। **नेति**—गर्वः, अभिमान एव, गुरुगरं, महाविषं, तेन जातो यो गलग्रहः, कण्ठावरोधः, (यस्य श्लेष्मा प्रकुपितातिष्ठत्यन्तर्गले स्थिरः, आशु संजनयेत्कोपं जायतेऽस्य गलग्रहः) चरके। स एव गदः, रोगः, तेन गद्गदावाचः न (आमयकारणेन वाचोऽस्पष्टत्वम्) अतिस्मयः, अतिगर्वः, तेन य

र्याणि स्थानकानि, नोद्दामदर्पदाहज्वरवेगविक्लवा विकाराः, नाभिमानमहासंनिपातनिर्मिताङ्गभङ्गानि गतानि, न मदार्दित-वक्रीकृतौष्ठनिष्ठ्यूतनिष्ठुराक्षराणि जल्पितानि। तथा च। अस्य विमलेषु साधुषु रत्नबुद्धिः, न शिलाशकलेषु। मुक्ताधवलेषु

उष्मा, औद्धत्यं स एव, अपस्मारः, (मृगिः) व्याधिः, तेन विस्मृतं, स्मरणाविपर्यंगतं, स्थैर्य, स्थिरता, यैः, तानि स्थानकानि, स्थितयः न। **नोद्दामेति** उद्दामः, प्रचण्डः, यः, दर्पः स एव ज्वरः, (उष्णोत्पादकत्वात) तस्य वेगेन, विक्लवाः, पीडिताः, विकाराः, न। **नाभीति**— अभिमान एव महासन्निपातः, (श्वासः कासो भ्रमो मूर्च्छा प्रलापो मोहवेपथुः। पार्श्वस्यवेदना जृम्भा कषायत्वं मुखस्य च वातोल्वणस्यलिंगानि, सन्निपातस्यलक्षयेत) रोगः, तेन, कृतः, विहितः, अंगानां,अवयवानां,(पक्षे) स्वजनानांभंगः, येषु, तानि, गतानि, गमनानि च न। **मदेति**—मदः, सौभाग्ययौवनाद्यवलेपजो विकारः "मदो विकारः सौभाग्ययौवनाद्यवलेपजः "दर्पणो," तेन, अर्दितः पीड़ित, (आक्रान्त इति यावत्) अत एव वक्रीकृतः, अथवा मद एव **अर्दितः**, वातव्याधि विशेषः तेन वक्रीकृतः, यः, ओष्ठः, तस्मात , निष्ठ्यूतानि, निर्गलितानि, निष्ठुराणि, दारुणानि, कर्कशानि वा, अक्षराणि, वर्णाः (कवर्गादय इति यावत्) येषु तानि, जल्पितानि, वचनानि, न। **अस्येति**— अस्य, चक्रवर्तिनः, विमलेषु, अनघेषु, (अपापेष्वितिभावः) (पक्षे) निर्मलेषु, (भास्वरतयासुच्छायेष्वित्यर्थः) साधुषु, सज्जनेषु, रत्नबुद्धिः, रत्नानि एते इति बुद्धिः (ज्ञानमिति भावः) शिला शकलेषु प्रस्तरखण्डेषु, (हीरकादिषु इति भावः) न। परिसंख्याऽलंकारः। **मुक्तेति**—मुक्ताधवलेषु, मौक्तिकवत् विशदेषु, गुणेषु, विद्या विन यादिषु, (पक्षे) मुक्ताभिः धवलेषु, गुणेषु, सूत्रेषु, (मौक्तिक हारे-

गुणेषु प्रसाधनधीः, नाभरणभारेषु। दानवत्सु कर्मसु साधनश्रद्धा, न करिकटेषु। सर्वाग्रेसरे यशसि महाप्रीतिः, न जीवितजरत्तृणे। गृहीतकरास्वाशासु प्रसाधनाऽभियोगः, न निजकलत्रचर्मपुत्रिकासु। गुणवति धनुषि सहायबुद्धिः न पिण्डोपजीविनि सेवकजने। अपि च। अस्य मित्रोपकरणमात्मा, भृत्योप-

ष्वित्यर्थः) प्रसाधनधीः, अलङ्कार बुद्धिः, अथवा, प्रसाधनं, प्रकृष्टम्, अर्जनं, गुणाज्र्जनमेव अर्ज्जनं, (नतुआभरणाज्र्जनमितिभावः) आभरणभारेषु, भारभूतेषु आभरणेषु, (कटककुण्डलादि समूहेषु) न। दानवत्सु, दानयुक्तेषु, (पक्षे) मदयुक्तेषु (दानं गजमदे त्यागे पालनच्छेदशुद्धिषु" मेदिनी) साधनश्रद्धा, निष्पादनानुरागः, (पक्षे) साध्यते अनेन इति साधनं, सैन्यं (सेनाङ्गमितिभावः) तद्विषयिणीश्रद्धा, (सेनाङ्गत्वेन युद्धादि कर्म सम्पादनबुद्धिरित्यर्थः) करिकटेषु, हस्तिगण्डेषु, (मदजलवर्षिष्वित्यर्थः) न। मदमुचां हस्तिनां संग्रहानुरागोनेतिभावः। अग्रेसरे, अग्रगामिने, यशसि, महाप्रीतिः, प्रेम, जीवितजरत्तृणे, जीवने (क्षणभङ्गुरे-इतिभावः) न। गृहीतेति—गृहीतः करः स्वग्राह्योभागः, याभ्यः तथाविधासु (पक्षे) गृहीतः, धृतः करः पाणिः यासां, तासु, आशासु दिक्षु, (चेतसः अनधिगतविषयतृष्णासु वा) प्रसाधनाऽभियोगः, वशीकरणप्रयासः (रञ्जनानुरागो वा) निजेति—निजकलत्राणि, स्वीयभार्याः, (न परकीया इति ध्वनिः) तान्येव चर्म्मपुत्रिकाः, चर्माच्छादितपुत्तलिकाः तासु न। गुणवति, मौर्वीसमन्विते, (पक्षे) विद्याविनयादिसम्पन्ने, पिण्डोपजीविनि, (अन्नदानेन भरणीये इत्यर्थः) सहायबुद्धिः, न। अस्य (हर्षस्येतियावत्) मित्रोपकरणं, सुहृद्रूपं, उपकरणं उपकारकं वस्तु, आत्मा, स्वस्वरूपम्। (आत्मप्रभावेणैव सर्वमसौ संसाधयति, न परमुखमपेक्षते इत्यर्थः)

करणं प्रभुत्वम्, पण्डितोपकरणं वैदग्ध्यम्, बान्धवोपकरणं लक्ष्मीः, कृपणोपकरणमैश्वर्यम्, द्विजोपकरणं सर्वस्वम्, सुकृतसंस्मरणोपकरणं हृदयम्, धर्मोपकरणमायुः, साहसोपकरणं शरीरम्, असिलतोपकरणं पृथिवी, विनोदोपकरणं राजकम्, प्रतापोपकरणं प्रतिपक्षः। नास्याल्पपुण्यैरवाप्यते सर्वातिशायिसुखरसप्रसूतिः पादपल्लवच्छाया' इति। श्रुत्वा च तमेव चन्द्र-

भृत्योपकरणं, भृत्यानामुपकारसाधनं, प्रभुत्वं, प्रभावः (सेवकादीनां दानादिसम्पादनमेवास्य प्रभुत्व फलमितिभावः) पण्डितोपकरणं, पण्डितानामुपकारसाधनं, वैदग्ध्यं विद्यावत्वं, वैचक्षण्यं वा। बान्धवोपकरणं, बान्धवानामुपकारसाधनं, लक्ष्मीः, सम्पत्, (सम्पद्भिः बान्धवा उपक्रियन्ते इतिभावः) कृपणोपकरणं, कृपणानां, दीनानां, उपकरणं, पोषणम्, ऐश्वर्यं। (अस्य ऐश्वर्यं दरिद्राणां दारिद्र्यमोचनार्थमेवेतिभावः) द्विजोपकरणं, द्विजानां, ब्राह्मणानां, उपकरणं, सर्वस्वं, सर्वधनम्, **सुकृतेति**—सुकृतस्य, कृतोपकारस्य, संस्मरणं, तस्य, उपकरणं,उपकारकं, हृदयं, चित्तम् (कृतज्ञोऽयमितिभावः) धर्मोपकरणं, धर्मोपार्जनसाधनं, आयुः, जीवनसमयः (धर्मार्जनायैवजीवितमित्यर्थः)साहसोपकरणं, सहसाप्राग् विविच्य बलेन, क्रियमाणं कर्म साहसं, तस्य उपकरणं, उपकार साधनं, शरीरं। **असीति**—असिलता, खड्गं, तस्या उपकरणं, उपार्जनवस्तु, (खड्गबलेनैवानेन पृथिवी आयत्तीकृता इतिभावः) विनोदोपकरणं, विनोदस्य, प्रीतेः, उपकरणं, राजकं, राजचक्रम्, (अनुगत राज्ञांसाहचर्येणैवायं प्रीतिमनुभवति)। **प्रतापेति**—प्रतापस्य, तेजसः, उपकरणम्, ख्यापनसाधनम्, तस्य प्रतिपक्षः, शत्रुः,। अल्पपुण्यैः, लघुभागधेयैः। **सर्वेति**—सर्वातिशायी, सर्वेभ्यः उत्कर्षवान् यः सुखरसः तस्य प्रसूतिः, उत्पत्तिहेतुः।

सेनं समादिशत्—'कृतकशिपुं विश्रान्तसुखिनमेनं कारय' इति।

अथ गते च तस्मिन्, पर्यस्ते च वासरे, संघट्टमानरक्तपङ्कज-संपुटपीयमाने इव क्षयिणि क्षामतां व्रजति बालवायसास्यारुणेऽपराङ्मुखातपे, शिथिलितनिजवाजिजवे जपापीडपाटलेऽस्ताचलशिखरस्खलिते खञ्जतीव कमलिनीकण्टकक्षतपादपल्लवे पतंगे, पुरः परापतति प्रेङ्खदन्धकारलेशलम्बालके शशिविरह-

पादपल्लवच्छायाः, पादपल्लवस्य, चरणकिसलयस्य छाया, अनातपः, (आश्रय, इत्यर्थः) कृतकशिपुम्, रचितशयनम्, वा सम्पादितभोजना-च्छादनव्यापारम्,पर्यस्ते, अवसिते। **संघट्टेति**—सङ्घट्टमानः, सम्मीलन् यः रक्तपङ्कजसम्पुटः, रक्तकमलसम्पुटः, तेन पीयमाने इव ग्रस्यमाने इव। क्षयिणि, क्षयोन्मुखे, क्षामतां, क्षीणतां, व्रजति, गच्छति। **बालेति**—बालः, सद्योजातः, यः वायसः, काकः, तस्य आस्यानं, मुखं तद्वत् अरुणे, रक्ते। **परेति**—पराङ्मुखाः, प्रतिकूलाः, आतपाः, मयूखाः, यस्य तथोक्ते। **शिथिलेति**—शिथिलितः, मन्दः, निजवाजिनाम्, स्वाश्वानां, जवः, वेगो यस्मिन् तथोक्ते। **जपेति**—जपा, सूर्यप्रियकुसुमभेदः, तस्य आपीडः, स्तबकः, तद्वत् पाटले, रक्ते अस्ताचलशिखरस्खलिते, पश्चिम-गिरिचूडावलम्बिनि। खञ्जतीव, खञ्जइवाचरतीव। **कमलिनीति**—कम-लिन्याः, पद्मिन्याः, कण्टके, क्षतः, विद्धः, पादपल्लवः, चरणकिस-लयः यस्य तथाभूते पतङ्गे, सूर्ये। पुरः, पूर्वस्यांदिशि, परापतति, आगच्छति। **प्रेङ्खदिति**—प्रेङ्खन्तः, आविर्भवन्तः, अन्धकारलेशाः, तिमिरबिन्दवः एव लम्बाः, अलकाः, चूर्णकुन्तलाः यस्मिन् तथा भूते। **शशीति**—शशिनः, चन्द्रस्य विरहेण, विच्छेदेन, यः शोकः तेन श्यामे, मलिने इव श्यामा, रात्री तस्याः मुखे, प्रारम्भे। अत्र श्यामा स्त्री मुखे, च, वदने, (पतिविच्छेददुःखेन श्यामामुखोऽपि मलिनो भवति

शोकश्याम इव श्यामामुखे, कृतसंध्योपासनः शयनीयमगात् । अचिन्तयच्चैकाकी—'किं करोमि । अन्यथा संभावितोऽस्मि राज्ञा । निर्निमित्तबन्धुना च संदिष्टमेवं कृष्णेन । कष्टा च सेवा । विषमं च भृत्यत्वम् । अतिगम्भीरं महद्राजकुलम् । न च तत्र मे पूर्वजप्रवर्तिता प्रीतिः, न कुलक्रमागता गतिः, नोपकारस्मरणानुरोधः, न बालसेवास्नेहः, न गोत्रगौरवम्, न पूर्वदर्शनदाक्षिण्यम्, न प्रज्ञासंविभागोपप्रलोभनम्, न विद्यातिशयकुतूहलम्, नाकारसौन्दर्यादरः, न सेवाकाकुकौशलम्, न विद्वद्गो-

(इति रूपकालंकारः) कृतेति—कृतसन्ध्योपासनः, विहितसायंकालिककर्म, शयनीयम्, शयनागारम् । एकाकी, अद्वितीयः । अन्यथा, विरुद्धप्रकारेण, सम्भावितः, तर्कितः, निर्निमित्तबन्धुना, अकारणमित्रेण । कष्टा, कष्टकारी । भृत्यत्वम्, भृत्यभावः, विषमम्, असहनीयम् । अतिगम्भीरम्, दुर्ज्ञेयस्वभावम् । **पूर्वजेति**—पूर्वजैः, पितृभिः, प्रवर्तिता, जनिता प्रीतिः, प्रणयः । कुलक्रमागता, वंशपरम्परागता । उपकारस्मरणानुरोधः, राजकुलेन कदाचित् मयोपकारः कृतः तस्य स्मरणं तदनुरोधः । बालसेवास्नेहः, बाल्यात्प्रभृतिसेवानिमित्तं ममत्वम् । गोत्रगौरवम्, कुलसम्माननम् । पूर्वदर्शनदाक्षिण्यम्, पूर्वं, दर्शनं, साक्षात्कारः, तेन दाक्षिण्यं, सारल्यम् । **प्रज्ञेति**—प्रज्ञायाः, बुद्धेः, संविभागः, समालोचनम्, तस्य उपलोभनम्, लोभो पापसन्धानम् । विद्यातिशयकुतुहलम्, मे विद्या अतिशायिनी भविष्यति इति कुतुहलम्, कौतुकम् । नाकारसौन्दर्यादरः, आकारस्य, अवयवस्य, सौन्दर्ये आदरः, सम्मानः । सेवाकाकुकौशलम्, सेवायां, काकुः, ध्वनिविकारः तस्य कौशलं, पाटवम् । **विद्वदिति**—विदुषां, गोष्ठी, समाजः तस्याः बन्धे, आयत्तीकरणे वैदग्ध्यं, नैपुण्यम् न । वित्तव्यय-

ग्रीबन्धवैदग्ध्यम्, न वित्तव्ययवशीकरणम्, न राजवल्लभपरिचयः। अवश्यं गन्तव्यम्। सर्वथा भगवान्पुरारातिर्भुवनगुरुर्गतस्य मे सर्वं सांप्रतमाचरिष्यति' इत्यवधार्य गमनाय मतिमकरोत्।

अथान्यस्मिन्नहन्युत्थाय, प्रातरेव स्नात्वा, धृतधवलदुकूलवासाः, गृहीताक्षमालः, प्रास्थानिकानि सूक्तानि मन्त्रपदानि च बहुशः समावर्त्य, देवदेवस्य विरूपाक्षस्य क्षीरस्नपनपुरःसरां सुरभिकुसुमधूपगन्धध्वजबलिविलेपनप्रदीपकबहलां विधाय पूजाम्, परमया भक्त्या प्रथमहुततरलतिलत्वग्विचटनचटुल-

वशीकरणम्, वित्तस्य, धनस्य, व्ययः तस्य वशीकरणम्, वाध्यता न। (अस्तीति शेषः) राजसेवायां प्रचुरं वित्तं लभ्यते ममापितस्य व्ययं आवश्यकं इति। राजवल्लभः, राजप्रियः, तस्य परिचयः, परिचितिः। पुराराति—त्रिपुरारिः, भुवनगुरुः, लोकगुरुः, महादेवः। अवधार्य, विचिन्त्य। धृतधवलदुकूलवासाः, परिहित शुभ्रपट्टवसनः। गृहीताक्षमालः, जपमालाधारी। प्रस्थानिकानि, प्रस्थानकाले वक्तव्यानि। सूक्तानि, वेदमन्त्रभागानि। बहुशः, वारम्वारम्। समावर्त्य पठित्वा। देवदेवस्य, महादेवस्य। विरूपाक्षस्य, त्रिलोचनस्य। क्षीरेति—क्षीरेण, दुग्धेन, स्नपनं स्नानं, पुरःसरां, पूर्वं यस्याः ताम्। सुरभिति—सुरभीणि, सुगन्धीनि, कुसुमानि पुष्पाणि, धूपाः, गन्धाः, ध्वजाः, पताकाः, बलिविलेपनानि, पूजार्थविलेपनद्रव्याणि, तैः बहला भूयिष्ठा ताम्। **प्रथमेति**—प्रथमं, प्राक् हुतानां, देवोद्देशेनप्रक्षिप्तानाम् तरलानां, चपलानाम्, तिलानां त्वचः, आवरणानि, तासां विघटनेन, विसरणेन चटुलाः, चंचलाः, अत एव मुखराः पटत्पटदिति शब्दं कुर्वाणाः, शिखाः, ज्वालाः, शेखराणि, शिर आभरणानि यस्य तम्।

मुखरशिखाशेखरं प्राज्याज्याहुतिप्रवर्धितदक्षिणार्चिषं भगवन्तमाशुशुक्षणिं हुत्वा, दत्वा द्युम्नं यथाविद्यमानं द्विजेभ्यः, प्रदक्षिण कृत्य प्राङ्मुखीं नैचिकीम्, शुक्लांगरागः शुक्लमाल्यः, शुक्लवासाः, रोचनाञ्चितदूर्वाग्रपल्लवग्रथितगिरिकर्णिकाकुसुमकृतकर्णपूरः, शिखासक्तसिद्धार्थकः, पितुः कनीयस्या स्वस्रा मात्रेव स्नेहार्द्रहृदयया श्वेतवाससा साक्षादिव भगवत्या महाश्वेतया मालत्याख्यया कृतसकलगमनमंगलः, दत्ताशीर्वादो बान्धववृद्धाभिः, अभिनन्दितः परिजनजरतीभिः, वन्दितचरणैरभ्यनुज्ञातो गुरुभिः, अविवादितैराघ्रातः शिरसि कुलवृद्धैः, वर्धितगमनोत्साहः शकुनैः, मौहूर्तिकमतेन कृतनक्षत्रदोहदः, शोभने मुहूर्ते

प्राज्येति— प्राज्याहुतिभिः,प्रचुरघृताहुतिभिः, प्रवर्द्धिताः, वृद्धिं नीताः, दक्षिणादक्षिणादिग्वर्तिन्यः अर्चिषः, शिखायस्य तथोक्तम् । आशुशुक्षणिम्, अग्निम । (पावकोऽनलः रोहिताश्वो वायुसखा शिखावानाशुशुक्षणिः इत्यमरः । द्युम्नम्—धनम्, (द्युम्नं वित्ते त्रिलेऽपि च इति मेदनी) नैचिकीं, गाम्, (उत्तमागोषु नैचिकी इत्यमरः) शुक्लाङ्गरागः, श्वेतचन्दनदिग्धस्नेहः । रोचनेति—रोचनया, गोरोचनाख्यमांगल्यद्रव्येण, अञ्चिताः, रञ्जिताः दूर्वाणां, कुशानाम्, अग्रपल्लवाः तैः ग्रन्थितं, गुम्फितम्, यत् गिरिकर्णिकाकुसुमम्, अश्वखुरीनाम मांगलिकी औषधिः, तस्याः, पुष्पं, तेन कृतः, रचितः, कर्णपूरः कर्णभूषणं येन तथोक्तः । शिखेति—शिखासु, चूडासु, सक्ताः, लग्नाः, सिद्धार्थकाः, श्वेतसर्षपाः यस्य तथा भूतः । स्वस्रा, भगिन्या । श्वेतवाससा धवलवसनया । महाश्वेतया, सरस्वत्या । कृतेति—कृतम्, अनुष्ठितम्, सकलं, गमनाय मंगलं यस्य तथोक्तः । दत्ताशीर्वादः, वितरिताशिः, परिजनजरतीभिः, परिजनेषु या जरत्यः, स्थविराः ताभिः । आघ्रातः,

हरितगोमयोपलिप्ताजिरस्थण्डिलस्थापितमसितेतरकुसुममाला-परिक्षिप्तकण्ठं पिष्टपञ्चाङ्गुलपाण्डुरं मुखनिहितनवचूतपल्लवं पूर्णकलशमुदीक्षमाणः, प्रणम्य कुलदेवताभ्यः कुसुमफलपाणिभिरप्रतिरथं जपद्भिर्निजद्विजैरनुगम्यमानः, प्रथमचलितदक्षिणचरणः, प्रीतिकूटान्निरगात् ।

प्रथमेऽहनि घर्मकालकष्टं निरुदकं निष्पत्रपादपविषमं-

शिरसि चुम्बिनः । शकुनैः, सुनिमित्तभूतपक्षिभिः, **मुहूर्त्तिकेति**— मुहूर्त्तं जानन्ति इति मौहूर्तिकाः, गणकाः इत्यर्थः, (दैवज्ञगणकावपि-स्युर्मौहूर्तिक इत्यमरः) तेषां मतेन, अभिप्रायेण । **कृतेति**—कृतम्, नक्षत्रेषु, अश्विन्यादिषु दोहदम्, अनुरागविशेषः येन तथोक्तः । शोभनेमुहूर्ते, शुभघटिकायाम, **हरितेति**—हरितेन, अशुष्केण, गोमयेन, गव्येन, उपलिप्तम्, प्रलिप्तम्, यत् अजिरम्, अंगणम्, तदेव स्थण्डिलं, परिष्कृताभूमिः, तत्र स्थापितः तम् । **असितेति**—असितेतराभिः, श्वेताभिः, कुसुममालाभिः, परिक्षिप्तः, परिवेष्टितः, कण्ठः, यस्य तथोक्तम् । **पिष्टेति**—पिष्टानां, "पिटिली" इति प्रसिद्धानां मांगलिक द्रव्याणां पंचांगुलं, पंचांगुलाकारः प्रसाधनविशेषः, तेन पाण्डुरः, शुभ्रः (पंचांगुल गृहीतपिष्टेन चित्रित इति भावः) तम् । **मुखेति**—मुखे, कलसस्येतिशेषः, निहितः, अर्पितः, नवः चूतपल्लवः, आम्रपल्लवः यस्य तथोक्तम् पूर्णकलसम्, भरितकुम्भम्, उदीक्ष्यमाणः, पश्यन् । अप्रतिरथम्, नास्तिप्रतिरथः, प्रतिद्वन्दी यत्र तद् । जपद्भिः, बाणस्पर्द्धीकोऽपिमाभूत्, इति मंत्रं जपद्भिः, निजद्विजैः, स्वकीयैः, ब्राह्मणैः । अनुगम्यमानः, प्रथमं, पूर्वं चलितः, दक्षिणचरणः, वामेतरपादः यस्य सः । प्रीतिकूटात्, एतन्नाम नगरात्, निरगात् ।

प्रथमेति—मल्लकूटनामानं ग्राममगात् इत्यनेनान्वयः । प्रथमेऽहनि,

पथिकजननमस्क्रियमाणं,प्रवेशपादपोत्कीर्णकात्यायनीप्रतियातनं, शुष्कमपि पल्लवितमिव तृषितश्वापदकुललम्बितलोलजिह्वालतासहस्रैः पुलकितमिवाच्छभल्लगोलाङ्गूललिह्यमानमधुगोलचलितसरघासंघातैः, रोमाञ्चितमिव दग्धस्थलीरूढस्थूलाभीरुकन्दलशतैः, शनैश्चण्डिकाकाननमतिक्रम्य मल्लकूटनामानं ग्राममगात्। तत्र च हृदयनिर्विशेषेण भ्रात्रा सुहृदा च जगत्पतिनाम्ना संपादितसपर्यः सुखमवसत्। अथापरेद्युरुत्तीर्य भगवतीं

आदिमेदिवसे। **घर्मेति**—घर्म्मकाले, ग्रीष्मावसरे कष्टं, दुःखं यत्र तत्। निरुदकं, जलहीनम्। **निष्पत्रेति**—निष्पत्रैः, पत्ररहितैः, पादपैः, तरुभिः, विषमं, कठोरम्। (छायाहीनाद् दुःखगाहम्) **पथिकेति**—पाथिकैः, पान्थजनैः, नमस्क्रियमाणां, प्रणम्यमानम्। **प्रवेशेति**—प्रवेशे, प्रवेशनारम्भे यः पादपः, तरुः तत्र उत्कीर्णा, खोदिता कात्यायन्याः, दशभुजायाः, प्रतियातना, प्रतिकृतिः, यत्र तथोक्तम्। शुष्कमपि नीरसमपि। **पल्लवेति**—पल्लवितमिव, पत्रवदिव, तृषितैः, पिपासितैः, श्वापदकुलैः, हिंस्रजन्तुसमूहैः, लम्बितानि, बहिष्कृतानि, लोलानां, चपलानां, जिह्वालतानां, रसनावल्लीनां, सहस्राणि यैः, "इत्युत्प्रेक्षा" पुलकितमिव, रोमाञ्चितमिव, **अच्छेति**—अच्छभल्लैः, भल्लूकैः, गोलांगूलैः, कपिभेदैः, (लंगूर इति ख्यातैः) लिह्यमानानि आस्वाद्यमानानि, यानि मधुगोलानि, मधुचक्राणि, तेभ्यः चलितानाम्, उड्डीयमानानां, सरघाणां, मधुमक्षिकाणां, संघातैः, समूहैः। रोमाञ्चितमिव। **दग्धेति**—दग्धासु, भस्मीकृतासु, स्थलीषु, उषरभूमिषु, रूढानां, जातानाम्, अभीरूणां, शतावरीनामौषधविशेषाणां, कन्दलशतैः,नवाङ्कुरसमूहैः। पूर्वेणान्वयः। हृदयनिर्विशेषेण,हृदयात् निर्विशेषः, अभिन्नः तेन, सम्पादितसपर्य्यः, अनुष्ठितसत्कारः।

भागीरथीं यष्टिगृहकनाम्नि वनग्रामके निशामनयत्। अन्यस्मिन्दिवसे स्कन्धावारमुपमणितारमन्वजिरवति कृतसंन्निवेशमाससाद। अतिप्रच्च नाति दूरे राजभवनस्य।

निर्वर्तितस्नानाशनव्यतिकरो विश्रान्तश्च मेखलकेन सह सह याममात्रावशेषे दिवसे भुक्तवति भूभुजि प्रख्यातानां क्षितिभुजां बहूञ्शिबिरसन्निवेशान्वीक्षमाणः शनैः शनैः पट्टबन्धार्थमुपस्थापितैश्च, डिण्डिमाधिरोहणायाहृतैश्चाभिनवबद्धैश्च, विक्षेपोपार्जितैश्च, कौशलिकागतैश्च, नागवीथीपालप्रेषितैश्च, प्रथम-

---

स्कन्धावारम्, सेना निवेशार्थरचितपटमण्डपादिरूपम्। उपमणितारम्, मणितारारव्यपत्तनसमीपे। अन्वजिरवति—अजिरवती नाम नदी तामनु, अन्वजिरवति। कृतसन्निवेशं, कृतस्थितिम्। आससाद, प्राप। निर्वर्तितेति—निर्वर्तितः, कृतः, स्नानाशनयोः, स्नानभोजनयोः, व्यतिकरः विधिः येन तथोक्तः। विश्रान्तः, कृतविश्रामः। मेखलकेन, एतन्नामपत्रवाहकेन। याममात्रावशेषे, प्रहरमात्रावशिष्टे। भूभुजि, राजनि। प्रख्यातानां, प्रसिद्धानाम्। क्षितिभुजां, महिभुजाम्। शिवरसंनिवेशान्, पटमण्डपानि। वीक्षमाणः, पश्यन्। पट्टबन्धार्थम्, सिंहासनमण्डप रचनार्थम्। उपस्थापितैः, आनीतैः। डिण्डिमाधिरोहणाय, पटहस्थापनाय, गजस्योपरि इति भावः। विक्षेपेति—विक्षेपेण, प्रेरणेन, नृपवृन्दैः उपायनार्थमितिभावः। उपार्जिताः, लब्धाः तैः। कौशलिकम्, नैपुण्यम्, आगतैः, प्राप्तैः। नागेति-नागवीथी, गजोत्पत्तिभूमिः, तस्याः पालः, रक्षकः, तेन प्रेषितैः, प्रेरितैः। प्रथमेति—प्रथमं, प्राक् यत् दर्शनम्, अवलोकनम्, तस्मिन् यत् कुतूहलम्, कौतुकम्, तेन, उपनीतैः, प्राप्तैः। दूतेति—दूतानां, राजवार्तावहानां, सम्प्रेषणेन, प्रेरणेन, प्रेषितैः। पल्लीति—पल्ली, व्याधानां,

दर्शनकुतूहलोपनीतैश्च, दूतसंप्रेषणप्रेषितैश्च, पल्लीपरिवृढढौकितैश्च स्वेच्छायुद्धक्रीडाकौतुकाकारितैश्च, दीयमानैश्चाच्छिद्यमानैश्च, मुच्यमानैश्च, यामस्थापितैश्च, सर्वद्वीपजिगीषया गिरिभिरिव सागरसेतुबन्धनार्थमेकीकृतैर्ध्वजपटपटुपटहशङ्खचामराङ्गरागरमणीयैः, पुष्याभिषेकदिवसैरिव कल्पितैर्वारणेन्द्रैः श्यामायमानम्, अनवरतचलितखुरपुटप्रहतमृदङ्गैर्नर्तयद्भिरिव राजलक्ष्मी-

---

क्षुद्रग्राम, तस्य परिवृढः, अधिपः, तेन ढौकितैः, प्रेषितैः। **स्वेच्छेति**—स्वेच्छया, निजेच्छया, राज्ञ इति भावः। या युद्धक्रीडा तस्याम् यत्कौतुकम्, औत्सुक्यम्, तेन आकारितैः, आहूतैः **दीयमानेति**—दीयमानैः, राजभिः, उपढौक्यमानैः। आच्छिद्यमानैः, अपसार्यमाणैः। मुच्यमानैः, बन्धनात् इति भावः। यामस्थापितैः, प्रहरकालावस्थितैः। **सर्वेति**—सर्वे, सकलाः, द्वीपाः, देशाः, तेषां जिगिषया, जेतुमिच्छया। **सागरेति**—सागरस्य, समुद्रस्य सेतुः, पुलम्, तद्बन्धनार्थम् गिरिभिरिव, पर्वतैरिव। एकीकृतैः, एकत्रानीतैः। **ध्वजेति**—ध्वजपटाः, पताकाः, पटवः, गम्भीरनादाः, पटहाः, ढक्काः, शंखाः, चामराणि, बालव्यजनानि, अङ्गरागाश्च, विलेपनद्रव्याणि च तैः रमणीयैः, सुदर्शनैः। पुष्याभिषेकदिवसैरिव, (पुष्यनक्षत्रयुक्तेदिने मङ्गलालङ्कृतः स्नाति तत्र ध्वजादिरम्यवस्तूनि सज्जीक्रियन्ते तादृशैः दिनैरिव) कल्पितैः, सज्जितैः, वारणेन्द्रैः, गजेन्द्रैः, श्यामायमानम्, श्यामा, निशा तद्वत् आचरतीति तथोक्तम्। **अनवरतेति**—अनवरतं, निरन्तरम्, चलितं यत् खुरपुटम्, शफाग्रम्, तेन प्रहतानि, ताडितानि, मृदः, मृत्तिकायाः, अङ्गानि, अवयवानि, यैः तथोक्तैः, नर्तयद्भिरिव, नृत्यं कारयद्भिरिव। (तत्रापि वाद्यविशेषाः मृदंगाः ताडिताः भवन्ति) **सृक्केति**—सृक्कपुटम्, ओष्ठप्रान्तम्, (प्रान्तावौष्ठस्य सृक्कणी "इत्य-

मुपहसद्भिरिव सृक्कपुटप्रसृतफेनाट्टहासेन जवजडजङ्घां हरिण-जातिमाकारयद्भिरिव संघट्टहेतोर्हर्षहेषितेनोच्चैः श्रवसमुत्पतद्भि-रिव दिवसकररथतुरगरुषा, पल्लवायमानमण्डनचामरमालैर्गगन-तलं तुरंगैस्तरंगायमाणम्, अन्यत्र प्रेषितैश्च प्रेष्यमाणैश्च, प्रेषि-तप्रतीपनिवृत्तैश्च, बहुयोजनगमनगणनसंख्याऽक्षरावलीभिरिव वराटिकाऽऽवलीभिर्घटितमुखमण्डनकैस्तारकितैरिव संध्याऽऽतप-च्छेदैररुणचामरिकारचितकर्णपूरैः सरक्तोत्पलैरिव रक्तशालिशाले-

मरः) तस्मात् प्रसृतः, निसृतः, यः फेनः स एवाट्टहासः, हास्यविशेषः तेन। जवेति—जवे, वेगे, जडा, गन्तुमसमर्था, जङ्घा, यस्याः ताम् हरिणजातिं, मृगजातिम्, आकारयद्भिरिव, आह्वयमानैरिव। संघ-ट्टेति—संघट्टहेतोः, परस्परसम्मेलनहेतोः। दिवसकरस्य, सूर्यस्य ये रथतुरगाः, स्यन्दनाश्वाः, तेभ्यः, रुट्, क्रोधः, तया, गगनतलं, नभ-स्तलम्, समुत्पतद्भिरिव, उड्डीयमानद्भिरिव, पल्लेति—पल्लववदाचर-न्तीति, पल्लवायमानाः याः मण्डनचामरमालाः, भूषणार्थधृतचामररा-जयः, येषां तैः। तरंगायमानम्, तरंगवदाचरतीति तथोक्तम्। साम्प्रतम् क्रमेलककुलैः कपिलायमानं राजद्वारमिति विशिनष्टि। अन्यत्र-अन्यस्मिन् प्रदेशे, प्रेषितैः, प्रेरितैः। प्रेष्यमाणैः, प्रेर्य्यमाणैः प्रेषितप्रतिनिवृत्तैः, प्रथमं प्रेषिताः पश्चात् प्रतिनिवृत्तैः। बह्विति—बहूनि योजनानि यद्गमनं, तस्य गणना, संख्या तस्याम्, अक्षरावलीभिः, गणनचिह्नभूताङ्कैः। वराटिकावलीभिः—कपर्दिकाभिः। घटितेति—घटितं, खचितम्, मुखमण्डनकं, वदनभूषणं येषां तैः तारकितैरिव, प्रकटिततारामण्डलैरिव। सन्ध्या-शायंमुखम्, तस्याऽऽतपच्छेदैः, आत-पखण्डैः। अरुणेति—अरुणाः,रक्ताः,याः चामरिकाः, ताभिः रचिताः, खचिताः कर्णपूराः, कर्णाभरणाः येषां तैः सरक्तोत्पलैरिव, अरुण-

यैरनवरतझणझणायमानचारुचामीकरघुरुघुरुकमालिकैर्जरत्कर-श्रवनैर्विरणितशुष्कबीजकोशीशतैः, श्रवणोपान्तप्रेङ्खत्पञ्चराग-वर्णोर्णाचित्रसूत्रजूटजटाजालैः कपिकपोलकपिलैः क्रमेलककुलैः कपिलायमानम्, अन्यत्र शरज्जलधरैरिव सद्यः स्नुतपयः पटल-धवलतनुभिः, कल्पपादपैरिव मुक्ताफलजालकजायमानाऽऽलोक-लुप्तच्छायामण्डलैर्नारायणनाभिपुण्डरीकैरिवाश्लिष्टगरुडपत्रैः,

---

कमलवद्भिरिव। रक्तानां, शालीनां, धान्यानां, शालेयाः, क्षेत्राणि तैः। **अनवरतेति**—अनवरतं, निरन्तरम्, झणझणायमानैः, एतच्छब्दं कुर्वद्भिः, चारुभिः चामीकरैः, सुवर्णैः (घटिता इति शेषः) घुरुघुरुकाः, एतच्छब्दक्रियमाणाः मालाः येषां तैः। जरत्करश्रवनैः, जीर्ण-कमलकाननैरिव। रणितेति—रणितानि यानि शुष्कबीजानि येषां, केशीनां, पद्मानां शतैः शतसंख्याकैः। श्रवणयोः कर्णयोः, उपान्तेषु, प्रान्तेषु, प्रेङ्खन्ति, चलन्ति, पंचभिः, पंचविधैः रागैः, वर्णैः, रचिता याः उर्णाः, मेषादीनां लोमानि ताभिः चित्राणि, मनोज्ञानि, सूत्र-जूटा इव जटाजालानि केशवृन्दानि येषां तैः। कपिकपोलकपिलैः, वानरगण्डस्थलवत् पिङ्गलैः। क्रमेलककुलैः, उष्ट्रवृन्दैः। कपिलायमानम् पिङ्गलायमानम्। अन्यत्र—अन्यस्मिन्देशे आतपपत्रखण्डैः श्वेतद्वीपा-यमानम् इति राजद्वारं विशिनष्टि, शरज्जलधरैरिव, शरत्कालमेघैरिव। **सद्य इति**—सद्यः तत्क्षणम्, स्नुतानां, क्षरितानाम्, पयसां, दुग्धा-नाम्, पटलवत्, राशिवत् धवलम्, शुभ्रम् तनुः, येषां तथाविधैः (पक्षे) सद्यः स्नुतैः, अचिर निर्गलितैः, पयसां, जलानां पटलैः समूहैः, धवलाः श्वेताश्च ते तनवः तथा भूतैः कल्पपादपैरिव, सुरतरुभिरिव **मुक्तेति**—मुक्ताफलानां, मौक्तिकानाम्, जालकैः, मालाभिः, जाय-मानः, उत्पद्यमानः, यः आलोकः, प्रभा, तेन लुप्तं, छिन्नम् यत्

क्षीरोदोद्देशैरिव द्योतमानविकटविद्रुमदण्डैः, शेषफणाफलकैरिव उपरिस्फुरत्स्फीत माणिक्यखण्डैः, श्वेतगंगापुलिनैरिव राजहंसोपसेवितैरभिभवद्भिरिव निदाघसमयमुपहसद्भिरिव विवस्वतः प्रतापमापिबद्भिरिवातपं चन्द्रलोकमयमिव जीवलोकं जनयद्भिः कुमुदमयमिव कालं कुर्वद्भिर्ज्योत्स्नामयमिव वासरं विरचयद्भिः फेनमयीमिव दिवं दर्शयद्भिरकालकौमुदीसहस्राणीव

छायामण्डलम्, अनातपसमूहः यैः तैः (पक्षे) मुक्ताफलानां जालकैः, कल्पवृक्षप्रसूतैः मौक्तिकैः, अन्यत्रसामान्यम्। नारायणस्य विष्णोः, नाभिपुण्डरीकैः, नाभिजश्वेतकमलैरिव, आश्लिष्टाः,संलग्नाः, गरुडपक्षाः, रत्नविशेषाः (अन्यत्र) गरुडपक्षिणः यत्र तैः। क्षीरोदोद्देशैरिव, क्षीरसागरविभागैरिव। द्योतेति-द्योतमानाः,दिप्यमानाः,विकटाः,विषमाः,विद्रुमदण्डाः, प्रवालद्रुमाः यत्र तैः शेषफणाफलकैरिव, उपरीति—उपरि, शिखरदेशे, स्फुरत् दीप्यमानम्, स्फीतम् स्थूल माणिक्यखण्डम्, येषां तैः (पक्षे) उपरि-फणाया उपरिभागे, स्फुरत् स्फीतं माणिक्यखण्डम्, येषु तैः। श्वेतगङ्गापुलिनैरिव, धवलगंगासैकतदेशैरिव। राजहंसेति—राजानो हंसा इव तैः नृपोत्तमैः, (पक्षे) हंसविशेषैश्च। उपसेवितानि, व्यवहृतानि; चरितानि च तैः। निदाघसमयं, ग्रीष्मकालम्, अभिभवद्भिरिव, जयद्भिरिव, (आतपनिवारणात्) विवस्वतः, सूर्यस्य, प्रतापं प्रभावम्, उपहसद्भिरिव (सर्वतसूर्यदर्शनाभावात्) चन्द्रलोक मयमिव जीवलोकम्, मनुष्यलोकम्, जनयद्भिः, उत्पादयद्भिः (तस्यातिधावल्यात्) कुमदमयमिव, कैरवमयमिव कालं,समयं कुर्वद्भिः सम्पादयद्भिः। ज्योत्स्नामयमिवकान्तिमयमिव, वासरं, दिनं विरचयद्भिः, कुर्वद्भिः। फेनमयीमिव, दिवम्, अन्तरीक्षम् दर्शयद्भिः, आलोकयद्भिः। अकालकौमुदीसहस्राणीव,कौमुदीसहस्राणि,चन्द्रिकासमूहान्,सृजद्भिः,

सृजद्भिरुपहसद्भिरिव शातक्रतवीं श्रियं श्वेतायमानैरातपत्रखण्डैः श्वेतद्वीपायमानम्, क्षणदृष्टनष्टाष्टदिङ्मुखं च मुष्णद्भिरिव भुवनमाक्षेपोत्क्षेपदोलायितं दिनं गतागतानीव कारयद्भिरुत्सारयद्भिरिव कुनृपतिकलङ्ककालीं कालेयीं स्थितिं, विकचविशदकाशवनपाण्डुरदिशं शरत्समयमिवोपपादयद्भिर्विसतन्तुमयमिवान्तरिक्षमाविर्भावयद्भिः शशिकरशुचीनां चलतां चामराणां सहस्रैर्दोलायमानम्, अपि च हंसयूथायमानं करिकर्णशङ्खैः, कल्पलतावनायमानं कदलिकाभिः, माणिक्यवृक्षकवनायमानं मायू-

---

उत्पादयद्भिः, शातक्रतवीं, ऐन्द्रीं, श्रियम्, सम्पदम्, उपहसद्भिरिव। श्वेतायमानैः, श्वेतइव आचरन्ति तैः, आतपत्रखण्डैः, छत्रनिवहैः, श्वेतायमानम्। चामराणां सहस्रैः, दोलायमानमिति विशिनष्टि। क्षणेति—क्षणेन, दृष्टं नष्टं च, अष्टानां, दिशां, मुखानि यस्य तादृशम्, भुवनम्, लोकम्, मुष्णद्भिरिव, हरद्भिरिव। आक्षेपेति—आक्षेपः, प्रसारणम्, उत्क्षेपः, ऊर्द्ध्वक्षेपणम् ताभ्यां दोलायितम् दिनं, दिवसम् गतागतानि, यातायातानि, कारयद्भिरिव। कुनृपेति—कुनृपाः, एव कलङ्काः, अपवादाः, तैः, काली, मलिना तां कालेयीं, कलिसम्बन्धिनीं, स्थितिं, मर्यादाम्, उत्सारयद्भिरिव, अपनयद्भिरिव। विकचेति—विकचैः, स्फुटैः अतएव विशदैः, काशवनैः, काशनामतृणविशेषैः, पाण्डुराः, धवलाः, दिशो यत्र तथा भूतम् शरत्समयम्, शरत्कालम्, उत्पादयद्भिरिव। विषतन्तुमयम्, मृणालसूत्रमयम्, अन्तरीक्षं, गगनतलम्, आविर्भावयद्भिरिव प्रकटयद्भिरिव। शशिनः, चन्द्रस्य कराः, किरणा इव शुचीनि, स्वच्छानि तेषाम्, पूर्वेणान्वयः। करिकर्णशङ्खैः, हस्तिकर्णेषु भूषणार्थं, विन्यस्तशङ्खैः। हंसयूथायमानम्, हंससमूहमिवाचरन्तम्। कदलिकाभिः, पताकाभिः, (रम्भावृक्षेथकदली पताका-

रातपत्रैः, मन्दाकिनीप्रवाहायमाणमंशुकैः, क्षीरोदायमानं क्षौमैः कदलीवनायमानं मरकतमयूखैः, जन्यमानान्यदिवसमिव पद्म-रागबालातपैः, उत्पद्यमानापराम्बरमिवेन्द्रनीलप्रभापटलैः, आर-भ्यमाणापूर्वनिशमिव महानीलमयूखान्धकारैः, स्यन्दमानानेक-कालिन्दीसहस्रमिव गरुडमणिप्रभाप्रतानैः, अंगारांकितमिव पुष्परागरश्मिभिः, कैश्चित्प्रवेशमलभमानैरधोमुखैश्चरणनखपति-

मृगभेदयोः) कल्पलतावनायमानम्, कल्पद्रुमवनमिव आचरन्तम्। मयूरातपत्रैः, मयूरपिच्छनिर्मितच्छत्रैः। माणिक्यवृक्षकाणाम्, माणि-क्यभूषित क्षुद्रतरूणाम्। वनायमानम्, काननायमानम्। अंशुकैः, वसनविशेषैः, मन्दाकिनी गंगा, तस्याः प्रवाहमिवाचरति, इति तथो-क्तम् क्षीरोदः, क्षीरसागरः सइवाचरतीति, क्षौमैः, श्वेतपट्टवसनैः। मरकतमयूखैः, हरिन्मणिकिरणैः। कदलीवनायमानम्, रम्भावनाय-मानम्, पद्मरागाणाम्, पद्माख्यरत्नानाम्, बालातपाः, अरुणालोकाः, तैः, जन्यमानः, उत्पद्यमानः, अन्यः दिवसः तमिव। इन्द्रनीलानाम्, मणिविशेषाणाम्, प्रभापटलैः, कान्तिनिचयैः, उत्पद्यमानम्, जन्य-मानम्, अपराम्बरमिव, अन्यद्गगनमिव। गरुडेति—गरुडमणी-नाम्, रत्नविशेषाणाम्, प्रभाप्रतानैः, कान्तिप्रतानैः। पुष्परागाणाम्, पद्मरागाणाम्, रश्मिभिः, किरणैः, अंगारांकितमिव, अग्निस्फुलिंगा-ङ्कितमिव। कैश्चिदित्यारभ्यः शत्रुमहासामन्तैः, समन्तादासेव्यमान-मिति विशिनष्टि। कैश्चित्, कतिपयैः, प्रवेशमलभमानैः, प्रवेशमप्राप्नु-वद्भिः। अतएव अधोमुखैः, अवनतवदनैः। चरणेति—चरणेषु, पादेषु, नखाः तत्र पतितानाम्, वदनप्रतिबिम्बानाम्, मुखच्छायानाम्, निभेन, व्याजेन, लज्जया, व्रीडया, स्वांगानीव, स्वशरीराणीव विशद्भिः, नदन्तलीयमानैः। कैश्चित्, कतिपयैः, अंगुलीति, अंगुलिभिः, लिखि-

तवदनप्रतिबिम्बनिभेन लज्जया स्वांगानीव विशद्भिः कैश्चिदङ्गुली-लिखितायाः क्षितेर्विकीर्यमाणकरनखकिरणकदम्बकव्याजेन सेवाचामराणीवार्पयद्भिः कैश्चिदुरःस्थलदोलायमानेन्द्रनीलतरल-प्रभापट्टैः स्वामिप्रकोपप्रशमनाय कण्ठबद्धकृपाणपट्टैरिव कैश्चि-दुच्छ्वाससौरभभ्राम्यद्भ्रमरपटलान्धकारितमुखैरपहृतलक्ष्मी-शोकधृतलम्बश्मश्रुभिरिवान्यैः शेखरोड्डीयमानमधुपमण्डलैः प्रणामविडम्बनाभयपलायमानमौलिभिरिव निर्जितैरपि सम्मा-

तायाः, खनितायाः, क्षितेः, पृथिव्याः, विकीर्यमाणानाम्, उत्क्षिप्यमा-णानाम्, करनखकिरणानाम्, हस्ताग्रभागमयूखानाम्, कदम्बकम्, समूहः, तस्य व्याजेन, छलेन, सेवाचामराणि इव, परिचर्य्यावालव्य जनानीव, अर्पयद्भिः, ददद्भिः। कैश्चिन्, उरःस्थलेति—उरःस्थलेषु, वक्षःस्थलेषु, दोलायमानानाम्, लम्बमानानाम्, इन्द्रनीलानाम्, नीलकान्तमणीनाम्, तरलानि, चपलानि, प्रभापट्टानि, कान्तिपट्टा-नि तैः। स्वामिनः, प्रभोः, यः प्रकोपः, क्रोधः तस्य प्रशमनाय, शान्त्यर्थम्। कण्ठेति—कण्ठेषु बद्धानि कृपाणपट्टानि, असिफलकानि, यैः तथा भूतैरिव। उच्छ्वासेति—उच्छ्वासस्य, निश्वासपवनस्य, सौरभेण, सद्गन्धेन, भ्राम्यद्भिः, संचरद्भिः, भ्रमरपटलैः, अलिवृन्दैः, अन्धकारितम्, अन्धकार इवाचरितम्, मुखं येषां तैः। अपहृतेति—अपहृतायाः, बलाद्गृहीतायाः, लक्ष्म्याः, राजश्रियः, शोकेन, धृताः, लम्बाः, श्मश्रवः यैः। शेखरेति—शेखरेभ्यः, शिरोभ्यः, उड्डीयमा-नानि, उत्पतन्ति, मधुपमण्डलानि, अलिवृन्दानि येषां तथोक्तैः। **प्रणामेति**—प्रणामे, प्रणत्याम् विडम्बनायाः, अवमाननायाः, भयेन पलायमानाः, मौलयः किरीटाः येषां तथोक्तैः। निर्जितैरपि, पराजितै-रपि, सम्मानितैरिव, आदृतैरिव, अनन्यशरणैः, अन्याश्रयरहितैः।

नितैरिवानन्यशरणैरन्तरान्तरा निष्पततां प्रविशतां चान्तरप्रतीहाराणामनुमार्गप्रधावितानेकार्थिजनसहस्राणामनुयायिनः पुरुषानश्रान्तैः, पुनःपुनः पृच्छद्भिः 'भद्र अद्य भविष्यति भुक्त्वा स्थाने दास्यति दर्शनं परमेश्वरः, निष्पतिष्यति वा बाह्यां कक्ष्याम्' इति दर्शनाशया दिवसं नयद्भिर्भुजनिर्जितैः शत्रुमहासामन्तैः समन्तादासेव्यमानम्, अन्यैश्च प्रतापानुरागागतैर्नानादेशजैर्महीपालैः प्रतिपालयद्भिर्नरपतिदर्शनकालमध्यास्यमानम्, एकान्तोपविष्टैश्च जैनैरार्हतैः पाशुपतैः पाराशरिभिर्वर्णिभिश्च सर्वदेशजन्मभिश्च जनपदैः सर्वाम्भोधिवेलावनवलयवा-

अन्तरान्तरा, मध्येमध्ये, निष्पतताम्, निर्गच्छताम्, प्रविशताम्, अन्तरप्रतिहाराणाम्, अन्तरं, मध्ये, प्रतिहाराः, रक्षिणः, येषाम् तेषाम्। अनुमार्गम्, अनुपथम्, प्रधावितानि, अनेकानि, अर्थिजनसहस्राणि, याचकवृन्दानि, येषां तेषामनुयायिनः, पृष्ठगामिनः, पुरुषान्, जनान्। अश्रान्तैः, न श्रान्तं येषां तैरविरतैरित्यर्थः, पुनः-पुनः, बारम्बारं पृच्छद्भिः। भविष्यति दर्शनमितिशेषः। स्थाने, समुचितेप्रदेशे। परमेश्वरः, राजाधिराजः। कक्ष्याम्, प्रकोष्ठम् (कक्ष्याप्रकोष्ठे हर्म्यादेः-इत्यमरः) शत्रुमहासामन्तैः, शत्रवश्च ते महान्तः सामन्ताश्च तैः। आसेव्यमानम्, उपास्यमानम्। प्रतापेति— प्रतापेन, तेजसा, अनुरागेण च प्रेम्णा च आगताः तैः। प्रतिपालयद्भिः, प्रतीक्षमाणैः। अध्यास्यमानम्, अधिश्रीयमानम्। एकान्तोपविष्टैः, एकदेशासनैः। जैनैः, जैनमतावलम्बिभिः। आर्हतैः, क्षपणकैः। पाशुपतैः, शैवै। पाराशरैः, पराशरमुनिमतानुवृत्तिभिः। वर्णिभिः, ब्रह्मचारिभिः। सर्वदेशजन्मभिः, सार्वदेशीयैः। सर्वेति—सर्वेषाम्, अम्भोधीनाम्, सागराणाम्, वेलावनानि, तीरकाननानि, तेषां वलयं, मण्डलम्, तस्मिन्

सिभिश्च म्लेच्छजातिभिः सर्वदेशान्तरागतैश्च दूतमण्डलैरुपास्यमानम्, सर्वप्रजानिर्माणभूमिमिव प्रजापतीनां लोकत्रयसारोच्चयरचितं चतुर्थमिव लोकम्, महाभारतशतैरप्यकथनीयसमृद्धिसंभारम्, कृतयुगसहस्रैरिव कल्पितसंनिवेशम्, स्वर्गार्बुदैरिव विहितरामणीयकम्, राजलक्ष्मीकोटिभिरिव कृतपरिग्रहं राजद्वारमगमत्।

अभवच्चास्य जातविस्मयस्य मनसि—'कथमिवेदमियत्प्रमाणं प्राणिजातं जनयतां प्रजासृजां नासीत्परिश्रमः, महाभूतानां वा परिक्षयः, परमाणूनां वा परिच्छेदः, कालस्य वान्तः, आयुषो

वसन्तीति तथोक्तैः। दूतमण्डलैः, उदन्तवाहकवृन्दैः। उपास्यमानम् आश्रीयमाणाम्। सर्वेति—प्रजापतीनाम्, विधातृणाम्। सर्वासाम्, प्रजानाम्, निर्माणभूमिमिव, उत्पत्तिक्षेत्रमिव (नहि अन्यत्र स्थित्वा प्रजापतिः सर्वान् स्रष्टुशक्तः) लोकेति-लोकानाम्, स्वर्गमर्त्यपातालानाम्, त्रयं, तस्य सारोच्चयः, स्थिरांशराशिः तेन रचितम्। महाभारतशतैरपि, असंख्यमहाभारतसदृशमहाकाव्यैरपि, अकथनीयः, अनिर्वचनीयः, समृद्धीनां, सम्पदां सम्भारः, सञ्चयः यस्य तथोक्तम्। कृतयुगसहस्रैरिव, बहुतरसत्ययुगैरिव, कल्पितः, रचितः, सन्निवेशः, स्थानं यस्य तथा भूतम्। स्वर्गार्बुदैरिव, दशकोटिसंख्यैः स्वर्गैरिव, विहितम्, अर्पितम्, रामणीयकम्, रम्यत्वं यस्य तथाभूतम्। राजेति—राजलक्ष्मीणाम्, राजश्रीणाम्, कोटिभिरिव, लक्षशतैरिव, कृतपरिग्रहम्, कृताश्रयम्। राजद्वारमगमत्।

अस्य बाणस्य, जातविमयस्य, प्रादुर्भूताश्चर्यस्य। प्रजासृजां, प्रजाकर्तृणाम्। महाभूतानाम्, क्षित्यप्तेजोवायूनाम्। सृष्ट्युपादानकारणभूतानामितिभावः। व्युपरमः, शेषः। परिसमाप्तिः, निःशेषेण-

वा व्युपरमः, आकृतीनां वा परिसमाप्तिः' इति मेखलकस्तु दूरादेव द्वारपाललोकेन प्रत्यभिज्ञायमानः "तिष्ठतु तावत्क्षणमात्रमत्रैव पुण्यभागी' इति तमभिधायाप्रतिहतः पुरः प्राविशत् ।

अथ स मुहूर्तादिव प्रांशुना, कर्णिकारगौरेण, वीध्रकञ्चुकच्छन्नवपुषा, समुन्मिषन्माणिक्यपट्टकबन्धबन्धुरशस्तबन्धकृशावलग्नेन, हिमशैलशिलाविशालवक्षसा, हरवृषककुदकूटविकटांसतटेन, उरसा चपलहृषीकहरिणकुलसंयमनपाशमिव हारं

व्ययः । प्रत्यभिज्ञायमानः । सोऽयमिति – अवगम्यमानः । अप्रतिहतः, अनिवारितः ।

अथेत्यारभ्य पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्य अवोचत् इति दूरेणान्वयः । प्रांशुना, उच्चकायेन । कर्णीति– कर्णिकारं, तदाख्यकुसुमभेदः, तद्वत् गौरः, शुभ्रः तेन । वीध्रेति– वीध्रेण, विमलेन (वीध्रंतु-विमलात्मकम्, इत्यमरः) कञ्चुकेन, वर्मणा, च्छन्नम्, आवृतं, वपुः, शरीरम् यस्य तथा विधेन । समुन्मिषदिति– समुन्मिषत्, सम् दीप्यमानम्, माणिक्यपट्टकम्, मणिमयराजाधिकारचिह्नम्, तस्य बन्धेन, ग्रहणेन, बन्धुरम्, रम्यम्, यत् शस्तम्, काञ्चनमयकटिसूत्रम्, तस्य बन्धेन, स्थापनेन, कृशम्, क्षीणम्, अवलग्नम्, मध्यं यस्य तेन । (मध्यमञ्चावलग्नञ्चमध्योऽस्त्री-इत्यमरः) हिमेति— हिमशैलः, हिमाचलः, तस्य शिलावत्, विशालं, प्रशस्तं, वक्षः यस्य तेन । हरेति—हरस्य, वृषः, तस्य ककुदम्, स्कन्धपृष्ठस्थमांसपिण्डविशेषः, तस्य कूटं, शिखरम् तद्वत् विकटः, समुन्नतः, अंसतटः, स्कन्धदेशः यस्य तेन । उरसा, वक्षसा । चपलेति—चपलानि, लोलानि, हृषीकाणि, एकादशेन्द्रियाणि, हरिणकुलानीव, मृगयूथानीव, तेषां संयमनाय, बन्धनाय, पाशः, रज्जुः, तमिव हारम्, बिभ्रता, दधानेन ।

बिभ्रता, 'कथयतं यदि सोमवंशसंभवः सूर्यवंशसंभवो वा भूपतिरभूदेवंविधः' इति प्रष्टुमानीताभ्यां सोमसूर्याभ्यामिव श्रवणगताभ्यां मणिकुण्डलाभ्यां समुद्भासमानेन, बृहद्वदनलावण्यविसरवेणिकाक्षिप्यमाणैरधिकारगौरवाद्दीयमानमार्गैरेव दिनकृतः किरणैःप्रसादलब्धया विकचपुण्डरीकमुण्डमालिकयेव दीर्घया दृष्ट्या दूरादेवानन्दयता, नैष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि प्रतिष्ठितेन पदे पदे प्रश्रयमिवावनम्रेण, मौलिना पाण्डुरमुष्णीषमुद्वहता, वामेन स्थूलमुक्ताफलच्छुरणदन्तुरत्सरुं करकिसलयेन कलयता कृपाणम्, इतरेणापनीततरलतां ताडनीमिव लतां शातकौम्भीं

सोमवंशसम्भवः, चन्द्रवंशोत्पत्तिः । सूर्यवंशसभवः, रविकुलजन्मनः । बृहदिति—बृहताम्, महताम्, वदनलावण्यानाम्, मुखप्रभाणाम्, विसरः, विस्तार एववेणिका, स्रोतः, तया क्षिप्यमाणाः, निराक्रियमाणाः तैः । अधिकारेति—अधिकारस्य, गौरवात्, सम्मानात्, दीपमानो मार्गो, येभ्यः तथोक्तैः । दिनकृतः, सूर्यस्य किरणैः, मयूखैः, प्रसादः, प्रसन्नता, तेन लब्धा तया, विकचपुण्डरीकपुण्ड्रमालिकयेव, स्फुटितकमलस्रजेव, दीर्घया, विशालया, दृष्ट्या, लोचनेन । नन्दयता, संतोषयता । नैष्ठुर्याधिष्ठानेऽपि, निष्ठुरस्यभावं नैष्ठुर्यम्, तस्य अधिष्ठानं तस्मिन् । पदे, अधिकारे, प्रतिष्ठितेन, प्रश्रयमिव, विनयमिव अवनम्रेण, विनतेन, मौलिना, शिरसा, पाण्डुरम्, धवलम्, उष्णीषम्, शिरोवेष्टनम्, उद्वहता, धारयता । वामेन, सव्येन, स्थूलेति—करकिसलयेन, हस्तपल्लवेन । स्थूलानि, यानि, मुक्ताफलानि, मौक्तिकानि तेषां यच्छुरणम्, विकाशः, तेन दन्तुरः, संजातदन्तः इव त्सरुः, खड्गमुष्टिप्रदेशः, यस्य तथा भूतम्, कृपाणं कलयता, धारयता । इतरेण, दक्षिणेन । अपनीतेति—अपनीता, दूरीकृता,

वेत्रयष्टिमुन्मृष्टां धारयता पुरुषेणानुगम्यमानो निर्गत्यावोचत्—एष खलु महाप्रतीहाराणामनन्तरश्चक्षुष्यो देवस्यपारियात्रनामा दौवारिकः। समनुगृह्णात्वेनमनुरूपया प्रतिपत्त्या कल्याणाभिनिवेशी' इति। दौवारिकः समुपसृत्य कृतप्रणामो मधुरया गिरा सविनयमभाषत—'आगच्छत। प्रविशत दर्शनाय। कृतप्रसादो देवः' इति। बाणस्तु 'धन्योऽस्मि, यद्देवमनुग्राह्यं मां देवो मन्यते' इत्युक्त्वा तेनोपदिश्यमानमार्गः प्राविशदभ्यन्तरम्।

अथ वनायुजैः, आरट्टजैः, काम्बोजैः, भारद्वाजैः, सिन्धुदेशजैः, पारसीकैश्च, शोणैश्च, श्यामैश्च, पिञ्जरैश्च, हरिद्भिश्च, तित्तिरिकल्माषैश्च, पञ्चभद्रैश्च, मल्लिकाक्षैश्च, कृत्तिकापिञ्जरैश्च,

---

तरलता, चपलता ताम् ताडनीम्, ताड्यतेऽनयेति ताम् लताम्, वल्लीम्, शातकौम्भीम्, स्वर्णमयीम्, उन्मृष्टाम्, अतिशयेन विशोधिताम्, धारयता। पूर्वेणान्वयः। महाप्रतीहाराणाम्, प्रधानद्वारपालानाम्, अनन्तरः, चक्षुष्यः, प्रियदर्शनः। अनुरूपया, समुचितया, प्रतिपत्त्या, आदरेण। कल्याणाभिनिवेशी, कल्याणे, शुभकर्मणि, अभिनिवेशः अस्यास्ति सः अभाषत, अवोचत्। कृतप्रसादोदेवः, कृतः, विहितः, प्रसादः, प्रसन्नतायेन सः देवः, राजाधिराजः। अथेत्यारभ्य तुरङ्गैः आरचितां मन्दुरां विलोकयन् इति उत्तरेणान्वयः।

वनायुजैः—वनायुदेशोत्पन्नैः। आरट्टजैः, अरबदेशोद्भवैः। कम्बोजैः, तद्देशजैः। भारद्वाजैः, भरद्वाजदेशजैः। सिन्धुदेशोद्भवैः। पारसिकैः, पारस्यदेशभवैः। शोणैः, रक्तवर्णैः, श्यामैः, कृष्णवर्णैः, श्वेतैः, शुक्लवर्णैः। पिञ्जरैः, पिङ्गलैः। हरिद्भिः, हरिद्वर्णैः। तित्तिरिकल्माषैः, तित्तिरिपक्षिविशेषवत् विचित्रवर्णैः। पंचभद्रैः, पञ्चसु, अङ्गेषु, मुखसहितेषु शफेषु, (चतुर्षु इति भाव) भद्राः, कल्याणदाः तैः।

आयतनिर्मांसमुखैः, अनुत्कटकर्णकोशैः, सुवृत्तश्लक्ष्णसुघटितघण्टिकाबन्धैः, यूपानुपूर्वीवक्रायतोदग्रग्रीवैः, उपचयश्वसत्स्कन्धसंधिभिः, निर्भुग्नोरःस्थलैः, अस्थूलप्रगुणप्रसृतैर्लोहपीठकठिनखुरमण्डलैः, अतिजवत्रुटनभयादनिर्मितान्त्राणीवोदराणि वृत्तानि धारयद्भिः उद्यद्द्रोणीविभज्यमानपृथुजघनैः, जगतीदोलायमानबालपल्लवैः, कथमप्युभयतो निखातदृढभूरिपाश-

मल्लिकाक्षैः, सितनेत्रप्रान्तैः। कृत्तिकापिञ्जरैः, (तारकाकदम्बक-कल्पानेकबिन्दुकल्माषितत्वचः) इति लक्षणायुक्तैः। **आयतेति**— आयतानि, दीर्घाणि, निर्मांसानि, प्रायेणास्थिमयानि मुखानि येषां तथोक्तैः। अनुत्कटः, कर्णकोशः, श्रवणपाशः येषां तैः। **सुवृत्तेति** - सुवृत्तः, सद्वर्तुलः श्लक्ष्णः, चिक्कणः, सुघटितः सुनिर्मितः, घण्टिका, क्षुद्रघण्टाः तासां बन्धो बन्धनं येषां तैः। **यूपेति**—यूपः, यज्ञस्तम्भः, तस्य अनुपूर्वी-अनुरूप्यम्, तथा वक्रा, आयता, विशाला, उदग्रा उन्नता, ग्रीवा, कण्ठं येषां तैः। **उपचयेति**—उपचयेन श्वयन्, स्फीततां गच्छन्, स्कन्ध सन्धिर्येषाम् तैः। **निर्भु-इति**—निर्भुग्नम्, स्थूलतया वहिर्निर्गतम्, उरःस्थलम्, वक्षः येषां तैः। अस्थूलाः, स्वल्पमांसा, प्रगुणा, ऋजुः प्रसृता, जङ्घा येषां तैः। **लोहेति**—लोह पठीवत् कठिनम्, खुरमण्डलं, शफगोलं येषां तैः। **अतिजवेति**— अतिजवेन, अतिवेगेन, यत् त्रुटनं छेदः, तस्मात्, अनिर्मितानि अन्त्राणि, नाडीविशेषाः येषु तथोक्तानीव वृत्तानि, वर्त्तुलानि उदराणि धारयद्भिः। **उद्यदिति**—उद्यती, उदयंयाती, द्रोणी, वाजिनां शोभाविशेषः तया विभज्यमानानि व्यक्तीक्रीयमाणानि, पृथूनि जघनानि येषां तैः। **जगतीति**—जगत्यां, भूमौ दोलायमानाः वालाः, पुच्छलोमानि पल्लवा इव येषां तैः। **उभयत-इति**—उभयतः

संयमननियन्त्रितैः, आयतैरपि पश्चात्पाशबन्धप्रसारितैकाङ्घ्रिभिरायततरैरिवोपलक्ष्यमाणैः बहुगुणसूत्रग्रथितग्रीवागण्डकैः, आमीललोचनैः, दूर्वारसश्यामलफेनलवशबलान्दशनगृहीतमुक्तान्फरफरितत्वचः कण्डूजुषः प्रतीकान्प्रचालयद्भिः, सालसवलितवालधिभिः, एकशफविश्रान्तिस्रस्तशिथिलितजघनार्धैः, निद्रया प्रध्यायद्भिश्च, स्खलितहुङ्कारमन्दमन्दशब्दायमानैश्च, ताडितखुरधरणीरणितमुखरशिखरखुरलिखितक्ष्मातलैर्घासम-

---

उभयोः पार्श्वयोः, निरवानः, प्रोतः, दृढः, कठिनः, भूरिः, प्रभूतः, पाशः, रज्जुः, तेन संयमनं, बन्धनं तेन नियन्त्रिताः, निरुद्धाः तैः। अनायतैरपि—अविस्तरितावयवैरपि, पश्चात् पाशबन्धेऽपि प्रसारितः, एकः, अङ्घ्रि-पादः येषां तैः। अतएव आयततरैरिव, दीर्घतरैरिव, उपलक्ष्यमाणैः, दृश्यमानैः। बहुगुणेति—बहुगुणैः, अनेकवृत्तैः, सूत्रैः, ग्रथितः, गुम्फितः, ग्रीवासु गण्डकः, भूषणभेदः येषां तैः। आमीलेति, ईषन्मुद्रिते, लोचने येषां तैः। दूर्वेति—दूर्वारसवत्, श्यामलाः, ये फेनलवाः, फेनविन्दवः, तैः शवलान्, विचित्रान्, दशनैः, दन्तैः गृहीताः, धृताः, मुक्ताः, त्यक्ताः, तान्, फरफरिताः, पुनः पुनः ईषत् कम्पिताः त्वचः येषां तान् कण्डुजषः, कण्डुशालिनः, प्रतीकान्, अङ्गानि (अङ्गंप्रतीकोऽवयवोऽपघनः,इत्यमरः) प्रचालयद्भिः,कम्पयद्भिः। सालसेति—सालसं, लघुयथास्यात्तथा वलिताः, कम्पिताः, वालधयः, पुच्छलोमानि येषां तैः। एकेति—एकशफेन, एकखुरेण, या विश्रान्तिः, तया स्रस्तम्, पर्यस्तं, शिथिलितं जघनार्द्धं येषां तैः। प्रध्यायद्भिः, चिन्तयद्भिः। स्खलितेति—स्खलितेन, हुङ्कारेण मन्दं मन्दं यथा तथा शब्दायमानैः, नदद्भिः। ताडितेति—ताडिता या खुरधरणी, खुराधोभूः, तस्याः, रणितेन, शब्देन, मुखरं यत् शिखरम्, अग्रम्,

भिलषद्भिश्च, प्रकीर्यमाणयवसग्रासरसमत्सरोद्भूतक्षोभैश्च, प्रकुपितचण्डचण्डालहुङ्कारकातरतरतरलतारकैश्च, कुङ्कुमप्रमृष्टिपिञ्जराङ्गतया सततसंनिहितनीराजनानलरक्ष्यमाणैरिवोपरिविततवितानैः, पुरः पूजिताभिमतदैवतैः, भूपालवल्लभैस्तुरंगैरारचितां मन्दुरां विलोकयन्, कुतूहलाक्षिप्तहृदयः किंचिदन्तरमतिक्रान्तो हस्तवामेनात्युच्चतया निरवकाशमिवाकाशं कुर्वाणम्, महता कदलीवनेन परिवृतपर्यन्तं सर्वतो मधुकरमयी-

येषां ते खुरास्तैः लिखितं, यत् क्षमातलम्, भूतलं यैः तथा विधैः। **प्रकीर्यमाणेति**—प्रकीर्यमाणाः, प्रक्षीप्यमाणाः, यवग्रासः, घासकवलम्, तस्यरसे, स्वादे, यो मत्सरः, द्वेषः (अन्यकोऽपि तुरगो नैनमास्वादयतु इति धियेतिभावः) तेनोद्भूतः, जनितः, क्षोभः, येषां तैः। **प्रकुपितेति**—प्रकुपितः, यः चण्डचण्डालः, चण्डाश्वपालः, तस्य हुङ्कारेण, कातरतराः, अतिदीनाः,तरला, चपलाः, तारकाः, कनीनिकाः येषां तैः। **कुङ्कुमेति**—कुङ्कुमैः, प्रमृष्टिः, प्रमार्जनम्, तेन पिञ्जराणि, अङ्गानि येषां तद्भावः तत्ता तया। **सततेति**—सततं, सन्निहितेन, समीपस्थेनेतिभावः, नीराजनानलेन (यात्रायां वाजिनां नीराजना क्रियते) इति शास्त्रात् नीराजनाग्निना रक्ष्यमाणाः तैरिव। उपरि, विततः, विस्तृतः, वितानः, उल्लोचः येषां तैः **पुरइति**—पुरः, अग्रे, पूजिता, अभिमता, अभिष्टा, देवता येषां तैः। भूपालवल्लभैः, राजप्रियैः, तुरंगैः, आरचिताम्, शोभिताम्, मन्दुराम्, अश्वशालाम्, विलोकयन्, पश्यन्। (वाजिशाला तु मन्दुरा, इत्यमरः) **कुतूहलेति**—कुतूहलेन, आक्षिप्तम्, आकृष्टं, हृदयं यस्य सः। अतिक्रान्तः, गतः। हस्तवामेन, करवामभागेन। निरवकाशम्, अवकाशरहितम्। परिवृतपर्यन्तं, वेष्टितपर्यन्तम्। मधुकरमयीभिः, भ्रमर-

भिर्मदस्रुतिभिर्नदीभिरिवापतन्तीभिरापूर्यमाणम्, आशामुखविसर्पिणा बकुलवनानामिव विकसतामामोदेन लिम्पन्तं घ्राणेन्द्रियं दूरादव्यक्तमिभधृष्ण्यागारमपश्यत्। अपृच्छच्च—'अत्र देवः किं करोति' इति। असावकथयत्—'एष खलु देवस्यौपवाह्यो बाह्यं हृदयं जात्यन्तरित आत्मा बहिश्चराः प्राणा विक्रमक्रीडासुहृद्दर्पशात् इति यथार्थनामा वारणपतिः। तस्यावस्थानमण्डपोऽयं महान्दृश्यते' इति। स तमवादीत्—'भद्र, श्रूयते दर्पशातः। यद्येवमदोषो वा पश्यामि तावद्वारणेन्द्रमेव। अतोऽर्हसि मामत्र प्रापयितुम्। अतिपरवानस्मि कुतूहलेन' इति। सोऽभाषत—'भवत्वेवम्। आगच्छतु भवान्। को दोषः। पश्यतु तावद्वारणेन्द्रम्' इति।

गत्वा च तं प्रदेशं दूरादेव गम्भीरगलगर्जितोर्जितैर्वियति

व्याप्ताभिः। मदस्रुतिभिः, गजदानजलप्रवाहैः, आपतन्तीभिः, आवहन्तीभिः। आशामुखविसर्पिणा, दिशासमक्षेविस्तारिणा। बकुलवनानामिव, इत्याख्यकाननानामिव। आमोदेन, गन्धेन। लिम्पन्तं, पूरयन्तम्, धिष्ण्यागारम्, अवस्थानमन्दिरम् (धिष्ण्यंस्थाने गृहेभेऽग्नौ "इत्यमरः") उपवाह्यः, क्रीडाहस्ती। जात्यन्तरितः, अन्यां जातिं गतः। विक्रमेति—विक्रमः, बलम्, एव क्रीडा तस्यां सुहृत् सहायः। दर्पशातः, दर्पः, अहङ्कारं (शत्रूणामिनिभावः) शातयति, नाशयति तथोक्तः। वारणपतिः, गजेन्द्रः। अवस्थानमण्डपः, वासगृहम्। अदोषः, दर्शने न दोषः। प्रापयितुं, नेतुम् अतिपरवान्, अतिशयेन पराधीनः। गम्भीरेति—गम्भीरेण, गलगर्जितेन, कण्ठनिनादेन, । अर्जितानि, एकत्रीकृतानि, तैः। वियति, आकाशे।" चातकानां, कदम्बानि, वृन्दानि, तैः। भुवि, भूतले, भवननीलकण्ठ-

चातककदम्बकैर्भुवि च भवननीलकण्ठकुलैः कलकेकाकलकलमुखरमुखैः क्रियमाणकलकोलाहलम्, विकचकदम्बसंवादिमदसुरासौरभभरितभुवनम्, कायवन्तमिवाकालमेघकालम्, अविरलमधुबिन्दुपिङ्गलपद्मजालकितां सरसीमिवाभ्यवगाढां दशां चतुर्थीमुत्सृजन्तम्, अनवरतमवतंसशंखैरामन्द्रकर्णतालदुन्दुभिध्वनिभिः पञ्चमीप्रवेशमङ्गलारम्भमिव गायन्तम्, अविरतचलनचित्रत्रिपदीललितलास्यलयैर्दोलायमानदीर्घदेहाभोगतया मेदिनीविदलनभयेन भारमिव लघयन्तम्, दिग्भित्तितटेषु काय-

---

कुलैः, गृहमयूरसमूहैः। कलाः, मधुराः, केकाः, मयूरवाचः, तासां कलकलेन, मुखराणि, शब्दायमानानि येषां तैः। क्रियमाणः, कलः, मधुरः, कोलाहलः, यत्र तथोक्तम्। विकचेति—विकचानां, प्रफुल्लानां, कदम्बानाम्, नीपपुष्पाणाम्, संवादिना, अनुकारिणा, मदः, दानजलम् स एव सुरा, मद्यम्, तस्याः, सौरभेण, गन्धेन, भरितम्, भवनं येन तथोक्तम्। कायवन्तमिव, शरीरवन्तमिव, अकालमेघं, अविरलेति-अविरलाः, घनाः, ये मधुविन्दवः, मदजलकणाः, तैः पिञ्जरं, पद्मानां, पद्माकराणां (पद्मे) तन्नामपुष्पाणां, जालकं, समूहः, जातमस्यामिति तथोक्तम्। अनवरतं, निरन्तरं, आमन्द्राः, ईषद्गम्भीराः, कर्णतालस्य, नियतसंचालितश्रवणस्य, दुन्दुभेरिव, ध्वनयः, शब्दाः तैः अवतंसशंखैः, कर्णभूषणीकृतशंखैः। अविरतेति—अविरतेन, अश्रान्तेन चलनेन चित्रा, सुदृश्या या त्रिपदी, पादबन्धनी, तस्यां ललितं,सुन्दरं यत् लास्यं, नृत्यं, तस्य लयाः, वाद्याद्यनेकतानताः तैः। दोलायमानेति—दोलायमानः, प्रेङ्खन्, दीर्घः, महान् देहस्य आभोगः, विस्तारः, यस्य तद्भावः, तत्ता तया। मेदिनीति—मेदिन्याः, पृथिव्याः, विदलनं, विदारणं तस्मात् यत् भयं तेन भारमिव लघयन्तम्।

मिव कण्डूयमानम्, आहवायोदस्तहस्ततया दिग्वारणानि-वाह्वयमानम्, ब्रह्मस्तम्भमिव स्थूलनिशितदन्तेन करपत्रेण पाटयन्तम्, अमान्तं भुवनाभ्यन्तरे बहिरिव निर्गन्तुमीहमानम्, सर्वतः सरसकिसलयलतालासिभिर्लेशिकैश्चिरपरिचयोपचितै-र्घनैरिव विक्षिप्तसशैवलविसविसरशवलसलिलैः सरोभिरिव चाधोरणैराधीयमाननिदाघसमयसमुचितोपचारानन्दम्, अपि च प्रतिगजदानपवनादानदूरोत्क्षिप्तेनानेकसमरविजयगणना-

---

दिगिति—दिगेव, भित्तिः, तस्याः, तटाः, आभोगाः, तेषु। कायमिव, अङ्गमिव कण्डूयमानम्। आहवाय, संग्रामाय। उदस्तः, उत्क्षिप्तः, हस्तः, शुण्डः येन तस्य भावः तत्ता तया। दिग्वारणान्, दिग्गजान् आह्वयमानमिव, स्पर्द्धया आकारयन्तमिव। ब्रह्मस्तम्भमिव, ब्रह्माण्ड-मिव, स्थूलः, निशितः, तिक्ष्णः, दन्तः, तेन करपत्रेण, क्रकचेन, पाटयन्तमिव, विदारयन्तमिव। भुवनाभ्यन्तरे, अमान्तं, पर्य्याप्तु-मलभमानम्, अतएव, वहिः भुवनाद् वाह्यदेशे निर्गन्तुं, ईहमानम्, चेष्टमानम्। सरसा, रसयुताः, किसलयाः, पल्लवाः, यासां तथाविधाः याः लताः, व्रतत्यः, ताभिः लसन्ति, राजन्ति तथोक्तैः, लेशिकैः, घासिकैः, चिरपरिचयेन, चिरानुगत्या, उपचितैः, समाहूतैः, घनैरिव, मेघैरिव। **विक्षिप्तेति**—विक्षिप्तानि, विकीर्णानि, सशैवलानां, विसानां, मृणालानां, विसरेण, विस्तरेण, शवलानि, मिश्राणि, सलिलानि यैः, तथाभूतैः। आधोरणैः, हस्तिपालैः, अधीयमानः, उत्पाद्यमानः, निदाघसमयस्य, ग्रीष्मकालस्य, समुचितेन, उपयुक्तेन, उपचारेणेन, सेवया, आनन्दः, यस्य तम्। **प्रतिगजेति**—प्रतिगजानां, प्रतिद्वन्द्विहस्तिनां, दानपवनस्य, मदसौरभवाहिनोमरुत-इत्यर्थः। आदानेन, ग्रहणेन, दूरं, उत्क्षिप्तः, उद्धृतः तेन। **अनेकेति**—अने-

लेखाभिरिव बलिवलयराजिभिस्तनीयसीभिस्तरङ्गितोदरेणाति-स्थवीयसा हस्तार्गलदण्डेनार्गलयन्तमिव सकलं सकुलशैल-समुद्रद्वीपकाननं ककुभां चक्रवालम्, एकं करान्तरार्पितेनोत्प-लाशेन कदलीदण्डेनान्तर्गतशीकरसिच्यमानमूलम्, मुक्तपल्लव-मिवापरं लीलावलम्बिना मृणालजालकेन समररसोच्चरोमाञ्च-कण्टकितमिवदन्तकाडं वहन्तम्, विसर्पन्त्या च दन्तकाण्डयुग-लकस्य कान्त्या सरःक्रीडास्वादितानीव कुमुदवनानि बहुधा वमन्तम्, निजयशोराशिमिव दिशामर्पयन्तम्, कुकरिकीटपाट-

केषां, समराणां, युद्धानां, विजयाः, तेषां गणना संख्यानं तस्याः लेखाभिरिव, लिपिभिरिव, बलिवलयराजिभिः, वलयाकारबलिश्रे-णिभिः, तनीयसीभिः, अतिक्षुद्राभिः। तरङ्गितं, भङ्गिमत्, उदरं यस्य तथोक्तेन। अतिस्थवीयसा, अतिस्थूलेन, हस्तार्गलदण्डेन, अर्गल-यन्तमिव, निरुन्धन्तमिव, ककुभां, चक्रवालम्, दिङ्मण्डलम्। एकं दन्तकाण्डमित्यर्थः न्वयः। करान्तरार्पितेन, करस्य शुण्डस्य अन्तरे, मध्ये, अर्पितेन। उत्पलाशेन, उद्गतपत्रेण, कदलीदण्डेन, रम्भास्तम्भेन, अन्तगतैः, शीकरैः, जलकणैः, सिच्यमानं मूलं यस्य तथोक्तम्। मुक्तापल्लवमिव, मुक्ताफलकिसलयमिव। परं, अन्यम्, लीलावलम्बिना, लीलयावलम्बते इति तथोक्तेन। मृणालजालकेन, कमलसमूहेन। **समरेति**—समरे, युद्धे, यो रसः, तेन उच्चाः, उद्गताः, रोमाञ्चा एव कण्टकाः अस्येति तथोक्तम्, दन्तकाण्डं, दशनस्तम्भम्, वहन्तं, दधानम्। विसर्पन्त्या, विसरन्त्या, दन्तकाण्डयुगलस्य कान्त्या, प्रभया। **सरःक्रीडेति**—सरसि या क्रीडा, विहारः, तत्र आस्वादि-तानि, भुक्तानि तानीव कुमुदवनानि, कैरववृन्दानि, बहुधा, अनेकधा, वमन्तं उद्गिरन्तम्। निजयशोराशिभिरिव, स्वकीर्त्ति समूहमिव, दिशां,

नदुर्ललितान्सिंहानिवोपहसन्तम्, कल्पद्रुमदुकूलमुखपट्टमिव चात्मनः कलयन्तम्, हस्तकाण्डदण्डोद्धरणलीलासु च लक्ष्यमाणेन रक्तांशुकसुकुमारतलेन तालुनाकवलितानि रक्तपद्मवनानीव वर्षन्तम्, अभिनवकिसलयराशिमिवोद्गिरन्तम्, कमलकवलपीतं मधुरसमिव स्वभावपिंगलेन वमन्तं चक्षुषा, चूतचम्पकलवलीलवंग कक्कोलवन्त्येलालतामिश्रितानि ससहकाराणि कर्पूरपूरपूरितानि पारिजातकवनानीवोपभुक्तानि पुरः करटा-

अर्पयन्तम्, क्षिपन्तं। कुकरीति—कुत्सिताः, करिणः, हस्तिनः, ते एवकीटाः, क्षुद्रप्राणिभेदाः, तेषां पाटनेन संहननेन, दुर्ललिताः दृप्ताः तान्। कल्पद्रुमेति— कल्पद्रुमस्य दुकूलं, श्वेतपट्टवसनं, तदेव मुखपटः, तमिव, आत्मनः, स्वस्य धारयन्तं, कलयन्तम्। हस्तेति—हस्तः, शुण्डः एव काण्डदण्डः, स्तम्भयष्टिः, तस्य उद्धरणानि तान्येव लीलाः तासुलक्ष्यमाणेन दृश्यमानेन, रक्तांशुकसुकुमारतलेन, रक्तवसनकोमलतलेन, तालुना, तालुदेशेन, रक्तपद्मवनानि, रक्तकमलवृन्दानि, कवलितानि, भक्षितानि, वर्षन्तं, वमन्तं। अभिनवकिसलयराशिमिव, नूतनपल्लवसमूहमिव, स्वभावपिङ्गलेन, सहजदीपशिखातुल्यवर्णेन, चक्षुषा, कमलानां कवलेन, ग्रासेन पीतं मधुरसमिव, मकरन्दमिव, वमन्तं, वर्षन्तं। पुरः, अग्रे, करटाभ्यां, गण्डाभ्याम्, (करटः स्यात् कटोगण्डः-इत्यमरः) बहलमदाऽऽमोदव्याजेन, प्रभूतदानवारिगन्धच्छलेन, चूतेति— चूतं, रसालं, चम्पकं, चम्पकपुष्पं, लवली, एतन्नामवृक्षविशेषपुष्पम्, लवंगं, लवङ्गकलिका, कक्कोलं, इत्याख्य तरोःफलम्, तद्वन्ति, एलालतामिश्रितानि, सफलैलावल्लीयुक्तानि, ससहकाराणि अतिसौरभाम्रसहितानि। (आम्रः चूतो रसालोऽसौसहकारोऽति सौरभः-इत्यमरः) कर्पूरपूरपूरितानि, कर्पूरा-

भ्यां बहलमदामोदव्याजेन विसृजन्तम्, अहर्निशं विभ्रमकृतहस्तस्थितिभिरर्धखण्डितपुण्ड्रेक्षुकाण्डकण्डूयनलिखितैरलिकुलवाचालितैर्दानपट्टकैर्विलभमानमिव सर्वकाननानि करिपतीनाम् अविरलोदविन्दुस्यन्दिना हिमशिलाशकलमयेन विभ्रमनक्षत्रमालागुणेन शिशिरीक्रियमाणम्, सकलवारेणन्द्राधिपत्यपट्टबन्धबन्धुरमिवोच्चैस्तरां शिरो दधानम्, मुहुर्मुहुः स्थगितापावृतदिङ्मुखाभ्यां कर्णतालवृन्ताभ्यां वीजयन्तमिव भर्तृभक्त्या दन्तपर्यङ्किकास्थितां राजलक्ष्मीम्, आयतवंशक्रमागतेन गजाधिप-

---

ख्यवृक्षस्यसुगन्धिमयानि, पारिजातकवनानि, पारिजाताख्यपुष्पाणां काननानि विसृजन्तमिव। विभ्रमेति—विभ्रमेण कृता हस्ते, शुण्डे, स्थितिः, यैः तादृशैः। अति—अर्द्धेर्द्धखण्डितः, भुग्नः, पुण्ड्रेक्षुकाण्डः (गन्ना) तेन यत् कण्डूयनं,खर्जनं,तेन लिखितानि तैः। अलिकुलैः,मधुकरसमूहैः,वाचालितानि, मुखरितानि तैः। दानपट्टकैः, दानसनन्दपत्रैः, करिपतीनां, गजपतीनां, सर्वकाननानि, विलभमानमिव, स्ववशीक्रियमाणमिव। अविरलेति—अविरलं, निरन्तरं, उदविन्दुस्यन्दिना, जलकणस्राविणा, हिमशिलाशकलमयेन, तुहिनशिलाखण्डमयेन, विभ्रमेति—विभ्रमाय, शोभार्थं, या नक्षत्रमाला, सप्तविंशन्ति मौक्तिकमाला, तस्याः, गणेन। शिशिरीक्रियमाणम्, शीतलीक्रियमाणम्। सकलेति—सकलानां वारणेन्द्राणां, गजेन्द्राणां, अधिपत्यं, प्रभुत्वं, तस्य पट्टवन्धः, तेन वन्धुरं, रम्यं, उच्चैस्तरां, अत्युच्चं, शिरः, मस्तकं, दधानं, धारयन्तं। स्थगितेति—स्थगितं, आच्छादितं, अपावृतं, प्रकटितं, दिङ्मुखं याभ्यां तथाविधाभ्यां, कर्णाविव तालवृन्ते ताभ्याम् दन्तेति—दन्त एव पर्यङ्किका, क्षुद्रपर्यङ्कः, राजलक्ष्मीं, नृपश्रियं बीजयन्तमिवेति-अन्वयः। आयतेति—आयतः, दीर्घः, वंशः पृष्ठ-

त्यचिन्हेन चामरेणेव चलता बालधिना विराजमानम्, स्वच्छ-शिशिरशीकरच्छलेन दिग्विजयपीताः सरित इव पुनःपुनर्मुखेन मुञ्चन्तम्, क्षणमवधानदाननिस्पन्दीकृतसकलावयवानामन्यद्विरदडिण्डिमाकर्णनवलनानामन्ते दीर्घशीत्कारैः परिभवदुःख-मिवावेदयन्तम्, अलब्धयुद्धमिवात्मानमनुशोचन्तम्, आरोहाधिरूढिपरिभवेन लज्जमानमिवाङ्गुलीलिखितमहीतलम् मदं मुञ्चन्तम्, अवज्ञागृहीतमुक्तकवलकुपितारोहारटनानुरोधेन मद-

---

दण्डः, कुलक्षतस्यक्रमेण आगतः, परम्परयाप्राप्तः, गजाधिपत्यं तस्य चिह्नं, लक्षणं, तेन, वालधिना, पुच्छेन, विराजमानं, शोभमानम्। **स्वच्छेति**—स्वच्छानां, विमलानां, शिशिराणां, शीतलानां, शीकराणां, अम्बुकणानां, छलं तेन, दिशां विजये, पीताः ताः सरितः, नदीः, मुञ्चन्तं, त्यजन्तं। **अवधानेति**—अवधानस्य, मनोनिवेशस्य, दानेन, निष्पंदीकृताः, निश्चलीकृताः, सकलाः, अवयवाः यासु तासाम्। अन्येषां, द्विरदानां, गजानां, डिण्डिमाकर्णने, पटहनादश्रवणे या वलनाः, चालनाः, तासाम्। अन्ते, अवसाने, दीर्घशूत्कारैः, दीर्घकालं व्याप्य निर्गतैः, "शीत्" इत्याकारकाव्यक्तशब्दविशेषैः। परिभवदुःख-मिव पराभवखेदमिव, आवेदयन्तम्, प्रकटयन्तम्। अलब्धयुद्धमिव, अप्राप्तरणमिव आत्मानं, स्वं, अनुशोचयन्तं, चिन्तयन्तम्। **आरोहेति**—आरोहस्य, अधिरूढिः, अधिरोहणं, सैवपरिभवः, तेन लज्जमानमिव अङ्गुलीभिः, करिकराग्रावयवैः, (पक्षे) करशाखाभिः लिखितं, खण्डितं, महीतलं, भूतलं येन तथोक्तम्, (लज्जितानां भूलेखनं स्वभाव इतिभावः) मदं दानवारि, गर्वञ्च, मुञ्चन्तं, त्यजन्तं। **अवज्ञेति**—अवज्ञया, अवहेलया, आदौगृहीता पश्चात् मुक्ताः ये कवलाः तैः कुपितः, रुष्टः यः आरोहः, हस्तिपालः तस्य आरटना अनुरोधेन।

तन्द्रीनिमीलितनेत्रत्रिभागम्, कथं कथमपि मन्दमन्दमनादरा-दाददानं कवलान्, अवजग्धतमालपल्लवस्रुतश्यामलरसेन प्रभूततया मदप्रवाहमिव मुखेनाप्युत्सृजन्तम्, दलन्तमिव दर्पेण, श्वसन्तमिव शौर्येण, मूर्च्छन्तमिव मदेन, त्रुट्यन्तमिव तारुण्येन, द्रवन्तमिव दानेन, वल्गन्तमिव बलेन, माद्यन्तमिव मानेन, उद्यन्तमिवोत्साहेन, ताम्यन्तमिव तेजसा, लिम्पन्तमिव लावण्येन, सिञ्चन्तमिव सौभाग्येन, स्निग्धं नखेषु, परुषं रोमविषये, गुरुं मुखे, सच्छिष्यं विनये, मृदुं शिरसि, दृढं परिचयेषु,

---

मदेति—मदेन या तन्द्रा, निन्द्रा तया निमीलितः, नेत्रयोः त्रिभागः यस्मिन् तद् यथा तथा, कवलान्, ग्रासान, आददानं गृह्णन्तं। अवजग्धेति—अवजग्धानां, स्वादितानां, तमालपल्लवानां स्रुताः, निर्गलिताः, श्यामलाः रसाः यस्मात् तथोक्तेन, मुखेन, वदनेन प्रभूततया, प्राचुर्येण, मदप्रवाहमिव, दानवारिस्रोत इव उत्सृजन्तं, मुञ्चन्तं, दलन्तमिव, स्वयंभिद्यमानमिव, श्वसन्तमिव, जीवन्तमिव, त्रुट्यन्तमिव, स्खलन्तमिव, द्रवन्तमिव, स्रवन्तमिव। दानेन, मदेन। वल्गन्तमिव, विचेष्टमानमिव। माद्यन्तमिव, मत्ततां प्रकटन्तमिव। उद्यन्तमिव, उद्यमानमिव, ताम्यन्तमिव, क्लिश्यन्तमिव। लिम्पन्तमिव, संयोजयन्तमिव। सिञ्चन्तमिव, वर्षन्तमिव। नखेषु, स्निग्धं, प्रीतिवान्, रोमविषये, परुषं, प्रीतिशून्यः, यः, स्निग्धः, कथं, परुषः, इतिविरोधः। स्निग्धं, चिक्कणः, परुषं, कठोरः, इति परिहारः। मुखेगुरुः, विनये शिष्यम्,यः,गुरुः, सकथं शिष्यः,इतिरोधः।गुरुः विस्तीर्णः, सच्छिष्यः, सुशीलः, इति परिहारः। शिरसिमृदुं, परिचयेषु दृढं, यः कोमलः कथं स कठोरः, इति विरोधः, मृदुः, नम्रः। महन्तं जनं वीक्ष्यशिरसानतो भवति, इति परिहारः। स्कन्धबन्धे,ग्रीवामूले ह्रस्वं, लघु आयुषि

ह्रस्वं स्कन्धबन्धे, दीर्घमायुषि, दरिद्रमुदरे, सततप्रवृत्तं दाने, बलभद्रं मदलीलासु, कुलकलत्रमायत्ततासु, जिनं क्षमासु, वह्निवर्षं क्रोधमोक्षेषु, गरुडं नागोद्धृतिषु, नारदं कलहकुतूहलेषु, शुष्काशनिपातमवस्कन्देषु, मकरं वाहिनीक्षोभेषु, आशीविषं दशनकर्मसु, वरुणं हस्तपाशाकृष्टिषु, यमवागुरामरातिसंवेष्टनेषु, कालं परिणतिषु, राहुं तीक्ष्णकरग्रहेषु, लोहिताङ्गं वक्रचारेषु,

दीर्घः,यो लघुः कथं सदीर्घः,इति विरोधः। दीर्घः चिरञ्जीवीतिपरिहारः। उदरे दरिद्रं दाने सततप्रवृत्तं, यः द्ररिद्रः कथं स दानकर्त्ता,इति विरोधः। दरिद्रं, कृशं दाने मदवारिणि इति परिहारः। बलभद्रं, बलरामं, मदलीलासु मदः, दानवारि, सुरामत्तता च तल्लीलासु। कुलकलत्रं, कुलाङ्गना, आयत्तासु, वाध्यतासु, बलभद्रकुलकलत्रयोः मदमत्तता-वाध्यतयाचविरोधः। जिनं, बुद्धदेवम्, वह्निवर्षम्, अग्निवृष्टिम्, क्रोधमोक्षेषु, कोपप्रसरेषु (अत्र शमप्रधानजिनवह्निवर्षयोः क्षमाक्रोधमोक्षयोश्चविरोधः) नागोद्धृतिषु, नागानां, प्रतिपक्षहस्तिनां, सर्पाणां, च उद्धतिषु, निपातनेषु। नारदं देवर्षिं नारं जलं ददातीति तथोक्तं च कलहकुतुहलेषु, विवादकौतुकेषु, युद्धव्यापारेषु च शुष्काशनिपातं, वृष्टिं विना वज्रपतनं, अवस्कन्देषु, शत्रूणां आक्रमणेषु। मकरं, जलजन्तुभेदं वाहिनीक्षोभेषु, शत्रुसेनादलनेषु, नद्युद्वेलकरणेषु च। आशीविषं, सर्पं दशनकर्मसु, दन्तव्यापारेषु। वरुणं, जलाधिपतिं, हस्त एव पाशः हस्तपाशः तेन आकृष्टयः, आकर्षणानि तासु। यमवागुराम्, यमस्य वागुरा, प्राणबन्धनजलं, ताम्। अरातिसंवेष्टनेषु, शत्रुसमाक्रमणेषु। कालं, यमं कृष्णवर्णञ्च परिणतिषु, अन्तकर्मसु, तिर्यग्दन्तप्रहारकर्मसु, शुभाशुभकर्मविपाकेषु च। तीक्ष्णकरग्रहणेषु, तीक्ष्णेन, तीव्रेण, करेण, शुण्डेन ग्रहणानि, आक्रमणानि, (पक्षे)

अलातचक्रं मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मनोरथसंपादकं चिन्तामणिपर्वतकं विक्रमस्य, दन्तमुक्ताशैलस्तम्भनिवासप्रासादमभिमानस्य, घण्टाचामरमण्डनमनोहरमिच्छासंचरविमानं मनस्वितायाः, मदधारादुर्दिनान्धकारं गन्धोदकधारागृहं क्रोधस्य, सकाञ्चनप्रतिमंमहानिकेतनमहंकारस्य, सगण्डशैलप्रस्रवणं क्रीडापर्वतमवलेपस्य, सदन्ततोरणं वज्रमन्दिरं दर्पस्य, उच्चकुम्भकूटाट्टाल-

---

तीक्ष्णाकरः, सूर्यः, तस्य ग्रहणानि, ग्रासाः, तेषु। लोहिताङ्गं, मङ्गलग्रहं, वक्रचारेषु, कुटिलगतिषु। अलातचक्रं, तदाख्य काव्यबन्धविशेषम्, उल्मुकमण्डलं च, मण्डलभ्रान्तिविज्ञानेषु, मण्डलाकारेण भ्रान्ति, भ्रमणं तस्यां विज्ञानानि, विशिष्टानि ज्ञानानि परिचयाः, इत्यर्थः, तेषु। मनोरथसम्पादकम्, अभिमतसिद्धिदम्। चिन्तामणिः, चिन्तितवस्तुप्रदरत्नविशेषः तस्यपर्वतम्। दन्तेति—दन्तावेव मुक्ताशैलस्तम्भौ, मौक्तिकपाषाणस्तम्भौ यत्र तादृशम्, निवासप्रासादम्, निवासभवनम् अभिमानस्य। घण्टेति—घण्टाश्च, चामराणि च तेषां मण्डनेन मनोहरं, मनोज्ञम्। इच्छया यत् संचरणं, गमनं तदेवविमानं यस्य-तम्। मनस्वितायाः, वीरतायाः। मदधाराभि, दुर्दिनं, अतएव, अन्धकारं, तमसि युक्तं, गन्धोदकधारागृहं, सुवासित जलधारागृहं, क्रोधस्य, कोपस्य। सकाञ्चनेति—काञ्चनप्रतिमायुक्तम्। महानिकेतनम्, विशालमन्दिरम्, अहंकारस्य। सगण्डेति—गण्डः, कपोलः एव शैलः तत्र प्रस्रवणम्, निर्झरः तेनसहवर्तमानम्, अवलेपस्य, गर्वस्य। सदन्तेति—दन्तावेव तोरणः, वहिर्द्वारम् (पक्षे) दन्तरचिततोरणः तेन सहवर्तमानम्। वज्रमन्दिरम्, पाषाणगृहम्। उच्चेति—उच्चौ, उन्नतौ, कुम्भौ एव कूटौ यस्य तत् अट्टालकम्, हर्म्यं तद्वत् विकटं, भयंकरं, संचारि, जङ्गमं, गिरिदुर्गम्, पर्वतरूपम् महागृहम्,

कविकटं संचारि गिरिदुर्गं राज्यस्य, कृतानेकबाणविवरसहस्रं लोहप्राकारं पृथिव्याः शिलीमुखशतझांकारितं पारिजातपादपं भूनन्दनस्य, तथा च संगीतगृहं कर्णतालताण्डवानाम्, आपानमण्डपं मधुपमण्डलानाम्, अन्तःपुरं शृङ्गाराभरणानाम्, मदनोत्सवं मदलीलालास्यानाम्, अक्षुण्णप्रदोषं नक्षत्रमालामण्डलानाम्, अकालप्रावृट्कालं मदमहानदीपूरप्लवानाम्,

(यत्र शत्रुः गन्तुमसमर्थः) कृतेति—कृतानि, अनेकानि, बाणविवरसहस्राणि, बाणप्रक्षेपार्थं छिद्रसहस्राणि, यत्र तत् लोहप्राकारम्, लोहनिर्मितप्राचीरम्। शिलीति—शिलिमुखानां, मधुकराणां, बाणानां वा शतैः, झंकारितः, निनादितः, विद्धो वा, तम्। पारिजातपादपं, देवतरुविशेषः। भूनन्दनस्य, पृथ्वी एव नन्दनवनम्, तस्य, (पक्षे) पृथिवीं नन्दयति पालनेन प्रीणयति इति भूनन्दनः, राजा तस्य। कर्णतालताण्डवानां, श्रवणतालनर्तनानाम्, संगीतगृहम्। आपानमण्डपं, पानगृहं, मधुपमण्डलानां, मधुकरवृन्दानाम्, (पक्षे) मद्यपायिनाम्, शृङ्गाराभरणानाम्, शृङ्गाराः, सिन्दूरादिभिः, रचनाविशेषाः, एवाभरणानि तेषाम् (पक्षे) शृङ्गाररसभूषणानाम्। अन्तःपुरम्। मदेति—मदयतीति, मदनः, मदकरः, तस्योत्सवं (पक्षे) कामोत्सवं, मदलीलास्यानाम्। अक्षुण्णेति—अक्षुण्णः, पूर्णः, मेघावरणरहितः, प्रदोषः, निशामुखं (पक्षे) अक्षुण्णः, पूर्णः, प्रदोः प्रकृष्टहस्तः यस्य तथोक्तम् (भुजः बाहूप्रवेष्टोदोः "इत्यमरः) नक्षत्रमालाः, तारकराजयः, मण्डलानि, गोलाकारवेष्टनानि, (पक्षे) नक्षत्रमालाः, सप्तविंशतिमौक्तिकहाराः एव मण्डलानि तेषाम् अकालप्रविष्टकालं, असमयवर्षासमयम्। मदेति-मदा एव महानद्यः तासांपूराः प्रवाहाः तेषां पल्लवाः, गतिविशेषाः तेषाम्। अलीकशरत्समयं, मिथ्याशरत्कालं, सप्तच्छद-

अलीकशरत्समयं सप्तच्छदवनपरिमलानाम्, अपूर्वहिमागमं शीकरनीहाराणाम्, मिथ्याजलधरं गर्जिताडम्बराणां दर्पशातमपश्यत्।

आसीच्चास्य चेतसि—'नूनमस्य निर्माणे गिरयो ग्राहिताः परमाणुताम् कुतोऽन्यथा गौरवमिदम्। आश्चर्यमेतत्। विन्ध्यस्यदन्तावादिवराहस्य करः' इतिविस्मयमानमेनं दौवारिकोऽब्रवीत्—'पश्य।

मिथ्यैवालिखितां मनोरथशतैर्निःशेषनष्टां श्रियं
चिन्तासाधनकल्पनाकुलधियां भूयो वने विद्विषाम्।
आयातः कथमप्ययं स्मृतिपथं शून्यीभवच्चेतसां
नागेन्द्रः सहते न मानसगतानाशागजेन्द्रानपि ॥ ४ ॥

वनस्य, सप्तपर्णवनस्य, परिमलाः, गन्धाः, मदजलानमितिभावः, तेषाम्। अपूर्वहिमागमं, नूतनहेमन्तं, शीकरनिहाराणां, जलकणरूपशिशिराणाम्। मिथ्याजलधरं, अलीकपयोदं, गर्जिताडम्बराणां, गर्जितान्येव आडम्बराः तेषाम् दर्पशातमपश्यत्।

निर्माणे, सृष्टौ, ग्राहिताः, प्रापिताः, गौरवं, गुरुत्वं, आश्चर्यं, चमत्कृतिः, आदिवराहस्य, वराहरूपेणावतीर्णस्य विष्णोरित्यर्थः। विस्मयमानं, चमत्कुर्वाणम्।

मिथ्येति—निःशेषेण, नष्टा, तां। श्रियं, राजलक्ष्मीं। **मनोरथेति**—मनोरथानां, मनोकामनानां, शतैः। मिथ्यैव, मृषैव, आलिखिताम्, चित्रितां मनसिसोचितामित्यर्थः। भूयः, पुनः। **चिन्तेति**—चिन्तया, (पुनः निजश्रीप्राप्त्यर्थं कमुपायं करिष्यामः) इति सोचनेन, साधनानां, युद्धसामग्रीणां, कल्पनया आकुला धीर्येषां तथाविधानाम्। अतएव शून्यीभवच्चेतसाम्, शून्यीभवत्, (निराशीभवदित्यर्थः) चेतो

तद्देहि। पुनरप्येनं द्रक्ष्यसि। पश्य तावद्देवम्' इत्यभिधीयमानश्च तेन मदजलपङ्किलकपोलपट्टपतितां मत्तामिव मदपरिमलेन मुकुलितां कथमपि तस्माद्दृष्टिमाकृष्य तेनैव दौवारिकेणोपदिश्यमानवर्त्मा समतिक्रम्य भूपालसहस्रसंकुलानि त्रीणि कक्ष्यान्तराणि चतुर्थे मुक्तास्थानमण्डपस्य पुरस्तादजिरे स्थितम्, दूरादूर्ध्वस्थितेन प्रांशुना कर्णिकारगौरेण व्यायामव्यायतवपुषा

येषां तादृशानाम्। वने द्विषां, वनवासिनां, शत्रूणाम्। कथमपि, महता कष्टेन, स्मृति पथम् आयातः, (अहो तेनैवारणपतिना पराजिताः वयमितिभावः) स्मरणंगतः तथाविधः अयं नागेन्द्रः, गजपतिः, मानसं चित्तं, सरोवरविशेषश्चगताः तान्, आशाः, तृष्णाः, अभिलाषः, इत्यर्थः। ता एव गजेन्द्राः, आशाः, दिशः, दिग्गजाश्च तान् न सहते न क्षमते (एतस्यस्मरणेऽरीणां पुनरुद्धारस्य आशाऽपिनोदयति इतिभावः) अत्र आशासु गजेन्द्राणामभेदारोपात् रूपकालङ्कारः, शार्दूलविक्रीडित वृत्तम्॥४॥ मदेति—मदजलेन, पङ्किलः, मलिनः, कपोलपट्टः, गण्डतट, तत्र पतिताम्। मदेति—मदपरिमलेन, मदगन्धेन, मुकुलितां, मत्तामिव, क्षीवामिव, दृष्टिं, लोचनम्, आकृष्य, निवर्त्य। भूपालेति—भूपालसहस्राणि, नृपसहस्राणि, तैः संकुलानि, व्याप्तानि कक्षान्तराणि। चतुर्थे इत्यारभ्य चक्रवर्त्तिनं हर्षम् अद्राक्षीत्, इत्यनेनान्वयः। सत्येति—सत्यस्य, सत्यनिरूपणस्य, यत् आस्थानमण्डपं, सभागृहं, तस्य विचारालयस्येतिभावः। पुरस्तात्, अग्रतः, अजिरे, अंगने, स्थितं, तिष्ठन्तं, दूरात्, ऊर्द्धस्थितेन, दण्डायमानेन, प्रांशुना, उन्नतकायेन, कर्णिकारः, पुष्पभेदः, तद्वत् गौरेण, शुभ्रेण। व्यायामेति—व्यायामेन, व्यायतं विभक्तावयवं, वपुः शरीरं यस्य तेन। शस्त्रिणा, शस्त्रपाणिना। शरीरपरिचारकः, शरीरसेवकः, तादृशः

शस्त्रिणा मौलेन शरीरपरिचारकलोकेन पङ्क्तिस्थितेन कार्त-स्वरस्तम्भमण्डलेनेव परिवृतम् , आसन्नोपविष्टविशिष्टेष्टलोकम्, हरिचन्दनरसप्रक्षालिते तुषारशीकरशीतलतले दन्तपाण्डुरपादे शशिमये इव मुक्ताशैलशिलापट्टशयने समुपविष्टम् , शयनीय-पर्यन्तविन्यस्ते समर्पितसकलविग्रहभारं भुजे, दिङ्मुखविस-र्पिणि देहप्रभावितानेः विततमणिमयूखे घर्मसमयसुभगे सर-सीव मृदुमृणालजालजटिलजले सराजकं रममाणम् , तेजसः

लोकस्तेन। **कार्तेति**—कार्त्तस्वरं, स्ववर्णं, तस्यस्तम्भमण्डलेन, स्तम्भनिवहेन, (स्वर्णं सुवर्णं रुक्मं कार्त्तस्वरम् "इत्यमरः) परिवृतं, परिच्छादितम् । **आसन्नेति**—आसन्ने समीपे, उपविष्टाः, स्थिताः, विशिष्टाः, सम्भ्रान्ताः, इष्टाः, अभिलषिताः लोकाः यस्य तम् । **हरिचन्दनेति**—हरिचन्दनस्य, मलयजस्य, यः, रसः, द्रवः, तेन, प्रक्षालिते, विधौते। **तुषारेति**—तुषारशीकरवत् शीतलं, तलं यस्य तथोक्ते। **दन्तेति**—दन्तवत् , पाण्डुरौ, श्वेतौ, पादौ, चरणौ यस्य तथाविधे। शशिमये इव, चन्द्रमये इव, मुक्ताशैलस्य, मौक्तिकपर्वतस्य, शिलापट्ट एव शयनं, शय्या तस्मिन् । समुपविष्टम् । **शयनीयेति**—शयनीयस्य, शय्यातलस्य, पर्यस्ते, प्रान्तभागे, विन्यस्तः, निहितः, तस्मिन् । भुजे, करे। **समर्पितेति**—समर्पितः, निहितः, सकलस्य, विग्रहस्य, शरीरस्य, भारं येन तम् । **दिङ्मुखेति**—दिशां, मुखानि, विसर्पति, व्याप्नोति तथाविधे, देहप्रभाविताने, अङ्गकान्तिविस्तारे। **विततेति**—विततः, विस्तृताः, मणीनां, मयूखाः, किरणाः, यत्र तस्मिन् , घर्मसमयसुभगे, ग्रीष्मकालरमणीये। **मृद्धिति**—मृदुभिः, कोमलैः, मृणालजालैः, बिससञ्चयैः, जटिलानि, जालानि यत्र तस्मिन् । सराजकं, राजगणसहितम् , रममाणं, विहरन्तं, केवलैः, तेजसः,

परमाणुभिरिव केवलैर्निर्मितम्, अनिच्छन्तमपि बलादारोपयितुमिव सिंहासनम्, सर्वावयवेषु सर्वलक्षणैर्गृहीतम्, गृहीतब्रह्मचर्यमालिङ्गितं राजलक्ष्म्या, प्रतिपन्नासिधाराधारणव्रतम-विसंवादिनं राजर्षिम्, विषमराजमार्गविनिहितपदस्खलनभियेव सुलग्नं धर्मे, सकलभूपालपरित्यक्तेन भीतेनेव लब्धवाचा सर्वात्मना सत्येन सेव्यमानम्, आसन्नवारविलासिनीप्रतियातनाभिश्चरणनखपातिनीभिर्दिग्भिरिव दशभिः प्रणम्य-

प्रतापस्य, प्रमाणुभिः, निर्मितं, सृष्टम्। अनिच्छन्तं, इच्छारहितम्, सर्वावयवेषु, हस्तपादादिषु, सर्वलक्षणैः, शुभ चिह्नैः, गृहीतं, युक्तम्। गृहीतं, अवलम्बितं, ब्रह्मचर्यं येन तम्। राजलक्ष्म्याः, नृपश्रियाः, आलिङ्गितम्। **प्रतिपन्नेति**—प्रतिपन्नं, अवलम्बितम्, असिधाराधारणव्रतं, खड्गग्रहणव्रतं, विसंवादी, विरुद्धवक्ता स न तं। **विषमेति**—विषमे, दारुणे, नतोन्नतरूपे च, राजमार्गे, राजनीतौ, राजपथे च विनिहितस्य, अर्पितस्य, पादस्य, स्खलनभियेव, धर्मेसुलग्नम्। **सकलेति**—सकलैः, भूपालैः, परित्यक्तः, तेन भीतेनेव लब्धा, गृहीता वाक् तेन। सर्वात्मना, सर्वस्वरूपेण, सत्येन, सेवमानं, परिचर्यमाणम्। **आसन्नेति**—आसन्नानां, निकटस्थितानां, वारविलासिनीनां, वेश्यानां, प्रतियातनाभिः, प्रतिच्छायाभिः, चरणनखपातिनीभिः, दशभिः, दिग्भिरिव, प्रणम्यमानं, अभिवन्द्यमानम्, दीर्घैः, आयतैः, दिगन्तपातिभिः, दिगन्तगामिभिः, लोकपालानां, इन्द्रादीनां, कृताकृतमिव, कार्याकार्यमिव प्रत्यक्षवेक्षमाणम्, परिपश्यन्तम्। **मणीति**—मणिपादपीठस्य, पृष्ठे, उपरि, प्रतिष्ठिताः पतिताः रक्षिताश्च कराः, किरणाः, हस्तश्च यस्य तेन, दिवसकरेण, सूर्येण, **उपरीति**—उपरिगमने, ऊर्द्धगमने, या अभ्यनुज्ञा, अनुमतिः, तां मृग्यमाणामिव, प्रार्थ-

मानम्, दीर्घैर्दिगन्तपातिभिर्दृष्टिपातैर्लोकपालानां कृताकृतमिव प्रत्यवेक्षमाणम्, मणिपादपीठपृष्ठप्रतिष्ठितकरेणोपरिगमनाभ्यनुज्ञां मृग्यमाणमिव दिवसकरेण, भूषणप्रभासमुत्सारणबद्धपर्यन्तमण्डलेन प्रदक्षिणीक्रियमाणमिव दिवसेन, अप्रणमद्भिर्गिरिभिरपि दूयमानं, शौर्योष्मणा फेनायमानमिव चन्दनधवलं लावण्यजलधिमुद्वहन्तमेकराज्योर्जितेन, निजप्रतिबिम्बान्यपि नृपचक्रचूडामणिधृतान्यसहमानमिव दर्पदुःखासिकया चामरानिलनिभेन बहुधेव श्वसन्तीं राजलक्ष्मीं दधानम्, सकलमिव चतुःसमुद्रलावण्यमादायोत्थितया श्रिया समुपश्लिष्टम्, आभरणप्रभाजालजायमानानीन्द्रधनुःसहस्राणीन्द्रप्राभृतप्रहितानि

मानमिव। भूषणेति—भूषणानाम्, अलंकाराणां, प्रभाभिः, किरणैः, समुत्सारणेन, सन्ताडनेन, बद्धं, धृतं, पर्यन्तेषु, मण्डलं, गोलं, येन तथोक्तेन। प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, वेष्ट्यमानम्। दिवसेन, दिनेन। अप्रणमद्भिः, प्रणानिमकुर्वद्भिः, गिरिभिः, पर्वतैरपि:, दूयमानमिव, सन्तप्यमानमिव। शौर्योष्मणा, बलोष्मणा, फेनायमानमिव। **एकेति**—एकराज्येन, ऊर्जितः, तस्य, भावः, एकराज्योर्जितत्वेन। लावण्यजलधिं, सौन्दर्याब्धिं, उद्वहन्तम्। नृपचक्रैः, राजमण्डलैः, चूडामणिभिः, शिरोरत्नैः, धृतानि, गृहीतानि, निजप्रतिबिम्बानि, असहमानमिव, अक्षममानमिव। दर्पदुःखासिकया, अहंकारजशोककृपाणेन, चामरानिलनिभेन, चामरमरुतव्याजेन, बहुधा श्वसन्तीं, राजलक्ष्मीं, दधानम्। सकलं। **चतुरिति**—चतुर्णां, समुद्राणां समाहारः चतुस्समुद्रम् तस्यलावण्यं तत्। आदाय, गृहीत्वा, उत्थितया, आविर्भूतया, श्रियाः, लक्ष्याः, समुपसृष्टमिव, समालिङ्गितमिव। **आभरणेति**—आभरणानां प्रभाजालेन, दीप्तिसमूहेन, जायमानानि, उत्पद्यमानानि, इन्द्रधनुषां,

विलभमानमिव राज्ञां संभाषणेषु परित्यक्तमपि मधु वर्षन्तम् काव्यकथास्वपीतमप्यमृतमुद्वमन्तम्, विस्रम्भभाषितेष्वनाकृष्टमपि हृदयं दर्शयन्तम्, प्रसादेषु निश्चलामपि श्रियं स्थाने स्थाने स्थापयन्तम्, वीरगोष्ठीषु पुलकितेन कपोलस्थलेनानुरागसंदेशमिवोपांशु रणश्रियः शृण्वन्तम्, अतिक्रान्तसुभटकलहालापेषु स्नेहवृष्टिमिव दृष्टिमिष्टे कृपाणे पातयन्तम्, परिहासस्मितेषु गुरुप्रतापभीतस्य राजकस्य स्वच्छमाशयमिव दशनांशुभिः

इन्द्रचापानाम्, सहस्राणि, इन्द्रप्रभृतप्रहितानि, इन्द्रेण, प्राभृतेन, उपोढकत्वेन, प्रहितानि, प्रेषितानि। विलभमानमिव, प्रापमाणमिव। राज्ञां, सम्भाषणेषु, समालपनेषु परित्यक्तम्। मधुवर्षन्तम्, मधुरसवमन्तं काव्यकथासु, अपीतमपि, अनास्वादितं, अमृतं, पीयूषं, उद्वमन्तम्। विस्रम्भभाषितेषु विश्वस्ताऽऽलापेषु, अनाकृष्टमपि, अगृहीतमपि, हृदयं, मनोऽभिप्रायं, दर्शयन्तं, प्रकटयन्तम्, प्रसादेषु, प्रसन्नतासु, निश्चलामपि, स्थिरामपि, श्रियं, लक्ष्मीं, स्थाने, योग्ये, स्थापयन्तम्। वीरगोष्ठीषु, वीरसमाजेषु, पुलकितेन, रोमाञ्चितेन, कपोलस्थलेन, गण्डदेशेन, उपांशु, रहसि रणश्रियाः, संग्रामलक्ष्म्याः अनुरागसंदेशमिव शृण्वन्तम्, आकर्णयन्तम्। **अतिक्रान्तेति**—अतिक्रान्ताः, अतीताः, सुभटानां सुयोद्धॄणां, कलहाः तेषां आलापाः कथा तेषु, इष्टेकृपाणे, स्नेहवृष्टिमिव, स्नेहवर्षणमिव, दृष्टिं, लोचनं पातयन्तम्। परिहासस्मितेषु, नर्म्महासेषु, गुरुणा, महता, प्रतापेन, तेजसा, भीतस्य, त्रस्तस्य, राजकस्य, राजचक्रस्य, दशनांशुभिः, दन्तकिरणैः, स्वच्छं, निर्मलं, आशयं अभिप्रायं कथयन्तम्। **सकलेति**—सकलानां; लोकानां, जनानां, हृदयेषु स्थितमपि न्याये, नीतिमार्गे तिष्ठन्तं, वर्तमानम्, यः सर्वलोकहृदिस्थः कथं स एकत्रतिष्ठतीति विरोधः। नहि अन्याय्यमाचरतीतिपरिहारः।

कथयन्तम्, सकललोकहृदयस्थितमपि न्याये तिष्ठन्तम्, अगोचरे गुणानामभूमौ सौभाग्यानामविषये वरप्रदानानामशक्ये आशिषाममार्गे मनोरथानामतिदूरे दैवस्यादिस्युपमानानामसाध्ये धर्मस्यादृष्टपूर्वं लक्ष्म्या महत्वे स्थितम्, अरुणपादपल्लवेन सुगतमन्थरोरुणा वज्रायुधनिष्ठुरप्रकोष्ठपृष्ठेन वृषस्कन्धेन भास्वद्बिम्बाधरेण प्रसन्नावलोकितेन चन्द्रमुखेन कृष्णकेशेन वपुषा सर्वदेवतावतारमिवैकत्र दर्शयन्तम्, अपि च मांसलमयू-

गुणानां, विद्याविनयादीनां, अगोचरे, अविषये। सौभाग्यानां, अभूमौ, अस्थाने, वरप्रदानानां, अविषये, अगोचरे, आशिषां, अशक्ये, असाध्ये, मनोरथानां, अतिदूरे, उपदिश्यमानानां, सादृश्य, बोधकानाम्, असाध्ये, साधयितुमशक्ये, धर्मस्य, (कर्त्तरिषष्ठी) अदृष्टपूर्वे, प्रागदृष्टे, लक्ष्म्यामहत्वे, उत्कर्षे। **अरुणेति**— अरुणः, रक्तः, पादपल्लवः, चरणकिसलय, यस्य तेन (पक्षे) अरुणस्य, सूर्यसारथेः, पादपल्लवेन। **सुगतेति**—सुष्ठु, गतं, गमनं, ययोः तथाभूतौ मन्थरौ, मृदुगामिनौ, उरू यस्य तेन (पक्षे) सुगतः, बुद्धः तस्य मन्थरः, मन्दगामी उरुः तेन। **वज्रेति**— वज्रं, कुलिशमेव आयुधं, अस्त्रविशेषः तद्वत् निष्ठुरं, कठिनं, प्रकोष्ठः, करस्यमणिबन्धभागः, पृष्ठं च यस्य तेन (पक्षे) वज्रायुधः, इन्द्रः तस्य निष्ठुरं प्रकोष्ठः, पृष्ठं तेन। **वृषस्कन्धेन**, बलिवर्दांसेन (पक्षे) वृषस्य, धर्मस्य स्कन्धस्तेन। **भास्वदिति**—भास्वान्, दिप्यमानः, बिम्बमिवाधरो यस्य (पक्षे) भास्वतः, सूर्यस्य बिम्बमिवाधरः तेन। **प्रसन्नेति**—प्रसन्नं, निर्मलं, अवलोकितं, दर्शनं यस्य तेन, (पक्षे) प्रसन्नः, आशुतोषः (शिवः) तस्य अवलोकितं, दर्शनमिव तेन। चन्द्रमुखेन, कृष्णकेशेन, कृष्णबालेन (पक्षे) श्रीहरेः केशेन, वपुषा, शरीरेण, सर्वदेवतावतारमिव। **मांसलेति**— मांस-

खमालामलिनितमहीतले महति महार्हे माणिक्यमालामण्डित-मेखले महानीलमये पादपीठे कलिकालशिरसीव सलीलं विन्य-स्तवामचरणम्, आक्रान्तकालियफणाचक्रवालं बालमिव पुण्ड-रीकाक्षम्, क्षौमपाण्डुरेण चरणनखदीधितिप्रतानेन प्रसरता महीं महादेवीपट्टबन्धेनेव महिमानमारोपयन्तम्, अप्रणतलोकपा-लकोपेनेवातिलोहितौ सकलनृपतिमौलिमालास्वतिपीतं पद्म-

लाभिः, महतीभिः, मयूखानां, किरणानां मालाभिः, समूहैः, मलि-नितम्, मलयुक्तम्, महीतलं येन तथोक्ते। **महतीति**—महति, महार्हे, महामूल्ये, **माणिक्येति**—माणिक्यमालया, मण्डिता, अलङ्कृता, मेखला, नितम्बभागः, (मध्यभागः, इत्यर्थः) यस्य तादृशे। महानील-मये, महानीलमणिनिर्मिते, कलिकालशिरसि इव, कलिमूर्द्धनि इव, सलीलं, सविलासं, **विन्यस्तेति**—विन्यस्तः, निहितः, वामचरणः, येन तथोक्तम्। **आक्रान्तेति**—आक्रान्तं, व्याप्तं, कालियस्य, नाग-विशेषस्य, फणाचक्रवालं, फणमण्डलं येन तथोक्तम्, बालं, शिशुं-पुण्डरीकाक्षम्, श्रीकृष्णमिव, (पक्षे) पुण्डरीके, श्वेतपद्मे इव अक्षिणी यस्य तथोक्तम्। क्षौमपाण्डुरेण, क्षौमं, श्वेतपट्टम्, तद्वत् पाण्डुरः, धवलः तेन। **चरणेति**—चरणनखानां, दीधितिप्रतानेन, मयूख-विस्तारेण, महीं, पृथ्वीं, प्रसरता, व्याप्नुवता। **महादेवीति**—महा-देवी, तस्याः पट्टबन्धः, क्षौमाच्छादनविशेषः, तेनेव महिमानं, महत्वं, आरोपयन्तम्। **अप्रणतेति**—नप्रणताः, अप्रणताः ते च ते लोक-पालाश्चेति अप्रणतलोकपालाः तेषु कोपः, क्रोधस्तेनेव, अतिलोहितौ, अतिरक्तौ अतएव। **सकलेति**—सकलानां, समग्राणां, नृपतीनां, राज्ञां मौलिमालासु, मुकुटराजिषु, अतिपीतम्, अतिशयेन, गृहीतं, पद्मरागरत्नानां, तदाख्यमणीनां, आतपमिव, वमन्तौ, उद्गिरन्तौ।

रागरत्नातपमिव वमन्तौ सर्वतेजस्विमण्डलास्तमयसंध्यामिव धारयन्तावशेषराजककुसुमशेखरमधुरसस्रोतांसीव स्रवन्तौ समस्तसामन्तसीमन्तोत्तंसस्रक्सौरभभ्रान्तैर्भ्रमरमण्डलैरमित्रोत्तमाङ्गैरिव मुहूर्तमप्यविरहितौ संवाहनतत्परायाः श्रियो विकचरक्तपङ्कजवनवासभवनानीव कल्पयन्तौ जलजशङ्खमीनमकरसनाथतलतया कथितचतुरम्भोधिभोगचिह्नाविव चरणौ दधानम्,

सर्वेति—सर्वेषां तेजस्विमण्डलानां, वीरसमूहानां, (सूर्यादीनामिति-भावः) अस्तमयसन्ध्यामिव, नाशप्राप्तिरूपसायंकालमिव, अस्तगमन सन्ध्याकालमिव च धारयन्तौ दधानौ। अशेषेति—अशेषाणां, समस्तानां, राज्ञां कुसमानि पुष्परचितानि इति भावः, यानि शेखराणि, शिरोभूषणानि, तेषां मधुरसाः, मकरन्दरसाः तेषां स्रोतांसीव प्रवाहानिव, स्रवन्तौ, वर्षन्तौ। समस्तेति—समस्तानां, सामन्तानां, अधीश्वराणाम् (सामन्तः स्यादधीश्वरः—इत्यमरः) सीमन्ताः, संयताः, केशाः तेषां, उत्तंसाः, मण्डनानि याः स्रजः, मालाः, तासां सौरभेण, सुगन्धेन, भ्रान्तानि, घूर्णमानानि तैः। भ्रमरमण्डलैः, मधुकरवृन्दैः, अमित्रोत्तमांगैः, शत्रुशिरोभिः, अविरहितौ, युक्तौ। संवाहनेति—संवाहनं, शरीरमर्दनरूपासेवा तस्मिन् तत्परा, रता, तस्याः श्रियः, लक्ष्म्याः। विकचेति—विकचानि, प्रफुल्लानि, रक्तपङ्कजवनानि, रक्तकमलकाननानि, एव वासभवनानि तानीव कल्पयन्तौ, रचयन्तौ। जलजेति—जलजं, कमलं, शङ्खः, कम्बुः, मीनः, मत्स्यः, मकरः, जलजीवभेदः, तैः, सनाथं, युक्तम्, तलं ययोः तयोर्भावः तत्ता तया। कथितेति—कथितं, प्रकटितं, चतुर्णाम्, अम्भोधीनां, सागराणां, भोगचिन्हं, भोगलक्षणं याभ्यां तथाभूताविव चरणौ, पादौ, दधानं, धारयन्तम्। दिङ्नागेति—दिङ्नागस्य, दिग्गजस्य, दन्तौ,

दिङ्नागदन्तमुसलाभ्यामिव विकटमकरमुखप्रतिबन्धबन्धुराभ्यामुद्वेललावण्यपयोनिधिप्रवाहाभ्यामिव फेनाहितशोभाभ्यां कल्पचन्दनद्रुमाभ्यामिव भोगिमण्डलशिरोरत्नरश्मिरज्यमानमूलाभ्यां हृदयारोपितभूभारधारणमाणिक्यस्तम्भाभ्यामूरुदण्डाभ्यां विराजमानम्, अमृतफेनपिण्डपाण्डुना, मेखलामणिमयूखखचितेन, नितम्बबिम्बव्यासङ्गिना, विमलपयोधौतेन, नेत्रसूत्रनिवे-

---

मुसलौ, ताभ्यामिव। विकटेति—विकटः, उत्कटः, यो मकरस्य, जलजीवभेदस्य, मुखमिव प्रतिबन्धः, तेन बन्धुरौ, उन्नतानतौ ताभ्यां (बन्धुरन्तून्नतानतम्—इत्यमरः) (पक्षे) विकटः, यो मकरमुखः, मकरमुखाकृति भूषणविशेषः, स एव प्रतिबन्धः तेन बन्धुरौ, रम्यौ ताभ्याम्। उद्वेलेति—उद्वेलः, उच्छलन्, वेलातिक्रान्तश्च यः लावण्यपयोधिः, लावण्यसागरः, तस्य प्रवाहाविव स्रोतसीव, ताभ्याम्। फेनेति—फेनैः, आहिता, जनिता, ययोः, ताभ्याम्। भोगीति—भोगीनां, नृपाणाम्, सर्पाणां च (भोगी भुजङ्गमेऽपिस्यात् ग्रामपात्रेनृपेपुमान्—इत्यमरः) मण्डलस्य, वृन्दस्य, शिरोरत्नानि, तेषां रश्मिभिः, मयूखैः, रज्यमाने, अलङ्क्रियमाणे, मूले, पादमूले, वृक्षमूले च ययोः ताभ्याम्। हृदयेति—हृदयं, चित्तं, तत्र, आरोपितः, यो भूभारः, तस्य धारणे, माणिक्यस्तम्भौ ताभ्याम्। उरुदण्डाभ्यां विराजमानम्। अमृतेति—अमृतस्य, फेनपिण्डः, फेनराशिः तद्वत् (पक्षे) फेनपिण्डैः, पाण्डुः, धवलः, तेन। मेखलेति—मेखला, काञ्ची, तत्र ये मणयः, रत्नानि (पक्षे) मेखलासु, नितम्बेषु। मन्दरस्येति—मन्दरस्य ये मणयः, तेषां मयूखैः, किरणैः, खचितं, तेन नितम्बबिम्बसङ्गिना, नितम्बमण्डलसंसक्तेन, (पक्षे) कटितटव्यापिना। विमलेति—विमलैः, स्वच्छैः, पयोभिः, जलैः, (पक्षे) दुग्धैः, धौतेन,

शशोभिनाधरवाससा वासुकिनिर्मोकेणेव मन्दरं द्योतमानम्, अघनेन, सतारागणेनोपरिकृतेन द्वितीयाम्बरेण भुवनाभोगमिव भासमानम्, इभपतिदशनमुसलसहस्रोल्लेखकठिनमसृणेनापर्याप्ताम्बरप्रथिम्ना विविधवाहिनीसंक्षोभकलकलसंमर्दसहिष्णुना कैलासमिव महता स्फटिककतटेनोरुणोरः कपाटेन राजमानम्,

क्षालितेन। नेत्रेति—नेत्रस्य, वस्त्रविशेषस्य (नेत्रं मथिगुणे वस्त्रभेदे मूले द्रुमस्य च इति मेदिनी) सूत्राणां, तन्तूनां, निवेशेन, रचनया, (पक्षे) नेत्रं, मन्थनरज्जुः, तस्य सूत्राणां, निवेशेन, आधानेन, शोभते इति तथोक्तेन। अधरवाससा, परिधानवस्त्रेण। वासुकिनिर्मोकेणेव, वासुकेः, नागराजस्य, निर्मोकेणेव, कञ्चुकेनेव। मन्दरं, तदाख्यं पर्वतं, द्योतमानं, राजमानं, अघनेन, सूक्ष्मेण, घनः, मेघः, तद्रहितेन च। सतारागणेन, ताराः, सूत्रबिन्दवः, नक्षत्राणि च तेषां गणाः, समूहः तत्सहितेन। उपरिकृतेन, उपरिधृतेन, (पक्षे) ऊर्द्धवर्त्तिना। द्वितीयेति—द्वितीयेन, अम्बरेण, वसनेन, गगनेन च। भुवनाऽऽभोगमिव, भुवनाऽऽयामामिव, भासमानं, विराजमानम्। इभपतीति—इभपतेः, गजपतेः, दशना एव मुसलानि, तेषां सहस्राणां, उल्लेखेन, निखननेन, कठिनं दृढं मसृणं, कोमलं च (पक्षे) चिक्कणं तेन। अपर्याप्तेति—अपर्याप्तं, यत् अम्बरं, आकाशं, तस्येव प्रथिमा तेन (पक्षे) अपर्याप्ते अम्बरे प्रथिमा, विस्तारो यस्य तेन। विविधेति—विविधानां, बहुविधानां, वाहिनीनां, चमूनां, संक्षोभे, समवाये, यः कलकलः, कोलाहलः, तेन संमर्दः, संक्लेशः (पक्षे) वाहिनीनां, नदीनां, संक्षोभे, यः कलकलः, तेन सम्मर्दः, तं सहितुं शीलमस्येति तथोक्तेन। उरुणा, महता, उरः कपाटेन, वक्षस्थलरूप कपाटेन। महता, स्फटिकतटेन कैलासमिव, एतदाख्यपर्वतमिव विराजमानम्।

श्रीसरस्वत्योरुरोवदनोपभोगविभागसूत्रेणेव पातितेन शेषेणेव च तद्भुजस्तम्भविन्यस्तसमस्तभूभारलब्धविश्रान्तिसुखप्रसुप्तेन हारदण्डेन परिवेष्टितकंधरम्, जीवितावधिगृहीतसर्वस्वमहादानदीक्षाचीरेणेव हारमुक्ताफलानां किरणनिकरेण प्रावृतवक्षःस्थलम्, अजजिगीषया बालैर्भुजैरिवापरैः प्ररोहद्भिर्बाहूपधानशायिन्याः श्रियाः कर्णोत्पलमधुरसधारासंतानैरिव गलद्भिर्भुज-

श्रीसरस्वत्योरिति— श्रीसरस्वत्योः, लक्ष्मीवाग्देव्योः, उरोवदनयोः, यथा क्रमेण लक्ष्म्या उरसः वाग्देव्या वदनस्येतिभावः, उपभोगः, सम्भोगः तस्य विभागसूत्रं, सीमाबन्धनसूत्रम्, तेनेव पातितेन, पराजयेनेतिभावः। **तद्भुजेति**—तस्य, हर्षस्य भुजः, एवस्तम्भः, तस्मिन् विन्यस्तः, यः समस्तः, भूभारः, पृथ्वीभारः, तेन लब्धा, प्राप्ता, या विश्रान्तिः, विश्रामः, तया सुखं यथा तथा प्रसुप्तः, निद्रितः तेन शेषेण, अनन्तनागेनेव। हारदण्डेन, हारयष्टिना, परिवेष्टिता, आलिङ्गिता, कन्धरा, ग्रीवा यस्य तं। **जीवितेति**—जीवितं, जीवनं, अवधिः, शेषो येषां तानि, गृहीतानि, यानि, सर्वाणि स्वानि, धनानि, तेषां महादानं, तस्मिन् या दीक्षा, व्रतधारणनियमविशेषः, तस्याः चीरं, कौपीनम्, तेनेव। **हारेति**—हारस्य, जालमालायाः, मुक्तानां, मौक्तिकानां, किरणाः, मयूखाः तेषां निकरेण, समूहेन। **प्रावृतेति**—प्रावृत्तं, आच्छादितं, वक्षःस्थलं, येन यस्य वा तम्। **अजेति**—न जायते इति अजः, विष्णुः, जिगीषा, जयेच्छा तया (अजाविष्णु हरच्छागाः इत्यमरः) बालैः, नवैः, प्ररोहद्भिः, जायमानैः, भुजैरिव। **बाहूपधानेति**—बाहूरेव, उपधानं, उपबर्हः तत्र शायिन्याः, श्रियः, लक्ष्म्याः। **कर्णोत्पलेति**—कर्णोत्पलस्य, अवतंसभूतकमलस्य, मधुरसधाराणां, मकरन्दप्रवाहाणां, सन्तानैरिव, समूहैरिव, गलद्भिः, क्षरद्भिः, भुजजन्मनः,

जन्मनः प्रतापस्य निर्गमनमार्गैरिवाविर्भवद्भिररुणैः केयूररत्न-किरणदण्डैरुभयतः प्रसारितमणिमयपक्षवितानमिव माणिक्य-महीधरम्, सकललोकालोकमार्गार्गलेन चतुरुदधिपरिक्षेपखा-तशिलाप्राकारेण सर्वराजहंसबन्धवज्रपञ्जरेण भुवनलक्ष्मीप्रवेश-मङ्गलमहामणितोरणेनातिदीर्घदोर्दण्डयुगलेन दिशां दिक्पालानां च युगपदायतिमपहरन्तम्, सोदर्यलक्ष्मीचुम्बनलोभेन कौस्तु-भमणेरिव मुखावयवतां गतस्याधरस्य गलता रागेण पारिजात-

बाहुजनितस्य, प्रतापस्य, तेजसः, निर्गमनमार्गैरिव। आविर्भवद्भिः, प्रकटयद्भिः, अरुणैः, रक्तैः। केयूरेति—केयूररत्नानां, अङ्गदस्थमणीनां, किरणा एव दण्डा स्तैः। प्रसारितेति—प्रसारितौ, मणिमयौ, पक्षवितानौ, विस्तृतपक्षौ, यस्य तथोक्तम्। माणिक्यमहीधरं, माणि-क्यरत्ननिर्मितपर्वतम्। सकलेति—सकलानां, लोकानां, आलोकः, उद्योतः, तस्य मार्गः, पन्था, तस्य अर्गलः तेन। चतुरिति—चतुर्णां, उदधीनां, समुद्राणां, सम्बन्धी, परिक्षेपः, परिवेष्टनमेव, खातानि, परिखाः, तेषां शिलाप्राकारः पाषाणनिर्मितं (प्राचीरमित्यर्थः) तेन। सर्वेति—सर्वेषां, राजहंसानां, नृपश्रेष्ठानां, बन्धे, बन्धने, वज्रपिञ्जरं, (पाषाणनिर्मितपिञ्जरमित्यर्थः) तेन। भुवनेति—भुवनानां, लक्ष्म्याः, प्रवेशस्य मंगलं, महामणितोरणं, अनर्घ्यमणिनिर्मितबहिर्द्वारं तेन। अतिदीर्घेति—अतिदीर्घं, अत्यायतं, दोर्दण्डयुगलं, भुजदण्डद्वयं तेन युगपत्, समकालं, आयतिं, दैर्घ्यं, प्रभावञ्च अपहरन्तं, नाशयन्तम्। सौदर्येति—सौदर्या, सहोदरा, या लक्ष्मीः, श्रीः तस्याः चुम्बनाय, लोभः तेन। कौस्तुभमणेरिव, (क्षीरसागरोत्पन्नतया सहोदरस्येवेत्यर्थः) मुखावयवतां, वदनाङ्गतां, गतस्य, प्राप्तस्य, अधरस्य, गलता, स्रवता, रागेण, लौहित्येन, पारिजातपल्लवरसेनेव, पारिजातदेवतरुकिसलय

पल्लवरसेनेव सिञ्चन्तं दिङ्मुखानि, अन्तरान्तरा सुहृत्परिहासस्मितैः प्रकीर्यमाणविमलदशनशिखाप्रतानैः प्रकृतिमूढाया राजश्रियाः प्रज्ञालोकमिव दर्शयन्तम्, मुखजनितेन्दुसंदोहागतानि कुमुदिनीवनानीव प्रेषयन्तम्, स्फुटधवलदशनपङ्क्तिकृतकुमुदवनशङ्काप्रविष्टां शरज्ज्योत्स्नामिव विसर्जयन्तम्, मदिरामृतपारिजातगन्धगर्भेण भरितसकलककुभा मुखामोदेनामृतमथन दिवसमिव सृजन्तम्, विकचमुखकमलकर्णिकाकोशेनानवरतमापीयमानश्वाससौरभमिवाधोमुखेन नासावंशेन, चक्षुषः क्षीर

द्रवेणेव, दिङ्मुखानि, सिञ्चन्तं, क्षालयन्तम्। अन्तरान्तरा, मध्येमध्ये। **सुहृदिति**—सुहृद्भिः, सह ये परिहासाः, तेषु स्मितानि, मन्दहासाः तैः। **प्रकीर्यमाणेति**—प्रकीर्यमाणाः, विक्षिप्यमाणाः, विमलाः, दशनकिरणानां, दन्तमयूखानां, शिखाप्रतानाः, अर्चिनिचयाः, येषु तथोक्तैः। प्रकृतिमूढायाः, स्वभावमुग्धायाः, राजश्रियः, नृपलक्ष्म्याः। प्रज्ञाप्रलोकमिव, ज्ञानद्युतिमिव दर्शयन्तम्। **मुखेति**—मुखे, जनितः यः इन्दुसन्देहः तेन आगतानि, कुमुदिनीवनानीव, प्रेषयन्तं, इन्दुरयं नेति कृत्वा विसर्जयन्तम्। **स्फुटेति**—स्फुटधवला, या दशनपङ्क्तिः, तया कृता, जनिता, या कुमुदवनशङ्का, तया प्रविष्टां, (मुखाभ्यन्तरमितिभावः) शरज्ज्योत्स्नां, शरत्कालिककौमुदीमिव, विसर्जयन्तं, (नैतानि कुमुदवनानीति कृत्वा त्यजन्तम्) **मदिरेति**—मदिराऽमृतवत् यः पारिजातगन्धः, सगर्भे यस्य तेन। भरितसकलककुभाः, सर्वदिक्प्रसारिणेति यावत्, मुखामोदेन, वदनसौरभेण, अमृतमथनदिवसमिव, पियूषमन्थनदिनमिव, सृजन्तं, जनयन्तम्। **विकचेति**—विकचं, प्रफुल्लं, मुखं, कमलमिव तस्य कर्णिकाकोशः, बीजकोशस्तेन (कर्णिका करिहस्ताग्रे ऽब्जवराटे कर्णभूषणे इति मेदिनी) अधोमुखेन,

स्निग्धस्य धवलिम्ना दिङ्मुखान्यपूर्ववदनचन्द्रोदयोद्वेलक्षीरोदप्लावितानीव कुर्वाणम्, विमलकपोलफलकप्रतिबिम्बितां चामरग्राहिणीं विग्रहिणीमिव मुखनिवासिनीं सरस्वतीं दधानम्, अरुणेन चूडामणिशोचिषा सरस्वतीर्ष्याकुपितलक्ष्मीप्रसादनलग्नेन चरणालक्तकेनेव लोहितायितललाटतटम्, आपाटलांशुतन्त्रीसंतानवलयिनीं कुण्डलमणिकुटिलकोटिबालवीणामनवरतचलितचरणानां वादयतामुपवीणयतामिव स्वरव्याकरणविवेक-

नताननेन, नासिकारूपवेणुना, अनवरतं निरंतरम्, आपीयमानम्, आघ्रायमाणं श्वासस्य, सौरभं, येन तथोक्तम्। क्षीरेति—क्षीरवत् स्निग्धं तस्य चक्षुषः धवलिम्ना, श्वैत्येन, दिङ्मुखानि, अपूर्वः, वदनमेव चन्द्रः तस्य उदयेन उद्वेलः, वेलायामुच्छलितः, यः क्षीरोदः, तेन प्लावितानीव। विमलेति—विमले, कपोलफलके, गण्डतटे, प्रतिबिम्बिता, प्रतिफलिता ताम्। विग्रहिणीमिव, मूर्तिमतीमिव। सरस्वतीं, वाग्देवीं, दधानम् धारयन्तम्। अरुणेन, रक्तेन। चूडेति चूडामणेः, शिरोरत्नस्य, शोचिषा, अर्चिषा। सरस्वतीति—सरस्वत्यां, ईर्ष्या, द्वेषः, तया कुपिता या लक्ष्मीः, तस्याः प्रसादनं, चरणप्रणिपातेन सान्त्वनं, तेन लग्नं, संसक्तं, तेन चरणालक्तकेन। लोहितेति—लोहितायितः, अरुणितः, ललाटः, यस्य तथोक्तम्। आपाटलेति—आपाटलाः, ईषद्रक्ताः, अंशवः, मयूखाः एव तन्त्रीसन्तानाः, तन्त्रीसङ्घाः, तेषां वलयः, मण्डलं विद्यतेऽस्याः ताम्। कुण्डलेति—कुण्डलयोः, कर्णभूषणयोः, ये मणयः तेषां कुटिलाः, भङ्गीमती, कोटिः, शिखा, सा एव बालवीणा, सप्ततन्त्री ताम्। अनवरतेति—अनवरतं, निरन्तरं, चलिताः, चरणाः, येषां तथोक्तानां। उपवीणयतां, वीणया उपगायतां तेषामिव। स्वरेति—स्वराः, निषादादयः, व्याक्रियन्ते,

विशारदम्, श्रवणावतंसमधुकरकुलानां कलक्वणितमाकर्णयन्तम्, प्रत्फुल्लमालतीमयेन राजलक्ष्म्याः कचग्रहलीलालग्नेन नखज्योत्स्नावलयेनेव मुखशशिपरिवेशमण्डलेन मुण्डमालागुणेन परिकलितकेशान्तम्, शिखण्डाभरणभुवा मुक्ताफलालोकेन मरकतमणिकिरणकलापेन चान्योन्यसंवलनवृजिनेन प्रयागप्रवाहवेणिकावारिणेवागत्य स्वयमभिषिच्यमानम्, श्रमजलविलीनबहलकृष्णागुरुपङ्कतिलककलङ्ककल्पितेन कालिम्ना

प्रकाश्यन्ते अनेनेति स्वरव्याकरणः स चासौ विवेकः, स्वरव्याकरणज्ञानं तेन विशारदं चतुरं, यथा तथा। श्रवणेति— श्रवणयोः, कर्णयोः, यौ अवतंसौ तयोः मधुकरकुलानि, भृङ्गसमूहाः, तेषां कलक्वणितं, मधुररणितम्, आकर्णयन्तम्। उत्फुल्लेति—उत्फुल्लमालतीमयेन, विकसितमालतीगुम्फितेन, राजलक्ष्म्याः, नृपश्रियः, कचग्रहः, केशाकर्षणं तस्य या लीला, विलासः तया आलग्नं, संसक्तं तेन। नखेति—नखानां, ज्योत्स्नाः, प्रभाः, तासां वलयं, मण्डलं तेनेव। मुखेति—मुखं, शशीव, चन्द्र इव तस्य परिवेशमण्डलं, परिधिमण्डलं तेन। मुण्डमालागुणेन, शिरोमालया, परिकल्पितः, परिगाढ्रः, केशान्तः यस्य तथोक्तम्। शिखण्डेति —शिखण्डाभरणं, चूडालंकारः तस्माद् भवतीति तथोक्तेन। मुक्तेति —मुक्ताफलानां, आलोकेन, प्रभया। मरकतमणीनां, किरणकलापेन, प्रभाजालेन। अन्योऽन्यस्य, संवलनं, मिश्रणं तेन वृजिनं, कलुषम्, तेन। प्रयागेति—प्रयागे, गङ्गायमुनासरस्वतीसंगमे, या प्रवाहवेणिका, तिसृणां, नदीनां, स्रोतोरूपावेणी तस्याः वारि तेनेव। अभिसिञ्चमानं, क्रियमाणाभिषेकमित्यर्थः। श्रमेति—श्रम जल इत्यारभ्य वारविलासिनीभिः, विलुप्यमान सौभाग्यमिव सर्वतः इत्यनेनान्वयः।

प्रार्थनाचाटुचतुरचरणपतनशतश्यामिकाकिणेनेव नीलायमान-ललाटलेखाभिः क्षुभितमानसोद्गतैरुत्कलिकाकलापैरिव हारै-रुल्लसद्भिरवष्टभ्यमानाभिर्विलासवल्गनचटुलैर्भ्रूलताकल्पैरीर्ष्यया श्रियमिव तर्जयन्तीभिरायामिभिः श्वसितैरविरलपरिमलैर्मलय-मारुतमयैः पाशैरिवाकर्षन्तीभिर्विकटबकुलावलीवराटकवेष्टित-मुखैर्बृहद्भिः स्तनकलशैः, स्वदारसंतोषरसमिवाशेषमुद्धरन्तीभिः,

श्रमजलेन, घर्मेण, विलीनं लुप्तं, बहलं, घनं, यत् कृष्णागुरुपङ्कतिलकं, कालागुरुद्रवरचितं तिलकं तस्य कलङ्कं, चिह्नम् तेन कल्पितः रचितः, तेन। कालिम्ना, श्यामलत्वेन। प्रार्थनेति—प्रार्थनायां, चाटुचतुरं, सविलासं यानि चरणपतनानि, तेषां शतेन, या श्यामिका, कालिमा, तस्याः किणः चिह्नविशेषः तेन। नीलेति—नीलायमाना, नीलि-वाचरन्तीः, ललाटलेखाः, भाललेखाः, यासां ताभिः। क्षुभितेति—क्षुभितानि, इष्टलाभविरहात् क्षोभंगतानि यानि मानसानि, चेयांसि, तेभ्यः उद्गताः, उत्थिताः तैः, क्षुभितं, वातावशात् चंचलं यत् मानसं, तदाख्यं सरः,तस्मात् उद्गतैः-इति च। उत्कलिकाकलापैरिव, रणरणि-कासमूहैरिव वीचिसमूहैरिव च, उल्लसद्भिः राजमानैः हारैः, अवष्टभ्य-मानाभिः,स्तब्धीक्रियमाणाभिः,। विलासेति-विलासेन, विभ्रमेण,यद् वल्गनं, चलनं तत्र चटुलाः, पटवः तैः। भ्रूलताकल्पैः, लतासदृशीभिः (भ्रूभिरित्यर्थः) श्रियमिव राजलक्ष्मीमिव। तर्जयन्तीभिः। आयामिभिः, दीर्घैः, श्वसितैः, निश्वासैः अविरलः, सान्द्रः, परिमलः, सुगन्धः येषां तैः, मलयमारुतमयैः, दक्षिणानिलनिर्मितैः, पाशैरिव, रज्जुभिरिव, आकर्षयन्तीभिः, वशीकुर्वतीभिः विकटेति—विकटा स्थूला या वकुला-वली, वकुलमाला सैव वराटकः, रज्जुः (वराटकः पद्मबीजकोषे रज्जौकपर्दके इति मेदिनी) तेन वेष्टितं, मुखं येषां तैः। बृहद्भिः,

कुचोत्कम्पिकाविचारप्रेङ्खितानां हारतरलमणीनां रश्मिभिराकृष्य हृदयमिव हठात्प्रवेशयन्तीभिः, प्रभामुचामाभरणमणीनां मयूखैः प्रसारितैर्बहुभिरिव बाहुभिरालिङ्गन्तीभिर्जृम्भानुबन्धबन्धुरवद-नारविन्दावरणीकृतैरुत्तानैः करकिसलयैः सरभसप्रधावितानि मानसानीव निरुन्धतीभिर्मदान्धमधुकरकुलकीर्यमाणकर्णकुसुमर-जःकणकूणितकोणानि कुसुमशरशरनिकरप्रहारमूर्च्छामुकुलिता-

---

महद्भिः, स्तनकलसैः, पयोधरकुम्भैः। **स्वदारेति**—स्वस्य दाराः, पत्नयः, तासु सन्तोषः, एव रसः, रागः तमिव। अशेषं, समग्रं, उद्ध-रन्तीभिः, उत्तोलयन्तीभिः, एकीकुर्वन्तीभिरितिभावः। **कुचेति**—कुचानां, स्तनानां, उत्कम्पिका, (कम्पविशेषः) एव विकारः, अन्यथा-भावः, तेन प्रेङ्खितानां, चालितानाम्। हारतरलमणीनां, हारेषु तरलाः, भास्वराः, ये मणयः, रत्नानि तेषां, रश्मिभिः, किरणैः। प्रभामुचां, कान्तिवर्षिणां, आभरणमणीनां, भूषणरत्नानाम्, मयूखैः, किरणैः। आलिङ्गन्तीभिः, आश्लिष्यन्तीभिः। **जृम्भेति**—जृम्भाणां, कामजनि-तानुभावविशेषाणां, अनुबन्धेन, सातत्येन, बन्धुराणि, रम्याणि, वदनानि, मुखानि, अरविन्दानीव, पद्मानीव, तेषां आवरणीकृताः, आवरणत्वेनोद्धृताः तैः। उत्तानैः, उद्धर्वीकृतैः, करकिसलयैः, सरभ-सप्रधावितानि, सवेगप्रचलितानि, निरुन्धंतीभिः, अवरोधं कुर्वतीभिः। **मदेति**—मदेन, अन्धानि यानि, मधुकरकुलानि तैः क्रियमाणानि, क्षिप्यमाणानि, यानि, कर्णकुसुमानां, रजांसि, परागाः, तेषां कणैः, लेशैः, कूणिताः, संकोचिताः, कोणाः, एकदेशाः येषां तानि। अत-एव-**कुसुमेति**—कुसुमशरस्य, कामस्य, शरनिकराणां, बाणसमू-हानां, प्रहारैः या मूर्च्छा, मोहः तया, मुकुलितानि इव, लोचनानि, नयनानि, चतुरं। संचारयन्तीभिः, प्रसारयन्तीभिः, अन्योऽन्य-

नीव लोचनानि चतुरं संचारयन्तीभिरन्योन्यमत्सरादाविर्भ-वद्भङ्गुरभ्रुकुटिविभ्रमक्षिप्तैः कटाक्षैः कर्णेन्दीवराणीव ताडयन्तीभिरनिमेषदर्शनसुखरसराशिं मन्थरितपक्ष्मणा चक्षुषा पीतमिव कोमलकपोलपालीप्रतिबिम्बितं वहन्तीभिरभिलाषलीलानिर्निमित्तस्मितैश्चन्द्रोदयानिव मदनसाहायकाय संपादयन्तीभिरङ्ग-भङ्गवलनान्योन्यघटितोत्तानकरवेणिकाभिः स्फुटनमुखराङ्गुलीकाण्डकुण्डलीक्रियमाणनखदीधितिनिभेनाकिंचित्करकार्मुकाणीव

मत्सरादिव, परस्परेर्ष्यादिव । आविर्भवदिति—आविर्भवन्तः, उत्पद्यमानाः, भंगुराः, कुटिलाः, ये भ्रुकुटिविभ्रमाः तैः क्षिप्ताः तैः । कर्णेन्दीवराणीव, श्रवणनीलोत्पलानीव, ताडयन्तीभिः । **अनिमेषेति**—अनिमेषं, निर्निमेषं, दर्शनं, अवलोकनं, तेन सुखरसानां, सुखस्वादानां, रसः, जलं तस्य राशिः यस्मिन् तं । **मन्थरेति**—मन्थरितानि, निश्चलानि, पक्ष्माणि, लोमानि यस्य तेन चक्षुषा, नेत्रेण, पीतमिव । **कोमलेति**—कोमलायां, कपोलपाल्यां, कपोलतले, प्रतिबिम्बितं, प्रतिफलितं, वहन्तीभिः, धारयन्तीभिः । **अभिलाषेति**—अभिलाषस्य, कामतृष्णायाः, लीलया, विलासेन, निर्निमित्तानि, हेतुरहितानि, स्मितानि, मृदुहसितानि तैः । मदनसहायकाय, कामसहायकाय, सम्पादयन्तीभिः, कुर्वन्तीभिः । **अंगेति**—अङ्गानां, भङ्गवलनेन, जृम्भादिजनितभङ्गिविशेषेण, अन्योऽन्येन, परस्परेण, घटिताः, कृताः, उत्तानाः या करवेणिकाः, परस्परानुबन्धेन स्थितयोः, करयोः अंगुलिविन्यासविशेषाः, ताभिः । **स्फुटनेन**, त्रुटनेन, मुखराः, सशब्दाः, ये, अंगुलयः, एव काण्डाः, शाखाविशेषाः, तैः कुण्डलीक्रियमाणानां, नखानां, दीधितिनिवहाः, मयूखनिचयाः तेषां, निभः, तेन । अकिञ्चित्कराणि, कामस्य, मदनस्य, कार्मुकाणि, धनूंषि तानीव,

रुषा भञ्जतीभिर्वारविलासिनीभिर्विलुप्यमानसौभाग्यमिव सर्वत: स्पर्शस्विन्नवेपमानकरकिसलयगलितचरणारविन्दां चरणग्राहिणीं विहस्य कोणेन लीलालसं शिरसि ताडयन्तम्, अनवरतकरकलितकोणतया चात्मनः प्रियां वीणामिव श्रियमपि शिक्षयन्तम्, निःस्नेह इति धनैरनाश्रयणीय इति दोषैर्निग्रहरुचिरितोन्द्रियैर्दुरुपसर्प इति कलिना नीरस इति व्यसनैर्भीरुरित्ययशसा दुर्ग्रहचित्तवृत्तिरितिचित्तभुवा स्त्रीपर इति सरस्वत्या, षण्ढ इति परकलत्रैः काष्ठामुनिरिति यतिभिर्धूर्त इति वेश्याभि-

---

रुषा, कोपेन, भञ्जतीभिः, खण्डयन्तीभिः। विलुप्यमानेति—विलुप्यमानं, ह्रियमाणं, सौभाग्यं, वाल्लभ्यं, यस्य तथोक्तमिव। स्पर्शेति—स्पर्शेन, स्विन्न, घर्म्माक्तः, वेपमानः, कम्पमानश्च, यः करकिसलयः, तस्मात् गलितं, च्युतं, चरणारविन्दं, पादपद्मं, यस्याः, तथोक्ताम्। चरणग्राहिणीं, चरणसेविनीम्, कोणेन, वीणावादनदण्डेन। लीलाऽलसं, विलासमन्थरम्। ताडयन्तं, प्रहरन्तम्। अनवरतेति—अनवरतं, निरंतरं, करकलितः, हस्तगृहीतः, कोणो येन तथाविधः तस्य-भावः तत्ता तया, प्रियां, शिक्षयन्तं, अभ्यस्यन्तं, निःस्नेहः, स्नेहशून्यः। अनाश्रयणीयः, असेवनीयः, निग्रहे, वशीकरणे, रुचिः, अभिलाषो यस्य सः। दुरुपसर्पः, दुर्द्धर्षः। कलिना, चतुर्थयुगेन। नीरसः, निरनुरागः। व्यसनैः, मृगयादिभिः, भीरुः भयशीलः, अपयशसा, अपकीर्त्याः। दुर्ग्रहेति—दुर्ग्रहा, दुराकर्षा, चित्तवृत्तिर्यस्य तथोक्तः। चित्तभुवा, कामेन स्त्रीपरः, स्त्रैणः। शठः, धूर्त्तः, (वञ्चक इत्यर्थः) काष्ठामुनिः, उत्कर्षवान् तपसः, (काष्ठोत्कर्षे स्थितौ दिशि इत्यमरः) नेयः, परवशः, कर्म्मकरः, भृत्यः। सुसहायः, सुष्ठुसहायसम्पन्नः, शत्रुयोधैः, शत्रुवीरैः, अनेकधा, बहुधा, गृह्यमाणं,

नय इति सुहृद्भिः कर्मकर इति विप्रैः सुसहाय इति शत्रुयोधैरेक-मप्यनेकधा गृह्यमाणम्, शन्तनोर्महावाहिनीपतिम्, भीष्माज्जि-तकाशिनम्, द्रोणाच्चापलालसम्, गुरुपुत्रादमोघमार्गणम्, कर्णान्मित्रप्रियम्, युधिष्ठिराद्बहुक्षमम्, भीमादनेकनागायुतबलम्, धनंजयान्महाभारतरणयोग्यम्, कारणमिव कृतयुगस्य, बीजमिव

ज्ञायमानम्। शन्तनोः, तदाख्यात् कुरुवंशीयराजात्। महेति— महत्यः, वाहिन्यः, चम्वः, तासां, पतिः, तम्, (पक्षे) शन्तनुस्तु महती एकैव वाहिनी, गङ्गा, तस्याः पतिरिति व्यतिरेकः। भीष्मात्, भीष्म-मपेक्ष्यजितकाशी, जितेन, जयेन, काशते, राजते, इति तथोक्तं तं भीष्मेनाऽपि काशिराजदुहितृस्वयंवरे काशीजिता। द्रोणात्, धनुर्वे-दाचार्यात्, चापे, धनुषि लालसा, यस्य तम्। वा च इति समुच्चये, अपगता लालसा यस्य तम्। वा चापले, चपल कर्मणि, अलसः, मन्दव्यापारः तं, द्रोणस्तु द्रव्यलोभतया द्रुपदेन सह विरोधं कृतवान् पुनरयं न इति व्यतिरेकः। गुरुपुत्रात्, द्रोणाचार्यतनयात्, (अश्वत्था-मात्) अमोघाः, अव्यर्थाः, मार्गणाः, शराः यस्य तथोक्तम्। कर्णात्, राधेयात्, मित्रप्रियं, मित्रस्य, सूर्यस्य, सुहृदाञ्च, प्रियः, तम्। युधिष्ठि-रात्, धर्मराजात्, बहुक्षमं, क्षमागुणबहुलं (पक्षे) बह्वी, क्षमा, पृथ्वी यस्य तथोक्तम्। भीमात्। अनेकेति—अनेकनागायुतवत्, नास्ति एकः श्रेष्ठः येभ्यः ते च ते नागाः, हस्तिनः तेषा मायुतवत् महाबल हस्तिसमूहवत् बलं सामर्थ्यम्। (पक्षे) अनेकानि, बहूनि नागानां, हस्तिनां आयुतानि, दशसहस्राणि, बलानि सैन्यानि यस्य तथोक्तम्। धनञ्जयात्, अर्जुनात्। महाभारते यो रणः, संग्रामः (पक्षे) महान् भारः (पृथिव्या इति भावः) तस्य तरणं वहनम्। बीजम्, अंकुरोत्पादकक्षुद्रवस्तुविशेषः। विबुधसर्गस्य, देवसृष्टेः। उत्पत्ति-

विबुधसर्गस्य,उत्पत्तिद्वीपमिव दर्पस्य, एकागारमिव करुणायाः, प्रातिवेशिकमिव पुरुषोत्तमस्य, खनिपर्वतमिव पराक्रमस्य, सर्व-विद्यासंगीतगृहमिव सरस्वत्याः,द्वितीयामृतमथनदिवसमिव लक्ष्मीसमुत्थानस्य बलदर्शनमिव वैदग्ध्यस्य,एकस्थानमिव स्थितीनाम्, सर्वस्वकथनमिव कान्तेः, अपवर्गमिव रूपपरमाणुसर्गस्य, सकलदुश्चरितप्रायश्चित्तमिव राज्यस्य, सर्वबलसंदोहावस्कन्दमिव कन्दर्पस्य,उपायमिव पुरंदरदर्शनस्य, आवर्तनमिव धर्मस्य, कन्यान्तःपुरमिव कलानाम् , परमप्राणमिव सौभाग्यस्य, राजसर्गसमाप्त्यवभृथस्नानदिवसमिव सर्वप्रजापतीनाम् , गम्भीरं च, प्रसन्नं च, त्रासजननं च, रमणीयं च, कौतुकजननं च, पुण्यं च, चक्रवर्तिनं हर्षमद्राक्षीत् ।

द्वीपमिव, प्रभवस्थानमिव । एकागारमिव, अद्वितीयं गृहमिव । प्रातिवेशकमिव, प्रतिबिम्बमिव, पुरुषोत्तमस्य, विष्णोः । खनिपर्वतमिव, आकरगिरिमिव, सर्वविद्यासंगीतगृहमिव, सर्वशास्त्रसंगीतालयमिव; द्वितीयामृतमथनदिवसमिव, अपरपीयूषोत्तलनवासरमिव । बलदर्शमिव, शक्त्युत्कर्षप्रदर्शनमिव, एकस्थानमिव, अद्वितीयगृहमिव, सर्वस्वकथनमिव, निधिभूतत्वविज्ञापनमिव, साफल्यमिव **सर्वेति**—सर्वेषां, बलानां, सैन्यानां सामर्थ्यानां वा, सन्दोहः, सङ्घः तस्य, अवस्कन्दः, समावेशः,तमिव । पुरन्दर दर्शनस्य,इन्द्रसाक्षात्कारस्य, आवर्त्तनमिव, आवर्त्तमिव, कलानां, नृत्यगीतानां चतुःषष्टि विधानां कामविद्यानां, परमप्राणमिव, परमं बलमिव । **राजसर्गेति**—राज्ञां सर्गः-सृष्टिः, तस्य समाप्तिः, अवसानं सैव अवभृतस्नानं, दिक्षान्तस्नानं, तस्य दिवसः, तमिव । सर्वप्रजापतीनां, **गम्भीरेति**—गम्भीरञ्च प्रसन्नं, च त्रासजननञ्च रमणीयं, कौतुक-

दृष्ट्वा चानुगृहीत इव निगृहीत इव साभिलाष इव, तृप्त इव, रोमाञ्चमुचा मुखेन मुञ्चन्नानन्दबाष्पवारिबिन्दून्दूरादेव विस्मयस्मेरः समचिन्तयत् 'सोऽयं सुजन्मा, सुगृहीतनामा, तेजसां राशिः, चतुरुदधिकेदारकुटुम्बी, भोक्ता ब्रह्मस्तम्भफलस्य, सकलादिराजचरितजयज्येष्ठमल्लो देवः परमेश्वरो हर्षः । एतेन च खलु राजन्वती पृथ्वी । नास्य हरेरिव वृषविरोधीनि, बालचरितानि, न पशुपतेरिव दक्षोद्वेगकारीण्यैश्वर्यविलसितानि,

- - -

जननं, आश्चर्योत्पादकञ्च चक्रवर्तिनं, सार्वभौमम् ।

अनुगृहीत इव, अनुकम्पित इव, निगृहीत इव, अभिभूत इव, (तेजसेतिभावः) साभिलाष इव, समुत्सुक इव, तृप्त इव, चरितार्थ इव, द्रष्टव्यवस्तुदर्शनेन इति हृदयम्, अथ च यः अनुगृहीत, स एव निगृहीतः यः साभिलाषः सः कथं तृप्तः-इति विरोधोऽपि अत्रप्रगटः । रोमाञ्चमुचा, पुलकितेन, मुञ्चन्, त्यजन्, विस्मयस्मेरः विस्मयेन, चमत्कारेण, स्मेरः (विकसितचित्त इत्यर्थः) चतुरुदधीति—चतुर्णां, उदधीनां, सागराणां, यत्केदारं, क्षेत्रम्, तदेव कुटुम्बं, पोष्यवर्गः, अस्येति तथोक्तः, भोक्ता, अधिकारी, ब्रह्मस्तम्भफलस्य, ब्रह्माण्डवर्त्तिसर्वरत्नजातस्य । सकलेति—सकलाः, समस्ताः, आदिराजानः, मन्वादयः, तेषां, चरितानि, तेषां जये, पराभवविषये, जेष्ठमल्लः, प्रधानवीरः । परमेश्वरः, सम्राट् । राजन्वती, प्रशस्तराजशालिनी । अस्य, हर्षस्य, हरेरिव, कृष्णस्येव, वृषविरोधीनि, वृषः, धर्मः, (पक्षे) वृषरूपोऽष्टासुरः, तस्य विरोधीनि । बालचरितानि, शैशवक्रीडितानि । पशुपतेरिव, हरस्येव । दक्षेति—दक्षाणां, कुशलानां, जनानामितिभावः । (पक्षे) दक्षस्य प्रजापतेः, (स्वश्वशुरस्येतिभावः) उद्वेगकारीणि, भीषणानि, ऐश्वर्यविलासितानि, अधिपत्यचेष्टितानि, (पक्षे) ईश्वरधर्माः (अणिमा-

न शतक्रतोरिव गोत्रविनाशपिशुनाः प्रवादाः, न यमस्येवातिवल्लभानि दण्डग्रहणानि, न वरुणस्येव निस्त्रिंशग्राहसहस्ररक्षिता रत्नालयाः, न धनदस्येव निष्फलाः सन्निधिलाभाः, न जिनस्येवार्थवादशून्यानि दर्शनानि, न चन्द्रमस इव बहुलदोषोपहताः श्रियः। चित्रमिदमत्यमरं राजत्वम्। अपि चास्य त्यागस्यार्थिनः,

दय इत्यर्थः) तेषां विलासितानि, विजृम्भितानि। शतक्रतोरिव, इन्द्रस्येव, गोत्रविनाशपिशुना। गोत्राणां, वंशानां (पक्षे) पर्वतानां, विनाशपिशुनाः, विध्वंससूचकाः। प्रवादाः, जनश्रुतयः। यमस्येव, अतिवल्लभानि, अतिप्रियाणि, दण्डग्रहणानि, करग्रहणानि, (पक्षे) शासनयष्टेः ग्रहणानि। वरुणस्येव, **निस्त्रिंशेति**—निस्त्रिंशग्रहाणां, खड्गधारिणां सहस्रैः (पक्षे) निस्त्रिंशाः, निष्ठुराः, ग्राहाः, जलजीवभेदाः तेषां सहस्रैः रक्षिताः, पालिताः, रत्नालयाः, रत्नभाण्डागाराणि (पक्षे) समुद्राः-इत्यर्थः। धनदस्येव, कुवेरस्येव। न निष्फलाः, न अर्थादिफलप्राप्तिविरहिताः (पक्षे) दानादिव्ययाभावात्, निष्प्रयोजनाः। सन्निधिलाभाः, समीपप्राप्तयः (पक्षे) सन्तः, उत्कृष्टाः, निधयः, पद्मशङ्खादयः, तेषां लाभाः। जिनस्येव, बुद्धदेवस्येव। **अर्थवादेति**—अर्थानां, धनानां, वादः, मयेदं (लब्धमिति) तेन शून्यानि, रहितानि दर्शनानि, अवलोकनानि, (पक्षे) अर्थवादः, श्रुतिवादः, तेन शून्यानि दर्शनानि, महायानादीनि (तदीयशास्त्राणीतिभावः) **चन्द्रमसः-इव**, चन्द्रस्येव। **बहुलेति**—बहुलाः, अनेके, दोषाः (**रागादय इत्यर्थः**) तैरुपहताः, मलिनीकृता (पक्षे) बहुलस्य, कृष्णपक्षस्य, दोषाभिः, रजनीभिः, उपहताः, नाशिताः, श्रियः, समृद्धयः (पक्षे) शोभाः। अत्यमरं, अतीवविनश्वरम्। त्यागस्य, दानस्य, प्राप्तो विषयः, (प्रचुरं-स्थानमित्यर्थः) अर्थिनः, याचकाः न इति-अन्वयः। प्रज्ञायाः, प्रकृष्ट-

प्रज्ञायाः शास्त्राणि, कवित्वस्य वाचः, सत्त्वस्य साहसस्थानानि, उत्साहस्य व्यापाराः, कीर्तेर्दिङ्मुखानि, अनुरागस्य लोकहृदयानि, गुणगणस्य संख्या, कौशलस्य कलाः, न पर्याप्तो विषयः। अस्मिंश्च राजनि यतीनां योगपट्टकाः, पुस्तकर्मणां पार्थिवविग्रहाः, षट्पदानां दानग्रहणकलहाः, वृत्तानां पादच्छेदाः, अष्टापदानां चतुरङ्गकल्पना, पन्नगानां द्विजगुरुद्वेषाः, वाक्यविदामधिकरणविचाराः, इति समुपसृत्य चोपवीती स्वस्तिशब्दमकरोत्।

अथोत्तरेण नातिदूरे राजधिष्ण्यस्य गजपरिचारको मधुरमपरवक्रमुच्चैरगायत्—

बुद्धेः, कवित्वस्य, काव्यरचयितृत्वस्य, सत्वस्य, बलस्य, उत्साहस्य, बलप्रकटनस्य, कीर्तेः, यशसः, अनुरागस्य, प्रीतेः, एवं सर्वैः सह प्राप्तोयं विषयः-इति अन्वयः। यतीनां, परमहंसानां, (चतुर्थाश्रमिणामितिभावः) योगपट्टकाः। पुस्तकर्मणां, लेप्यकर्मणां। पार्थिवविग्रहाः, मृण्मयशरीराणि नतु राजविरोधाः। षट्पदानां, मधुकराणां, दानं तस्य ग्रहणे कलहाः नतु दत्तधनस्य। वृत्तानां, छन्दसां, पादभेदाः, चरणविरामाः। न पापविशेषे। अष्टापदानां, चतुरङ्गफलकानां, चतुरङ्गकल्पनाः, चत्वारि, अङ्गानि तेषां कल्पनाः, पन्नगानां, सर्पाणां, द्विजगुरुद्वेषाः, द्विजानां, पक्षिणां, गुरुः, गरुड, तस्मिन् द्वेषाः न ब्राह्मणेषु, गुरुषु च। वाक्यविदां, वाक्यज्ञानां, अधिकरणविचाराः, अधिकारं, प्रजानां परस्परविरोधे धर्मनिर्णयस्थानं, तत्र विचारो न न प्रजाः (सततं कलहायन्तेस्मेतिभावः) अत्र परिसंख्याऽलंकारः। समुपसृत्य, उपगम्य, उपवीती, (उद्धृतदक्षिणकर इत्यर्थः) उत्तरेण, उत्तरस्यां दिशि, राजधिष्ण्यस्य, राजमण्डलस्य, गजपरिचारकः,

'करिकलभ ! विमुञ्च लोलतां चर विनयव्रतमानताननः ।
मृगपतिनखकोटिभङ्गुरो गुरुरुपरि क्षमते न तेऽङ्कुशः' ॥५॥

राजा तु तच्छ्रुत्वा दृष्ट्वा च तं गिरिगुहागतसिंहबृंहितगम्भीरेण स्वरेण पूरयन्निव नभोभागमपृच्छत्—'एष स बाणः' इति। 'यथाज्ञापयति देवः। सोऽयम्' इति विज्ञापितो दौवारिकेण। 'न तावदेनमकृतप्रसादः पश्यामि' इति तिर्यङ्नीलधवलांशुकशारां तिरस्कारिणीमिव भ्रमयन्नपाङ्गनीयमानतरलतारकस्यायामिनीं चक्षुषः प्रभां परिवृत्य प्रेष्ठस्य पृष्ठतो निषण्णस्य मालवरा-

हस्तिपालकः, अपरवक्त्रं, तदाख्यं वृत्तं। करिकलभेति—करिकलभ !, हस्तिशावक !, लोलतां, चंचलतां, विमुञ्च, त्यज। आनतं, नम्रम्, आननं, मुखं, यस्य तथाविधःसन्। विनयव्रतं, शिष्टाचारं, चर, कुरु। मृगपतेः, सिंहस्य, नखकोटिः, नखाग्रः, तद्वत् भंगुरः कुटिलः, गुरुः, महान्, अंकुशः, करिताडनदण्डः, ते उपरि न क्षमते, तव दोषं न सहते (अनेन अशिष्टानां दण्डयिता राजा इति व्यज्यते) अत्र हि करिकलभमप्रस्तुत विषयमादाय अशिष्टान् जनान् दण्डयिता राजा इति प्रस्तुतविषयः प्रतीयते अतः अप्रस्तुतप्रशंसाऽलंकारः।

गिरीति—गिरिगुहां, पर्वतकन्दरां गतः सिंहः, तस्य बृंहितं, गर्जितं तद्वत् गम्भीरः तेन। नभोभागं, गगनम्। अकृतप्रसादः, नकृतः, प्रसादः, प्रसन्नता येन सः (अप्रसन्न इत्यर्थः) नीलेति—नीलाः, धवलाः, अंशव एव अंशुकाः (स्वार्थेकन्) (पक्षे) तथा विधानि, वस्त्राणि, तैः शारा, शबला, ताम्। तिरस्करिणीमिव, जवनिकामिव। अपांगेति—आपाङ्गं, नेत्रपान्तं, नीयमाना, प्रचाल्यमाना, तरला, चपला, तारका, कनीनिका, यस्य तथाविधस्य, चक्षुषः, आयामिनीं, प्रसारिणीं, प्रभां, कान्ति भ्रमयन्, परिवृत्य प्राङ्मुखीभूय। प्रेष्ठस्य,

जसूनोरकथयत्—'महानयं भुजङ्गः' इति। तूष्णींभावेन त्वगमितनरेन्द्रवचसि तस्मिन्मूके च राजलोके, मुहूर्तमिव तूष्णीं स्थित्वा बाणो व्यज्ञापयत्—'देव, अविज्ञाततत्त्व इव, अश्रद्दधान इव, नेय इव, अविदितलोकवृत्तान्त इव, च कस्मादेवमाज्ञापयसि। स्वैरिणो विचित्राश्च लोकस्य स्वभावाः प्रवादाश्च। महद्भिस्तु यथार्थदर्शिभिर्भवितव्यम्। नार्हसि मामन्यथा संभावयितुमविशिष्टमिव। ब्राह्मणोऽस्मि जातः सोमपायिनां वंशे वात्स्यायनानाम्। यथाकालमुपनयनादयः कृताः संस्काराः। सम्यक्पठितः साङ्गो वेदः। श्रुतानि यथाशक्ति शास्त्राणि। दारपरिग्रहादभ्यागारिकोऽस्मि। का मे भुजङ्गता। लोकद्वयाविरो-

---

अतिप्रियस्य, पृष्ठतः, निषण्णस्य, उपविष्टस्य, मालवराजसूनोः, मालवराजपुत्रस्य, भुजङ्ग, विटः, धूर्त्तः लम्पटो वा ("भुजङ्गो विटसर्पयोः "इत्यमरः) तूष्णींभावेन, मौनभावेन। अगमितेति—अगमितम्, अबुद्धम्, नरेन्द्रस्य वचः तस्मिन् अविज्ञाततत्व इव, अनवगमितयथार्थ इव, अश्रद्दधान इव, अविश्वसन्निव, अविदितलोकवृन्तान्त इव, अजानितजनचरित इव। स्वैरिणः—स्वेच्छाचारिणः, लोकस्य, स्वभावाः, मनोवृत्तयः, प्रवादाश्च, विचित्राः, विषमाः। यथार्थदर्शिभिः, तत्वज्ञैः, महद्भिः, गुरुभिः, भवितव्यम्। अविशिष्टं, साधारणं, सोमपायिनां, सोमरसपानकर्तॄणाम्, वात्स्यायनानाम्, वत्समुनिसन्ततीनाम्। यथाकालं, समयानुसारं", उपनयनादयः, उपनयनं, यज्ञोपवीत आदि, मुख्यं येषां ते संस्काराः। अंगेनसहितः सांगः, व्याकरणादीनि वेदस्य षडङ्गानि तैः सहितः वेदः। अभ्यगारिकः, गृहस्थी। का मे भुजङ्गता, भुजंगता, लम्पटता, विसता वा मे मम का। केचित्तु का मे, मदने भुजंगता, शृङ्गारित्वं, अपरे, मे मम, का (वाला) भुजं, बाहुं

धि भिस्तु चापलैः शैशवमशून्यमासीत् । अत्रानपलापोऽस्मि । अनेनैव च गृहीतविप्रतीसारमिव मे हृदयम् । इदानीं तु सुगत इव शान्तमनसि, मनाविव कर्तरि वर्णाश्रमव्यवस्थानां समवर्तिनीव च साक्षाद्दण्डभृति देवे शासति सप्ताम्बुराशिरशनामशेषद्वीपमालिनीं महीं क इवाविशङ्कः सर्वव्यसनबन्धोरविनयस्य मनसाप्यभिनयं कल्पयिष्यति । आसतां तावन्मानुष्यकोपेताः । त्वत्प्रभावादलयोऽपि भीता इव मधु पिबन्ति । रथाङ्गनामानोऽपि लज्जन्त इवाभ्युनुवृत्तव्यसनैः प्रियाणाम् । कपयोऽपि चकिता इव चपलायन्ते । शरारवोऽपि सानुक्रोशा इव श्वाप-

---

गता प्राप्तेति (विक्रोक्तिः) लोकेति-लोकयोः, स्वर्गमर्त्ययोः, तस्य अविरोधिनी, अविरोधकराणि तैः । चापलैः, चपलकर्मभिः, शैशवं, बाल्यं, अशून्यं, अरहितम् । अनपलापः, निरपह्नवः । गृहीतेति—गृहीतः, विप्रतीसारः, अनुतापो येन तथा भूतमिव । सुगत इव बुद्धदेव इव । मनाविव, वैवस्वते इव । वर्णेति—वर्णानां, ब्राह्मणक्षत्रीयवैश्यशूद्राणाम्, आश्रमाणाम्, ब्रह्मचर्यगृहस्थवानप्रस्थसंन्यासाणाम् । व्यवस्थानां कर्तरि । समेति— समंवर्तते इति समवर्ती, यमः, तस्मिन्निव । दण्डभृति, दण्डधरे । सप्ताम्बुराशीनां, सप्त अम्बुराशयः, सागराः रशना, मेखला यस्याः ताम् । अशेषेति—अशेषाणां, समस्तानां, द्विपानां, मालिनीं, महीं, पृथ्वीं, शासयति, पालयति, अविशंकः, निर्भीकः । सर्वेति—सर्वेषां व्यसनानां, दुश्चरितानां, बन्धोः, मित्रस्य, अविनयस्य, अभिनयं, कल्पयिष्यन्ति, करिष्यति । मानुष्यकोपेताः, मनुष्यस्यभावः, मानुष्यकस्तेनोपेताः । अलयः, भ्रमराः, अभ्यनुवृत्तिव्यसनैः, अतिशया शक्तिभिः, प्रियाणां, चक्रवाकीणाम् । कपयः, वानराः, चकिता इव, शङ्किता इव, चापलायन्ते, चपलाइवाचरन्ति ।

द्गणाः पिशितानि भुञ्जते। सर्वथा कालेन मां ज्ञास्यति स्वामी स्वयमेव। अनपाचीनचित्तवृत्तिग्राहिण्यो हि भवन्ति प्रज्ञावतां प्रकृतयः' इत्यभिधाय तूष्णीमभूत्।

भूपतिरपि 'एवमस्माभिः श्रुतम्' इत्यभिधाय तूष्णीमेवाभवत्। संभाषणासनदानादिना तु प्रसादेन नैनमन्वग्रहीत्। केवलममृतवृष्टिभिः स्नपयन्निव स्नेहगर्भेण दृष्टिपातमात्रेणान्तर्गतां प्रीतिमकथयत्। अस्ताभिलाषिणि च लम्बमाने सवितरि विसर्जितराजलोकोऽभ्यन्तरं प्राविशत्। बाणोऽपि निर्गत्य धौतारकूटकोमलातपत्विषि निर्वाति वासरे, अस्ताचलकूटकिरीटे निचुलमञ्जरीभांसि तेजांसि मुञ्चति विवस्वति मरीचिमा-

शरारवः, हिंस्राः, श्वापद्गणाः, व्याघ्रसमूहाः, सदयाः, पिशितानि, मांसानि। सानुक्रोशाः। अनपाचनेति—अनपाचिनां, अविपरीताम्, चित्तवृत्तिं, गृह्णन्ति इति तथाभूता। सम्भाषणेति—संभाषणं, संलापः, आसनदानञ्च आदिर्यस्य तथोक्तेन, प्रसादेन, अनुग्रहेण, अन्वग्रहीत्, अनुचकम्पे, स्नपयन्निव, अभिषिञ्चन्निव। अस्ताभिलाषिणि, अस्ताचल गमनोद्यते, लम्बमाने, पश्चिमां दिशमवतरति, विसर्जितराजलोकः, स्वस्थानगमनाय, त्यक्तनृपमण्डलः। बाणोऽपि निवासस्थानमगादिति दूरेणान्वयः। धौतेति—धौतं, निर्मलं, यत् आरकूटं, पित्तलं तद्वत् कोमलाः, आतपस्य, त्विषः, प्रभाः, यस्य तादृशे। निर्वाति—अवसानं प्राप्ते दिवसे, दिने। अस्ताचलेति—अस्ताचलस्य, अस्तगिरेः, कूटं, शृङ्गं (कूटोऽस्त्री शिखरं शृङ्गं "इत्यमरः) तस्यकिरीटं, मुकुटं तस्मिन्। निचुलेति—निचुलस्य, स्थलवेतस्य, इज्जलवृक्षस्य (निचलोऽम्बुजइज्जलः "इत्यमरः) मञ्जरी, नूतनवल्लरी तस्याः भास इव भासः, कान्त्यः येषां तथाविधानि तेजांसि, किरणान्, मुञ्चति, विक-

लिनि रोमन्थमन्थरकुरङ्गकुटम्बाध्यास्यमानम्रदिष्ठगौष्ठीन पृष्ठास्वरण्यस्थलीषु, शोकाकुलकोककामिनीकूजितकरुणासु, तरंगिणीतटीषु, वासविटपोपविष्टवाचाटचटकचक्रवालेष्वाल- वालावर्जितसेकजलकुटेषु निष्कुटेषु, दिवसविहृतिप्रत्यागतं प्रस्नुतस्तनं स्तनंधये धयति धेनुवर्गमुद्गतक्षीरं क्षुधिततर्णकव्राते, क्रमशो चास्तधराधरधातुधुनीपूरप्लावित इव लोहितायमानम-

रति। वियन्मुञ्चति, गगनपरित्यागिनि। मरीचिमालिनि सूर्ये। **रोमन्थेति** रोमन्थेन, उद्गीर्यचर्वणेन मन्थराः, अलसाः, कुरङ्गाणां, हरिणानां, कुटुम्बाः, वर्गाः, तैः अध्यास्यमानम्, अधिष्ठीयमानम्, अतएव म्रदिष्ठम्, अतिमृदुकोमलं वा, गौष्ठीनं, कृतगोष्ठं, तस्य पृष्ठं, उपरिभागम्, यासां तासु, अरण्यस्थलीषु, वनभूमिषु। **शोकेति**— शोकाकुलानां, कोककामिनीनां, चक्रवाकीणां कूजितैः, करुणाः कारुण्यजनन्यः, तासु तरङ्गिणीतटीषु, नदीतीरेषु। **वासेति**—वास विटपेषु, आश्रयवृक्षशाखासु, उपविष्टं वाचाटानां, रवतां चटकानां, पक्षिणाम्, चक्रवालं, मण्डलं येषु तादृशेषु। **आलेति**— आलवालानि, तरुतलेषु, मण्डलाकारेण रचिता जलाधारविशेषाः तेषु, आवर्जितानि, रक्षितानि, सेकजलकुटानि, सेचनार्थं जलघटाः येषु तथा भूतेषु, निष्कुटेषु गृहारामेषु। **दिवसेति**—दिवसे विहृतिः, विहारः तस्याप्रत्यागतं, प्रतिनिवृत्तं, प्रस्नुतस्तनं, प्रस्नुताः, क्षरिताः, स्तनाः यस्य तथोक्तम्। धेनुवर्गं, गोयूथं स्तनंधये, स्तनपायिनि। **उद्गतेति**—उद्गतेन, उच्छलितेन, क्षीरेण, दुग्धेन, क्षुभितं, व्यस्तं, तर्णकानां, वत्सानां (सद्योजातस्तुतर्णकः" इति 'अमरः') व्रातं, समूहः, तस्मिन्। धयति, पिबति। **अस्तेति**—अस्तधराधरः, अस्ताचलः, तत्र ये धातवः, गैरिक मनः शिलादयः तेषु या धुन्यः,

हसि मज्जति संध्यासिन्धुपानपात्रे पातंगे मण्डले, कमण्डलुजलशुचिशयचरणेषु चैत्यप्रणतिपरेषु, पाराशरिषु, यज्ञपात्रपवित्रपाणौप्रकीर्णबर्हिष्युत्तेजसि जातवेदसि,हवींषि वषट्कुर्वति यायजूकजने, निद्राविद्राणद्रोणकुलकलिलकुलायेषु, कापेयविकलकपिकुलेष्वारामतरुषु, निर्जिगमिषति जरत्तरुकोटरकुटीकुटुम्बिनि

तत्संसृष्टा निर्झरिण्यः तासां पूरैः,प्रवाहैः लावितं सिक्ते इव। लोहितेति — लोहितायमानानि, रक्तायमानानि, महांसि, तेजांसि यस्य तथोक्ते। मज्जति, तिरोभवति। सन्ध्येति—सन्ध्या एव सिन्धुः, नदी तस्याः पानपात्रं, जलपात्रं, तस्मिन। पातंगे, पतंगः सूर्यः तस्य इदं तस्मिन। **कमण्डल्विति**— कमण्डलुः, यतीनां जलपात्रं, तस्य जलेन शुचयः, पवित्राः, शयाः, कराः, चरणाश्च येषां तेषु। चैत्येति—चैत्यं, आयतनविशेषः, तस्य प्रणतिः, अभिवन्दनं तत्र पराः तेषु। पाराशरिषु, भिक्षुषु पराशरमतानुवर्त्तिषु द्विजेषु वा। यज्ञेति—यज्ञपात्रैः, स्रुक् स्रुवादिभिः, पवित्राः, पाणयो यस्य तथोक्ते, प्रकीर्णबर्हिषि, प्रकीर्णाः, विकीर्णाः बर्हिषः, कुशाः येन तस्मिन। ओजसि, ज्वलतीत्यर्थः, जातवेदसि अग्नौ हवींषि हवनीय द्रव्याणि, वषट् कुर्वति। यायजूकजने अत्यर्थं यजनशीललोके। निद्रेति—निद्रया, स्वप्नेन, विद्राणानि, आकुलानि, द्रोणकुलानि, काकवृन्दानि तैः कलिलाः, व्याप्ताः, कुलायाः, नीडाः, येषां तेषु। कापेयेति—कपीनामिदं कापेयं तेन विकलानि, कपिकुलानि, वानरवृन्दानि येषु तादृशेषु। आरामतरुषु, उपवनवृक्षेषु निर्जिगमिषति, गन्तुमिच्छति। जरदिति—जरन्तः, जीर्णाः, ये तरवः, वृक्षाः तेषां कोटराणि एव गह्वराणि तान्येव कुट्यः क्षुद्रगृहाणि, तत्र कुटुम्बी, परिवारवान् तस्मिन्। कौशिककुले, उलूकवर्गे। मुनि-इति—मुनीनां, करसहस्रैः, प्रकीर्णाः, प्रक्षिप्ताः,

कौशिककुले, मुनिकरसहस्रप्रकीर्णसंध्यावन्दनोदबिन्दुनिकरे इव दन्तुरयति तारापथस्थलीं स्थवीयसि तारकानिकुरम्बे, अम्बराश्रयिणि शर्वरीशवरीशिखण्डे, खण्डपरशुकण्ठकाले कवलयति बाले ज्योतिःशेषं सांध्यमन्धकारावतारे, तिमिरतर्जननिर्गतासु, दहनप्रविष्टदिनकरकरशाखास्विव स्फुरन्तीषु दीपलेखासु, अररसंपुटसंक्रीडनकथितावृत्तिष्विव गोपुरेषु, शयनोपजोषजुषि जरतीकथितकथे शिशयिषमाणे शिशुजने, जरन्माहिषमसीमली-

सन्ध्यावंदनस्य ये उदबिन्दवः, जलबिन्दवः, तेषां निकरेइव दन्तुरयति, दन्तुरां कुर्वति। तारापथस्थलीं, तारापथं, अन्तरीक्षमेव स्थली तां, स्थवीयसि, स्थूलतरे। तारकानिकुरम्बे, तारागणे। अम्बराश्रयिणि, आकाशसंचारिणि। शर्वरीति—शर्वरी, रात्रिः एव शवरी, शवरनारी, तस्याः शिखण्डः चूडा तस्मिन्। खण्डेति—खण्डपरशुः, शिवः, तस्य कण्ठ इव कालः, श्यामः तस्मिन् कवलयति, ग्रसति। बाले, अभिनवे, ज्योतिः शेषं, कान्तिमात्रावशिष्टम्, सान्ध्यं, सन्ध्याकालीनम्, अन्धकारावतारे, तिमिरोद्गमे। तिमिरेति—तिमिराणां तमसां तर्जनाय, अपसारणाय, निर्गताः, प्रसृताः तासु। दहनेति—दहनम्, वह्निं, प्रविष्टाः, गताः, दिनकरस्य, सूर्यस्य, करशाखाः, कराः, किरणाः एव शाखा कराङ्गुल्यः तासु इव। स्फुरन्तीषु, ज्वलन्तीषु, दीपलेखासु, दीपराजिषु। अररेति—अरराः, कवाटाः, (कवाटमररं तुल्ये इत्यमरः) तेषां सम्पुटस्य, युगलस्य, संक्रीडनेन, शब्देन, कथिता सूचिता आवृत्तिः, अवरोधनं येषां तथा भूतेषु गोपुरेषु, पुरद्वारेषु (पुरद्वारं तु गोपुरम् इत्यमरः) शयनेति—शयने यः, उपजोषः, मौनभावः, तज्जुषि, तच्छालिनी। जरतीति—जरतीभिः, वृद्धाभिः, कथिता, उक्ता, कथा, यस्य यस्मै वा तादृशे शिशयिषमाणे, शयितु-

मसतमसि जनितपुण्यजनप्रजागरे विजृम्भमाणे भीषणतमे तमीमुखे, मुखरितवितत्ज्यधनुषि वर्षति शरनिकरमनवरतमशेषसंसारशेमुषीमुषि मकरध्वजे,रताकल्पारम्भशोभिनि शम्भलीभाषितभाजि भजति भूयां भुजिष्याजने,सैरिन्ध्रीबध्यमानरशनाजालजल्पाकजघनासु जनीषु, वशिकविशिखाविहारिणीष्वनन्यजानु-

मिच्छतीत्यर्थः। जरदिति—जरन्तः, महिषा एव मस्यः, लेखनसाधनानि द्रवद्रव्याणि तद्वत् मलीमसानि, मलिनानि, तमांसि, तिमिराणि यस्मिन् तथोक्ते। जनितेति—जनिताः, प्रसूताः, पुण्यजनानां, यक्षाणां (पुण्यजनो यक्षे राक्षसे सज्जनेऽपि च इत्यमर) प्रजागरः, प्रकर्षेण जागरणं, यस्मिन् तथोक्ते। विजृम्भमाणे, आविर्भूते, तमीमुखे, रजनीमुखे (रजनीयामिनीतमी "इत्यमरः) मुखरितेति—मुखरिता, शब्दिता, वितता, विस्तृता, ज्यायस्य तादृशं धनुः यस्य तथा भूते। वर्षति, मुञ्चति। शरनिकरं, शरवृन्दम्। अशेषेति—अशेषाणां, समस्तानां, संसाराणाम्, शेमुषी, बुद्धिः (धीः प्रज्ञा शेमुषीमतिः इत्यमरः) तां मुष्णाति, अपहरति तस्मिन् मकरध्वजे, कामे। रतेति—रतस्य, निधुवनस्य, आकल्पाः, वेशरचनाः, तेषां, आरम्भेण, समुद्योगेन, शोभते इति तथोक्ते। शम्भलीति—शम्भल्याः, कुहिन्याः (कुहिनी शम्भली समे इत्यमरः) भाषितं, वचनं, भजते तथा भूते। भुजिष्याजने, दासीजने। सैरिन्ध्रीति—सैरिन्ध्रीभिः, प्रसाधनोपचाराभिः, नारीभिः। बध्यमानानां, परिधीयमानानां, रशनानां, काञ्चीनां जालैः, संघैः, जल्पाकं, मुखरं जघनं, कटिपुरोभागो यासां तथा विधासु, जनीषु, वधुषु, (जनीसीमन्तनीवध्वोः—इति मेदिनी) वशिकेति—वशिकाजनशून्या (शन्यन्तु वशिकं—इत्यमरः) या विशिखा, रथ्या, तासु विहरन्तीति तथोक्तासु।

प्रवासु प्रचलितास्वभिसारिकासु, विरलीभवति वरटानां वेशन्तशायिनीनां मञ्जुनि मञ्जीरशिञ्जितजडे जल्पिते, निद्राविद्राणद्राघीयसि द्रावयतीव च विरहिहृदयानि सारसरसिते, भावि वासरबीजाङ्कुरनिकर इव च विकीर्यमाणे जगति प्रदीपप्रकरे निवासस्थानमगात्। अकरोच्च चेतसि—'अतिदक्षिणः खलु देवो हर्षः, यदेवमनेकबाललरितचापलोचितकौलीनकोपितोऽपि मनसा स्निह्यत्येव मयि। यद्यहमक्षिगतः स्याम्, न मे दर्शनेन प्रसादं कुर्यात्। इच्छति तु मां गुणवन्तम्। उपदिशन्ति हि विनयमनु-

---

अनन्यजेति—अनन्यजः, मनसिजः, अनुप्रवः, अनुचरः यासां तथा विधासु। प्रचलितासु, प्रस्थितासु, अभिसारिकासु, (कान्तार्थिनीतु या पति संकेतं साऽभिसारिका) तासु नारीषु, (विरलीभवतीत्यर्थः) वरटानां, हंसीनां (हंसस्य योषित वरटा इत्यमरः) वेशन्तशायिनां, पल्वल शायिनाम्, (वेशन्तः पल्वलश्चाल्पसरः—इत्यमरः) मञ्जुनि, मनोज्ञे। मञ्जीरेति मञ्जीरस्य, नूपुरस्य, शिञ्जितं, रणितं तद्वत् जडं, गम्भीरं मन्थरं वा तस्मिन् जल्पिते, रवे। निद्रेति—निद्रया, स्वपनेन, विद्राणम्, अलसं, द्राघीयः, अतिदीर्घं च तस्मिन्। द्रावयति, द्रवीकुर्वति इव। सारसरसिते—सारसानां, पक्षिविशेषाणाम्, रसितं, रुतं तस्मिन्। भावीति—भाविनः, भविष्यतः, वासरस्य, दिवसस्य बीजांकुराणां निकर इव सञ्चय इव। विकीर्यमाणे, प्रसार्यमाणे। अतिदक्षिणः, अत्युदारः। अनेकेति—अनेकेषां, बहूनां, बालचरितानां, चापलं, तस्य उचितं यत् कौलीनम्, अपवादः, (स्यात्कौलीनं लोकवादे—इत्यमरः) तेन कोपितोऽपि अक्षिगतः, द्वेष्यः (द्वेष्येत्वाक्षिगतः-इत्यमरः) उपदिशन्ति, शिक्षयन्ति, विनयं, शिष्टाचारं। अनुरूपेति—अनुरूपा, योग्या, प्रतिपत्तिः, सम्भावना

रूपप्रतिपत्त्युपपादनेन वाचं विनापि भर्तव्यानां स्वामिनः । अपि च धिङ्मां स्वदोषान्धमानसमनादरपीडितमेवमतिगुणवति राजन्यथा चान्यथा च चिन्तयन्तम् । सर्वथा करोमि तथा, यथा यथावस्थितं जानाति मामयं कालेन' इत्येवमवधार्य चापरेद्युर्निष्क्रम्य कटकात्सुहृदां बान्धवानां च भवनेषु तावदतिष्ठत्, यावदस्य स्वयमेव गृहीतस्वभावः पृथिवीपतिः प्रसादवानभूत् । अविशच्च पुनरपि नरपतिभवनम् । स्वल्पैरेव चाहोभिः परमप्रीतेन प्रसादजन्मनो मानस्य प्रेम्णो विस्रम्भस्य, द्रविणस्य, नर्मणः प्रभावस्य च परां कोटिमानीयत नरेन्द्रेणेति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते राजदर्शनं नाम द्वितीय उच्छ्वासः ।

तस्या उपपादनं, योजनं तेन वाचं विनाऽपि भर्त्तव्यानां, प्रतिपाल्यानां, स्वामिनः, प्रभवः । स्वदोषेति—स्वदोषेण, अन्धं मानसं यस्य तथोक्तम् । अनादरपीडितम् । अनादरेण, अवज्ञया, पीडितं, अभिभूतं राजनि, नृपे । निर्गत्य, निष्क्रम्य, कटकात्, शिविरात् । गृहीतस्वभावः, विदितचरितः, अहोभिः, दिवसैः, प्रसादजन्मनः, प्रसादजनस्य, विश्रम्भस्य, विश्वासस्य, द्रविणस्य, धनस्य, प्रभावस्य, प्रतापस्य, परां कोटिं, परमोत्कर्षम् ।

इति श्रीबाणभट्टकृत हर्षचरित व्याख्यायां
"आशुतोषिण्यां" द्वितीय उच्छ्वासः ।

तृतीय उच्छ्वासः

निजवर्षाहितस्नेहा बहुभक्तजनान्विताः ।
सुकाला इव जायन्ते प्रजापुण्येन भूभुजः ॥ १ ॥
साधूनामुपकर्तुं लक्ष्मीं द्रष्टुं विहायसा गन्तुम् ।
न कुतूहलि कस्य मनश्चरितं च महात्मनां श्रोतुम् ॥ २ ॥

निजेति— निजम्, स्वकीयम्, वर्षम्, जम्बुद्वीपदेशः, तस्मिन् आहिताः, स्थापिताः, स्नेह, प्रेम, यैः ते । जम्बुद्वीपः, सर्ववस्तुसिद्धिद, (अतःनृपास्तत्र स्नेहं प्रकुर्वन्ति-इति भावः) (पक्षे) वर्षम्, वृष्टिः तेन आहिताः, उत्पादिताः, स्नेहः,आर्द्रता, यैस्तथा विधाः (सुकालाःहि वर्षया स्नेहं जनयन्ति) **बह्वीति**— बहवः ये भक्तजना आमात्यप्रभृतयः, तैः, अन्विताः, युक्ताः, (पक्षे) बहूनि, अनन्तानि, भक्तानि शालीगोधूमादीनि अन्नानि तेषाम्, जननेन, उत्पादनेन, अन्विता इति भूभुजः, महीपालाः, सुकाला इव सुसमया इव **प्रजेति**—प्रजाः, प्रकृतयः, तासां पुण्येन शुभकार्यकरणेन (प्रजायाः पुण्येनैव सौराज्यं सुकालश्च भवतीतिभावः) जायन्ते, प्रादुर्भवन्ति "जनिप्रादुर्भावे धातोः, लटि, झि, "ज्ञाजनोर्जा" इत्यनेन जादेशः ।" अत्र हि श्लिष्टार्थत्वात् श्लेषः, सुकालैः, सह नृपां साधर्म्यादुपमालंकारश्च ॥१॥

साधूनामिति—कस्य, मनुष्यस्य इति शेषः । मनः, चित्तम्, साधवः, सज्जनास्तेषामुपकर्तुमनुकूलम् विधातुम्, लक्ष्मीं, श्रियम्, द्रष्टुम्, साक्षात् कर्तुम्, (लब्धुमिति भावः) विहायसा गगनमार्गेण गन्तुं चलितुम् महात्मनां महांश्चासौ आत्मा येषाम्, तेषाम् । महाशयानां चरितं, चरित्रम्, श्रोतुम् । कुतूहलि कुतूहलं कौतुकं तदस्ति यस्यतत् न उत्कण्ठितम् (अर्थात् सर्वेषां जनानां मनः महाशयानां-

अथ कदाचिद्विरलितबलाहके, चातकातङ्ककारिणि, क्वणत्कादम्बे, दर्दुरद्विषि, मयूरमदमुषि, हंसपथिकसार्थसर्वातिथौ, धौतासिनिभनभसि, भास्वरभास्वति, शुचिशशिनि, तरुणतारागणे, गलत्सुनासीरशरासने, सीदत्सौदामनीदाम्नि, दामोदरनिद्राद्रुहि, द्रुतवैदूर्यवर्णार्णसि, घूर्णमानमिहिकालघुमेघमोघमघवति,

चरितम्, श्रोतुम् भवतीति शेषः) अत्र एकस्य मनसः, उपकर्तुम् गन्तुं श्रोतुम् आदिभिः, क्रियाभिः, सह सम्बंधत्वात् कारकदीपकालंकारः ॥२॥ अथेति क-दाचित् बाणो बन्धून् द्रष्टुम् पुनरपि ब्राह्मणाधिवासमगादिति दूरेणान्वयः। किंदृशे शरत्समयारम्भे विरलिताः, अनिविड़ाः, बलाहकाः, जलदाः, यस्मिन्, तथा विधे। **चातकेति**— चातकाः, पक्षिविशेषाः तेषाम् आतङ्कः तापः तं करोति, तस्मिन्। **क्वणदिति**—क्वणन्तः, नदन्तः, कादम्बाः हंसविशेषाः, यस्मिन् तस्मिन्। **दुर्दुरेति**—दुर्दुराः, मण्डूकाः, तान् द्वेष्टीति तस्मिन्। **मयूरेति**—मयूराः, वर्हिणास्तेषाम् मदम्, गर्वं, मुष्णाति अपनयति तस्मिन्। **हंसेति**—हंसाः पक्षिविशेषा त एव पथिकाः, पान्थाः, तेषां सार्थाः, समूहाः, त एव सर्वे अतिथयः यस्य तथा विधे। **धौतेति**— धौतः, निर्मलीकृतः, यः असिः, खड्गः तन्निभं तत् सदृशं, नभः, आकाशं, यस्मिन् तथोक्ते। **भास्वरेति**—भास्वरः, प्रोज्वलः, भास्वान्, सूर्यः यस्मिन्। **शुचीति**—शुचिः, विमलः शशी, चन्द्रः, यस्मिन्। **तरुणेति**—तरुणाः, वृद्धिंगतः तारागणाः, उडुसमूहः, यस्मिन्। **गलदिति**—गलत्, क्षयंगतं, सुनासीरस्य, धनुः, चापं यस्मिन्। **सीददिति**—सीदन्ती, नश्यन्ती सौदामनी, विद्युदेव, दाम स्रक् यस्मिन्। **दामोदरेति**—दामोदरः, विष्णुः, तस्य निद्रा, शयनं, तां द्रुह्यति हरति यः तस्मिन्। **द्रुतेति**—द्रुतं, गलितं यद् वैदूर्यं, रत्नं

निमीलन्नीपे, निष्कुसुमकुटजे, निर्मुकुलकन्दले, कोमलकमले, मधुस्यन्दीन्दीवरे, कह्लाराह्लादिनि, शेफालिकाशीतलीकृतनिशे, यूथिकामोदिनि, मोदमानकुमुदावदातदशदिशि, सप्तच्छदधूलिधूसरितसमीरे, स्तबकितबन्धुरबन्धूकबध्यमानाकाण्डसंध्ये,

---

तस्य वर्ण इव वर्णो यस्य तथाविधः, अर्णः, जलं यस्मिन् तथाविधे। **घूर्णमानेति**—घूर्णमानाः, सर्वतो वर्षिताः, याः मिहिकाः, अवश्यायाः, तद्वल्लघवः, जलाभावात्, अल्पीभूताः, ये मेघाः, पयोमुचः, तैः, मोघः, निष्फलः, मघवा, इन्द्रः, यस्मिन्। **निमीलदिति**—निमीलन्तः, विकसनाभावात्, संकुचन्तः, ये, नीपाः, बालवकुलाः, यस्मिन्। **निष्कुसुमेति**—निष्कुसुमाः, पुष्परहिताः, कुटजाः, वृक्षविशेषाः, यस्मिन्। **निर्मुकुलेति**—निर्मुकुलाः, कुसुमरहिताः, कन्दलाः, तरुविशेषाः, यस्मिन्। **कोमलेति**—कोमलानि, मृदूनि, कमलानि, पद्मानि, यस्मिन्। **मध्विति**—मधुस्यन्दीति, मकरन्दवर्षीणि, इन्दीवराणि, नीलोत्पलानि, यस्मिन्। कल्हाराल्हादिनि, सौगन्धिकापराख्यश्वेतोत्पलविकासिनी। **शेफालिकेति**—शेफालिकाभिः, तदाख्य पुष्पविशेषैः, शीतलीकृता, शीरारीकृता, निशारात्रि, यस्मिन्। यूथिकामोदिनी, यूथिकापुष्पोद्भेदेन,आनन्दकारिणी। **मोदमानेति**—मोदमानैः, विकसद्भिः, कुमुदैः, कैरवैः, अवदाताः, सिताः, दशदिशः, यस्मिन्। **सप्तच्छेदति**—सप्तच्छदाः, तरुविशेषाः, तेषां धूलयः परागाः, तैः धूसरिताः, पाण्डुराः, समीराः, अनिलाः, यस्मिन्। **स्तबकेति**—स्तबकिताः, पुञ्जभूताः, ये बन्धुराः, मनोहराः, बन्धूकाः, तरुविशेषाः, तैः, बध्यमानाः, क्रियमाणाः, अकाण्डे, अनवसरे, सन्ध्याः, निशामुखाः, यस्मिन्। **नीराजितेति**—नीराजिताः, स्मरयात्रायै सम्पादितनीराजननाम्नीशान्तिः, यैः, तथाविधाः, वाजिनः,

नीराजितवाजिनि, उद्दामदन्तिनि, दर्पक्षीबौक्षके, क्षीयमाणपङ्क-चक्रवाले, वालपुलिनपल्लवितसिन्धुरोधसि, परिणामश्यानश्यामाके, जनितप्रियङ्गुमञ्जरीरजसि, कठोरित्रपुषत्वचि, कुसुमस्मेरशरे, शरत्समयारम्भे राज्ञः समीपाद्बाणो बन्धून्द्रष्टुं पुनरपि तं ब्राह्मणाधिवासमगात्।

समुपलब्धभूपालसंमानातिशयपरितुष्टास्तस्य ज्ञातयः श्लाघमाना निर्ययुः। क्रमेण च कांश्चिदभिवादयमानः, कैश्चिदभिवा-

तुरगाः, यस्मिन्। उद्दामेति—उत्, उत्कटं, दाम, मदं येषां, ते (क्षीवा इत्यर्थः) दन्तिनः, करिणः, यस्मिन। दर्पेति—दर्पः, अहंकारः, तेन, क्षीवाणि, उन्मत्तानि, औक्षकाणि, उक्षाः, बलिवर्दाः, तेषां समूहाः औक्षकाणि, (वृषभवृन्दानीतिभावः) यस्मिन्। क्षीयमाणेति—पङ्काः, कर्दमाः, तेषां, चक्रवालं, समूहः, तत्, क्षीयमाणं, नश्यमानं, यस्मिन्। वालेति—वालपुलिनं, नूतनसैकतं, तत्र पल्लवितानि, प्रवाहरूपेण प्रसृतानि, यानि, सिन्धूनां, सरितां, रोधांसि, तटानि, यस्मिन्। जनितेति जनितानि, उत्पन्नानि, प्रियंगूनां, तृणभेदानां, मंजर्यः, तासां, रजांसि, परागाः, यस्मिन्। कठोरेति—कठोरिताः, कठिनाः, त्रपूषां, कर्कटीनां, त्वचः, वल्कलानि यस्मिन्। कुसुमेति—कुसुमानि, पुष्पाणि, तैः, स्मेराः, विकासंगताः, शराः, यस्मिन्। शरत्समयारम्भे, शरत्काले, इति पूर्वेणान्वयः। समुपलब्धेति—सम्, सम्यक्, उपलब्धः, प्राप्तः, भूपालात्, महीपालात्, सम्मानातिशयः, आदरविशेषः, तेन परितुष्टाः, प्रसन्नाः। तस्य श्रीहर्षराज्ञः, ज्ञातयः, बान्धवाः, श्लाघमानाः, श्लाघनीयाः, निर्ययुः, निर्जग्मुः। क्रमेण च कांचित् अभिवादयमानः प्रणामं कुर्वन्। कैश्चिदिति—कैश्चित्, पूजनीयैः, पिताप्रपितामह प्रभृतिभिः, शिरसि,

यमानः, कैश्चिच्छिरसि चुम्ब्यमानः, कांश्चिन्मूर्ध्नि समाजिघ्रन्, कैश्चिदालिङ्ग्यमानः, कांश्चिदालिङ्गन्, अन्यैराशिषानुगृह्यमाणः, परानानुगृह्णन्, बहुबन्धुमध्यवर्ती परं मुमुदे। संभ्रान्तपरिजनोपनीतं चासनमासीनेषु भेजे। भजमानश्चार्चादिसत्कारं नितरां ननन्द। प्रीयमाणेन च मनसा सर्वांस्तान्पर्यपृच्छत्—'कच्चिदेतावतो दिवसान्सुखिनो यूयम्। अप्रत्यूहा वा सम्यक्करणपरितोषितद्विजचक्रा क्रातवी क्रियते क्रिया। यथावदविकलमन्त्र-

मस्तके, चुम्बमानः, कृतचुम्बनः, कांश्चित्, बान्धवपुत्रादीन्, समाजिघ्रन्, शिरसि चुम्बयन्, कैश्चित् पूजनीयैः, आलिङ्ग्यमानः, स्पर्शनांगतः, कांचित्, लघुबान्धवान्, आलिङ्ग्यन्, स्पर्शयन्, अन्यैः, आशिषा, आशीर्वादेन, अनुगृह्यमाणः, अनुगृहीतः। परान्, लघून्, अनुगृहीतान्, कुर्वन्। **बह्विति**—बहवः, अनेकाः, बान्धवः, ज्ञातयः, तेषां मध्यवर्ती, मध्येस्थितः, परमत्यन्तं, मुमुदे, पिप्रिये। **सम्भ्रान्तेति**—सम्भ्रान्तः, त्वरायुक्तः, परिजनः, परिवारः, तेन, उपनीतं, समीपे आनितं, यत्, आसनम्, विष्टरं, समासीनेषु, आसनान्युपस्थितेषु, गुरुषु, पुज्येषु, भेजे, सिषेवे, उपविष्टवान्। **भजमानेति**—अर्चादयः, पूजाप्रभृतयः, तैः, यत् सत्कारं आदरम् तद् भजमानः, सेवमानः, नितरां अत्यर्थं, ननन्द। प्रीयमाणेन, प्रसन्नभूतेन, मनसा, तान्, ज्ञातिवर्गान्, सर्वान्, समस्तान्, पर्यप्रच्छत्। **कच्चिदिति**—इष्टप्रश्ने, एतावतोऽद्यावधीन्, दिवसान्, दिनान्, यूयं, सुखिनः, सुखोपेताः। अप्रत्यूहाः, निर्विघ्नाः। **सम्यगिति**—सम्यक्करणेन, शास्त्रविहितेन, परितोषितानि, परितुष्टानि द्विजचक्राणि, ब्राह्मणसमूहाः, यस्यां, सा, क्रातवी, यागसम्बन्धिनी क्रिया, क्रियते। **यथावदिति**—अविकलानि, वैकल्यरहितानि, मन्त्राणि, भजन्ते, येषु,

भाञ्जि भुञ्जते हवींषि हुतभुजः। यथाकालमधीयते वा बटवः। प्रतिदिनमविच्छिन्नो वा वेदाभ्यासः। कच्चित्स एव चिरंतनोयज्ञविद्याकर्मण्यभियोगः,तान्येव व्याकरणे परस्परस्पर्धानुबन्धावन्ध्यदिवसदर्शितानि व्याख्यानमण्डलानि, सैव वा पुरातनी परित्यक्तान्यकर्तव्या प्रमाणगोष्ठी, स एव वा मन्दीकृतेतरशास्त्ररसो मीमांसायामतिरसः। कच्चित्त एव वाभिनवसुभाषितसुधावर्षिणः काव्यालापाः' इति।

तादृशानि, हवींषि, हव्यानि, हुतभुजः, अग्नयः, भुञ्जते। यथेति—वटवः, विद्यार्थिनः, यथाकालं, निश्चितसमयं, अधीयते, अध्ययनं कुर्वते। प्रतिदिनं, नित्यं, वेदाभ्यासः, श्रुतेरध्ययनम्, अविच्छिन्नाः, विच्छित्तिरहितः। (भवतीतिशेषः) कश्चित्, स एव, चिरन्तनः, पूर्वकालिनः, अभियोगः, यज्ञविशेषः। तानि एव व्याकरणे, शब्दशास्त्रे। **परस्परेति**—परस्परं, मिथः, तस्य, स्पर्धा, जिगीषा, तस्याः, अनुबन्धेन, निबन्धेन, अबन्ध्याः, फलदातारः, (सर्वदा शास्त्रपठनेन ज्ञानवर्धिनः-इति भावः) दिवसाः, दिनाः, तेषु, दर्शितानि, प्रकटिकृतानि, व्याख्यानानां, मण्डलानि, समूहाः, स एव, पूर्वसिद्ध एव, पुरातनी, पराचीनानि, परित्यक्तानि, विमुंचितानि, (उपेक्षितानीत्यर्थः) अकर्तव्यानि, यस्यां तथाविधा, प्रमाणगोष्ठी, प्रमाणसभा, (इतिभावः) स एव, पूर्वसिद्धएव। **मन्दीकृतेति**—मन्दीकृतः, इतरेषु, शास्त्रेषु, रसो, रागो येन, मिमांसायाम्, अतिरसः, अनन्तरागः। **कच्चिदिति**—प्रश्ने त एव वा। **अभिनवेति**—अभिनवानि, नूतनानि, यानि सुभाषितानि, तेषां सुधा, अमृतं तद्, वर्षिणः, निष्यन्दिनः, काव्यकलापाः, सन्ति न वा (इति शेषः)।

अथेति—अथ उक्तप्रश्न करणानन्तरम्, ते ज्ञातयः तं बाणम्,

अथ ते तमूचुः—'तात, संतोषजुषां सततसंनिहितविद्याविनोदानां वैतानवह्निमात्रसहायानां कियन्मात्रं नः कृत्यं सुखितया सकलभुवनभुजि भुजङ्गराजदेहदीर्घे रक्षति क्षितिं क्षितिभुजो भुजे। सर्वथा सुखिन एव वयम्, विशेषेण तु त्वयि विमुक्तकौसीद्ये परमेश्वरपार्श्ववर्तिनि वेत्रासनमधितिष्ठति। सर्वे च यथाशक्ति यथाविभवं यथाकालं च संपाद्यन्ते विप्रजनोचिताः क्रियाकलापाः' इत्येवमादिभिरालापैः स्कन्धावारवार्ताभिश्च शैशवातिक्रान्तक्रीडानुस्मरणैः पूर्वजकथाभिश्च विनोदितमनास्तैः

ऊचुः। तात, (इति आदरसूचकम्) **सततेति** सततं, निरन्तरम्, सन्निहिता, कण्ठस्थिता, या, विद्या, तया, विनोदः, येषां ते। **वैतानेति**—वितानः, यागः, तस्यायं वैतानः, यज्ञसम्बन्धी, स चासौवह्निः, अग्निः। तन्मात्रमेव, सहायः, सहायकः, येषां तेषाम्, सन्तोषजुषाम्, सन्तोषधनानाम, नः, अस्माकम्, कियत्, मात्रम्, अतिलघुः, कृत्यं, कर्तव्यम् अस्तीतिशेषः। सुखितया सुखेन। **सकलेति**—सकलानि, समग्राणि, भुवनानि, लोकाः। भुञ्जते, यः, तस्मिन्। **भुजंगेति**—भुजङ्गाः, सर्पाः, तेषां, राजा, नृपः, तस्य, देहवत्, कायावत्, दीर्घे, गुरौ, क्षितिः, पृथ्वी, तां, भुनक्ति, इति तस्य, राज्ञः, श्रीहर्षस्य, भुजे, करे, क्षितिं, भूमिं, रक्षति, अवतिसति। विशेषेण, प्रायेण। **विमुक्तेति**—विमुक्तं, कौसीद्यम्, आलस्यं, येन तस्मिन्। परमेश्वरः, सार्वभौमः, तस्य पार्श्ववर्तिनि, समीपवर्तिनि, वेत्रासनम्, वेत्रविष्टरम्, अधितिष्ठति, त्वयि, सति, वयम, सुखिन, एव। सर्वे, सकलाः, यथाशक्तिः, यथा सामर्थ्यम्, यथाविभवं, यथाधनं, यथाकालं, यथा समयम् च विप्रजनोचिताः, ब्राह्मणोचिताः क्रियाकलापाः, सम्पाद्यन्ते इत्येवमादिभिः, आलापैः, स्कन्धावारवार्ताभिः। **शैशवाति क्रान्तेति**—

सह सुचिरमतिष्ठत् । उत्थाय च मध्यंदिने यथाक्रियमाणाः स्थितीरकरोत् । भुक्तवन्तं च तं सर्वे ज्ञातयः पर्यवारयन् ।

अत्रान्तरे दुकूलपट्टप्रभवे सिखण्डयपाङ्गपाण्डुनी पौण्ड्रे वाससी वसानः स्नानावसानसमये बन्दितया तीर्थमृदा गोरोचनया च रचिततिलकः, तैलामलकमसृणितमौलिः, अनुच्चचूडाचुम्बिना निबिडेन कुसुमापीडकेन समुद्भासमनः, असकृदुपयुक्तताम्बूलविमलाधरकान्तिः,एकशलाकाञ्जनजनितलोचनरुचिः,

---

शैशवं, बालभावः, तेनातिक्रान्तः, अनिक्रमिता या क्रीडा, केली, तामनु स्मरणैः । पूर्वेति— पूर्वजनानां, वृद्धानां कथाभिः, च, विनोदितं मनः,यस्य,सः, तैः, ज्ञातिभिः, सह सुचिरं, बहुकालम् , अतिष्ठत् । उत्थाय च यथा क्रियमाणां, यथा सम्पाद्यमानं, स्थितिं, वासं, अकरोत् , भुक्तवन्तं, खादयन्तं, तं, सर्वे, सकलाः, ज्ञातयः,पर्यवारयन् , न्यवारयन् , अत्रान्तरेति—इत्यादौ पुस्तकवाचकः, सुदृष्टिः, आजगाम इत्यनेनान्वयः । दुकूलपट्टः क्षोमतन्तुः तस्मात् प्रभवे, जाते शिखण्डी, मयूरः, तस्य अपाङ्गः, नयनप्रान्तः, तद्वत् , पाण्डुनी, श्वेते,पौण्ड्रे, पुण्ड्रदेशोद्भवे, वाससी, वस्त्रे वसानः परिधारयन् । स्नानं, मज्जनं तदवसानसमये, अन्तकाले, तीर्थमृदा, पुण्यक्षेत्रमृतिकया, गोरोचना, तन्नाम द्रव्यम् , तया रचितम् , तिलकं येन । तेन, आमलकेन, तच्चूर्णेनेन, मसृणितः, चिक्कणीकृतः मौलिः येन सः अनुच्चेति—अनुच्चा, निम्ना, या चूडा, शिखा, तांचुम्बती, निविडेन, सघनेन, कुसुमानाम् । आपीडकेन समूहेन समुद्भासमानः, प्रदीप्यमानः, असकृदिति—असकृत् , वारंबारं, उपयुक्तम् , चर्वितं, यत्ताम्बूलं, तेन, विमला, अधरस्य, कान्तिः, यस्य सः । एकेति—एकं यत् शलाकाञ्जनं तेन जनिता, लोचनयोः, रुचिः यस्य, सः, अचिरभुक्तः, सद्यः भोजनकृतः । नाति

अचिरभुक्तः, विनीतामार्यं च वेषं दधानः, पुस्तकवाचकः सुदृष्टिराजगाम। नातिदूरवर्तिन्यां चासन्द्यां निषसाद। स्थित्वा च मुहूर्तमिव तत्कालापनीतसूत्रवेष्टनमपि नखकिरणैर्मृदुमृणालसूत्रैरिव वेष्टितं पुस्तकं पुरोनिहितशरशलाकायन्त्रके निधाय, पृष्ठतः सनीडसंनिविष्टाभ्यां मधुकरपारावताभ्यां दत्ते स्थानके प्राभातिकप्रपाठकच्छेदचिह्नीकृतमन्तरपत्रमुत्क्षिप्य, गृहीत्वा च कतिपयपत्रलघ्वीं कपाटिकाम्, क्षालयन्निव मसीमलिनान्यक्षराणि दन्तकान्तिभिः, अर्चयन्निव सितकुसुममुक्तिभिर्ग्रन्थम्, मुखसंनिहितसरस्वतीनूपुररवैरिव गमकैर्मधुरैराक्षिपन्मनांसि

दूरवर्त्तिन्यां, आसन्द्यां, वेत्रनिर्मितासने। ततेति— 'तत्काले अध्ययनकाले, अपनीतं, दूरीकृतं, सूत्रवेष्टनमपि, नख किरणैः, कराग्रभागमयूखैः मृदुमृणालसूत्रैरिव, कोमलकमलतन्तुभिरिव। पुर-इति— पुरः, अग्रे, निहितं, स्थापितं यत् शरशलाकायन्त्रकम् (पुस्तकारोपणाय शरतृणविशेषाणां निर्मितयंत्रकम्) तस्मिन् ,पुस्तकं,निधाय,स्थाप्य सनीडसन्, समीपं, निविष्टाभ्याम्, उपविष्टाभ्याम्, मधुकरपारावताभ्याम्, भ्रमरकपोताभ्याम्। प्रभातिकेति—प्रभातः, प्रभातकालः, तस्यायं प्राभातिकः, यः प्रपाठः, तस्यच्छेदः, विरामः, तस्य, चिह्नीकृतं, दत्तचिह्नम्। (इयन्मात्रं पठितं नान्यदिति सूचकं पत्रम्) अन्तरपत्रम्, उत्क्षिप्य। कतिपयेति— कतिपयैः, पत्रैः, लघ्वी, स्वल्पतरा तां कपाटिकां, पुस्तकावरणपट्टकम्। क्षालयन्निव, मसीमलिनानि, लेखनद्रव्यरसः, मसी, तया मलिनानि, अक्षराणि, दन्तकान्तिभिः, दशनज्योत्स्नाभिः, अर्च्चयन्निव। सितेति—सितानां, धवलानां, कुसुमानां, मुक्तिभिः, वृष्टिभिः। मुखेति—मुखे, संनिहिता, स्थिता या सरस्वती तस्याः नूपुराणांरवैरिव शब्दैरिव। गमकैः, अर्थबोधकैः,

श्रोतृणां गीत्या पवमानप्रोक्तं पुराणं पपाठ ।

तस्मिंश्च तथा श्रुतिसुभगगीतिगर्भं पठति सुदृष्टौ नातिदूर वर्ती बन्दीसूचीबाणस्तारमधुरेण गीतिध्वनिमनुवर्तमानः स्वरेणेदमार्यायुगलमपठत्—

'तदपि मुनिगीतमतिपृथु तदपि जगद्व्यापि पावनं तदपि ।
हर्षचरितादभिन्नं प्रतिभाति हि मे पुराणमिदम् ॥ ३ ॥
वंशानुगमविवादि स्फुटकरणं भरतमार्गभजनगुरु ।
श्रीकण्ठविनिर्यातं गीतमिदं हर्षराज्यमिव ॥ ४ ॥

मधुरैः, मधुररसस्यन्दिभिः, श्रोतृणां मनांसि, चित्तानि, आक्षिपन्, आकर्षयन् । श्रुतिः, वेदः, तया सुभगा या, गीतिः, सा गर्भे यस्य तं पठति सति । नातिदूरवर्ती, समीपस्थायी यः, बन्दी, चारणः सूचिबाणः, तदाख्यः चारणः । गीतीति—गीत्याः, गीतिकायाः, ध्वनिं शब्दमनुवर्तमानः, सन्, स्वरेण उच्चैः, इदमार्यायुगलमपठत् । तदपीति—तन्मुनिना, द्वैपायनेन, गीतं, कीर्तितमपि, तत् अतिपृथुः, अतिविस्तृतमपि (पृथुः—आदिराजोवेनपुत्रश्च तमतिक्रान्तं तदतिशायीत्यर्थः) तत् जगद्व्यापि, जगत्प्रसिद्धम्, पावनं, पवित्रमपि, इदं पुराणं, वाक्यमिति शेषः, हि, निश्चितम्, हर्षचरितात् अभिन्नं, भेदहीनम् मे मनः, प्रतिभाति । अत्र तादृशात्, पुराणात् हर्षचरितस्य भेदेऽपि अभेदकथनं भेदेऽप्यभेद प्रतिपत्तिरूपा अतिशयोक्तिः, आर्यावृत्तम् ॥ ३ ॥

वंशानुगमेति—वंशं, वेणुवाद्यं तदनुगच्छतीति तं (पक्षे) वंशं, कुलं तदनुगच्छतीति तम् । अविवादीति—न भवतः विवादिनौ, विरुद्धवक्तारौ स्वरौ यस्मिन् (पक्षे) न सन्ति विवादिनः, द्वेष्टारः यस्य तत् । स्फुटेति-स्फुटं, स्पष्टं, करणं, लयं (स्वराणामारोहावरोहणाम्)

तच्छ्रुत्वा बाणस्य चत्वारः पितामहमुखपद्मा इव वेदाभ्यासपवित्रितमूर्तयः, उपाया इव सामप्रयोगललितमुखाः, गणपतिः, अधिपतिः, तारापतिः, श्यामल इति पितृव्यपुत्रा भ्रातरः, प्रसन्नवृत्तयः, गृहीतवाक्याः, कृतगुरुपदन्यासाः, न्यायवादिनः,

---

यस्मिन् तत् (पक्षे) स्फुटानि, प्रकटीकृतानि, कारणानि, धर्मविद्यादीनि, प्रजासुखार्थमुपायाः, यस्मिन् तत् । भरतेति—भरतः, संगीतशास्त्रकारः, मुनिः, तस्य मार्गः, पन्था, तदनुसरणेन, गुरुः, महत्, (पक्षे) भरतः, पूर्वभूतनृपः तस्य मार्गः, नीतिः, तद्भजनेन, अनुचलनेन गुरुः । श्रीनीलकण्ठेति—श्रीनीलकण्ठः, महादेवः, तस्माद् विनिर्यातं, विशेषेण निःसृतम् (पक्षे) श्रीनीलकण्ठः, देशविशेषः, तस्मात्, निःसृतम् । हर्षेति—हर्षस्य, प्रमोदस्य, राज्यमिव (पक्षे) एतन्नाम्नः, श्रीहर्षस्य राज्यम् । अत्र हि हर्षगीतयोरर्थश्लिष्टत्वात्, श्लेषः, तद्वाच्यत्वाद्-उपमा ॥ ४ ॥

तत् आर्यायुगलं श्रुत्वा बाणस्य,तन्नामकवेः,चत्वारः, पितामहमुखपद्मा इव परस्परस्य,मुखानि, अवलोकयन इति दूरेणान्वयः । पितामहः, ब्रह्मा, तस्य मुखानि पद्म इव, पितामहमुखपद्माः, ते इव । वेदेति—वेदानाम्, अभ्यासेन, पुनः, पुनः, अनुशीलनेन, पवित्रिता, पूता, मूर्तिः, येषां, ते, उपाया इव, सामादयः, इव । सामेति—साम्नां, सामवेदानां, प्रयोगेण, ललितानि, सुन्दराणि, मुखानि, आरम्भाश्च येषां ते । प्रसन्नेति—प्रसन्नाः, विशुद्धाः,सुबोधाः, च, वृत्तयः, जीविकाः, सुत्रविवरणाश्च, येषां ते । गृहीतेति—गृहीतानि, वाक्यानि, येषां ते (पक्षे) गृहीतं, ज्ञातं वाक्यविवरणं यैः ते । कृतेति—कृतः, गृहीतः, पूर्वजानां, पित्रादीनां, पदे न्यासः, यैः, (अर्थात् महाशयानां पद्धतिमनुसरन्तः) (पक्षे) कृताः, सम्पादिताः, गुरवः, बहवः, पदानां,

सुकृतसंग्रहाभ्यासगुरवो लब्धसाधुशब्दाः,लोक इव व्याकरणेऽपि, सकलपुराणराजर्षिचरिताभिज्ञाः, महाभारतभावितात्मानः, विदितसकलेतिहासाः, महाविद्वांसः, महाकवयः,महापुरुषवृत्तान्तकुतूहलिनः, सुभाषितश्रवणरसरसायनाः, वितृष्णाः, वयसि वचसि यशसि तपसि सदसि महसि वपुषि यजुषि च प्रथमाः, पूर्वमेव कृतसंगराः, विवक्षवः, स्मितसुधाधवलितकपोलोदराः, परस्परस्य मुखानि व्यलोकयन् ।

सुप्तिङन्तानाम् न्यासः यैः । न्यायेति—न्यायम्, उपपत्तिमद्वचनं, न्यायशास्त्रं वा तद्वादिनः । सुकृतेति—सुकृतानां, पुण्यानां, संग्रहः, समूहः, तदभ्यासेन (पक्षे) सुष्ठुकृतः, यः, संग्रहः, व्याकरणसन्दर्भः तस्याभ्यासेन गुरवः, महान्तः, उपाध्यायाः, च । लब्धेति—व्याकरणे लब्धः, स्वीकृतः साधुशब्दानां, आलोकः यैः ते । सकलेति—सकलाः, समग्राः, पुराणराजर्षयः, पूर्वकालिकमन्वादयः, तेषां चरितानि, आचरणानि तत्र अभिज्ञाः, ज्ञातारः । महाभारतेति—महाभारते भावितः, अनुशीलितः, आत्म यैः, तथोक्ताः । विदितेति—विदिताः, विज्ञाताः, सकलाः, समस्ताः, इतिहासाः, यैः तथोक्ताः । महाविद्वांसः, प्रख्यातमतयः । महेति—महापुरुषाणां, गुरुजनानां, वृत्तान्तानि, उदन्तानि, तत्र कुतूहलिनः । सुभाषितेति—सुभाषितानां, काव्यानां, आलापानां च श्रवणे आकर्णने, यो, रसः, तस्य रसायनाः, निकषाः । वितृष्णा, विगतयाचनाभिलाषः । वयसि, अवस्थायाम् । कृतसङ्गराः (श्रीहर्षचरितं कथयितुं बाणमनुरुन्ध्य इति अन्योऽन्यं कृताङ्गीकाराः । विवक्षवः, वक्तुमिच्छवः । स्मितेति—स्मितं, ईषद् हसनं, तदेवसुधा अमृतं, तया, धवलितं, यत्, कपोलं, गण्डस्थलम्, तस्य उदरं, मध्यभागः, येषां ते । कमलेति—कमलदलवत्, पद्मपत्रवत्, दीर्घ-

अथ तेषां कनीयान्कमलदलदीर्घलोचनः श्यामलो नाम बाणस्य प्रेयान्प्राणानामपि वशयिता दत्तसंज्ञस्तैः सप्रणयं दशनज्योत्स्नास्नपितककुभा मुखेन्दुना बभाषे–'तात !, बाण !, द्विजानां राजा गुरुदारग्रहणमकार्षीत् । पुरूरवा ब्राह्मणधनतृष्णया दयितेनायुषा व्ययुज्यत । नहुषः परकलत्राभिलाषी महाभुजङ्ग आसीत् । ययातिराहितब्राह्मणीपाणिग्रहणः पपात । सुद्युम्नः स्त्रीमय एवाभवत् । सोमकस्य प्रख्याता जन्तुवधनिर्घृणता । मांधाता मार्गणव्यसनेन सपुत्रपौत्रो रसातलमगात् । पुरुकुत्सः कुत्सितं कर्म तपस्यन्नपि मेकलकन्यकायामकरोत् । कुवलयाश्वो

लोचनः, आयतनेत्रः । प्रेयान् अधिकप्रियः, वशयिता, वशीकर्तुं समर्थः, दत्तसंज्ञः, कृतसंकेतः । दशनेति—दशनानां, दन्तानां, या ज्योत्स्ना, कान्तिः, तया, स्नापिताः, प्रक्षालिताः, ककुभाः, दिशाः येन तत् मुखेन्दुना, बभाषे । द्विजानां राजा, चन्द्रः, गुरोः, बृहस्पतेः, दारग्रहणं, स्त्रीहरणम् । पुरूरवा, एतन्नाम राजा, ब्राह्मणस्य, धनानि, द्रव्याणि, तेषु, तृष्णा, ग्रहणेच्छा, दयितेन, प्रियेण, आयुषा, जीवितेन, तन्नामपुत्रेण च । नहुषः, आयुषो तनयः, परस्य, अन्यस्य, कलत्राभिलाषी, नारीच्छुकः, महाभुजङ्गः, महासर्पः, । ययातिः, एतन्नामराजा, आहितेति—आहितः, कृतः, ब्राह्मण्याः, ब्राह्मणकन्यायाः, पाणिग्रहणः, येन तथोक्तः । सुद्युम्नः,सुष्ठु, द्युम्नं धनं बलं च यस्य सः, स्त्रीमयः, स्त्रीरूपः, सोमकस्य, तन्नानृपस्य प्रख्याता, प्रसिद्धा, जन्तुः, जन्तुनाम तत्पुत्रः, प्राणिः च तस्य वधेन, हत्यया, निर्घृणता, निष्ठुरता । मान्धाता, नृपः, मार्गणेति–मार्गणेषु, शरेषु, व्यसनं,समासक्तिः, यांचा सातत्यं च तेन रसातलं, पातालं, अगात् , गतवान् , पुरुकुत्सः, तन्नामराजा तपस्यन् , तपस्यांकुर्वन् , मेकलकन्यकायां, नर्मदायां

भुजङ्गलोकपरिग्रहादश्वतरकन्यामपि न परिजहार। पृथुः प्रथमपुरुषकः परिभूतवान्पृथिवीम्। नृगस्य कृकलासभावे वर्णसंकरः समदृश्यत। सौदासेन नरक्षिता पर्याकुलीकृता क्षितिः। नलमवशात्तहृदयं कलिरभिभूतवान्। संवरणो मित्रदुहितरि विक्लवतामगात्। दशरथ इष्टरामोन्मादेन मृत्युमवाप। कार्तवीर्यो गोब्राह्मणातिपीडनेन निधनमयासीत्। मरुत्त इष्टबहुसुवर्णकोऽपि देवद्विजबहुमतो न बभूव। शंतनुरपिव्यसनादेकाकी

(रेवा तु नर्मदा सोमोद्भवा मेकल कन्या "इत्यमरः) कुत्सितं कर्म अकरोत्। कुवलयाश्वः,राजा,भुजङ्गलोक परिग्रहात्,नागलोकगमनात्, अश्वतरकन्या, अश्वतरः, कश्चिन्नागः, तस्यकन्यां न परिजहारः, न तत्याजः। पृथुः आदिराजः, वेण तनयः, प्रथमेति—प्रथमः आद्यः मुख्यश्च, पुरुष एव पुरुषकः कदर्य्यपुरुषश्च, पृथ्वीं, परिभूतवान्। नृगस्य, एतदाख्यस्य नृपस्य, कृकलासभावे कृकलासः (सरटः क्षुद्रप्राणिभेदः)तद्भावे तत्स्वरूपे वर्णेति–वर्णानां शुक्लादीनां संकरः संमिश्रणम्, समदृश्यत, सौदासेन,एतन्नाम्नाराज्ञा, नरक्षिता,नपालिता,पर्याकुलीकृता, समन्तात्, आकुलतां, प्राप्ता, क्षितिः, पृथ्वी। अवशात्तहृदयं, नवशं, अनायतम्, अक्षाणि, इन्द्रियाणि, हृदयं, मनश्च, अक्षहृदयं, अक्षज्ञानश्च यस्य तथा भूतम् नलम्। सवरणः, नामनृपः, मित्रस्य, सुहृदः, दुहितरि, कन्यायां, विक्लवतां, विह्वलतां, अगात्, कार्तवीर्यः, नामराजा। गोब्राह्मणेति—गवे, गोनिमित्तम् ब्राह्मणस्य, जमदग्नेः, गवां ब्राह्मणानां च अतिपीडनेन, वधेन, निधनं, नाशं, अयासीत्, अगात्, मरुतः, इष्टेति—इष्टः, अनुष्ठितः, बहूनि, सुवर्णानि यस्मिन् तथाभूतः, इष्टः, अभिमतः, बहु, अतिशयेन, सु-शोभनं, वर्णः, गौरस्वरूपः यस्य तथाभूतः, देवद्विजः, बृहस्पतिः, देवाः, द्विजाः, विप्राश्च

वियुक्तो वाहिन्या विपिने विललाप। पाण्डुर्वनमध्यगतो मत्स्य इव मदन रसाविष्टः प्राणान्मुमोच। युधिष्ठिरो गुरुभयविषण्ण-हृदयः समरशिरसि सत्यमुत्सृष्टवान्। इत्थं नास्ति राजत्वमप-कलङ्कमृते देवदेवादमुतः सर्वद्वीपभुजो हर्षात्। अस्य हि बहू-न्याश्चर्याणि श्रूयन्ते। तथा हि—अत्र बलजिता निश्चलीकृता-श्चलन्तः कृतपक्षाः क्षितिभृतः। अत्र प्रजापतिना शेषभोगिमण्ड-लस्योपरि क्षमा कृता। अत्र पुरुषोत्तमेन सिन्धुराजं प्रमथ्य

तेषां बहुमतः, बह्वादृतः। अतिव्यसनात्, अत्यासंगात्, वाहिन्या, नद्या, गङ्गादेव्या, सेनया च, वियुक्तः, एकाकी, विपिने, वने विललाप। पाण्डुः, नामराजा, वनमध्यगतः, अरण्यगतः, जलमध्यगश्च, मदनः, कामः, फलभेदश्च तस्य रसाविष्टः मत्स्य इव, मीन इव, प्राणान् मुमोच। युधिष्ठिरः, पाण्डोः ज्येष्ठतनयः। गुर्वोति—गुरोः, महतः, आचार्यात् च भयः तेन विषण्णं, खिन्नं हृदयं यस्य तथोक्तः, समर-शिरसि सत्यं ऋतं, उत्सृष्टवान्, अत्यजत्। इत्थं, एवम्प्रकारं, अप-कलङ्कं, निर्दोषं, देवदेवात्, राजाधिराजात्। सर्वद्वीपभुजः, सर्वान्, समग्रान्, द्वीपान् भुनक्ति इति तस्मात् हर्षात्, एतन्नाम नृपात्। अत्र, जगति, बलं, शत्रुसैन्यं, बलाख्यं असुरं च, जितवान् तेन (हर्षेणेतिशेषः) चलन्तः, विरोधितया व्यवहरन्तः, (पक्षे) शालितया उड्डीयमानाश्च, कृताः, पक्षाः, सहायाः यैः (पक्षे) धृताः, पक्षाः, पत्राणि, यैः, तथोक्ताः। क्षितिभृतः, राजानः, पर्वताश्च निश्चलीकृताः, निर्जि-तत्वात्, वशीकृताः, पक्षच्छेदनात् स्थावरतां नीताश्च। प्रजापतिना, राज्ञा, ब्रह्मणा च। शेषेति—शेषस्य, निहतावशिष्टस्य, भोगिनां, नानाभोगरतां (राज्ञामितिभावः) मण्डलस्य, चक्रस्य (पक्षे) शेषस्य, भोगिनः, नागस्य मण्डलस्य फणास्य च उपरि क्षमा, शान्तिः, पृथ्वी,

लक्ष्मीरात्मीकृता। अत्र बलिना मोचितभूभृद्वेष्टनो मुक्तो महानागः। अत्र देवेनाभिषिक्तः कुमारः। अत्र स्वामिनैकप्रहारपातितारातिना प्रख्यापिता शक्तिः। अत्र नरसिंहेन स्वहस्तविशसितारातिना प्रकटीकृतो विक्रमः। अत्र परमेश्वरेण तुषारशैलभुवो दुर्गाया गृहीतः करः। अत्र लोकनाथेन दिशां मुखेषु परिकल्पिता

च कृता, विहिता, निहिता, च। पुरुषेति—पुरुषेषु, उत्तमः, श्रेष्ठः तेन राज्ञा नारायणेन च सिन्धुराजं, सिन्धुदेशाधिपतिं क्षीरसागरञ्च प्रमथ्य, निर्जित्य, विलोड्य च लक्ष्मीः, राजश्रीः, कमला च, आत्मीकृता, स्वीकृता। बलिना, बलवता, असुरराजेन, च महानागः, महान् रणहस्ती, वासुकिश्च। मोचितेति—मोचितम्, दूरीकृतम् भूभृद्भिः, अरिनृपैः, वेष्टनम्, अवरोधनम्, यस्य सः (पक्षे) भूभृतः, मन्दरस्य वेष्टनं, यस्य, सः, मुक्तः, परित्रातः, सागरमन्थनात् त्यक्तश्च। देवेन, राज्ञा, देवराजेन, च कुमारः, निजतनयः, गुहश्च, अभिषिक्तः, प्रतिष्ठापितः, यौवराज्ये, सेनापत्ये च, (इति शेषः) स्वामिना, प्रभुणा सेनापतिना गुहेन च। एकेति—एकेन प्रहारेण, शराघातेन, प्रकर्षेण च पातिता अरातयः, शत्रवः राजानः तारकादयोऽसुराश्च येन तथा भूतेन। शक्तिः, सामर्थ्यं, तदाख्यमस्त्रं च, नरसिंहेन, राज्ञा नृहरिणा च। स्वहस्तेति—स्वहस्तेन न तु सैन्यसहायेन, चक्रादिनिजास्त्रेण च, विशसिताः, निहताः, विदारिताश्च अरातयः, शत्रवः, हिरण्यकशिपुप्रभृतयश्च। येन तथोक्तेन। परमेश्वरेण, सार्वभौमेन, हरेण च, तुषारशैलभुवः, हिमालयप्रदेशभूमेः, हिमगिरिजातायाश्च, दुर्गायाः, दुर्गमायाः, गौर्य्याश्च, गृहीतः करः, बलिः, पाणिश्च। लोकनाथेन, नरपतिना, विधात्रा, च, दिशां मुखेषु, दिशि दिशि इति यावत् (पक्षे) दिशां मुखेषु निःसरणमार्गेषु च (सीमान्तदेशेषु इति यावत्) परि-

लोकपालाः सकलभुवनकोशश्चाग्र्यजन्मनां विभक्तः, इत्येवमादयः प्रथमकृतयुगस्येव दृश्यन्ते महासमारम्भाः। अतोऽस्य सुगृहीतनाम्नः पुण्यराशेः पूर्वपुरुषवंशानुक्रमेणादितः प्रभृति चरितमिच्छामः श्रोतुम्। सुमहान्कालो नः शुश्रूषमाणानाम्। अयस्कान्तमणय इव लोहानि नीरसनिष्ठुराणि क्षुल्लकानामप्याकर्षन्ति मनांसि महतां गुणाः, किमुत स्वभावसरसमृदूनीतरेषाम्। कस्य न द्वितीयमहाभारते भवेदस्य चरिते कुतूहलम्। आचष्टां भवान्। भवतु भार्गवोऽयं वंशः शुचिनानेन राजर्षिचरितश्रवणेन सुतरां शुचितरः' इत्येवमभिधाय तूष्णीमभूत्।

बाणस्तु विहस्याब्रवीत्—'आर्य, न युक्त्यनुरूपमभिहितम्। अघटमानमनोरथमिव भवतां कुतूहलमवकल्पयामि। शक्याश-

कल्पिताः, नियोजिताः, लोकपालाः, प्रजापालाः, इन्द्रादयश्च। सकलभुवनकोशः, सर्वजगतां धनं, सकलभुवनमेवकोशः, धनभण्डारश्च अग्रजन्मनां, ब्राह्मणानां, आदिनृपाणां, श्रमणानाञ्च विभक्तः, विभज्यदत्तः। प्रथमयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, महारम्भाः, महान्ति कार्याणि अचलपक्षच्छेदनादय व्यापारा इति यावत्, तेषामारम्भाः। शुश्रुषमाणानां, श्रोतुमिच्छताम्। आयस्कान्तमणयः, लोहकान्तमणयः। नीरसनिष्ठुराणि, नीरसात्, रसशून्यत्वात्, निष्ठुराणि, कठोराणि, क्षुल्लकानां, खलानां, (क्षुल्लकस्त्रिषु नीचेऽल्पे इति मेदिनी) द्वितीयमहाभारते, द्वितीयमहाभारत सदृशे, आचष्टां, कथयतु। भार्गवः, भृगुगोत्रजातः। सुतराम्, अतिशयेन, शुचितरः, पूततरः।

युक्त्यनुरूपं, युक्त्यनुकूलं, अभिहितम्, कथितम्। अघटमानेति—अघटमानः, असम्पन्नतां गच्छन्, मनोरथः, यस्य तथाभूतम्, अवकल्पयामि, अवधारयामि। शक्येति—शक्यं, साध्यं, अशक्यं,

क्यपरिसंख्यानशून्याः प्रायेण स्वार्थतृषः । परगुणानुरागिणी प्रियजनकथाश्रवणरसरभसमोहिता च मन्ये महतामपि मतिरपहरति प्रविवेकम् । पश्यत्वार्यः क्व परमाणुपरिमाणं वटुहृदयम्, क्व समस्तब्रह्मस्तम्भव्यापि देवस्य चरितम् । क्व परिमितवर्णवृत्तयः कतिपये शब्दाः, क्व संख्यातिगास्तद्गुणाः । सर्वज्ञस्याप्ययमविषयः, वाचस्पतेरप्यगोचरः, सरस्वत्या अप्यतिभारः, किमुतास्मद्विधस्य । कः खलु पुरुषायुषशतेनापि शक्नुयादविकलमस्य चरितं वर्णयितुम् । एकदेशे तु यदि कुतूहलं वः, सज्जा वयम् । इयमधिगतकतिपयाक्षरलवलघीयसी जिह्वा क्वोपयोगं

असाध्यम्, तयोः, परिसंख्यानं, परिगणनं, तेन शून्याः, रहिताः । स्वार्थतृषः, स्वार्थकार्यतृषिताः । प्रियेति—प्रियजनस्य कथाश्रवणे यो रसः, रागः तस्य रभसेन, अतिशयेन, मोहिता । प्रविवेकम्, प्रकृष्टज्ञानम् । परमाणुपरिमाणम्, अतिक्षुद्रम् । वटुहृदयम्, द्विजशिशुमानसम् । **समस्तेति**—समस्तः, सकलः, ब्रह्मस्तम्भः, ब्रह्मखण्डं तद्व्यापि, देवस्य, हर्षस्य । **परिमितेति**—परिमितानां, परिगणितानां, वर्णानां, अक्षराणां, वृत्तयः, रचनानि यत्र तथा भूताः । संख्यातिगाः, संख्याः, एकादिपरार्द्धपर्यन्ताः, ताः, अतिगच्छन्ति, अतिशेरते इति तथोक्ताः, तद्गुणाः देवस्य, हर्षस्य, गुणाः । अयं, हर्षचरितरूपः, सर्वज्ञस्य, परमेश्वरस्य, अविषयः, बृहस्पतेः, देवगुरोः, अपि, अगोचरः, सरस्वत्या, भारत्या, वाण्या अपि अतिभारः । **पुरुषेति**—पुरुषस्य, आयुः, जीवितकालः, तस्य शतं, (शतवर्षाणीत्यर्थः) तेषां शतेन । अविकलं, सम्यक् । वर्णयितुं, कथयितुं । सज्जाः, प्रस्तुताः । **अधिगतेति**—अधिगतः, ज्ञातः, कतिपयानां, अक्षराणां, लवः, लेशः, तेन, लघीयसी, (यत्किञ्चित् वर्णयितुं क्षमा-इति भावः) जिह्वा, रसना, क्व,

गमिष्यति। भवन्तः श्रोतारः, वर्ण्यते हर्षचरितम्, किमन्यत्। अद्य तु परिणतप्रायो दिवसः। पश्चाल्लम्बमानकपिलकिरणजटाभार भास्वरो भगवान्भार्गवो राम इव समन्तपञ्चकरुधिरमहाह्रदे निमज्जति संध्यारागपटले पूषा। श्वो निवेदयितास्मि' इति। सर्वे च ते 'तथा' इति प्रत्यपद्यन्त। नातिचिरादुत्थाय संध्यामुपासितुं शोणमयासीत्।

अथ मधुमदपल्लवितमालवीकपोलकोमलातपे मुकुलितेऽह्नि, कमलिनीमलनादिव लोहिततमे तमोलिहि रवौ लम्बमाने, रविरथतुरगमार्गानुसारेण यममहिष इव धावति नभसि तमसि,

---

उपयोगं, उपकारितां गमिष्यति। न कुत्रापि इति भावः। परिणतप्रायः, प्रायेण परिणतः, अवसितः। पश्चादिति—पश्चात्, पश्चिमायां दिशि, पृष्ठदेशे च। लम्बमानेति—लम्बमानः, पतन्, कपिलः, पिङ्गलः, किरणाः, मयूखः, एव जटाभारः, इव, केशसमूह इव, तेन भास्वरः, दीप्यमानः, राम इव, परशुराम इव। समन्तेति—समन्तपञ्चकं, कुरुक्षेत्रं, तत्र यत् रुधिरं (कौरवादीनां रक्तम्) तेन यः महान् ह्रदः तस्मिन्। सन्ध्येति—सन्ध्यायाः, रागाः, लौहित्यानि, तेषां पटलं, समूहः तस्मिन्, पूषा, सूर्यः (विकर्त्तनार्कमार्तण्डमिहिरारुणपूषणः "इत्यमरः) प्रत्यपद्यन्तः, स्वीकृतवन्तः। अथेत्यारम्भ गोष्ठ्या तस्थौ इत्यनेनान्वयः। मध्विति—मधुमदेन, मद्यपानजनितेन, उल्लासेन, पल्लवितः, प्रफुल्लः, मालव्याः, मालवदेशीयनार्याः, कपोलः, गण्डः, तद्वत् कोमलः, आतपः, प्रभा यस्य तथाभूते। मुकुलिते, अविकसिते, कमलिनी, मलनादिव, पद्मनीमालिन्यदर्शनादिव, लोहिततमे, अतिरक्ते, तमोलिहि, तिमिरध्वंसिनि, रवौ, सूर्ये लम्बमाने। रवीति—रविरथः, सूर्यरथः, तस्य, गुरुगाः तेषां मार्गानुसारेण, यममहिष इव

क्रमेण च गृहतापसकुटीरकपटलावलम्बिषु रक्तातपच्छेदैः सह संहृतेषु वल्कलेषु, कलिकल्मषमुषि पुष्णाति गगनमग्निहोत्रधामधूमे, सनियमे यजमानजने मौनव्रतिनि, विहारवेलाविलोले पर्यटति पत्नीजने, विकीर्यमाणहरितश्यामाकशालिपूलिकासु दुग्धासु होमकपिलासु, हूयमाने वैतानतनूनपाति, पूतविष्टरोपविष्टे कृष्णाजिनजटिले जटिनि जपति वटुजने, ब्रह्मासनाध्यासिनि ध्यायति योगिगणे, तालध्वनिधावमानानन्तान्तेवासिनि

नभसि, आकाशे, तमसि, अन्धकारे, धावति, सति । गृह-इति—गृहतापसानां, गृहस्थतपस्विनां, कुटीरकाणां, क्षुद्रगृहाणां, पटलानि, छदींषि, (अथ पटलं छदिः "इत्यमरः) आलम्बन्ते इति तथोक्तेषु । रक्तातपछेदैः, रक्तवर्णसूर्यमयूरवखण्डैः, सह संहृतेषु, आकृष्यनीतेषु, वल्कलेषु, तरुत्वक्षु । कलिकल्मषमुषि, कलिकालजनितपापहारिणि, पुष्णाति, व्याप्नुवति, अग्निहोत्रधामधूमे, होमगृहधूमे, सनियमे, सुसंयते, यजमानजने, याज्ञिकवर्गे, मौनव्रतिनि, तुष्णीव्रतधारिणि । विहारेति—विहारस्य, वेला तेन विलोले,चंचले । विकीर्यमाणेति—विकीर्यमाणाः, प्रक्षिप्यमाणाः, हरिताः, श्यामलाः श्यामाकशालीनां, श्यामाख्यव्रीहिभेदानां, पूलिकाः, गुच्छाः, याभ्यः, तासु, दोहनकाले, होमकपिलासु, यज्ञधेनुषु, दुग्धासु, कृतदोहासु, हूयमाने, हविषासन्तर्प्यमाणे, वैतानतनूनपाति,यज्ञीयाग्नौ, (जातवेदास्तनूनपात् "इत्यमरः) पूतेति—पूते, पवित्रे, विष्टरे, आसने, उपविष्टः तस्मिन् । कृष्णाजिनजटिले, कृष्णमृगचर्मावृते, जटिनि, जटाधारिणि, जपति, वटुजने, द्विजजने । ब्रह्मेति—ब्रह्मासनं, आसनविशेषः, तत् अध्यासते इति तथोक्ते । ध्यायति, चिन्तयति । तालेति—तालध्वनिः, संकेतार्थमंगुलिशब्दविशेषः, तेन धावमानाः, सत्वरमापतन्तः, अनन्ताः,

अलसवृद्धश्रोत्रियानुमतेन गलद्ग्रन्थदण्डकोद्गारिणि संध्यां समवधारयति वठरविटवटुसमाजे, समुन्मज्जति च ज्योतिषि तारकाख्ये खे, प्राप्ते प्रदोषारम्भे भवनमागत्योपविष्टः स्निग्धैर्बन्धुभिश्च सार्धं तयैव गोष्ठ्या तस्थौ। नीतप्रथमयामश्च गणपतेर्भवने परिकल्पितं शयनीयमसेवत। इतरेषां तु सर्वेषां निर्मीलितदृशामप्यनुपजातनिद्राणां कमलवनानामिव सूर्योदयं प्रतिपालयतां कुतूहलेन कथमपि सा क्षपा क्षयमगच्छत्।

अथ यामिन्यास्तुर्ये यामे प्रतिबुद्धः स एव वन्दी श्लोकद्वयमगायत्—

'पश्चादङ्घ्रिं प्रसार्य त्रिकनतिविततं द्राघयित्वाङ्गमुच्चै-

अशेषाः, सर्वे, अन्तेवासिनः, छात्राः, यस्य तथाभूतं। अलसेति—अलसः, मन्थरः, वृद्धः, स्थविरः, श्रोत्रियः, छान्दसः, वेदोपाध्यायः, इत्यर्थः, तस्यानुमतं तेन। गलदिति—गलतः, स्खलतः, ग्रन्थदण्डकान्, ऋग्विशेषान्, उद्गिरति, उच्चारयति, इति तथोक्ते, सन्ध्यां, सन्ध्याकालिकोपासनाविशेषं, समवधारयति, समालोचयति, वठरेति—वठराः, अबोधाः, विटाः, दुर्वृत्ताः ये वटवः, द्विजशिशवः, तेषां समाजः, सङ्घः तस्मिन्। समुन्मज्जति, समुन्मीलति, तारकाख्ये, नक्षत्रनाम्नि, खे, आकाशे, प्राप्ते, उपस्थिते, प्रदोषारम्भे, गोष्ठ्या, समाजेन, तस्थौ। नीतप्रथमयामः, अवतीतपूर्वप्रहरः, परिकल्पितं, रचितम्। निर्मीलितेति—निमीलिता, दृक्, लोचनं यैः, तेषाम्। अनुपजाता, नप्रादुर्भूता, निद्रा, येषां, तेषाम्, प्रतिपालयतां, प्रतीक्षांकुर्वताम्, क्षपा, रात्रिः, क्षयं, नाशम्। तुर्ये, चतुर्थे, यामे, प्रहरे, प्रबुद्धः, त्यक्तनिद्रः। पश्चादिति—शयनादुत्थितः, प्रबुद्धः, तुरङ्गः, अश्वः, पश्चादङ्घ्रिं, पृष्ठभागस्थितपदद्वयम्, त्रिकस्य, पृष्ठवंशधरस्य, (पृष्ठवंशधरेत्रिकम्,

रासज्याभुग्नकण्ठो मुखमुरसि सटा धूलिधूम्रा विधूय।
घासग्रासाभिलाषादनवरतचलत्प्रोथतुन्डस्तुरंगो
मन्दं शब्दायमानो विलिखति शयनादुत्थितः क्ष्मां खुरेण ॥५॥
कुर्वन्नाभुग्नपृष्ठो मुखनिकटकटिः कंधरामातिरश्चीं
लोलेनाहन्यमानं तुहिनकणमुचा चञ्चता केसरेण।
निद्राकण्डूकषायं कषति निविडितश्रोत्रशुक्तिस्तुरङ्गः
त्वङ्गत्पक्ष्माग्रलग्नप्रतनुबुसकणं कोणमक्ष्णः खुरेण ॥ ६ ॥

इत्यमरः) नत्या विनतं, विस्तृतं, यथा तथा प्रसार्य, विस्तार्य, अंगं, अवयवम्, उच्चैः, द्राघयित्वा, दीर्घीकृत्य, आभुग्नकण्ठः, नमितगलः, सन्, मुखं, उरसि, वक्षसि, आसज्य, स्पर्श्य, धूलिभिः, रजोभिः, धूम्राः, धूसराः, सटाः, जटाः, विधूय, प्रकम्प्य, घासानां, शष्पाणां, ग्रासे, कवलने, अभिलाषः, तस्मात्, अनवरतं, निरन्तरं, चलत्, स्फुरत्, प्रोथं नासिका यस्य तादृशम् (प्रोथोऽस्त्री हयघोणायां "इति-मेदिनी" घोणानासा च नासिका "इत्यमरः) तुण्डं, वदनं यस्य तथोक्तः (तुण्डमाननंलपनंमुखम् "इत्यमरः) मन्दं, शब्दायमानः, शब्दं कुर्वन् खुरेण क्ष्मां, भुवं, विलिखति, कुट्टयति, अत्र प्रातरुत्थितस्याश्वस्य-स्वभावकथनात् स्वभावोक्तिः, स्रग्धरा वृत्तं ॥ ५ ॥

कुर्वन्निति—तुरङ्गः, अश्वः, निविडिते, कुञ्चिते, श्रोत्रे, कर्णौ, शुक्ती इव मुक्तास्फोटाविव येन यस्य वा तथोक्तः, तथा, आभुग्नं, आकुञ्चितं पृष्ठं येन तथोक्तः, मुखस्य निकटे, सन्निधौ, कटिः, मध्य-भागः, यस्य तथाभूतः, कन्धरां, ग्रीवां, आतिरश्चीम्, आभंगुरां, कुर्वन्, लोलेन, चपलेन, तुहिनकणमुचा, शिशिरविन्दुवर्षिणा, चञ्च-लता, स्फुरता, केसरेण, जटाजालेन, आहन्यमानं, सन्ताड्यमानं, निद्राकण्डूः, निद्राऽऽवेशावशेषः, तया, कषायः, आविलः, तम्, अक्ष्णः,

बाणस्तु तच्छ्रुत्वा समुत्सृज्य निद्रामुत्थाय प्रक्षाल्य वदनमुपास्य भगवतीं संध्यामुदिते भगवति सवितरि गृहीतताम्बूलस्तत्रैवातिष्ठत्। अत्रान्तरे सर्वऽस्य ज्ञातयः समाजग्मुः, परिवार्य चासांचक्रुः। असावपि पूर्वोद्धातेन विदिताभिप्रायस्तेषां पुरो हर्षचरितं कथयितुमारेभे—

श्रूयताम्—अस्ति पुण्यकृतामधिवासो वासवावास इव वसुधामवतीर्णः सततमसंकीर्णवर्णव्यवहारस्थितिः, कृतयुगव्यवस्थः, स्थलकमलबहलतया पोत्रोन्मूल्यमानमृणालैरुद्गीत-

---

नेत्रस्य, कोणं, प्रान्तं त्वङ्क्त्सु, पक्ष्माग्रेषु, लोमाग्रेषु, लग्नाः, संसक्ताः, प्रतनवः,स्वल्पाः,वुसकणाः,कडङ्करांशाः,(सारहीनक्षुणधान्यानीइत्यर्थः) यत्र तत् यथा तथा खुरेण कषति, घर्षयति (अलङ्कारवृत्ते पूर्वे) ॥६॥ समुत्सृज्य, त्यक्त्वा, प्रक्षाल्य, निर्मलीकृत्य। गृहीतेति-गृहीतं,नीतं:, ताम्बूलं येन सः। विदितेति—विदितः, विज्ञातः, अभिप्रायः, आशयः, येन सः। पुण्येत्यारभ्य श्रीकण्ठोनाम जनपदः,इत्यनेनान्वयः। पुण्यकृतां, सुकृतचरतां, देवानां, च, अधिवासः, गृहम् ,वासवावास, इव, इन्द्रालय इव, वसुधां, भूमिं, अवतीर्णः, अवतरितः। सततं, निरन्तरं। असंकीर्णेति—असंकीर्णाः, सङ्करदोषरहिताः, वर्णानां, ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशुद्राणां, व्यवहाराः, आचाराः, स्थितयः, मर्यादाश्च यत्र तथोक्तः। कृतेति— कृतयुगस्येव, सत्ययुगस्येव, व्यवस्था, नियमः, यत्र तथोक्तः। स्थलकमलबहलतया, स्थलपद्मप्राचुर्येण। पोत्रेति—पोत्रेण, मुखाग्रेण (पोत्रं वक्त्रे मुखाग्रे च शूकरस्य हयस्य च "इति मेदिनी) उन्मूल्यमानानि, विकाश्यमानानि, मृणालानि, कमलानि, यैः तथोक्तैः। उद्गीतेति—उद्गीताः, उच्चैः, कीर्तिताः, मेदिन्याः, सराः, उत्कृष्टाः गुणाः यैः तथाभूतैः। कृतेति—कृताः, मधुकराणां, कोलाहलाः, यैः,

मेदिनीसारगुणैरिव कृतमधुकरकोलाहलैर्हलैरुल्लिख्यमानक्षेत्रः, क्षीरोदपयः पायिपयोदसिक्ताभिरिव पुण्ड्रेक्षुवाटसंततिभिर्निरन्तरः, प्रतिदिशमपूर्वपर्वतकैरिव खलधानधामभिर्विभज्यमानैः सस्यकूटैः संकटसीमान्तः, समन्तादुद्घातघटीसिच्यमानैर्जीरकजूटैर्जटिलितभूमिः, उर्वरावरीयोभिः शालीयैरलंकृतः, पाकविशरारुराजमाषनिकरकिर्मीरितैश्च स्फुटितमुद्गफलकोशीकपिशितैर्गोधूमधामभिः स्थलीपृष्ठैरधिष्ठितः, महिषपृष्ठप्रतिष्ठितगायद्गो-

---

तादृशैः। हलैः, लाङ्गलैः, उल्लिख्यमानानि, उत्खन्यमानानि, क्षेत्राणि यस्य तथोक्तः। क्षीरोदेति क्षीरोदस्य, क्षीरसागरस्य, पयांसि, जलानि, पिबन्तीति तथाविधाः, पयोदाः, मेघाः, तैः, सिक्ताः, अभिसिञ्चिताः, ताभिरिव। पुण्ड्रेति—पुण्ड्रेक्षूणां, इक्षुविशेषाणां, वाटसन्ततयः, वृत्तिनिचयाः, (वेष्टनसमूहा "इत्यर्थः) ताभिः (वाटोमार्गे वृत्तिस्थाने स्यात् कुटीवास्तुनोः स्त्रियाम् "इत्यमरः) निरन्तरः, अविच्छिन्नः। अपूर्वपर्वतकैरिव, अभिनवलघुगिरिभिरिव। खलेति—खलेषु, सस्यसमाहरणभूमिषु, धानस्थापनाय, धाम, स्थानं येषां तैः। विभज्यमानैः, विभागेन स्थाप्यमानैः, शस्यकूटैः, धान्यादितृणराशिभिः, संकटसीमन्तः, व्याप्तसीमाभागः। उद्घातेति—उद्घात घटिभिः, यन्त्रकलशैः, सीच्यमानानि, आर्द्रीक्रियमाणानि तैः, जीरकजूटैः, जटिलिता, समाकीर्णा, भूमिः, यत्र तथोक्तः। उर्वरेति—उर्वरा, सर्वसस्याढ्या भूः तथा वरीयांसि श्रेष्ठानि तैः, शालियैः, धान्यविशेषसंघैः शालिक्षेत्रैः, अलंकृतः, परिशोभितः। पाकेति—पाकेन, विशरारुणां, स्फुरतां, राजमाषाणां, निकरैः, संघैः, किर्मीरितानि, शबलितानि तैः। स्फुटितेति—स्फुटितानां, पक्वानां, मुद्गफलानां, तदाख्यकलायभेदानां, कोशीभिः, शिम्बिकाभिः, कपिशितानि, पिङ्गलानि

पालपालितैश्च कीटपटललम्पटचटकानुसृतैरवटुघटितघण्टाघटी-रटितरमणीयैरटद्भिरटवीं हरवृषभपीतमामयशङ्कया बहुविभक्तं क्षीरोदमिव क्षीरं क्षरद्भिर्वाष्पच्छेद्यतृणतृप्तैर्गोधनैर्धवलितविपिनः, विविधमखहोमधूमान्धशतमन्युमुक्तैर्लोचनैरिव सहस्रसंख्यैः कृष्णशारैः शारीकृतोद्देशः, धवलधूलीमुचां केतकीवनानां रजोभिः

तैः । गोधूमधामाभिः, गोधूमशालिभिः, स्थलीपृष्ठैः, अकृत्रिमभूतलैः, अधिष्ठितः, स्थितः । महिषेति—महिषाणां, पृष्ठेषु, प्रतिष्ठिताः, आरूढाः, गायन्तः, गोपालाः, तैः, पालितानि, रक्षितानि तैः । कीटेति—कीटानां, क्षुद्रप्राणिभेदानां, पटलेषु, वृन्देषु, गोधनानां, अङ्गलग्नेषु इति भावः, लम्पटाः, लुब्धाः, ये चटकाः, क्षुद्र पक्षिभेदाः, तैः, अनुसृतानि, अनुगतानि तैः । अवटुवेति—अवटुः, घाटा (अवटु-र्घाटा कृकाटिका इत्यमरः) तत्र घटिता, संयोजिता, या घण्टाघटी, घण्टारूपः, क्षुद्रघण्टः, तस्याः रटितेन, निनादेन रमणीयानि, मनो-ज्ञानि तैः, अटद्भिः, चरद्भिः, अटवीं, वनम् । हरेति—हरस्य, शिवस्य, वृषभेण, पीतम्, आमयशंकया, अजीर्णरोगसम्भावनया, क्षीरोदमिव, क्षीरसागरमिव, बहुविभक्तम्, बहुधा विभज्यस्थापितम् । वाष्पेति—वाष्पेण, उष्मणा, छेद्यानि, नाश्यानि, यानि तृणानि, तैः तृप्तानि, सन्तुष्टानि तैः । गोधनैः, गाव एव धनानि येषां तैः । धवलितेति—धवलितानि, श्वेतानि, विपिनानि यस्य तथोक्तः । विविधेति—विवि-धानां, नानाप्रकाराणां, मखानां, यागानां, होमधूमैः, अन्धानि, अत-एव शतमन्युना, इन्द्रेण, मुक्तानि, परित्यक्तानि तैः लोचनैः, नयनैरिव, सहस्रसंख्यैः, (पक्षे) सहस्रसंख्यैः, प्रभूतैः, कृष्णसारैः, शबलवर्णवि-चित्रैः, शारीकृतोद्देशः, विचित्रितप्रदेशः । धवलधूलिमुचां, श्वेतरजो-मुचां, केतकीवनानां रजोभिः, परागैः, पांण्डुरीकृतैः, पाण्डुरतांनीतैः,

पाण्डुरीकृतैः प्रथमोद्धूलनधूसरैः शिवपुरस्येव प्रवेशैः प्रदेशैरुपशोभितः,शाककन्दलश्यामलितग्रामोपकण्ठकाश्यपी पृष्ठः,पदे पदे करभपालीभिः पीलुपल्लवप्रस्फोटितैः करपुटपीडितमातुलुंगीदलरसोपलिप्तैः स्वेच्छाविचितकुङ्कुमकेसरकृतपुष्पप्रकरैः प्रत्यग्रफलरसपानसुखसुप्तपथिकैर्वनदेवतादीयमानामृतरसप्रपागृहैरिव द्राक्षामण्डपैः स्फुरत्फलानां च बीजलग्नशुकचञ्चुरागाणामिव समारूढकपिकुलकपोलसंदिह्यमानकुसुमानां दाडिमीनां वनैर्वि-

अतएव प्रमथानां, शिवपारिषदां, भूतवर्गाणाम्, उद्धूलनेन, लुण्ठनेन, धूसराः, ईषत्पाण्डुवर्णाः तैः शिवपुरस्येव, शिवालयस्येव, प्रवेशाः, मार्गाः तैः। **शाकेति**—शाकानां, कन्दलेन, अभिनवेन, अंकुरेण श्यामलिता, ग्रामाणां, उपकण्ठाः, प्रान्तभागाः यस्य तथोक्तम्, काश्यपीपृष्ठं, भूतलं यस्य तथाभूतः। करभपालिभिः, उष्ट्रशिशुवृन्दैः, पीलुपल्लवेन, पीलूविः, (अखरोट) तेषां पल्लवेन, किसलयेन, तैः स्फोटितैः, सुशोभितैः। **करपुटेति**—करपुटैः, पीडितानां, मर्द्दितानां, मातुलुङ्गीदलानां, एतदाख्यस्य वृक्षस्य पत्राणां रसैः, द्रवैः, उपलिप्तानि तैः। **स्वेच्छेति**—स्वेच्छया, विचिताः, उच्चिताः, कुंकुमानां केसराः, किञ्जलकाः, तैः कृतः, रचितः, पुष्पाणां, प्रकरः, माल्यं येषां तैः। **प्रत्यग्रेति**—प्रत्यग्राणि, अभिनवानि, यानि, फलानि, तेषां रसपानेन, सुखसुप्ताः, पथिकाः, अध्वगाः, येषु तथोक्तैः। **वनेति**—वनदेवताभिः, दीयमानानि, अमृतरसानां, प्रपागृहाणि, पानीयशालाः, तैरिव। द्राक्षामण्डपैः, द्राक्षालतानिकुञ्जैः। स्फुरन्ति, विकसन्ति, फलानि यासां तासाम्। **बीजेति**—बीजेषु, लग्नाः, संसक्ताः, शुकानां, (तोता) पक्षिणां, चञ्चुरागाः, चञ्चुलौहित्यानि येषां तथा भूतानामिव। **समारूढेति**—समारूढानां, कपिकुलानां, वानरवृन्दानां,

लोभनीयोपनिर्गमः, वनपालपीयमाननारिकेलरसासवैश्च पथिकलोकलुप्यमानपिण्डखर्जूरैर्गोलांगूललिह्यमानमधुरामोदपिण्डीरसैश्चकोरचञ्चुजर्जरितारुकैरुपवनैरभिरामः, तुङ्गार्जुनपालीपरिवृतैश्च गोकुलावतारकलुषितकूलकीलालैरध्वगशतशरण्यैररण्यधराबन्धैरवन्ध्यवनरन्ध्रः, करभीयकुमारकपाल्यमानैरौष्ट्रकै-

---

कपोलैः, गण्डस्थलैः, सन्दिह्यमानानि, संशयमानानि, कुसुमानि यासां तथोक्तानाम्। विलोभनीयोपनिर्गमः, विलोभनीयाः, विशेषेण दर्शनीयाः, उपनिर्गमाः, निर्गमन मार्गाः यस्य तथाभूतः। **वनेति**—वनपालैः, वनरक्षिभिः, पीयमानाः, अस्वाद्यमानाः, नारिकेलानां रसाः, जलान्येव, आसवाः, मद्यानि, येषु तथोक्तैः। **पथिकेति**—पथिकलोकैः, पान्थसमूहैः, लुप्यमानानि, भक्षणेन, अदृश्यतांगतानि, पिण्डखर्जूराणि येभ्यः तथोक्तैः। **गोलांगूलेति**—गोलांगूलैः, कृष्णमुखकपिभिः (लंगूर) लिह्यमानः, आस्वाद्यमानः, मधुरः, स्वादुः, आमोदपिण्डीरसः, सुरभिपिण्डीखर्जूररसः येषु तैः। **चकोरेति**—चकोराणां, पक्षिभेदानां, चञ्चुभिः, जर्जरितानि, आरुकाणि, आरुकनामवृक्षफलानि, येषु तथोक्तैः, उपवनैः, उद्यानैः, अभिरामः, मनोहरः। **तुङ्गेति**—तुङ्गाभिः, उन्नताभिः, अर्जुनपालिभिः, कुकुभाख्य वृक्षश्रेणिभिः, परिवृताः, परिवेष्टिताः तैः। **गोकुलेति**—गोकुलानां, गोसमूहानां, अवतारेण, अवतरणेन, कलुषितानि, आविलीकृतानि, कूलकीलालानि, तीरस्थितजलानि, येषां तैः। (सलिलं कमलं जलं। पयः कीलालम् "इत्यमरः) अध्वगशतशरण्यैः, पथिकशतपरित्रायिभिः, अरण्यधराबन्धैः, वनजलाशयैः। अवन्ध्यानि, फलवन्ति, वनरन्ध्राणि, वनाभ्यन्तरभागाः यस्य तथाभूतः। **करभीयेति**—करभेभ्यः, उष्ट्रशावकेभ्यः हिताः, करभीयाः, ये कुमाराः, पशुपालशिशवः तैः पाल्यमानाः, रक्ष-

रौरभ्रैश्च कृतसंबाधः,दिशि दिशि रविरथतुरगविलोभनायैव विलोडनमृदितकुङ्कुमस्थलीरससमालब्धानामुत्प्रोथपुटैरुन्मुखैरुदरशायिकिशोरकजवजननाय प्रभञ्जनमिव चापिबन्तीनां वातहरिणीनामिव स्वच्छन्दचारिणीनां वडवानां वृन्दैर्विचरद्भिराचितः, अनवरतक्रतुधूमान्धकारप्रवृत्तैर्हंसयूथैरिव बाणैर्धवलितभुवनः, संगीगतमुरजरवमत्तैर्मयूरैरिव विभवैर्मुखरितजीवलोकः,

माणाः, तैः। औष्ट्रकैः, उष्ट्राणां समूहैः। औरभ्रैः, मेषनिचयैः, कृतसम्बाधः, समाकीर्णः। रवीति—रवेः, सूर्यस्य, रथे ये तुरगाः, अश्वाः, तेषां विलोभनम्, अनुरागप्रकटनेन, लोभप्रदर्शनम् तस्मै इव। विलोडनेति—विलोडनेन, विलोठनेन, दलनेन, मृदिता, मर्दनंनीता, या कुंकुमस्थली, कुंकुमोत्पत्तिभूमिः, तस्याः, रसेन, द्रवेण, समालब्धाः, अनुलिप्ताः, तासाम्। उत्प्रोथपुटैः, उत्, उद्गतानि, प्रोथपुटानि, नासापुटानि, येषां तादृशानि तैः, उन्मुखैः, ऊर्द्धमुखैः। उदरशायीति—उदरशायिनां, गर्भस्थितानां, किशोरकाणां, शावकानां, जवजननाय, वेगवर्द्धनाय, प्रभञ्जनमिव, वायुमिव, आपिबन्तीनां, भक्षयन्तीनां, (संपीतवतीनामिति यावत्) वातहरिणीनामिव, वातमृगीणामिव, समीराभिमुखधाविनीनां, स्वच्छन्दचारिणीनां, स्वेच्छयाचरन्तीनां, वडवानां, अश्वानां, आचितः, आकीर्णः। अनवरतेति—अनवरताः, अविरताः, क्रतूनां, यज्ञानां,धूमा एव अन्धकाराः, तेषु प्रवृत्ताः, जाताः, तैः, (पक्षे) धूमेन अन्धकारः, तस्मात्, प्रवृत्तैः, पलायितैः, बाणैः, शरैः। धवलितेति—धवलितानि, श्वेतीकृतानि, भुवनानि, अवयवाः। संगीतेति—सङ्गीतेषु, निषादादि सप्तस्वरालपनेषु, गतानां, स्थितानां, मुरजानां, वाद्यानां, रवेण, नादेन, मत्ताः, मादकजनकाः, उल्लासिताश्च तैः। विभवैः, सम्पद्भिः, मुखरितः, शब्दितः, जीवलोकः यस्य। शशि-

शशिकरावदातवृत्तैर्मुक्ताफलैरिव गुणिभिः प्रसाधितः, पथिकशतविलुप्यमानस्फीतफलैर्महातरुभिरिव सर्वातिथिभिरभिगमनीयः, मृगमदपरिमलवाहिमृगरोमाच्छादितैर्हिमवत्पादैरिव महत्तरैः स्थिरीकृतः, प्रोद्दण्डसहस्रपत्रोपविष्टद्विजोत्तमैर्नारायणनाभिमण्डलैरिव तोयाशयैर्मण्डितः, मथितपयःप्रवाहप्रक्षालितक्षितिभिः

करेति— शशिनः, चन्द्रस्य, कराः, किरणाः, तद्वत्, अवदातानि, विशदानि, वृत्तानि, चरितानि, येषाम्, (पक्षे) शशिकरवत् अवदातानि, स्वच्छानि, वृत्तानि, वर्तुलानि, तैः, गुणिभिः, विद्याविनयशालिभिः, सूत्रवद्भिश्च, प्रसाधितः, अलंकृतः। **पथिकेति**— पथिकशतैः, पान्थैः, विलुप्कमानानि, चौर्य्यमाणानि, स्फीतानि फलानि, धनानि येषां, (पक्षे) पथिकानां, अध्वगानां, शतैः, विलुप्यमानानि, गृह्यमाणानि, भक्षणेन, स्फीतानि, प्रभूतानि, फलानि येषां तैः, अभिगमनीयः, आश्रयणीयः। **मृगेति**—मृगमदस्य, कस्तूरिकायाः, परिमलवाहिभिः, सौरभशालिभिः, मृगरोमभिः, राङ्कवेतिसंज्ञान्तरैः, (राङ्कवं मृगरोमजम्) आच्छादितैः, कृतगात्रावरणैः, (पक्षे) तथाविधमृगरोमावृतैः, हिमपादपैरिव, हिमाद्रेः प्रत्यन्तपर्वतैरिव, महत्तरैः, अतिमहद्भिः, लोकैः, वृद्धैर्वा (पक्षे) प्रकाण्डैः, स्थिरीकृतः, आवासितः। **प्रोद्दण्डेति**—प्रकर्षेण, उद्गताः, दण्डाः, नालाः, येषां तानि सहस्रपत्राणि कमलानि तेषु उपविष्टा द्विजोत्तमाः, उत्कृष्टा, पक्षिणः, ब्राह्मणाश्च, येषु, तथाभूतैः, तोयाशयैः, जलाशयैः, (पक्षे) तोयमेव, आशयः, आधारः (स्थानमित्यर्थः) येषां तैः नारायणमण्डलैरिव, मण्डितः, सुशोभितः। **मथितेति**—मथितानां, निर्जलतक्राणां, पयसां, दुग्धानां च, प्रवाहेन, निवहेन, (पक्षे) मथितेन, विलोडितेन, पयसां दुग्धानां, प्रवाहेण, स्रोतसा, प्रक्षालिता, धौता, क्षितिः, भूभागो,

क्षीरोदमथनारम्भैरिव महाघोषैः पूरिताशः श्रीकण्ठो नाम जनपदः।

यत्र त्रेताग्निधूमाश्रुपातजलक्षालिता इवाक्षीयन्त कुदृष्टयः। पच्यमानचयनेष्टकादहनदग्धानीव नादृश्यन्त दुरितानि। छिद्यमानयूपदारुपरशुपाटित इव व्यदीर्यताधर्मः। मखशिखिधूमजलधरधाराधौत इव ननाश वर्णसंकरः। दीयमानानेकगोसहस्रशृङ्गखण्डयमान इवापलायत कलिः। सुरालयशिलाघट्टनटङ्कनिकरनिकृत्ता इव व्यदीर्यन्त विपदः। महादानविधानकलकलाभि-

---

यैः, तथोक्तैः। महाघोषैः, महद्भिः, घोषैः, गोपपल्लीभिः, (घोषः अभीरपल्लीस्यात् "इत्यमरः) (पक्षे) महाघोषैः, महारावैश्च पूरिताः, व्याप्ताः, आशाः, आकांक्षाः, दिशश्च यत्र तथोक्तः। त्रेता, अग्नित्रयम्, प्रचण्डाग्निबोधाय त्रेताशब्दः प्रयुक्तः तस्य, धूमेन योऽश्रुपातः तस्य, जलेन, क्षालिता इव, धौता इव, कुदृष्टयः, अक्षीयन्तः, क्षयमगच्छन्। **पच्यमानेति**—पच्यमानं, दह्यमानं, चमनं, चित्या यासां तथा भूतानां, इष्टकानां, दहनेन, सन्तापेन, दग्धानीव भस्मीकृतानीव, दुरितानि' पापानि, न अदृश्यन्तः। **छिद्यमानेति**—छिद्यमानानि, कृत्यमानानि, यूपायदारुणि, यैः तथाभूतैः, परशुभिः, कुठारैः, पाटित इव, कर्त्तित इव, अधर्मः, पापं, व्यदीर्यत, विदीर्णः, अभूत्। **मखेति**—मखानां, यागानां, शिखिनः, अग्नयः, तेषां धूमाः, तैः ये जलधराः, मेघाः, तेषां धाराभिः, वर्षाभिः, धौत इव, क्षालिल इव, वर्णसंकरः (प्रातिलोम्येन संतानोत्पादनम्) ननाश। **दीयमानेति**—दीयमानानां, अनेकेषां, गोसहस्राणां, शृङ्गैः, खण्डयमान इव कलिः। **सुरेति**—सुरालयेषु, देवमन्दिरेषु, याः, शिलाः, तासां घटने, योजने ये टङ्कनिकराः, शिलाविदारणास्त्रसमूहाः, तैः निकृत्ता इव व्यदीर्यन्त, व्यचूर्णयन्त। **महा-**

द्रुता इव प्राद्रवन्नुपद्रवाः। दीप्यमानसत्रमहानससहस्रसंतापिता इव व्यलीयन्त व्याधयः। वृषविवाहप्रहतपुण्यपटहपटुरवत्रासिता इव नोपासर्पन्नपमृत्यवः। सततब्रह्मघोषबधिरीकृता इवापजग्मुरीतयः। धर्माधिकारपरिभूतमिव न प्राभवद्दुर्दैवम्।

तत्र चैवंविधे नानारामाभिरामकुसुमगन्धपरिमलाभोगसुभगो यौवनारम्भ इव भुवनस्य, कुङ्कुममलनपिञ्जरितबहुमहिषीसहस्रशोभितोऽन्तःपुरनिवेश इव धर्मस्य, मरुदुद्धूयमानचमरीबालव्य-

---

दानेति—महादानानां, विधाने, यः कलकलः, तेन अभिद्रुता इव, ताडिता इव, उपद्रवाः, अनिष्टपाताः, प्राद्रुवन्, पलायन्त। **दीप्यमानेति**—दीप्यमानानां, राजमानानां, सत्राणां, महानसानां, रन्धनशालानां, सहस्रैः, सन्तापिता इव, अभिभूता इव, व्याधयः, रोगाः। **वृषेति**—वृषस्य विवाहः तत्र प्रहतस्य, वादितस्य, पुण्यपटहस्य, पटुना, तारेण, रवेण, नादेन, त्रासिता इव, भीषिता इव, अपमृत्यवः, न उपासर्पन्, नापतन्। **सततेति**—सततेन, अविरतेन, ब्रह्मघोषेण, वेदध्वनिना, बधिरीकृता इव, श्रवणशक्तिरहिता इव, ईतयः, सस्योपघातकराः जन्तवः, अपजग्मुः। **धर्मेति**—धर्माधिकारः, धर्मविचारालयः, तेन परिभूतम् इव निराकृतम् इव दुर्दैवं न प्राभवत्।

तत्र इत्यादौ स्थाण्वीश्वराख्यो जननिवेशः-इत्युत्तरेणान्वयः। नानेति-नाना, आरामाणां, बहूनां उद्यानानां, अभिरामाणि, मनोहराणि, कुसुमानि, (पक्षे) नाना रामाः, महिलाः, अभिरामकुसुमानि, इव, तेषां गन्धस्य, सौरभस्य, परिमलः, सम्मर्दनामोदः, तस्य आभोगः, अनुभवः, तेन सुभगः रम्यः। **कुंकुमेति**—कुंकुमानां, मलनेन, कर्दमेन, पिञ्जरिता, रञ्जिता, बहवः, महिष्यः कृताभिषेकाः, राजभार्याः, उत्तमाः, महिलाश्च तासां सहस्रेण शोभितः। **मरुदिति**—मरुतः, वायवः,

जनधवलितप्रान्तः, एकदेश इव सुरराज्यस्य, ज्वलन्मखशिखिसहस्रदीप्यमानदशादिगन्तः शिबिरसंनिवेश इव कृतयुगस्य, पद्मासनस्थितब्रह्मर्षिध्यानाधीयमानसकलाकुशलप्रशमः प्रथमोऽवतार इव ब्रह्मलोकस्य, कलकलमुखरमहावाहिनीशतसंकुलो विपक्ष इवोत्तरकुरूणाम्, ईश्वरमार्गणसंतापानभिज्ञसकलजनो विजिगीषुरिव त्रिपुरस्य, सुधारससिक्तधवलगृहपंक्तिपाण्डुरः प्रतिनिधिरिव चन्द्रलोकस्य, मधुरमत्तमत्तकाशिनीभूषणरवभरि-

देवाश्च तैः उद्धूयमानाः, संचाल्यमानाः, चमरीणां वालाः, पुच्छलोमानि, तै धवलिताः, प्रान्ताः यस्य तथोक्तः। ज्वलदिति—ज्वलतां, मुखशिखिनां, यज्ञाग्नीनां सहस्रैः, दीप्यमानाः, दशानांदिशामन्ताः, यस्य तथा भूतः। शिविर सन्निवेश इव कटक वन्ध इव कृतयुगस्य, सत्ययुगस्य। पद्मेति—पद्मासनेषु स्थिताः ये ब्रह्मर्षयः, तैः, ध्यानेन, आधीयमानः, सकलानां, समग्राणां, अकुशलानां, अमङ्गलानां, प्रशमः, शान्तिः यस्मिन् तथा भूतः। कलकलेति—कलकलैः मुखराः, नदन्त्यः, महत्यः, वाहिन्यः नद्यः, सेनाश्च तासां शतेन संकुलः, आकीर्णः, उत्तरकुरूणां, उत्तराः कुरवः मेरुसमीप देशवासिनः तेषां, विपक्ष, इव। ईश्वरेति—ईश्वरस्य, हरस्य, राज्ञश्च मार्गणैः, शरैः, बहुधाछलेनार्थप्रार्थनैश्च यः सन्तापः, क्लेशः तस्य, अनभिज्ञाः, सकलाः, जनाः, यस्मिन् तथाभूतः। त्रिपुरस्य तिसृणां पुरां समाहारः त्रिपुरं, मयदानवनिर्मितम् तस्य। सुधेति—सुधारसैः, लेपनद्रवैः, अमृतैश्च, सिक्तानां, लिप्तानां, धवलगृहाणां, पङ्क्तिभिः, राजिभिः पाण्डुरः, धवलः। प्रतिनिधिरिव, प्रतिकृतिरिव, चन्द्रलोकस्य। मध्विति—मधुमदेन, मद्यपानजनितेनोल्लासेन, मत्ताः, याः, मत्तकाशिन्यः, उत्तमाङ्गनाः, यत्तिण्यश्च, तासां भूषणरवैः, भरितं, आपूरितम्, भुवनं यत्र तथाभूतः।

तभुवनो नामाभिहार इव कुवेरनगरस्य, स्थाण्वीश्वराख्यो जननिवेशः ।

यस्तपोवनमिति मुनिभिः, कामायतनमिति वेश्याभिः, संगीतशालेति लासकैः, यमनगरमिति शत्रुभिः, चिन्तामणिभूमिरित्यर्थिभिः, वीरक्षेत्रमिति शस्त्रोपजीविभिः, गुरुकुलमिति विद्यार्थिभिः, गन्धर्वनगरमिति गायनैः, विश्वकर्ममन्दिरमिति विज्ञानिभिः,लाभभूमिरिति वैदेहकैः,द्यूतस्थानमिति भागार्थिभिः, साधुसमागम इति सद्भिः, वज्रपञ्जरमिति शरणागतैः, विटगोष्ठीति विदग्धैः, सुकृतपरिणाम इति पथिकैः, असुरविवरमिति वातिकैः, शाक्याश्रम इति शमिभिः, अप्सरःपुरमिति कामिभिः,

---

स्थाण्वीश्वराख्यः (थानेसर) जननिवेशः । देशः, मुनिभिः,तपोवनं, तपः कर्तुं,गृहं, वेश्याभिः,वारविलासिनीभिः,कामस्य,आयतनं गृहम् । लासकैः, नर्तकैः, संगीतशाला, शत्रुभिः, अरिभिः, यमनगरम्, प्राणहन्तृपुरम् । अर्थिभिः, याचकैः, चिन्तामणिः, विचारितवस्तुदरत्नविशेषः, तस्याः, भूमिः, क्षेत्रम् । शस्त्रोपजीविभिः, वीरसैनिकैः, वीरक्षेत्रम्, वीरोत्पत्तिभूमिः । विद्यार्थिभिः, अन्तेवासिभिः, गुरुकुलम् । गायनैः, गायनाचार्यैः, गन्धर्वनगरम् । विज्ञानिभिः, शिल्पादिकलाज्ञातृभिः, विश्वकर्मामन्दिरम्, शिल्पविद्यानिधिगृहम् । वैदेहिकैः, वणिग्भिः, लाभभूमिः, धनोपार्जनस्थानैः, भागार्थिभिः, भागः, सौभाग्यन्, तदर्थिभिः, तदभिलाषिभिः, द्यूतस्थानम्, द्यूतं, देवनं, क्रीडेति यावत्, तत्स्थानम् । शरणागतैः, शरणप्राप्तैः, वज्रपंजरम्, वज्रनिर्मितपंजरं विदग्धैः, विलासिभिः, विटगोष्ठी, विलाससमाजः । पथिकैः, अध्वगैः सुकृतानां, पुण्यानां, परिणामः, परिणतिः । वातिकैः, वायुरोगिभिः, असुरविवरं, पातालम् । शमिभिः, बौद्धैः, शाक्याश्रमः, बुद्धसन्यासिमठः । कामिभिः,

महोत्सवसमाज इति चारणैः, वासुधारेति विप्रैरगृह्यत ।

यत्र च मातंगगामिन्यः शीलवत्यश्च, गौर्यो विभवरताश्च, श्यामाः पद्मरागिण्यश्च, धवलद्विजशुचिवदना: मदिरामोदिश्वसनाश्च, चन्द्रकान्तवपुषः शिरीषकोमलाङ्गयश्च, अभुजंगगम्याः कञ्चुकिन्यश्च, पृथुकलत्रश्रियो दरिद्रमध्यकलिताश्च, लावण्य-

विलासिभिः,अप्सरःपुरम् । चारणैः,स्तुतिगायकैः, महोत्सवस्य,समाजः, गोष्ठी । विप्रैः, ब्राह्मणैः, वसुधारा, धनप्रवाहः, मातङ्गगामिन्यः, श्वपचगामिन्यः, शीलवत्यः, सुशीलाः, याः चण्डालान गच्छन्ति कथं सा शीलवती इति विरोधः गजवत्, गामिन्य इति परिहारः । गौर्याः, पार्वत्याः, विभवरताः, विगतः, भवे, हरे, रतः यासां ताः, इति विरोधः, गौर्यः, गौराङ्गयः, विभवे, धने रताः, इति परिहारः । श्यामाः, रात्रयः, पद्मरागिन्यः, पद्मेषु, कमलेषु रागवत्यः, इति विरोधः । पद्मानां निर्मलनात् श्यामाः, श्यामलाङ्गयः, पद्मरागिण्यः, पद्मरागरत्नालंकृताः । धवलेति—धवलानि, विशदानि, द्विजस्येव शुचीनि, पवित्राणि, वदनानि यासां ताः । मदिरेति—मदिरया, सुरया, आमोदिनः, सौरभवन्तः, श्वसनाः, श्वासवायवः, यासां ताः, याः पवित्र ब्राह्मणवत् पवित्रवदनाः तासां मद्यपानेन कथं मुखपवित्रता, इति विरोधः । धवलैः स्वच्छैः, द्विजैः, दन्तैः, शुचिनि, उज्वलानि वदनानि, यासां ताः । **चन्द्रकान्तेति**—चन्द्रकान्तः, मणिविशेषः, तद्वत् वपुः यासां ताः, अथ च शिरीषकोमलाङ्गयः, शिरीषपुष्पवत्, कोमलं, सुकुमारं अङ्गं यासां ताः । याः चन्द्रकान्तप्रस्तरविशेषवत् कठिनाङ्गयः कथं ताः कोमलाङ्गयः-इति विरोधः । चन्द्रकान्तमणिवत् रमणीयं वपुः यासां ताः-इतिपरिहारः । **अभुजंगेति**—भुजङ्गैः, सर्पैः, नगम्या अभुङ्गगम्याः, कंचुकिन्यः, भुजंग्यः, इति विरोधः, भुजंगैः, विटैः, न गम्याः

वत्यो मधुरभाषिण्यश्च, अप्रमत्ताः प्रसन्नोज्ज्वलरागाश्च, अकौतुकाः प्रौढाश्च प्रमदाः ।

यत्र च प्रमदानां चक्षुरेव सहजं मुण्डमालामण्डनं, भारः कुवलयदलदामानि । अलकप्रतिबिम्बान्येव कपोलतलगतान्यक्लिष्टाः श्रवणावतंसाः,पुनरुक्तानि तमालकिसलयानि । प्रियजनकथा

कंचुकं स्त्रीणां स्तनावरणं चोलकं तद्वत्यः । पृथ्विति—पृथुः, आदिराजः, वेणपुत्रः, तस्य कलत्राणां, श्रियः, इव, सम्पदः, यासां ताः, अथ च, दरिद्रमध्यकलिताः, दरिद्राणां, मध्ये, कलिताः, संख्याताः, याः खलुराजमहिष्य इव संपच्छालिन्यः कथं ताः दरिद्राः इति विरोधः पृथवी महती कलत्रस्य, श्रोणेः (जघनस्येत्यर्थः) श्रीः शोभा यासां ताः दरिद्रं, क्षीणं मध्यः, कटिदेशः तेन कलिताः, इति परिहारः । लावण्यवत्यः, लावण्यरसशालिन्यः, अथ च, मधुरभाषिण्यः मधुरा उक्ति यासां ताः याः लावण्यरसवहालाः कथं ताः मधुरोक्तिवत्यः-इति विरोधः, लावण्यवत्यः, सौन्दर्यवत्यः, मधुरभाषिण्यः, प्रियवादिन्यः इति परिहारः । प्रसन्ना, सुराभेदः तया उज्वलः रागः अनुरागः यासां ताः, अथ च, अप्रमत्ताः अक्षीवाः याः मद्यपायिन्यः कथं सा अप्रमत्ताः, प्रसन्नः, सौम्यः उज्वलः, विशदः, रागः वर्णः, यासां ताः, इति परिपरिहारः । अकौतुकाः, विवाह कालिकहस्तसूत्रं तद्रहिताः अथ च प्रौढाः, पूर्णयौवनाः, याहि पूर्णयौवना कथं अविवाहिताः, इति विरोधः कौतुकं, औत्सुक्यं तद्रहिताः, इति परिहारः । सहजं, अकृत्रिमम् । मुण्डमालामण्डनं, मुण्डमाला, नीलोत्पलमाला एव मण्डनं भूषणं । कुवलयदलदामानिनीलोत्पलपत्रमालिकाः भारः (बाह्यवस्तुमात्रम्, इत्यर्थः) अलकेति—अलकानां, चूर्णकुन्तलानां, प्रतिबिम्बानि, छाया एव, अक्लिष्टाः, श्रवणावतन्साः, श्रोत्रभूषणानि । तमालकिस-

एव सुभगाः कर्णालंकाराः, आडम्बरः कुण्डलादिः । कपोला एव सततमालोककारकाः, विभवो निशासु मणिप्रदीपाः । निःश्वासाकृष्टमधुकरकुलान्येव रमणीयं मुखावरणं, कुलस्त्रीजनाचारो जालिका । वाण्येव मधुरा वीणा, बाह्यविज्ञानं तन्त्रीताडनम् । हासा एवातिशयसुरभयः पटवासाः, निरर्थकाः कर्पूरपांशवः । अधरकान्तिविसर एवोज्ज्वलतरोऽङ्गरागो निर्गुणो लावण्यकलङ्कः कुङ्कुमपङ्कः । बाहव एव कोमलतमाः परिहासप्रहारवेत्रलताः, निष्प्रयोजनानि मृणालानि । यौवनोष्मस्वेदबिन्दव एव विदग्धाः कुचालंकृतयो हारास्तु भाराः । श्रोण्य एव वि-

लयानि, तन्नामवृक्षपत्राणि पुनरुक्तानि (निरर्थकानि इति भावः) प्रियजनकथा, कान्तासम्बन्धालापाः, सुभगाः, रमणीयाः, आडम्बरः, संरम्भः, आलोककारकाः, कान्तिकर्तारः, विभवाः, ऐश्वर्यम् । **निश्वासेति**—निश्वासेन, आकृष्टानां, मधुकराणां, भ्रमराणां, कुलानि, सङ्घाः । मुखावरणम्, मुखाच्छादनम् । जालिका, अवगुण्ठनपटम्, तन्त्रीताडनम्, वीणागुणाघातम् । बाह्यविज्ञानम्, बाह्यं, वहिर्गतं, विज्ञानं, विशेषेण वादित्रवादनबोधः । पटवासाः, सुगन्धचूर्णविशेषाः, निरर्थकाः, निष्प्रयोजनाः, कर्पूरपांसवः, कर्पूररजांसि, अधरस्य, ओष्ठस्य, कान्तिविस्तारः, लावण्यविस्तारः, निर्गुणाः, निष्फलः, लावण्यकलङ्कः, लावण्यस्य मालिन्यापादकः, कुंकुमपङ्कः, कुंकुमद्रवः । कोमलतमाः, अतिकोमलाः । **परिहासेति**—परिहासे, क्रीडाकाले, यः प्रहारः ताडनं, तदर्थं वेत्रलताः, वेत्राणि । निष्प्रयोजनानि, प्रयोजनरहितानि, मृणालानि, कमलानि । **यौवनेति**—यौवनेन, तारुण्येन, यः, उष्मा, उष्मता, तेन ये स्वेदबिन्दवः, घर्मजलकणाः, विदग्धाः, मनोज्ञाः । श्रोण्यः, नितम्बाः । **विशालेति**—विशालं, बृहत्, यत्

शालस्फाटिकशिलातलचतुरस्रा रागिणां विश्रामकारणमनिमित्तं भवनमणिवेदिकाः। कमललोभनिलीनान्यलिकुलान्येव मुखराणि पदाभरणकानि, निष्फलानीन्द्रनीलनूपुराणि। नूपुररवाहूता भवनकलहंसा एव समुचिताः संचरणसहायाः, ऐश्वर्यप्रपञ्चाः परिजनाः।

तत्र च साक्षात्सहस्राक्ष इव सर्ववर्णधरं धनुर्दधानः, मेरुमय इव कल्याणप्रकृतित्वे, मन्दरमय इव लक्ष्मीसमाकर्षणे, जलनिधिमय इव मर्यादायाम्, आकाशमय इव शब्दप्रादुर्भावे,

---

स्फटिकशिलातलं, स्फटिकमणिमयशिलापट्टम्, तद्वत् चतुरस्राः, चतुष्कोणाः, रागिणां, विलासिनां, विश्रामकारणं, विश्रान्तिस्थानम्, अनिमित्तं, अकारणम्। कमलेति कमललोभेन, निलीनानि, संलग्नानि। मुखराणि, निस्वनन्ति, इन्द्रनीलनूपुराणि, नीलकान्तमणिनिर्मितानि, मञ्जीराणि। सञ्चरणसहायाः, विचरणसङ्गिन्यः, ऐश्वर्यप्रपञ्चाः, विभवविस्तराः। तत्र इत्यादावारभ्य, पुष्पभूतिरितिनाम्नावभूव इत्येनेनान्वयः। सर्वेति सर्वे, वर्णाः, ब्राह्मणादयः, शुक्लादयश्च तान् धरतीति, धारयति, पालयति, वा तथोक्तम्, धनुः कार्मुकं, दधानः, धारयन्। कल्याणप्रकृतित्वे, कल्याणं, मङ्गलं, स्वर्णञ्च प्रकृतिः यस्य तथात्वे। मन्दरमयः, तदाख्यपर्वतकः, क्षीरोदमन्थने, मन्दराचलस्य, मन्थनदण्डरूपतया, तेनैव तत्र स्थितायाः, लक्ष्म्याः, समुद्धरणम्। मर्यादायां, स्थितौ, सदाचाररक्षणे, सीमायां च जलनिधिः, असीमा, तथा ऽयमपि अविचलितसदाचारः, शब्दप्रादुर्भावे, शब्दानां, यशोविनयादिरूपाणां, घटपटादिरूपाणां च, प्रादुर्भावः, प्रकाशनं, यस्मिन् आकामय इव। कलासंग्रहे, कलाः, चतुषष्टिप्रकाराः विद्या षोडशभागाश्च, तासां, संग्रहः, तस्मिन्, शशिमय इव। अकृत्रिमालापत्वे,

शशिमय इव कलासंग्रहे, वेदमय इवाकृत्रिमालापत्वे, धरणिमय इव लोकधृतिकरणे, पवनमय इव सर्वपार्थिवरजोविकारहरणे, गुरुर्वचसि, पृथुरुरसि, विशालो मनसि, जनकस्तपसि, सुयात्रस्तेजसि, सुमन्त्रो रहसि, बुधः सदसि, अर्जुनो यशसि, भीष्मो धनुषि, निषधो वपुषि, शत्रुघ्नः समरे, शूरः शूरसेनाऽऽक्रमणे, दक्षः प्रजाकर्मणि, सर्वादिराजतेजः पुञ्जनिर्मित इव राजा पुष्पभूतिरिति नाम्ना बभूव ।

पृथुना गौरियं कृतेति यः स्पर्धमान इव महीं महिषीं चकार ।

अकृत्रिमः, अकपटः, सत्यमित्यर्थः, अपौरुषेयश्च आलापः वचनं यस्य तथात्वे वेदमय इव । लोकधृतिकरणे, लोकानां, जनानां, जगतांश्च धृतिः, धारणं, धैर्यश्च तस्याः करणं, सम्पादने धरणिमय इव । सर्वेति – सर्वेषां, पार्थिवानां, राज्ञां, रजोविकारस्य, रजोगुणविकृतेः (पक्षे) पार्थिवानां, पृथिवीसम्बन्धिनां रजसां, धूलीनां विकारस्य हरणं, अपनयने । वचसि गुरुः, महान्, उरसि, वक्षसि, पृथुः, विशालः, मनसि, हृदये, विशालः, विस्तीर्णः, तपसि, तपस्यायां, जनकः, उत्पादकः, तेजसि, सुयात्रः, सुशोभना यात्रा यस्यसः रहसि एकान्ते, सुमन्त्रः, सुशोभनः मन्त्रः यस्य तथोक्तः, सदसि, सभायां, बुधः, पण्डितः । धनुषि, कार्मुके, भीष्मः, कठिनः, वपुषि, निषधः, कठिनः । समरे, युद्धे, शत्रुघ्नः, शत्रून् हन्तीति सः । शूरः, वीरः । शूरेति— शूराणां, शौर्यशालिनीनां, सेनानां, शूरसेनस्य, देशविशेषस्य आक्रमणं तस्मिन् । प्रजाकर्मणि, प्रजापालने, दक्षः, चतुरः । सर्वेति—सर्वेषां आदिराजानां तेजसः, पुञ्जेन निर्मितः, रचित इव राजा, नृपतिः, पुष्पभूतिः नाम्नाबभूव । पृथुनेत्यादि इयं, मही, गौः । कृतेति— स्पर्धमान इव, ईर्ष्यमाण इव महीं, महिषीं, कृताभिषेकां,

निसर्गस्वैरिणी स्वरुच्यनुरोधिनी च भवति हि महतां मतिः। यतस्तस्य केनचिदनुपदिष्टा सहजैव शैशवादारभ्यान्यदेवताविमुखी भगवति, भक्तिसुलभे, भुवनभृति, भूतभावने, भवच्छिदि, भवे भूयसी भक्तिरभूत्। अकृतवृषभध्वजपूजाविधिर्न स्वप्नेऽप्याहारमकरोत्। अजम्, अजरम्, अमरगुरुम्, असुरपुररिपुम्, अपरिमितगणपतिम्, अचलदुहितृपतिम्, अखिलभुवनकृतचरणनतिम्, पशुपतिं प्रपन्नोऽन्यदेवताशून्यममन्यत त्रैलोक्यम्। भर्तृचित्तानुवर्तिन्यश्चानुजीविनां प्रकृतयः। तथा हि। गृहे गृहे भगवानपूज्यत खण्डपरशुः। बभुरस्य होमानलज्वालाविलीयमानबहलगुग्गुलुगन्धगर्भाः स्नपनक्षीरशीकरक्षोदक्षारिणो विल्वपप्रधानपत्रि चकार।

निसर्गस्वैरिणी, स्वभावतः स्वेच्छाचारिणी, स्वरुच्यानुरोधिनी, स्वाभिमतानुवर्तिनी, अनुपदिष्टा, अशिक्षिता। भुवनेति—भुवनानि, जगन्ति, बिभ्रति, धारयति तस्मिन्। भूतेति—भूतान्, प्राणिनः भावयति मनः, स्थितत्वेन, विषयेषु, प्रवर्तयति यः तस्मिन्। भवच्छिदि, संसारध्वंसिनि। भवे, हरे। अजं, जन्मरहितं, अजरं, जराशून्यम्, अमरगुरुम्, देवदेवम्, असुर पुररिपुम्, त्रिपुरारिम्, अपरिमितगणपतिम्, अपरिमितानां, असंख्यकानां, गणानां, प्रमथानां, पतिः, तम्। अचलेति—अचलस्य, नगस्य, हिमवतः, दुहितुः, कन्यायाः, पतिः, तम्। अखिलेति—अखिलैः, समग्रैः, भुवनैः, कृता, चरणयोः, नतिः, प्रणामः, यस्य तम्। प्रपन्नः, आश्रितः। खण्डपरशुः, शिवः, (शंकरश्चन्द्रशेखरः, भूतेशः खण्डपरशुः "इत्यमरः) बभुः, बहन्तिस्म। होमेति—होमानलज्वालायां, होमकुण्डाग्निशिखायाम्, विलीयमानानां, द्रवतां, बहलानां, बहूनां, गुग्गुलानां, गन्धो-गर्भे, मध्ये येषां ते। स्नपनेति—स्नपनं, स्नानोपकरणम्, यत् क्षीरं,

ल्वदामदलोद्वाहिनः पुण्यालयेषु वायवः। शिवसपर्यासमुचितै-रुपायनैः प्राभृतैश्च पौराः, पादोपजीविनः सचिवाः, भुजबलनिर्जिताश्च करदीकृता महासामन्तास्तं सिषेविरे। तथा हि। कैलासकूटधवलैः कनकपत्रलतालंकृतविषाणकोटिभिर्महाप्रमाणैः संध्याबलिवृषैः सौवर्णैश्च स्नपनकलशैरर्घ्यभाजनैश्च, धूपपात्रैश्च, पुष्पपट्टैश्च, मणियष्टिप्रदीपैश्च, ब्रह्मसूत्रैश्च, महार्हमाणिक्यखण्ड-खचितैश्च मुखकोषैः परितोषमस्य मनसि चक्रुः। अन्तःपुराण्यपि स्वयमारब्धबालेयतण्डुलकण्डनानि, देवगृहोपलेपनलोहि-

दुग्धम्, तस्य शीकराः, विन्दवः एव क्षोदाः, चूर्णसदृशाः, तान् क्षरन्तीति तथोक्ताः। विल्वेति—विल्वपल्लवानां, दामानि, माल्यानि, तेषां दलानि, निचयानि, उद्वहन्तीति तथाविधाः, पुण्यालयेषु, पुण्यस्थानेषु। शिवेति—शिवस्य, सपर्या, पूजा, तत्समुचितानि, तैः, उपायनैः, उपढौकनैः, प्राभृतकैः, सुहृत्प्रेषितैः, करदीकृताः, दण्डजाः कृताः, महासामन्ताः, श्रेष्ठनृपतयः। कैलासस्य, रजतगिरेः, कूटानि, शिखराणि तद्वत् धवलाः तैः। कनकेति—कनकपत्रलताभिः, स्वर्णरचितपत्रभंगैः, अलंकृताः, विषाणकोटयः, शृङ्गाग्राणि, येषां तैः। महाप्रमाणैः, बृहदाकारैः, सन्ध्याबलिवृषैः, सन्ध्याकालिकपूजार्थवृषभैः, सौवर्णैः, काञ्चनमयैः, स्नपनकलसैः, स्नानकुम्भैः, अर्घ्यभाजनैः, अर्घ्यपात्रैः, पुष्पपट्टैः, कुसुमवसनैः। मणियष्टिप्रदीपाः, ज्वलन्मणिशिखा तैः, ब्रह्मसूत्रैः, यज्ञोपवीतैः। महार्हेति—महार्हेण, महामूल्येन, माणिक्यखण्डेन, रत्नशकलेन, खचितैः, निबद्धैः, मुखकोषैः, मुखयुक्ताः कोषाः तैः, शिवलिङ्गाच्छादनैः, अस्य पुष्पभूतेः। अन्तःपुराणि अवरोधवर्गाः। आरब्धेति—आरब्धानि, बालेयानां, तण्डुलानां, कण्डनानि, यैः तथा भूतानि। देवेति—देवगृहस्य, शिव-

ततरकरकिसलयानि,कुसुमग्रथनव्यग्रसमस्तपरिजनानि तस्या-भिलषितमन्ववर्तन्त। तथा च। परममाहेश्वरः स भूपालो लोकतः शुश्राव, भुवि भगवन्तमपरमिव साक्षाद्दक्षमखमथनं दाक्षिणात्यं बहुविधविद्याप्रभावप्रख्यातैर्गुणैः शिष्यैरिवानेकसहस्रसंख्यैर्व्याप्तमर्त्यलोकं भैरवाचार्यनामानं महाशैवम्। उपनयन्ति हि हृदयमदृष्टमपि जनं शीलसंवादाः। यतः स राजा श्रवणसमकालमेव तस्मिन्भैरवाचार्ये भगवति द्वितीय इव कपर्दिनि दूरगतेऽपि गरीयसीं बबन्ध भक्तिम्। आचकाङ्क्ष च मनोरथैरस्यस्य सर्वथा दर्शनम्।

अथ कदाचित्पर्यस्तेऽस्ताचलचुम्बिनि वासरेऽन्तः पुरवर्तिनं राजानमुपसृत्य प्रतीहारी विज्ञापितवती—'देव, द्वारि परिव्राडास्ते कथयति च भैरवाचार्यवचनाद्देवमनुप्राप्तोऽस्मि' इति।

मन्दिरस्य, उपलेपनेन, गोमयादिना संशोधनेन लोहिततराः, अतिलोहिताः, करकिसलयाः, येषां तथोक्तानि। कुसुमेति—कुसुमानां, ग्रथने, गुम्फने, व्यग्राः, लग्नाः, परिवाराः, येषां तानि, अन्ववर्त्तन्त, अन्वसरन। परममाहेश्वरः, महेश्वरस्य परमभक्तः, भुवि वसुधायाम्। दक्षमखमथनम्, दक्षप्रजापतेः (यज्ञध्वंसनमित्यर्थः) दाक्षिणात्यम्, दक्षिणदेशप्रभवम्। बह्विति—बहुविधा, या विद्या, तस्याः, प्रभावेन, प्रख्यातैः, प्रसिद्धैः, उपनयन्ति, उपस्थापयन्ति, शीलसंवादाः, चारित्रसादृश्यानि। कपर्दिनि, शिवे, गरीयसीं, गुरुतराम्, आचकांक्ष, इच्छयामास।

पर्यस्ते, अवसिते, वासरे, दिवसे, परिव्राट्, सन्न्यासी, अनुप्राप्तः, समागतः। अथ न चिरात् इत्यादौ मस्करिणमद्राक्षीत् इत्यनेनान्वयः। प्रांशु, उन्नतकायं, आजानु, ऊरुपर्यन्तं, लम्बौ, भुजौ यस्य तम्।

राजा तु तच्छ्रुत्वा सादरम्—'क्वासौ आनयाशु एव। प्रवेशयैनम्' इति चाब्रवीत्। तथा चाकरोत्प्रतीहारी। नचिराच्च प्रविशन्तं प्रांशुम्, आजानुलम्बभुजम्, भैक्षक्षाममपि स्थूलास्थिभिरवयवैः पीवरमिवोपलक्ष्यमाणम्, पृथूत्तमाङ्गम्, उत्तुङ्गवलिभङ्गस्थपुटललाटम्, निर्मांसगण्डकूपम्, मधुबिन्दुपिङ्गलपरिमण्डलाक्षम्, ईषदावक्रघोणम्, अतिप्रलम्बैककर्णपाशम्, अलाबुबीजविकटोन्नतदन्तपङ्क्तिम्, तुरगानूकश्लथाधरलेखम्, लम्बचिबुकायततरलपनम्, अंसावलम्बिना काषायेण योगपट्टकेन विरचितवैकक्षकम्, हृदयमध्यनिबद्धग्रन्थिना च रागेणेव खण्डशः कृतेन

भैक्षेति—भिक्षा, एव भैक्षं तेन क्षामं, क्षीणाम्। स्थूलेति—स्थूलाः, याः, अस्थयः, येषां, तैः, अवयवैः, पीवरम्, स्थूलं। पृथूत्तमांगम्, बृहन्मस्तकम्। उत्तुंगेति—उत्तुङ्गा, दीर्घा, वलिभंगा यत्र तादृशं, स्थपुटं, निम्नोन्नतं, ललाटं, भालं, यस्य तथोक्तम्। निर्मांसेति—निर्मांसौ, मांसशून्यौ गण्डौ, कपोलौ, कूपाविव, यस्य तथोक्तम्। मध्विति—मधुबिन्दुवत्, पिंगलं, परिमण्डलं, गोलकं, ययोः तथा भूते, अक्षिणीयस्य तथा भूतम्। ईषदिति—ईषत्, आवक्रा, घोणा नासिकायस्यतम् (घोणानासा च नासिका इत्यमरः) अतीति—अति, अतिशयेन, प्रलम्बः, लम्बमानः, एकः कर्णपाशः यस्य तथोक्तम्। अलाब्विति—अलाबुबीजवत्, तुम्बीबीज इव विकटा, कराला, उन्नता च दन्तपंक्तिः, दशनावलीयस्य तम्। तुरगेति—तुरगस्य, अनूकः, अधोगतः, ओष्ठः, तद्वत् श्लथा, शिथिला, अधरलेखा यस्य तम्। लम्बेति—लम्बेन, चिबुकेन, अधराधोभागेन, आयततरम्, अतिदीर्घं, लपनं, मुखं यस्य तथोक्तम्। अंसावलम्बिना, स्कन्धावलम्बिना, काषायेण, काषायरञ्जितेन, योगपट्टकेन, योग-

धातुरसारुणेन कर्पटेन कृतोत्तरासङ्गम्। पुनरुक्तबालप्रग्रहवेष्टननिश्चलमूलेन बद्धमृत्परिशोधनवंशत्वक्तितउना कौपीनसनाथशिखरेण खर्जूरपुटसमुद्गकगर्भीकृतभिक्षाकपालकेन दारवफलकत्रयत्रिकोणत्रियष्टिनिविष्टकमण्डलुना बहिरुपपादितपादुकावस्थानेन स्थूलदशासूत्रनियन्त्रितपुस्तिकापूलिकेन वामकरधृतेन योगभारकेणाध्यासितस्कन्धम्, इतरकरगृहीतवेत्रासनं मस्करि-

---

साधनेन पट्टवसनखण्डेन विरचितं, वैकक्षकम्। हृदयेति—हृदयस्य, वक्षसः, मध्ये, निबद्धः, रचितः, ग्रन्थिः, यस्य तथोक्तेन, रागेणेव, धातुरसारुणेन, गैरिकरक्तेन, कर्पटेन, नक्तकेन, कृतोत्तरासंगकृतः, उत्तरासंगः, उत्तरीयं येन तथोक्तम्। पुनरुक्तेति—पुनरुक्तेन, बालेन, नूतनेन, प्रग्रहेण, रज्वा, यद्वेष्टनं, तेन निश्चलं, स्थिरं मूलं यस्य तेन। बद्धेति—बद्धः, मृदां, मृत्कानां, परिशोधनाय, परिमार्जनाय, वंशत्वचा, वेणुवल्कलेन, तितउः चालनी यत्र तेन (चालनीतितउः पुमान्—इत्यमरः) कौपीनेति कौपीनेन, चीरवस्त्रेण, सनाथं, युक्तम्, शिखरं, अग्रभागं, यस्य तेन। खर्जूरेति—खर्जूरस्य, वृक्षभेदस्य, पुटैः, श्लिष्टैः, समुद्गकः, सम्पुटकः तस्य गर्भीकृतं गर्भस्थापितं, भिक्षाकपालकं, (भिक्षापात्रमित्यर्थः) यस्य तथोक्तेन। दारवेति—दारवं, काष्ठसम्बन्धी यत् फलकत्रयम्, पट्टकत्रयम्, तस्मिन्, ये, त्रयः कोणाः तेषु याः, तिस्रो, यष्टयः, दण्डाः, तासु, निविष्टः,कमण्डलुः यस्य तथाविधेन। बहिरिति—बहिः,बाह्यदेशे, उपपादितं, सम्पादितं, पादुकयोः, उपानहोः, अवस्थानं, स्थापनं यस्य तथाविधेन। स्थूलेति—स्थूलैः वृद्धैः, पीवरैः, वा, दशसूत्रैः, वसनाञ्चल तन्तुभिः, नियन्त्रितं, निबद्धं, पुस्तिका पूलकं क्षुद्रपुस्तकसमूहः, यत्र तेन। वामकरधृतेन, वामहस्तगृहीतेन योगभारकेण, योगसाधन

णमद्राक्षीत्। क्षितिपतिरभ्युपगतमुचितेन चैनमादरेणान्वग्रहीत् आसीनं च पप्रच्छ—'क्व भैरवाचार्यः' इति। सादरनरपतिवच-नमुदितमनास्तु परिव्राट् तमुपनगरं सरस्वतीतटवनावलम्बिनि शून्यायतने स्थितमाचचक्षे। भूयश्चाबभाषे—'अर्चयति हि महा-भागं भगवानाशीर्वचसा' इत्युक्त्वा चोपनिन्ये योगभारकादा-कृष्य भैरवाचार्यप्रहितानि रत्नवन्ति बहलालोकलिप्तान्तःपुराणि पञ्च राजतानि पुण्डरीकाणि।

नरपतिस्तु प्रियजनप्रणयभङ्गकातरो दाक्षिण्यमनुरुध्यमानो ग्रहणलाघवं च लङ्घयितुमसमर्थो दोलायमानेन मनसा स्थित्वा चिरं कथं कथमप्यतिसौजन्यनिघ्नस्तानि जग्राह। जगाद च—

द्रव्यसञ्चयस्थाल्या, अध्यासितः, संनिवेशितः स्कन्धः यस्य तम्। इतरेति— इतरेण, दक्षिणेन, करेण, हस्तेन, गृहीतं, वेत्रासनम्। मस्करिणं सन्यासिनम्, अद्राक्षीत्। क्षितिपतिः, राजा, उपगतम्, उपस्थितम्। उचितेन, अनुकूलेन। उपनगरम्, नगरसमीपम्। मुदितमनाः, प्रसन्नचित्तः। सरस्वतीति— सरस्वत्या, तन्नामनद्याः तटे, तीरे यद्वनं तदवलम्बते इति तथोक्ते, सरस्वतीतीरस्थवनान्ते, शून्यायतने, शून्यमन्दिरे। स्थितिं, वासं, आचचक्षे, आबभासे। भूयः, पुनः, अर्चयति, पूजयति, महाभागं, भाग्यवन्तम्, उपनिन्ये, समर्पितवान्। बहलेति—बहलेन, प्रभूतेन, आलोकेन, कान्त्याः, लिप्तम्, अन्तपुरं, यैः तानि, रत्नवन्ति, मणिरवचितानि, राजतानि, रौप्यमयानि, पुण्डरीकाणि, कमलानि। प्रियेति—प्रियजनस्य, प्रीतिपात्रस्य, प्रणयभङ्गः तेन कातरः, दाक्षिण्यं, चातुर्यं, अनुरुध्य-मानः, अनुसरन्, ग्रहणलाघवम्, ग्रहणे, लाघवम्, दोलायमानेन, (किंकर्त्तव्यविमूढतया गृह्णामि नवेति संशयितेनेत्यर्थः) अतिसज्जौन्य-

'सर्वफलप्रसवहेतुः शिवभक्तिरियं नः, यया मनोरथदुर्लभानि फलन्ति फलानि। एवमस्मासु प्रीयते भगवान्भुवनगुरुर्भैरवाचार्यः। श्वो द्रष्टास्मि भगवन्तम्' इत्युक्त्वा च मस्करिणं व्यसर्जयत्। अनया च वार्तया परां मुदमवाप।

अपरेद्युश्च प्रातरेवोत्थाय वाजिनमधिरुह्य समुच्छ्रितश्वेतातपत्रः समुद्धूयमानधवलचामरयुगलः कतिपयैरेव राजपुत्रैः परिवृतो भैरवाचार्यं सवितारमिव शशी द्रष्टुं प्रतस्थे। गत्वा च किञ्चिदन्तरं तदीयमेवाभिमुखमापतन्तमन्यतमं शिष्यमद्राक्षीत्। अप्राक्षीच्च—'क्व भगवानास्ते' इति। सोऽकथयत्—'अस्य जीर्ण-

नित्र, अतिसौजन्यवंशवदः। सर्वेति सर्वेषां, समग्राणां, फलानां प्रसवहेतुः, उत्पत्तिकारणम्, नः, अस्माकम्। मनोरथेति मनोरथेनाऽपि, दुर्लभानि, दुष्प्राप्याणि। भुवनगुरुः, जगदाचार्यः, श्वः, परदिने, मस्करिणं, परिव्राजम्, वार्त्तया, वृत्तान्तेन, वाजिनम्, अश्वम्। समुच्छ्रितेति—समुच्छ्रितं, समुद्धृतम्, श्वेतं, धवलं, आतपत्रं, छत्रं येन सः। समुद्धूयमानेति—समुद्धूयमानं, संवीज्यमानं, धवलं, श्वेतं, चामरयुगलं, येन सः। सवितारमिव, सूर्यमिव, शशी, चन्द्रः, द्रष्टुम्, अवलोकयितुम्, अभिमुखम्, सम्मुखम्, आपतन्तं, आगच्छन्तम्, अन्यतमम्, अपरम्, शिष्यम्, अन्तेवासिनं, अद्राक्षीत्, ददर्श। जीर्णमातृगृहस्य, पुरातनदेवीमन्दिरस्य, उत्तरेण, उत्तरस्यां दिशि, बिल्ववाटिकाम्, बिल्ववृक्षशोभितोद्यानम्। अथेत्यादौ भैरवाचार्यं ददर्श इत्युत्तरेणान्वयः। कार्पटिकवृन्दस्य, कर्पटं, चीरवस्त्रम्, परिधारयन्ति इति कार्पटिकाः, कौपीनधारिणः, तेषां, वृन्दस्य, समूहस्य। दत्तेति—दत्ताः, इष्टदेवायेतिभावः, अष्टौ पुष्पिकाः, पद्मादयः येन तम्। अनुष्ठिताग्निकार्यं, सम्पादितहवनविधिम्। कृतेति—कृतः, भस्मचय-

मातृगृहस्योत्तरेण बिल्ववाटिकामध्यास्ते' इति। गत्वा च तं प्रदेशमवततार तुरङ्गमात्। प्रविवेश च बिल्ववाटिकाम्।

अथ महतः कार्पटिकवृन्दस्य मध्ये प्रातरेव स्नातम्, दत्ताष्टपुष्पिकम्, अनुष्ठिताग्निकार्यम्, कृतभस्मचयपरिहारपरिकरे हरितगोमयोपलिप्तक्षितितलवितते व्याघ्रचर्मण्युपविष्टम्, कृष्णकम्बलप्रावरणनिभेनासुरविवरप्रवेशाशङ्कया पातालान्धकारावासमिवाभ्यस्यन्तम्, उन्मिषता विद्युत्कपिलेनात्मतेजसा महामांसविक्रयक्रीतेन मनःशिलापङ्केनेव शिष्यलोकं लिम्पन्तम्, जटीकृतैकदेशलम्बमानरुद्राक्षशङ्खगुटिकेनोर्ध्वबद्धेन शिखापाशेन बध्नन्तमिव विद्यावलेपदुर्विदग्धानुपरिसंचरतः सिद्धान्ध-

परिहारस्य, भूतिसमूहसम्मार्जनस्य, परिकरः, प्रक्रिया यस्य तस्मिन्। **हरितेति**—हरितेन, श्यामलेन, गोमयेन, उपलिप्तं, शोभितं, क्षितितलं, भूतलं तस्मिन् विततं, विस्तृतं, तस्मिन्। **कृष्णकम्बलेति**—कृष्णवर्णः कम्बलम्, एव प्रावरणम्, गात्राच्छादनम्, तस्य निभः, छलं, तेन। **असुरेति**—असुरविवरम्, पातालं, तत्र प्रवेशः तस्य आशंका, वितर्कः, तया। **पातालेति**—पाताले यः अन्धकारः, तत्र आवासमिव, स्थितिमिव, अभ्यस्यन्तं, शिक्षमाणम्। उन्मिषता, स्फुरता, विद्युत् कपिलेन, तडित्पिङ्गलेन, आत्मतेजसा, निजतेजसा। **महामांसेति**—महामांसं, नरमांसं, तस्य, विक्रयः, तेन क्रीतः, तेन। **मन-इति**—मनः शिला, (मैनशिल) धातुविशेषः तस्य पंकः, द्रवः, तेन, शिष्यलोकम्, अन्तेवासिजनम्। **जटीति**—अजटा जटासम्पाद्यमानः, जटीकृतः, एकदेशः, एकांशः, तस्मिन्लम्बमानाः, रुद्राक्षाः, जपमालाः, शंखगुटिकाः, (शंखनिर्मितजपसाधना इत्यर्थः) यस्मिन् तथोक्तेन, ऊर्द्धवद्धेन, उन्नम्य नियमितेन, शिखापाशेन वध्नन्तमिव।

धवलकतिपयशिरोरुहेण वयसा पञ्चपञ्चाशतं वर्षाण्यतिक्रामन्तम्, खालित्यर्चीयमाणशङ्खलोमलेखम्, लोमशकर्णशष्कुलीप्रदेशम्, पृथुललाटतटम्, तिरश्च्या भस्मललाटिकया बहुशः शिरोर्धधृतदग्धगुग्गुलुसंतापस्फुटितकपालास्थिपाण्डुरराजिशङ्कामिव जनयन्तम्, सहजललाटवलिभङ्गसंकोचितकूर्चभागं बभ्रुभासं भ्रूसंगत्या निरन्तरामायामिनीमेकामिव भ्रूलेखां बिभ्राणम्, ईषत्काचरकनीनिकेन रक्तापाङ्गनिर्गतांशुप्रतानेन मध्यधवल-

---

विद्येति—विद्ययायोऽवलेपः, अहंकारः तेन दुर्विदग्धाः, दुर्विनीताः तान। उपरि, आकाशे, संचरतः, परिभ्रमतः, सिद्धान देवयोनिविशेषान। धवलेति धवलाः, श्वेताः, शिरोरुहाः, केशाः यस्मिन, तथोक्तेन, शिरसा, उत्तमांगेन। खालित्येति खलतिः, खल्वाटः तस्य भावः खालित्यम् तेन चीयमाणा, शङ्खस्य, लोमलेखा, केशनिचयो यस्य तथोक्तम्। लोमशेति लोमशः, लोमाकीर्णा, कर्णशष्कुली, कर्णकुहरं तस्या प्रदेशः, यस्य तम्। पृथुललाटतटम्, विशालभालम्। तिरश्च्या, तिर्यग्वर्तिन्या ललाटिकया, मस्तकभूषणेन। शिर इति—शिरसः, ऊर्द्ध्वं, शिरोर्द्ध्वं, तस्मिन् धृतानां दग्धानां, गुग्गुलानां, गन्धद्रव्यभेदानां, सन्तापेन, उत्तापेन, स्फुटितानि यानि कपालास्थीनि, मस्तकास्थीनि तेषां पाण्डुरा, धवला राजिः, पंक्तिः, तस्याः, शङ्का, तामिव, जनयन्तम्, उत्पादयन्तम्। सहजेति—सहजेन, स्वाभाविकेन, ललाटे यो वलिभङ्गः, तेन संकोचितः, लघुतां प्रापितः, कूर्चभागः, भ्रूमध्यभागः, यस्य तथोक्तम्, (कूर्चमस्त्री भ्रुवोः, मध्यम् "इत्यमरः") बभ्रुभासं, पिङ्गलकान्तिम्। भ्रूसंगत्येति—भ्रुवोः, संगतिः, सम्मेलनं तया, निरन्तरां, अविरलाम्, आयामिनीम्, आयतां। भ्रूलेखाम्। ईषदिति—ईषत्, काचरा, पीतवर्णाः, कनी-

भासेन्द्रायुधेनेवातिदीर्घेण लोचनयुगलेन परितो महामण्डलमिवानेकवर्णरागमालिखन्तम्, सितपीतलोहितपताकावलीशबलम्, शिवबलिमिव दिक्षु विक्षिपन्तम्, तार्क्ष्यतुण्डकोटिकुब्जाग्रघोणम्, दूरविदीर्णसृक्कसंक्षिप्तकपोलम्, किंचिद्दन्तुरतया सदाहृदयसंनिहितहरमौलिचन्द्रातपेनेव निर्गच्छता दन्तालोकेन धवलयन्तं दिशां चक्रवालं, जिह्वाग्रस्थितसर्वशैवसंहितातिभारेणेव मनाक्प्र-

निका, मध्यतारा यस्य तेन। रक्तापांगेन, नेत्रप्रान्तदेशेन। निर्गतेति—निर्गता, अंशूनां, किरणानां प्रतानाः, प्रसराः यस्मात्तेन, रक्तात्, रक्तवर्णात्, अपाङ्गात्, नेत्रप्रान्तदेशात्, निर्गताः, अंशुप्रतानाः यस्य तेन। मध्येति—मध्ये, धवला, भासा, प्रभा, यस्य तेन इन्द्रायुधेन, शक्रधनुष इव, अतिदीर्घेण, आकर्णविस्तृतेन, परितः, महामण्डलं, (सर्वतो भद्रादिरूपं यन्त्रमित्यर्थः) अनेकेति—अनेकैः, विविधैः, वर्णैः, रागैः, रञ्जनं यत्रतं। सितेति—सिताः,श्वेताः,पीताः,पीतवर्णाः, लोहिताः, रक्ताः, च याः पताकाः, वैजयन्त्यः तासां आवल्यः, श्रेण्यः, ताभिः शवलं, विविधवर्णरञ्जितम् शिववलिं, शिवपूजाविधिम्। तार्क्ष्येति—तार्क्ष्यः, गरुडः (गुरुत्मान् गरुडस्तार्क्ष्यः "इत्यमरः) तस्य तुण्डकोटिः, चञ्च्वाग्रम् तद्वत् कुब्जम्, अग्रघोणम्, अग्रनासिकम् यस्य तथोक्तम्। दूरेति—दूरं, अत्यन्तं, विदीर्णाभ्याम्, विस्तृताभ्याम्, सृक्काभ्यां, ओष्ठाभ्याम्। संक्षिप्तौ, संकोचितौ, कपोलौ, गण्डौ यस्य तम्। किंचिद्दन्तुरतया, ईषद्दीर्घदन्तत्वेन, सदा, हृदये, चित्ते, सन्निहितस्य, अवस्थितस्य, हरस्य मौलौ, शिरसि यः चन्द्रः तस्य आतपः आलोकः तेन इव, निर्गच्छता, बहिर्गच्छता, दन्तालोकेन, दशनप्रभया, दिशां चक्रवालं, मण्डलम्, धवलयन्तम्। जिह्वेति—जिह्वायाः, रसनायाः, अग्रेस्थिताः। याः, सर्वाः, शैवसंहिताः, शिवसंहिताः, शिवचरितगाथाः, तासां, अतिभारेणेव, मनाक्, ईषत्,

लम्बितोष्ठम् , प्रलम्बश्रवणपालीप्रेङ्खिताभ्यां स्फाटिककुण्डलाभ्यां शुक्रबृहस्पतिभ्यामिव सुरासुरविजयविद्यासिद्धिश्रद्धयानुबध्यमानम् ,बद्ध विविधौषधिमन्त्रसूत्रपंक्तिना सलोहवलयेनैकप्रकोष्ठेन शङ्खखण्डं पूष्णो दन्तमिव भगवता भवेन भग्नं भक्त्या भूषणीकृतं कलयन्तम् , अखिलरसकूपोदञ्चनघटीयन्त्रमालामिव रुद्राक्षमालां दक्षिणेन पाणिना भ्रमयन्तम् , उरसि दोलायमानेनापिङ्गलाग्रेण कूर्चकलापेन संमार्जयन्तमिवान्तर्गतं निजरजो-

प्रलम्बितः, ओष्ठः, यस्य तथोक्तम् । प्रलम्बेति प्रलम्बयोः, प्रकर्षेण लम्बमानयोः, श्रवणपाल्योः, कर्णाग्रयोः, प्रेङ्खिते, आन्दोलिते, ताभ्याम् । स्फटिककुण्डलाभ्यां, स्वच्छकर्णभूषणाभ्याम्, शुक्रबृहस्पतिभ्यामिव । सुरेति— सुरासुराणां, देवदैत्यानां, या विजयविद्या, तस्याः, सिद्धिः, तस्याः श्रद्धया, अनुबध्यमानम्, अनुगम्यमानम्, बद्धेति बद्धा विविधानां, ओषधीनां, मन्त्राणांच सूत्रपंक्तिः, यस्मिन् तथोक्तेन सलोहवलयेन, लोहवलयालंकृतेन, एकप्रकोष्ठेन, एकेन, कर्पूरमणिबन्धयोः अन्तरप्रदेशेन (प्रकोष्ठो मणिबन्धस्य कर्पूरस्यान्तरं ऽपि च इति मेदिनी) शंखखण्डम् ,कम्बुशकलम् । पूष्णः,सूर्यस्य,दन्तमिव, भवेन, हरेण, भग्नं, पातितं, भक्त्या, भूषणीकृतम्, कलयन्तं, धारयन्तम् । अखिलेति— अखिलस्य, समग्रस्य, रसस्य, जलस्य, अनुरागस्य च कूपात्, जलाधारात्, (संसारकूपाच्च हरंप्रति–इति भावः) उदञ्चनाय, उद्धरणाय, घटियंत्रमालामिव, घटियंत्रराजिमिव (अरहाट) रुद्राक्षमालां, जपमालां दक्षिणेनपाणिना करेण भ्रमयन्तम् । उरसि, वक्षसि, आपिङ्गलाग्रेण, ईषत् कपिशाग्रेण, कूर्चकलापेन, श्मश्रुनिचयेन, सम्मार्जयन्तं, संशोधयन्तम्, अन्तर्गतं, (हृदिस्थमित्यर्थः) निजरजोनिकरम्, स्वं रजोगुणविकारम् । अतीति—

निकरम्, अतिनिबिडनीललोममण्डलविचितं च ध्यानलब्धेन ज्योतिषा दग्धमिव हृदयदेशं दधानम्, ईषत्प्रशिथिलवलिवलय-बध्यमानतुन्दम्, उपचीयमानस्फिङ्मांसपिण्डकम्, पाण्डुरपवित्रक्षौमावृतकौपीनम्, सावष्टम्भपर्यङ्कबन्धमण्डलितेनामृतफेनश्वेतरुचा योगपट्टकेन वासुकिनेवाप्रतिहतानेकमन्त्रप्रभावाविर्भूतेन-प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, अरुणतामरससुकुमारतलस्य पादयुगलस्य निर्मलैर्नखमयूखजालकैर्जर्जरयन्तमिव महानिधानोद्धरणरसेन

अतिनिबिडेन, अतिघनेन, नीलेन, कृष्णेन, लोममण्डलेन, रोमसमूहेन, निचितं व्याप्तम्, ज्योतिषा, प्रभया, (ज्ञानरूपेणेति भावः)। ईषदिति—ईषत् प्रशिथिलेन, वलिवलयेन, वलित्रयेण, बध्यमानं, वेष्टमानं, तुन्दं, उदरं, यस्य तथोक्तम् (पिचिण्डकुक्षिजठरोदरं तुन्दम् "इत्यमरः) उपचीयमानेति उपचीयमानम्, आप्यायमानं, स्फिचयोः, नितम्बयोः (स्त्रियां स्फिचौ कटिप्रोथौ इत्यमरः) मांसपिण्डकम् यस्य तम्। **पाण्डुरेति**—पाण्डुरेण, धवलेन, पवित्रेण, शुद्धेन, क्षौमेण, पट्टवसनेन, आवृतम्, आच्छादितं, कौपीनं, अन्तर्वस्त्रं यस्य तथा भूतम्। **सावष्टम्भेति**—सावष्टम्भं, सगर्वं यः पर्यङ्कबन्धः, आसनविशेषः, तेन मण्डलितं, वलयीकृतं, तेन। **अमृतेति**—अमृतफेनवत्, श्वेता, धवला, रुक्, कान्ति यस्य तेन योगपट्टकेन। **अप्रतिहतेति**—**अप्रतिहतानां, प्रतिरोद्धुमशक्तानां,** अनेकेषां, **मन्त्राणां, प्रभावेण, सामर्थ्येन, आविर्भूतः तेन, प्रदक्षिणीक्रियमाणम्, समन्तात् वेष्टमानमित्यर्थः। अरुणेति**—अरुणं, रक्तम्, यत् तामरसम्, पद्मं, तद्वत् सुकुमारम्, सुकोमलं तलं यस्य तथाभूतस्य। **नखेति**—नखानां, मयूखाः, किरणाः, तेषां, जालकैः, जर्जरयन्तमिव, विदारयन्तमिव। **महानिधानेति**—महानिधानस्य, महतो निधेः, उद्धरणम्, उत्तोलनम्

रसातलम्, तोयक्षालितशुचिना धौतपादुकायुगलेन हंसमिथुनेनेव भागीरथीतीर्थयात्रापरिचयागतेनामुच्यमानचरणान्तिकम्, शिखरनिखातकुब्जकालायसकण्टकेन वैणवेन विशाखिकादण्डेन सर्वविद्यासिद्धिविघ्नविनायकापनयनाङ्कुशेनेव सततपार्श्ववर्तिनाविराजमानम्, अबहुभाषिणं मन्दहासिनं सर्वोपकारिणं कुमारब्रह्मचारिणम्, अतितपस्विनम्, महामनस्विनं कृशक्रोधम्, अकृशानुरोधम्, महानगरमिवादीनप्रकृतिशोभितम्, मेरुमिव

तस्मिन् यो रसः, रागः तेन रसातलं, पातालम्। तोयेति—तोयेन, जलेन, क्षालितं, धौतं अतएव शुचि, पवित्रं, तेन, (पक्षे) तोये, क्षालितं, (सर्वदा जलेऽवस्थानात् धौतमित्यर्थः) अत एव शुचि, शुभ्रम् तेन। **भागीरथीति**—भागीरथी, गंगा एव तीर्थं, पुण्यक्षेत्रम्, तस्मिन् यात्रा, गमनं, तत्र यः परिचयः, संगतिः, तेन, आगतं तेन। **आमुच्यमानेति**—आमुच्यमानं, चरणान्तिकं यस्य तथोक्तम्। **शिखरेति**—शिखरे, शृङ्गे, निखातः, प्रोत्थितः, कुब्जः, (कुञ्चित इत्यर्थः) कालायसकण्टकः, कृष्णलोहितकण्टकः, यस्य तेन। वैणवेन, वेणुः, वंशदण्डः, तस्यायं वैणवः तेन, विशिखादण्डेन, खनित्रलगुडेन। **सर्वेति**—सर्वासां, विद्यानां, सिद्धौ विघ्नः, अन्तरायः यो विनायकः, गणपतिः, तस्य, अपनयनाय, अपसारणाय, अंकुशः, अस्त्रविशेषः, तेन इव। सर्वोपकारिणां, समस्तोपकारपरायणाम्। कुमारब्रह्मचारिणम्, नैष्ठिकब्रह्मचारिणाम्। महामनस्विनं, प्रशस्तचित्तम्। कृशक्रोधम्, अल्पक्रोधम्, अकृशानुरोधम्, अकृशः, अनल्पः, अनुरोधः, आग्रहः यस्य तथोक्तम् (पक्षे) अकृशानां, स्थूलानां, अनुरोधः, अनुसरणं, यत्र, तथोक्तम्। **अदीनेति**—अदीना, दैन्यरहिता, या प्रकृतिः, स्वभावः तया शोभितः तम् (पक्षे) अदीनाभिः, दारिद्र्यविहीनाभिः प्रकृतिभिः, प्रजाभिः,

कल्पतरुपल्लवराशिसुकुमारच्छायम्, कैलासमिव पशुपतिचरणरजःपवित्रितशिरसम्, शिवलोकमिव माहेश्वरगणानुयातम्, जलनिधिमिवानेकनदनदीसहस्रप्रक्षालितशरीरम्, जाह्नवीप्रवाहमिव बहुपुण्यतीर्थस्थानशुचिम्, धाम धर्मस्य, तीर्थं तथ्यस्य, कोशं कुशलस्य, पत्तनं पूततायाः, शाला शीलस्य, क्षेत्रं क्षमायाः, शालेयं शालीनतायाः, स्थानं स्थितेः, आधारं धृतेः, आकरं करुणायाः, निकेतनं कौतुकस्य, आरामं रामणीयकस्य, प्रसादं

प्रधानपुरुषैः, वा शोभितम्। कल्पेति— कल्पतरूणां, कल्पवृक्षाणाम्, पल्लवराशयः, किसलयनिचयाः, तद्वत् तैश्च सुकुमारा, कोमला, विशदा च छाया। कान्तिः, अनातपश्च यस्य तथोक्तम् (छायासूर्यप्रिया कान्तिः इत्यमरः) पशुपतीति— पशुपतेः, हरस्य, चरणरजोभिः, पवित्रितम्, पावितम्, शिरः, मस्तकम् (पक्षे) पवित्रितानि, शिरांसि, शृङ्गाणि यस्य तथोक्तः, तम्। माहेश्वरेति— महेश्वरो देवता येषां ते माहेश्वराः, (शैवाः-इत्यर्थः) तेषां गणाः, समूहाः (पक्षे) महेश्वरस्य इमे, माहेश्वराः, ये गणाः, प्रथमवर्गाः (गणाः प्रथम सङ्घेपि-इति मेदिनी) तैः, अनुयातः, अनुगतः, तम्। अनेकेति— अनेकेषु, नदनदीनांसहस्रेषु, प्रक्षालितं, स्नातं शरीरं यस्य (पक्षे) अनेकैः, नदनदीसहस्रैः, प्रक्षालितं, शरीरं यत्र तथोक्तः, तम्। बहिति—बहुषु, पुण्येषु, तीर्थेषु, (हरिद्वारादिपवित्रक्षेत्रेषु-इत्यर्थः) स्थानेन, स्थित्या, शुचिः, पवित्रः तम्, उभयं, तुल्यम्। धाम, आश्रयम्, तीर्थं, क्षेत्रम्। तथ्यस्य, सत्यस्य। कोशं भाण्डागारम्, कुशलस्य, मंगलस्य पत्तनं, नगरम्, पूततायाः, पवित्रतायाः। शाला, गृहम्, शीलस्य, सुचरितस्य, क्षेत्रं, भूमिम्, क्षमायाः, शान्तेः, शालेयं, शाला एव शालेयं, गृहं, स्थानं, स्थितेः, वासस्य, धृतेः, धैर्यस्य, आधारं, आश्रयः, करुणायाः, दयायाः,

प्रसादस्य, आगारं गौरवस्य,समाजं सौजनस्य,संभवं सद्भावस्य, कालं कलेः, भगवन्तं साक्षादिव विरूपाक्षं भैरवाचार्यं ददर्श।

भैरवाचार्यस्तु दूरादेव राजानं दृष्ट्वा शशिनमिव जलनिधिश्चचाल। प्रथमतरोत्थितशिष्यलोकश्चोत्थाय प्रत्युज्जगाम समर्पितश्रीफलोपायनश्च जह्नुकर्णसमुद्गीर्यमाणगङ्गाप्रवाहह्रादगम्भीरया गिरा स्वस्तिशब्दमकरोत्।

नरपतिरपि प्रीतिविस्तार्यमाणधवलिम्ना चक्षुषा प्रत्यर्पयन्निवबहुतराणि पुण्डरीकवनानि ललाटपट्टपर्यस्तेन चोदंशुना

आकारम्, मूर्तिः, कौतुकस्य, आश्चर्यस्य, निकेतनं, गृहम्, रामणीयकस्य, सुन्दरतायाः, आरामम्, उपवनम्। प्रसादस्य, प्रसन्नतायाः, प्रासादं, हर्म्यं, गौरवस्य, आगारम्, गृहम्, सौजन्यस्य, सुजनतायाः, समाजं, गोष्ठीम्, सद्भावस्य, सदाचारस्य, सम्भवम्, उत्पत्तिम्। कलेः, चतुर्थयुगस्य, कालं, अन्तसमयम्, विरूपाक्षं, त्रिलोचनं भैरवाचार्यं ददर्श।

शशिनमिव, चन्द्रमिव, जलनिधिः, समुद्रः। **प्रथमतरेति**—प्रथमतरः, पूर्वतरः, उत्थितः, उद्गतः, शिष्यलोकः, छात्रसमूहः यस्य तथाविधः। **समर्पितेति**—समर्पितानि, प्रदत्तानि, श्रीफलान्येव, विल्वफलान्येव, उपायनानि, उपहाराः यस्य तथोक्तः। **जह्न्विति**—जह्नुः, नाम ऋषिः, तस्य कर्णात् समुद्गीर्यमाणः, उद्वमनक्रियमाणः, यः, गङ्गाप्रवाहः, गङ्गास्रोतः, तस्य ह्रादः, अस्फुटनादः तद्वत् गम्भीरया गिरा वाण्या, स्वस्तिशब्दं अकरोत्। नरपतिः, राजा। **प्रीतीति**—प्रीत्या, विस्तार्यमाणः, प्रसार्यमाणः, धवलिमा, यस्य तथा भूतेन, चक्षुषा, लोचनेन, प्रत्यर्पयन्निव प्रतिददद्दिव, पुण्डरीकवनानि, श्वेतकमलकाननानि। **ललाटेति**—ललाटपट्टे, मस्तकदेशे, पर्यस्तः,

शिखामणिना महेश्वरप्रसादमिव तृतीयनयनोद्गमेन प्रकाशयन्नावर्जितकर्णपल्लवपलायमानमधुकरः शिवसेवासमुन्मूलिताशेषपापलवमुच्यमान इव दूरावनतः प्रणाममभिनवं चकार। आचार्योऽपि—'आगच्छ अत्रोपविश' इति शार्दूलचर्मात्मीयमदर्शयत्। उपदर्शितप्रश्रयस्तु राजा मत्तहंसकलगद्गदस्वरसुभगां मधुरसमयीं महानदीमिव प्रवर्तयन्वाचं व्याजहार—'भगवन्, नार्हसि मामन्यनृपस्खलितैः खलीकर्तुम्। अशेषराजकोपेक्षितायाः हतलक्ष्म्याः खल्वयं शीलापराधो द्रविणदौरात्म्यं वा यदेवमाचरति मयि गुरुः। अभूमिरयमुपचाराणाम्। अलमति

पतितः, तेन। उदंशुना, उन्नतकिरणेन, शिखामणिना, मौलिरत्नेन, महेश्वरप्रसादमिव, शंकरानुग्रहमिव, तृतीयनयनस्य, उद्गमनेन, उद्घटनेन, प्रकाशयन्। आवर्जितेति—आवर्जितेन, आन्दोलितेन, कर्णपल्लवेन, श्रोत्रपत्रेण, पालयमानाः, मधुकराः, भृङ्गाः, यस्मात् सः। शिवेति—शिवस्य, सेवया,समुन्मूलितानां, समुत्पाटितानां, अशेषाणां समस्तानां, पापानां, लवैः, कणैः, मुच्यमान इव, हीयमान इव, दूरावनतः, अभिनवं, नूतनं। शार्दूलचर्म, सिंहचर्म। उपेति—उपदर्शितप्रश्रयः, प्रकटितविनयः। मत्तेति—मत्तस्य, हंसस्य, कलः, मधुरास्फुटः, गद्गदस्वरः, तेन सुभगां, मनोज्ञां, मधुरसमयीम्, इक्षुरसात्मिकाम्, (अतिमधुरामित्यर्थः) महानदीमिव, वाचं, वाणीं, व्याजहार, उवाच। नृपेति—अन्येषां, अपरेषां, नृपाणां, राज्ञां, स्खलितानि, दोषाः, तैः, खलीकर्तुम्, सदोषं सम्भावयितुम्। अशेषेति—अशेषाणां, समग्राणां राज्ञां कोपेन ईक्षितायाः, हतलक्ष्म्याः, त्यक्तसम्पदः, शीलापराधः, चरित्रदोषः, द्रविणदौरात्म्यं, धनदुर्वृत्तता, गुरुः, भवान् मयि विषये, एवं, इत्थम् आचरति, अभूमिः, अस्थानम् (अपात्र

यन्त्रणया। दूरस्थितोऽपि मनोरथशिष्योऽयं जनो भवताम्। माननीयं च गुरुवच्चोल्लङ्घनमर्हति गुरोरासनम्। आसतां च भवन्त एवात्र' इति व्याहृत्य परिजनोपनीते वाससि निषसाद। भैरवाचार्योऽपि प्रीत्यानतिक्रमणीयं नृपवचनमनुवर्तमानः पूर्ववत्तदेव व्याघ्राजिनमभजत।

आसीने च सराजके परिजने शिष्यजने च समुचितमर्घ्यादिकं चक्रे। क्रमेण च नृपमाधुर्यहृतान्तःकरणः शशिकरनिकरविमला दशनदीधितीः स्फुरन्तीः शिवभक्तीरिव साक्षाद्दर्शयन्नुवाच—'तात, अतिनम्रतैव ते कथयति गुणानां गौरवम्। सकलसंपत्पात्रमसि। विभवानुरूपास्तु प्रतिपत्तयः। जन्मनः प्रभृत्यदत्तदृष्टिरस्मि स्वापतेयेषु। यतः सकलदोषकलापानलेन्धनैः

मित्यर्थः) उपचाराणां, सेवानाम्, अतियन्त्रणया, अतिक्लेशेन, मनोरथशिष्यः (मनोरथेन शिष्यतां गत इत्यर्थः) माननीयम्, सम्मानार्हम्। उल्लङ्घनं, पादेनाक्रमणं, मर्यादातिक्रमणम् वा आसनां, निषुन्तु। अनुवर्तमानः, अनुमोदमानः, व्याघ्राजिनम्, व्याघ्रस्य, सिंहस्य, अजिनं, चर्म यस्य तथोक्तः, तम् महादेवम्।

समुचितम्, युक्तम्, अर्घ्यादिकम्, पूजाविधानम्, चक्रे, कृतवान्। नृपेति—नृपस्य माधुर्येण, रमणीयतायाः, गुणान्, हृतम्, आकृष्टम्, अन्तकरणं मनः, यस्य तथा भूतः। शशीति—शशिनः, चन्द्रस्य, कराणां, मयूखानां, निकरवत्, समूहवत्, विमला, विशदा दशनदीधितिः, दन्तमयूखान्। स्फुरन्तीः, गुणानां, विद्याविनयादीनां रज्जूनां च। गौरवम्, उत्कर्षम्, भारवत्वञ्च। सकलेति—सकलानां, सम्पदां, ऐश्वर्याणां, पात्रं, भाजनम्, असि, भवसि, प्रतिपत्तयः, ज्ञानानि, विभवानां, सम्पदां, अनुरूपास्तु, सादृश्य एव यथात्वं

धनैरविक्रीतं कश्चिच्छरीरकमस्ति। भैक्षरक्षिताः सन्ति प्राणाः। दुर्गृहीतानि कतिचिच्छिद्यन्ते विद्याक्षराणि। भगवच्छिवभट्टारक-पादसेवया समुपार्जिता कियत्यपि संनिहिता पुण्यकणिका। स्वीक्रियतां यदत्रोपयोगार्हम्। प्रतनुगुणग्राह्याणि कुसुमानीव हि भवन्ति सतां मनांसि। अपि च। विद्वत्संमताः श्रूयमाणा अपि साधवः शब्दा इव सुधीरेऽपि हि मनसि यशांसि कुर्वन्ति। विवरं विशतः कुतूहलस्य फेनधवलैः स्रोतोभिरिवापह्रियमाणो गुणगणैरानीतोऽस्मि कल्याणिना' इति।

राजा तु तं प्रत्यवादीत्—'भगवन्, अनुरक्तेष्वपि शरीरा-दिषु साधूनां स्वामिन एव प्रणयिनः। युष्मद्दर्शनादुपार्जितमेव

सर्वसम्पूर्णः। स्वापतेयेषु, धनेषु, अदत्तदृष्टिरस्मि। सकलेति—सकलाः, समग्राः, दीपकलापाः, दीपनिवहाः, एव, अनलाः, अग्नयः, इन्धनानि, काष्ठानि, ते, शरीरकं, तुच्छदेहं कश्चित्, अविक्रितम्, विक्रितं नास्ति। भैक्षेति-भिक्षयालब्धम्, भैक्षं तेन रक्षिताः, पालिताः। दुर्गृहीतानि, दुःखेनगृहीतानि। भगवदिति—भगवतः,शिवभट्टारकस्य, शिवस्वामिनः, पादसेवया, चरणशुश्रूषया पुण्य कणिका, पुण्यबिन्दुः प्रतन्विति—प्रतनुना, स्वल्पेन, गुणेन, उपकारादिना तन्तुना च ग्राह्याणि, गृहीतुं शक्यानि। विद्वदिति—विद्वद्भिः, सम्मताः, अभि-मताः, स्वीकृताश्च साधवः, सन्तः, विशुद्धाश्च, शब्दा इव यशांसि कुर्वन्ति (प्रतिपत्तिं विस्तारयन्तीत्यर्थः) विवरं गह्वरम्। विशतः, गच्छतः। फेनधवलैः फेनवत् श्वेतैः,स्रोतोभिरिव,प्रवाहैरिव,अपह्रियमाणः आकृष्यमाणः। कल्याणिना,कल्याणभाजनेन,(भवताइति शेषः)।

अनुरक्तेषु, अनुरागभाजनेषु, स्वामिनः,प्रभवः,प्रणयिनः,प्रणयन्तः उपार्जितम्, एकत्रीकृतम्, अपरिमितम्, प्रमाणरहितम्, कुशलजातम्,

चापरिमितं कुशलजातम्। अनेनैवागमनेन स्पृहणीयं पदमारोपितोऽस्मि गुरुणा।' इति विविधाभिश्च कथाभिश्चिरं स्थित्वा गृहमगात्।

अन्यस्मिन्दिवसे भैरवाचार्योऽपि राजानं द्रष्टुं ययौ। तस्मै च राजा सान्तःपुरं सपरिजनं सकोषमात्मानं निवेदितवान्। स च विहस्योवाच—'तात, क्व विभवः, क्व च वयं वनवर्धिताः। धनोष्मणा म्लायत्यलं लतेव मनस्विता। खद्योतानामिवास्माकमियमपरोपतापिनी राजन्‌ तेजस्विता। भवादृशा एव भाजनं भूतेः, इति स्थित्वा च कंचित्कालं जगाम।

परिव्राट् तेनैव क्रमेण पञ्च पञ्च राजतानि पुण्डरीकाण्युपायनीचकार। एकदा तु श्वेतकर्पटावृतं किमप्यादाय प्राविशत्। उपविश्य च पूर्ववत्स्थित्वा मुहूर्तमब्रवीत्—'महाभाग! भवन्तमाह भगवान्यथास्मच्छिष्यः पातालस्वामिनामा ब्राह्मणः। तेन ब्रह्मराक्षसहस्तादपहृतो महासिरट्टहासनामा। सोऽयं भवद्भुजयोर्भ्यो

मंगलसमूहः, स्पृहणीयम्, अभिलषणीयम्, पदं, स्थानं, सान्तःपुर, स्त्रीजनानावासेन सहितं, सपरिजनं, परिवारसहितम्, सकोषम्, सधनभण्डारम्, निवेदितवान्, समर्पयामास। विभवः, धनानि। वनवर्धिताः, वने, अरण्ये, वर्धिताः, वृद्धिंगताः, धनोष्मणा, द्रव्यदर्पेण, म्लायति, म्लानिं प्राप्नोति, अलमत्यर्थम्, मनस्विना, प्रशस्तमनस्कता। खद्योतानामिव, कीटमणिविशेषाणामिव, (जुगनू) अपरोपतापिनी, न परान्‌ उपतापयतीति तथोक्ता। भूतेः, सम्पदः। परिव्राड्, भिक्षुः। उपायनीचकार, उपहारीकृतवान्। श्वेतकर्पटावृत्तम्, धवलवसनाच्छादितम्। अपहृतेति—अपहृता, दूरीकृता, महाऽसि, खड्गः, (तलवार) येन सः अट्टहासनामा। अपहृतम्, दूरीकृतम्, कर्पटच्छादनं, वस्त्राव-

गृह्यताम्' इत्यभिधायापहृतकर्पटावच्छादनात्परिवाराद्राचकर्ष शरद्गगनमिव पिण्डतां नीतम्, कालिन्दीप्रवाहमिव स्तम्भितजलम्, नन्दकजिगीषया कृष्णकोपितं कालियमिव कृपाणतां गतम्, लोकविनाशाय प्रकाशितधारासारम्, प्रलयकालमेघखण्डमिव नभस्तलात्पतितम्, दृश्यमानविकटदन्तमण्डलं हासमिव हिंसायाः, हरिबाहुदण्डमिव कृतदृढमुष्टिग्रहम्, सकलभुवनजीवितापहरणक्षमेण कालकूटेनेव निर्मितम्, कृतान्तकोपानलतप्तेनेवायसा घटितम्, अतितीक्ष्णतया पवनस्पर्शेनापि रुषेव

रणां येन, तथोक्तात्, शरद्गगनमिव, शरत्कालिकाकाशमिव, पिण्डतां नीतम्, घनत्वं प्रापितम्। कालिन्दीप्रवाहमिव, यमुनास्रोतमिव, स्तम्भितजलम्, स्थिरीकृततोयम्। नन्दकेति—नन्दकस्य, विष्णोः, खड्गस्य, जिगीषया, जेतुमिच्छया, कृष्णकोपितम्, कृष्णेन कोपितम् (दमनादितिभावः) कालीयम्, तदाख्यं यमुनावासिनं, नागविशेषम्। लोकविनाशनाय, जगन्नाशाय, प्रकाशितः, प्रकटितः, धारासारः, धारासम्पातः, धारायां, निशिताग्रस्य, सारः, तत्त्वं यस्य तथोक्तश्च प्रलयकालमेघखण्डमिव, लयकालिकजलदांशमिव। दृश्यमानेति—दृश्यमानानि, विकटानि, करालानि, दन्तमण्डलानि, दशनराजयः, यस्मिन्, तथा भूतम्। हिंसाया हासमिव। कृतेति कृतः, रचितः दृढः, कठिनः, मुष्टिग्रहः, मुष्टिबन्धः, यस्मिन्, तम् (पक्षे) कृतः, दृढं यथा तथा पुष्टः मुष्टिकनामासुरस्य ग्रहः ग्रहणं येन तथा भूतम्। कृतान्तेति—कृतान्तस्य, यमस्य कोपानलः, क्रोधाग्निः, तेन तप्तं गलितं तेन, अयसालोहेन। अतितीक्ष्णतया, अतिनिशितत्वेन, तैक्ष्ण्यं च तनुत्वाज्जायते तनु, अन्योऽन्यसङ्घर्षेण कणति इति हृदयं, रुषेव, कोपेनेव, कणन्तं, रणन्तम्। मणीति—मणिसभाकुट्टिमेषु, मणिमय-

क्षणन्तम्, मणिसभाकुट्टिमपतत्प्रतिबिम्बच्छद्मनात्मानमपि द्विधेव पाटयन्तम्, अरिशिरश्छेदलग्नैः कचैरिव किरणैः करालितधारम्, मुमुर्मुहुस्तडिदुन्मेषतरलैः प्रभाचक्रच्छुरितैर्जर्जरितातपम्, खण्डशश्छिन्दन्तमिव दिवसम्, कटाक्षमिव कालरात्रेः, कर्णोत्पलमिव कालस्य, ओंकारमिव कौर्यस्य, अलंकारमहंकारस्य, कुलमित्रं कोपस्य, देहं दर्पस्य, सुसहायं साहसस्य, अपत्यं मृत्योः, आगमनमार्गं लक्ष्म्याः, निर्गमनमार्गं कीर्तेः, कृपाणम्।

अवनिपतिस्तु तं गृहीत्वा करेणायुधप्रीत्या प्रतिमानिभेनालिङ्गन्निव सुचिरं ददर्श। संदिदेश च—'वक्तव्यो भगवान्परद्रव्यग्रहणावज्ञादुर्विदग्धमपि हि मे मनो युष्मद्विषये न शक्नोति

समानलघु, पतत्, यत् प्रतिबिम्बम्, तस्य छद्म, छलं तेन। पाटयन्तं, खण्डयन्तम्, (अतितीक्ष्णत्वादिति भावः) अरीति—अरीणां, शत्रूणां, शिरांसि, तेषां छेदेन, लग्नाः तैः, कचैरिव, केशैरिव कृष्णवर्णस्य तस्य किरणैः, मयूखैः, करालितधारं, करालिताः, व्याप्ताः धाराः, यस्य तथोक्तम्। तडिदिति—तडितां, विद्युतां, उन्मेषाः, विकासाः तद्वत् तरलानि, चंचलानि तैः, प्रभाचक्राणाम्, किरणमण्डलानाम्, छुरितैः, खचितैः, जर्जरितः, खण्डखण्डीकृतः, आतपः, सूर्यकान्तिः, येन तथोक्तम्, छिन्दन्तमिव, पाटयन्तमिव। ओंकारं, प्रणवं, कार्यस्य, निष्ठुरतायाः, कुलमित्रम्, कुलेन, वंशपरम्परया, मित्रम्, सुहृदम्। मृत्योः, अपत्यम्, सन्तानम्, लक्ष्म्याः, सम्पदः, राजशोभायाः वा आगमनमार्गम्, कृपाणम्, असिम्।

आयुधप्रीत्या, आयुधे, अस्त्रे, या प्रीतिः प्रेम तया प्रतिमानिभेन प्रतिबिम्बछलेन (स्वस्येति शेषः) सुचिरं, बहुकालम्।

संदिदेश, वाचिकं, कथयामास। परेति—परेषां, शत्रूणां,

वचनव्यतिक्रमव्यभिचारमाचरितुम्' इति। परिव्राट् तु गृहीते तस्मिन्परितुष्टः 'स्वस्ति भवते। साधयामः' इत्युक्त्वा निरयासीत्। नृपश्च प्रकृत्या वीररसानुरागी तेन कृपाणेनामन्यत करतलवर्तिनीं मेदिनीम्।

अथ व्रजत्सु दिवसेष्वेकदा भैरवाचार्यो राजानमुपह्वरे सोपग्रहमवादीत् 'तात, स्वार्थालसाः परोपकारदक्षाश्च प्रकृतयो भवन्ति भव्यानाम्। भवादृशां चार्थिदर्शनं महोत्सवः प्रणयनमाराधनमर्थग्रहणमुपकारः। भूमिरसि सर्वलोकमनोरथानाम्। येनाभिधीयसे। श्रूयताम्। भगवतो महाकालहृदयनाम्नो महामन्त्रस्य कृष्णस्रगम्बरानुलेपनाकल्पेन कल्पकथितेन महाश्म-

द्रव्याणि तेषां ग्रहणेन या अवज्ञा, घृणा, तया दुर्विलसितम्, दुर्विनीतम्। वचनेति—वचनस्य, आज्ञावाक्यस्य, व्यतिक्रमः, उल्लङ्घनमिव, व्यभिचारः, दोषः, तम्। परितुष्टः, प्रसन्नः, साधयामः, गच्छामः, निरयासीत्, ययौ। प्रकृत्या, स्वभावेन, वीररसस्य, अनुरागी, प्रेमी। करतलवर्तिनीं, वशीभूतां, मेदिनीम्, पृथ्वीम्।

उपह्वरे, रहसि ("रहोऽन्तिकमुपह्वरे" इत्यमरः) सोपग्रहम्, साभ्यर्थनम्। स्वार्थालसाः, स्वकार्यपराङ्मुखाः, परोपकारदक्षाः, अन्यस्य कार्यकरणे चतुराः, भव्यानां, सज्जनानां प्रकृतयः, स्वभावाः, भवन्ति। अर्थिदर्शनम्, भिक्षुकदर्शनम्, महोत्सवः, आनन्दजननम्, प्रयाचनं, याञ्चा आराधनं, पूजनम्। सर्वेति—सर्वेषां, समग्राणां लोकानां मनोरथाः, मनसोऽभिलषितानि, तेषां, भूमिः, पात्रमसि। महाकालेति—महाकालस्य, हरस्य, हृदयं, हृदयनिहितं, वस्त्विति, महाकालहृदयं तन्नाम यस्य तथोक्तस्य। कृष्णेति—कृष्णानि, कृष्णवर्णानि, स्रजः, माल्यानि, अम्बराणि, वस्त्राणि, अनुलेपाः, विलेपनद्रव्याणि यस्मिन्

शाने जपकोट्या कृतपूर्वसेवोऽस्मि। तस्य वेतालसाधनावसाना सिद्धिः। असहायैश्च सा दुरवापा। त्वं चालमस्मै कर्मणे। त्वयि च गृहीतभरे भविष्यन्त्यपरे सहायास्त्रयः। एकः स एवास्माकं टीटिभनामा बालमित्रं मस्करी यो भवन्तमुपतिष्ठते। द्वितीयः स पातालस्वामी। अपरो मांचैल्लुष्य एव कर्णतालनामा द्राविडः। यदि साधु मन्यसे ततो नीयतामयं दिङ्नागहस्तदीर्घो गृहीताट्टहासो निशामेकामेकदिङ्मुखार्गलतां बाहुः।' इति कृतवचसि च तस्मिन्नन्धकारं प्रविष्ट इव दृष्टप्रकाशः प्राप्तोपकारावकाशः प्रमुदितेनान्तरात्मना नरेन्द्रः समभाषत—'भगवन्, परमनुगृहीतोऽस्म्यनेन शिष्यजनसामान्येन निर्देशेन कृतपरिग्रहमिवात्मानमवैमि' इति। ननन्द च तेन नरेन्द्रव्याहृतेन

तथा भूतेन, आकल्पेन, परिच्छदेन (वेशेनेत्यर्थः) (आकल्पवेशौ नैपथ्यं, इत्यमरः) कल्पकथितेन, कल्पः, शास्त्रम्, तत्कथितेन। कृतेति—कृतापूर्वं सेवायेन तथा भूतः। वेतालेति—वेतालस्य, शिवानुचरस्य-साधनं, वशीकरणम्, अवसानं, अन्तं यस्याः, तथा विधा सिद्धिः। असहायैः, सहायशून्यैः, दुरापा, दुर्लभा। गृहीतभरे, भारं गृह्णाति सति। बालमित्रं, शैशवसुहृत्, मस्करी, परिव्राट्। द्रविडः, द्रविडदेशीयः। दिङ्नागेति—दिङ्नागः, ऐरावतः, तद्वत् दीर्घः, आयतः। एकेति—एका दिक्, तस्याः, मुखस्य, अर्गलतां, अवरोधकदण्डताम्। दृष्टेति—दृष्टः, अवलोकितः, दीपस्य, प्रकाशः, आलोकः, येन सः। प्राप्तेति—प्राप्तः, लब्धः, उपकाराय, अवकाशः, समयः, येन सः। मुदितेन, प्रसन्नेन, अन्तरात्मना, मनसा। शिष्येति—शिष्यजनाः, विद्यार्थिसङ्घाः तैः सह सामान्यं, समानस्य भावं सामान्यं तुल्यम्। निर्देशेन आज्ञया। कृतेति—कृतः, परिग्रहः ग्रहणम् यस्य

भैरवाचार्यः। चकार च संकेतम्—'अस्यामेवागामिन्यामसितपक्षचतुर्दशीक्षपायामियत्यां वेलायाममुष्मिन्महाश्मशानसमीपभाजि शून्यायतने शस्त्रद्वितीयेनायुष्मता द्रष्टव्या वयम्' इति।

अथातिक्रान्तेष्वहःसु प्राप्तायां च तस्यामेव कृष्णचतुर्दश्यां शैवेन विधिना दीक्षितः क्षितिपो नियमवानभूत्। कृताधिवासं च संपादितगन्धधूपमाल्यादिपूजं खड्गमट्टहासमकरोत्। ततः परिणते दिवसे केनापि कर्मसाधनाय कृतरुधिरबलिविधानास्विव लोहितायमानासु दिक्षु, रुधिरबलिलम्पटासु च वेतालजिह्वास्विव लम्बमानासु च रविदीधितिषु, नरेन्द्रानुरागेण गृही-

---

तथोक्तम्। नरेंद्रव्याहृतेन, राजवचनेन। संकेतं, इङ्गितम्। असितेति—असितः, कृष्णः, यः, पक्षः तस्य चतुर्दशी, क्षपायां, रात्रौ, इयत्यां, एतावत्परिमिते, वेलायां, समये, महाश्मशानस्य, समीपं, भजते इति तथोक्ते, (श्मशाननिकटवर्तिनि—इत्यर्थः) शून्यायतने, विजनमन्दिरे।

अतिक्रान्तेषु, अवतीतेषु, अहःसु, दिवसेषु, शैवेन विधिना, शिवपूजनप्रकारेण। दीक्षितः, संयतः, क्षितिपः, राजा, नियमवान्, व्रतनिष्ठः, कृतः, अधिवासः, व्रतदिनात् पूर्वदिने गन्धादिना संस्कारः, यस्य तथोक्तम्। सम्पादितेति—सम्पादिता, कारिता गन्धपुष्पमाल्यादिभिः, पूजा यस्य तथोक्तम्। परिणते अवसानं गते, दिवसे, दिने। कृतेति—कृतम्, अनुष्ठितम्, रुधिरेण, रक्तेन, वलिविधानं, पूजाप्रकारः, यासां तथोक्तासु, लोहितायमानासु, सन्ध्यारागरञ्जितासु, रुधिरवलिषु, रक्तोपहारेषु, लम्पटाः, लुब्धाः, तासु वेतालजिह्वासु इव भूतरसनासु इव, रविदीधितिषु, सूर्यकिरणेषु, नरेन्द्रानुरागेण, राजानुरक्त्या। गृहीतेति—गृहीता, अपरा, पश्चिमा दिक्, येन तथोक्ते,

तापरादिशि स्वयमिव दिक्पालतां चिकीर्षति सवितरि, यातुधानीष्विव वर्धमानासु तरुच्छायासु, पातालवासिषु विघ्नाय दानवेष्विवोत्तिष्ठत्सु तमोमण्डलेषु, नभसि पुञ्जीभवति, रौद्रं कर्म दिदृक्षमाणे इव नक्षत्रगणे, विगाढायां शर्वर्याम्, सुप्तजननिःशब्दे स्तिमिते निशीथे, राजा सान्तःपुरं परिजनं वञ्चयित्वा वामकरस्फुरत्त्सरुर्दक्षिणकरेणोत्खातं खड्गमाट्टहासमादाय विसर्पता च खड्गप्रभापटलेन नीलांशुकपटेनेव दर्शनभयादवगुण्ठितनिखिलगात्रयष्टिरनादिष्टयाप्यनुगम्यमानो राजलक्ष्म्याः पृष्ठतः

सवितरि, सूर्ये, यातुधानीषु, निशाचरीषु इव ("राक्षसः कौणपः क्रव्यात् यातुधानः, पुण्यजनः" इत्यमरः) वर्द्धमानासु, वृद्धिं गच्छन्तीषु। पातालतलवासिषु, रसातलाभ्यन्तरस्थितेषु, विघ्नाय, कार्यव्याघाताय, तमोमण्डलेषु, अन्धकारसमूहेषु । नभसि, आकाशे, पुञ्जीभवति, एकत्रीभवति, रौद्रं, दारुणं, दिदृक्षमाणे इव, द्रष्टुमिच्छतीव । विगाढायां, घनीभूतायां, शर्वर्यां, रजन्याम् । सुप्तेति सुप्ताः, निद्रिताः, जनाः, यस्मिन् तथोक्तः । अतएव निःशब्दः तस्मिन् स्तिमिते, निशीथे, अर्द्धरात्रौ ("अर्द्धरात्रनिशीथौ द्वौ" इत्यमरः) वामेति - वामे, सव्ये करे हस्ते स्फुरन्, दीप्यमानः, त्सरुः, खड्गमुष्टिः, यस्य तथा भूतः । उत्खातम्, निष्कोषितम् । विसर्पता, प्रसरता, खड्गप्रभापटलेन, असिकान्तिसमूहेन, नीलांशुकपटेन इव, नीलांशुकं, नीलवस्त्रं, एव, पटः, तिरस्करिणी, तेन इव । अवगुण्ठितेति अवगुण्ठिता, आच्छादिता, निखिला, सकला, गात्रयष्टिः, शरीरं, येन यस्य वा तथा भूतः । अनादिष्टयाऽपि, अनुक्तयाऽपि । राजलक्ष्म्या, राजश्रिया, अनुगम्यमानः, अनुस्रियमाणः, (सूचितः-लक्ष्मीलाभः) परिमलेति—परिमलेन, सुगन्धिना, लग्नानां, सक्तानां, मधुकराणां, द्विरेफानां, वेणिः,

परिमललग्नमधुकरश्रेणिव्याजेन केशेष्विव कर्मसिद्धिमाकर्षन्नेकाकी नगरान्निरगात्। अगाच्च तमुद्देशम्।

अथ प्रत्युज्जग्मुस्ते त्रयोऽपि द्रौणिकृपकृतवर्माण इव सौप्तिके संनद्धाः स्नाताः स्रग्विणो गृहीतविकटवेशाः, कुसुमशेखरसंचारिभिः क्रियमाणमन्त्रशिखाबन्धा इव गुञ्जद्भिः षट्चरणैरुष्णीषपट्टकांल्ललाटमध्यघटितविकटस्वस्तिकाग्रन्थीन्महामुद्राबन्धानिव धारयन्त मूर्धभिः, एकश्रवणविवरवितत विमलदन्तपत्रप्रभालेपधवलितकपोलैर्मुखैरापिबन्त इव निशा-

राजि, तस्याः, सेव वा व्याजः, छलं, तेन। कर्मसिद्धिं, कार्यसिद्धिम्। एकाकी, असहायः। देशं, स्थानं। अथेति— प्रत्युज्जग्मुः, गतवन्तः, त्रयः (टिटिभकर्णतालपातालस्त्रासितः) द्रौणीति द्रौणिः, अश्वत्थामा, कृपः, कृपाचार्यः, कृतवर्मा, यादवः, ते इव। सौप्तिकेति— सुप्तेषुभवं, सौप्तिकं तस्मिन्, (महाभारतीयसौप्तिके पर्वणि भग्नोरौ दुर्योधने समरपतिते अश्वत्थामादयस्त्रयः, प्रभोः प्रीत्यै यौधिष्ठिरं शिबिरं धृष्टद्युम्नाधिष्ठितं सुप्तेषु सर्वेषु अवशिष्टेषु सैनिकेषु कथमपि प्रविश्यहताः सर्वसैनिकाः,) संनद्धाः, सज्जाः, स्नाताः, कृतस्नानाः, स्रग्विणः, मालाधारिणः। कुसुमेति— कुसुमशेखरेषु, शिरोभूषणभूतपुष्पमालासु, सञ्चरन्तीति तैः। षट् चरणैः, भ्रमरैः, क्रियमाणाः, मन्त्रेण शिखाबन्धाः, चूडाः, येषां ते इव। उष्णीषेति— उष्णीषपट्टकान्, शीर्षावरणकर्पटान्। ललाटस्य, मस्तकस्य, मध्ये घटितः, रचितः, विकटः, दृढः, स्वस्तिकाग्रन्थिः, बन्धविशेषः, येषु तान्। महामुद्राबन्धानिव, महान्तः, मुद्राबन्धाः, वीराचारानुष्ठेयबन्धनाः, तान् इव। मूर्द्धाभिः, शिरोभिः। एकेति— एकस्मिन्, श्रवणविवरे, श्रोत्ररन्ध्रे, वितता, विस्तृता, विमलस्य, स्वच्छस्य, दन्तपत्रस्य, गज-

चरापचयचिकीर्षया शार्वरमन्धकारम्, इतरकर्णावलम्बिनां रत्नकुण्डलानामच्छाच्छया रुचा गोरोचनयेवमन्त्रपरिजप्तया समालब्धाः, स्वप्रतिबिम्बगर्भान्कर्मसिद्धये दत्तपुरुषोपहारानिवोल्लासयन्तो निशितान्निस्त्रिंशान्, निशित निस्त्रिंशांशुसंतानसीमन्तिततिमिरामात्मीयदिग्भागसंरक्षणाय त्रिधेव त्रियामां पाटयन्तः, सार्धचन्द्रैः कलधौतबुद्बुदावलितरलतारागणै-

दन्तनिर्मितपत्राकारस्य, (कर्णभूषणस्य) या प्रभा, कान्तिः, तस्याः, लेपः, लेपनं, तैः, यद्वा, सा एव लेपः, लेपनसुधा, ताभिः, धवलिताः, शुभ्रीकृताः, कपोलाः, गण्डदेशाः, येषां तैः, आपिबन्त इव, पानंकुर्वन्त इव। **निशाचरेति**— निशाचराणां, पिशाचानां, अपचयचिकीर्षा, अपकारेच्छा, तया। **शार्वरं**, शर्वरी, रात्रिः, तत्र भवः शार्वरः तम्, निशाचराः, निशासु, अन्धकारे एव प्रभवन्ति, (नगतेतमसि तेषां प्रभावाभावेन तदपकारस्य सौकर्यादित्यर्थः) **इतरकर्णावलम्बिनां**, अपरकर्णालम्बमानानां, अच्छाच्छया, अतिनिर्मलया, रुचा, प्रभया, **गोरोचनयेव**, गोरोचना, मांगलिकद्रव्यम्, तया (पीतप्रभयेति यावत्) **मन्त्रपरिजप्तया**, मन्त्रेणपरिजप्ता, विशोधिता, तया। **समालब्धाः**, लिप्ताः। **स्वप्रतिबिम्बगर्भान**, स्वस्यप्रतिबिम्बं, छाया, गर्भे, मध्ये येषां तान्। **दत्तेति**—दत्तः, अनुष्ठितः, पुरुषोपहारः, नरबलिः, येभ्यः, तानिव। **उल्लासयन्तः**, सञ्चालयन्तः, **निशितान्**, तीक्ष्णान्, **निस्त्रिंशान्**, खड्गान्। **निशितेति**—निशितनिस्त्रिंशानां, शाणितखड्गानाम्, **अंशुसन्तानैः**, प्रभापटलैः, **सीमन्तितानि**, विभक्तानि, **तिमिराणि**, अन्धकाराणि, यस्याः, ताम्। **आत्मीयेति**—आत्मीयः, स्वीयः, दिशांभागः, (रक्षणीयादिगितिभावः) तस्य संरक्षणं, तस्मै। **त्रियामां**, रात्रिं, **पाटयन्तः**, खण्डयन्तः। **सार्धचन्द्रैः**, अर्धचन्द्रालंकृतैः,

निशाया इव परुषासिधारानिकृत्तैः खण्डैर्गृहीतैश्चर्मफलकैरकाण्डशर्वरीमपरां घटयन्तः, काञ्चनशृङ्खलाकलापनियमितनिबिडनिष्प्रवाणयः बद्धासिधेनवः, टीटिभकर्णतालपातालस्वामिनो निवेदितवन्तश्चात्मानम् ।

अवनिपतिस्तु—"कोऽत्र कः", इति त्रीनपृच्छत् । आचचक्षिरे च स्वं स्वं नाम त्रयोऽपि ते । तैरेव चानुगम्यमानो जगाम तां बलिदीपालोकजर्जरितगुग्गुलुधूपधूमगृह्यमाणदिग्भागतया विक्षिप्यमाणरक्षासर्षपार्धदग्धान्धकारपलायमाननिशामिव समु-

रात्रौ खड्गेषु च अर्धचन्द्रस्य संभाव्यमानत्वादुक्तमेवं, नतु वास्तवत्वेन) कृष्णचतुर्दशी रात्रौ चन्द्रः सम्भवतीति । कलधौतेति कलधौतं, रौप्यं, तस्य बुद्बुदावलिः, बुद्बुदाः, जलस्फोटाः, तदाकारबिन्दवः, तेषामावलिः, संघः, तद्वत् तरलाः, तारागणाः, येषु, तैः । परुषेति परुषाभिः, निशिताभिः, असिधाराभिः, निकृत्ताः, छिन्नाः, तैः । चर्मफलकैः (ढाल) अकाण्डशर्वरीं, अकालरजनीं, अपरां, द्वितीयां, घटयन्तः, जनयन्तः । काञ्चनेति काञ्चनशृङ्खलाकलापेन, स्वर्णमेखलाहारेण, नियमितं निबद्धं, निबिडं, घनं, निष्प्रवाणि, नवंवस्त्रं, यैः, ते (अनाहतं निष्प्रवाणि तन्त्रकं च नवाम्बरं" इत्यमरः) बद्धेति बद्धाः, गृहीताः, असिधेनवः, छुरिकाः, यैः, तथा भूताः । निवेदितवन्तः, (भैरवाचार्याज्ञया भवन्तंप्रतीक्षामः-इति ऊचुः) बलिदीपेति बलिदीपस्य, पूजाप्रदीपस्य, आलोकेन, प्रभया, जर्जरितानां, नष्टप्रायाणां, (मन्दप्रभाणामित्यर्थः) गुग्गुलुधूपानां, (गुग्गुलुधूपदानार्थंरक्षितानामित्यर्थः) धूमैः, गृह्यमाणाः, ज्ञायमानाः, दिग्भागा यस्याः, तया । विक्षिप्यमाणेति —विक्षिप्यमाणैः, प्रसार्यमाणैः, (विघ्नदूरीकरणायेत्यर्थः) रक्षासर्षपैः, रक्षार्थं, विघ्नेभ्यः, पूजाद्यनुष्ठानरक्षणार्थं, सर्षपाः,

पकल्पितसर्वोपकरणां निःशब्दां च गम्भीरां च भीषणां च साधनभूमिम् ।

तस्यां च कुमुदधूलिधवलेन भस्मना लिखितस्य महतो मण्डलस्य मध्ये स्थितं दीप्ततरतेजःप्रसरम्, पृथुपरिवेशपरिक्षिप्तमिव शरत्सवितारम्, मथ्यमानक्षीरोदावर्तमध्यवर्तिनमिव मन्दरम्, रक्तचन्दनानुलेपिनो रक्तस्रगम्बराभरणस्योत्तानशयस्य शवस्योरस्युपविश्य जातजातवेदसि मुखकुहरे प्रारब्धाग्निकार्यम्, कृष्णो-

गौरसिद्धार्थाः, (मन्त्रपूता इति यावत्) तैः, अर्द्धदग्धं, अन्धकारं, यस्या तथोक्ता, अतएव पलायमाना निशा यस्याः यस्यां वा तथा भूताम् । समुपकल्पितेति समुपकल्पितानि, आयोजितानि, सर्वाणि, उपकरणानि, साधनद्रव्याणि यस्यां ताम् । साधनभूमिं, मन्त्रसाधनस्थानम् । तस्याञ्च इत्यतः "भैरवाचार्यमपश्यत् इत्यनेनान्वयः । कुमुदेति कुमुदानां, श्वेतोत्पलानां, धूलिः, परागः, तद्वत् धवलः तेन । लिखितस्य, रचितस्य, मण्डलस्य, मण्डलाकाररेखायाः । दीप्तेति दीप्ततरः, दीप्यमानः, तेजसां प्रसरः, विस्तारः, यस्य तादृशम् । पृथ्विति पृथुना, विशालेन, परिवेशेन, परिधिना, (मण्डलविशेषेणेतिभावः) परिक्षिप्तः, वेष्टितः, तं, शरत्सवितारं, सूर्यं इव (स्थितमितिशेषः) मथ्यमानेति मथ्यमानस्य, विलोड्यमानस्य, क्षीरोदस्य, क्षीरसागरस्य, आवर्ते, जलभ्रमे, वर्तते इति तादृशं, मंदरं, मंदराचलम् । रक्तेति रक्तचन्दनं एव अनुलेपः, लेपनं, तस्य । रक्तं, रक्तवर्णं, स्रगंबरं, माल्यवसनम्, आभरणं, यस्य, तथोक्तस्य । उत्तानशयस्य, उत्तानशायिनः, (ऊर्द्धमुखशयनशीलस्येत्यर्थः) शवस्य, मृतशरीरस्य । जातेति जातः, प्रादुर्भूतः, (मन्त्रबलेनेत्यर्थः) जातवेदाः, अग्निः, यस्मात् तथोक्ते । मुखकुहरे, वदनगह्वरे । प्रारब्धेति—

ष्णीषम्, कृष्णाङ्गरागम्, कृष्णप्रतिसरम्, कृष्णवाससम्, कृष्णतिलाहुतिनिभेन विद्याधरत्वतृष्णया मानुषनिर्माणकारण कालुष्यपरमाणूनिव क्षयमुपनयन्तम्, आहुतिदानपर्यस्ताभिः, प्रेतमुखस्पर्शदूषितम्, प्रक्षालयन्तमिवाशुशुक्षणिं करनखदीधितिभिः, धूमालोहितेन चक्षुषा क्षतजाहुतिमिव हुतभुजि पातयन्तम्, ईषद्विवृताधरपुटप्रकटितसितदशनशिखरेण दृश्यमान-

प्रारब्धं, अग्निकार्यं, होमः, येन, तथा भूतं। कृष्णेति कृष्णं, कृष्णवर्णं, उष्णीषं, शिरोवेष्टनवसनं यस्य, तथोक्तम्। कृष्णाङ्गरागं, कृष्णवर्णविलेपनम्। कृष्णप्रतिसरं, कृष्णवर्णहस्तसूत्रम्, कृष्णवाससं, कृष्णवसनपरिधायिनम्। कृष्णेति कृष्णतिलानां, आहुतिनिभेन, आहुतिच्छलेन, विद्याधरत्वतृष्णया, स्पृहया, (आत्मनोविद्याधरत्वलाभेच्छयेतिभावः) **मानुषेति** मानुषस्य, निर्माणं, सृजनं, तस्य कारणानि, उपादानसामग्र्यः, कालुष्यपरमाणवः, मालिन्यपरमाणवः, तानिव, (तिलानांकृष्णत्वात् परमाणुनामपिकालुष्योत्प्रेक्षा) क्षयं, नाशं, उपनयन्तं, प्रापयन्तम्। **आहुतीति**—आहुतिदाने, हवनीयद्रव्यनिक्षेपसमये, पर्यस्ताः, पतिताः, ताभिः, करनखदीधितिभिः, हस्तनखकिरणैः। **प्रेतेति** प्रेतस्य, मृतस्य, मुखस्पर्शेन, दूषितं, अपवित्रितं, आशुशुक्षणिम्, अग्निम् (अग्निर्वैश्वानरोवह्निः, शिखावानाशुशुक्षणिः, इत्यमरः) प्रक्षालयन्तं, शोधयन्तं इव। **धूमेति**—धूमेन, आलोहितं,रक्तं,तेन,चक्षुषा,नेत्रेण,हुतभुजि,अग्नौ,क्षतजाहुतिं, रक्ताहुतिं, इव,पातयन्तं,क्षिपन्तम्। **ईषदिति** ईषद्विवृतेन,जपानुरोधादल्पव्यात्तेन, अधरपुटेन, प्रकटितानि, प्रकाशितानि, सितानां, शुभ्राणां, दशनानां, दन्तानां, शिखराणि, अग्राणि, यस्य तथा भूतेन। **दृश्यमानेति**-- मूर्ता, मूर्तिमती, मन्त्राणां, प्रणवादीनां, अक्षर पंक्तिः, वर्णावलिः,

मूर्तमन्त्राक्षरपङ्क्तिनेव मुखेन किमपि जपन्तम्, होमश्रमस्वेद-सलिलप्रतिबिम्बिताभिरासन्नदीपिकाभिर्दहन्तमिव सिद्धये सर्वा-वयवान्, अंसावलम्बिना बहुगुणेन विद्याधरराज्येनेव ब्रह्मसूत्रेण परिगृहीतं महाभैरवं भैरवाचार्यमपश्यत्। उपसृत्य चाकरोन्नम-स्कारम्। अभिनन्दितश्चतेन स्वव्यापारमन्वतिष्ठत्।

अत्रान्तरे पातालस्वामी शातक्रतवीमाशामङ्गीचकार। कर्ण-तालः कौबेरीम्। परिव्राट् प्राचेतसीम्। राजा तु त्रैशङ्कवेन ज्योतिषाङ्कितां ककुभमलंकृतवान्।

एवं चावस्थितेषु प्रतिदिशं दिक्पालेषु, दिक्पालभुजपञ्जरप्रविष्टे विस्रब्धं कर्म साधयति भैरवं भैरवाचार्येऽतिचिरं कृतकोलाहलेषु

यत्र तथोक्तेन। होमेति—होमेन, यः, श्रमः, श्रान्तिः, तेन, स्वेदसलि-लानि, घर्मोदकानि, तेषु प्रतिबिम्बिताः, प्रतिफलिताः, ताभिः, आसन्न-दीपिकाभिः, पार्श्वप्रदीपैः, सिद्धये, विद्याधरत्वलाभाय, अंसावलम्बिना, स्कन्धलम्बिना, बहुगुणेन, बहुतन्तुना, उत्कर्षातिशयेन च। विद्याधर-राज्येन, इव, ब्रह्मसूत्रेण, यज्ञोपवीतेन। अभिनन्दितः, अनुमतः। स्वव्यापारं, (भैरवाचार्योक्तमितियावत) अन्वतिष्ठत्, अन्वपालयत्। शातक्रतवीं, ऐन्द्रीं, (पूर्व) आशां, दिशं, अंगीचकार, स्वीचकार। कौबेरीं, उदीचीं, प्राचेतसीं, प्रतीचीं। त्रैशङ्कवेन, त्रिशंकुर्नामराजा, तस्य इदं, त्रैशङ्कवं, तेन, ज्योतिषा, तेजसा, अङ्किता, चिह्निता, तां (दक्षिणां) ककुभं, दिशम्, (पुराणोक्ताख्यायिकेषावानीत्रिशंकोः) **एवमिति**—प्रतिदिशं, सर्वासु, दिक्षु, दिक्पालेषु, दिशारक्षकेषु, (पातालस्वामिप्रभृतिष्वीतिभावः)। **दिक्पालेति**—दिक्पालानां (एषां) भुजाः, बाहवः, एव, पञ्जरं, तस्मिन्, प्रविष्टः, तस्मिन्, (अकुतोभये इत्यर्थः) विस्रब्धं, निःशङ्कं, यथा तथा, साधयति, अनुतिष्ठति।

निष्फलप्रयत्नेषु प्रत्यूहकारिषु शान्तेषु कौणपेषु, गलत्यर्धरात्रसमये मण्डलस्य नातिदवीयस्युत्तरेणाकस्मात्प्रलयमहावराहदंष्ट्राविवरमिव दर्शयन्ती क्षितिरदीर्यत । सहसैव च तस्माद्विवरादाशावारणोत्क्षिप्त इवालानलोहस्तम्भः, महावराहपीवरस्कन्धपीठो नरकासुर इव भुवो गर्भादुद्भूतः, बलिदानव इव भित्त्वोत्थितः पातालम्, इन्द्रनीलप्रासाद इवोपरि ज्वलितरत्नप्रदीपः, स्निग्धनीलघननिबिडकुटिलकुन्तलकान्तमौलिरुन्मीलन्मालती-

अतिचिरं, समयं, प्रत्यूहकारिषु, विघ्नकारिषु, शान्तेषु, शान्तिगतेषु, कौणपेषु, राक्षसेषु, (राक्षसः कौणपः क्रव्यादित्यमरः) गलति, अतिक्रामति । मण्डलस्य (प्रागुक्तस्य) नातिदवीयसी, नातिदूरवर्तिनी, उत्तरेण, उत्तरस्यां, दिशि । प्रलयेति— प्रलये, प्रलयसमये, महावराहः, शूकरावतारः, जलमग्नायाः, पृथिव्याः, उद्धारकः (नारायणावतार इति यावत्) तस्य दंष्ट्रा, दशनः, तस्याः, विवरं, दर्शयन्ती, प्रकटयन्ती । अदीर्यत, (स्वयमेवद्विधाभवदितिभावः) विवरात्, रन्ध्रात्, पुरुषः, उज्जगाम इत्यनेनान्वयः । आशावारणः, दिग्गजः, (पातालस्थ इतिभावः) तेन उत्क्षिप्त इव, उपरिक्षिप्त इव, आलानलोहस्तम्भः, आलानं, गजबन्धनं, तदर्थं लोहस्तम्भः, कीलः । महावराहेति— महावराहस्य इव पीवरं, स्थूलं, स्कन्धपीठं, अंसपीठं, नरकासुर इव, गर्भात्, उदरात्, (अभ्यन्तरादितिभावः) इन्द्रनील प्रासाद इव, मणिहर्म्यम् इव । उपरीति—उपरि, ऊर्ध्वभागे, ज्वलितौ, प्रदीप्तौ, रत्नप्रदीपौ, मणिमयदीपौ, (नेत्रे इति भावः) यस्य तथा भूतः । स्निग्धेति—स्निग्धैः, चिक्कणैः, नीलैः, कृष्णवर्णैः, घनैः, अविरलैः, निबिडैः, संकीर्णैः, कुटिलैः, भङ्गिमद्भिः, कुन्तलैः, केशैः, कान्तः, मनोज्ञः, मौलिः, किरीटं, यस्य तादृशः । उन्मीलदिति—उन्मीलन्ती,

मुण्डमालः, गद्गदतया स्वरस्य स्वभावपाटलतया च चक्षुषः, क्षीब इव यौवनमदेन वल्गद्गलदामकः करसंपुटमृदितया मृदा दिङ्नागकुम्भाभावंसकूटौ पुनः पुनः पङ्कयन्सान्द्रचन्दनकर्दमदत्तै रव्यवस्थास्थासकैरतिसितजलधरशकलशारित इव शारदाकाशैकदेशः, केतकीगर्भपत्रपाण्डुरस्य चण्डातकस्योपरि क्षामतरीकृतकुक्षि कक्ष्याबन्धं विधाय विलासविक्षिप्तेन धवलव्यायाम-

स्फुरन्ती- मालतीमुण्डमाला, मालती, पुष्पहारः, यस्य तथाभूतः। गद्गदतया, अर्द्धस्फुटतया, स्वभावपाटलतया, सहजरक्ततया, क्षीव इव, मत्त इव। वल्गदिति- वल्गत्, चलत्, गले, कण्ठे, दाम, माल्यं, यस्य, तादृशस्य। करेति करयोः, हस्तयोः, सम्पुटेन, योगेन, (सम्मेलनेनेत्यर्थः) मृदिता, दलिता, तथा, मृदा, मृत्तिकया। दिङ्नागेति - दिङ्नागकुम्भाभौ, ऐरावतकुम्भनिभौ, अंसकूटौ, स्कन्धशृङ्गे, पङ्कयन, कर्दमयन, (मलिनयन्निति भावः) सान्द्रेति सान्द्रेण, घनेन, चन्दनपङ्केन, (घृष्टचन्दनेनेत्यर्थः) दत्तानि रचितानि, तैः, अव्यवस्थास्थासकैः, अयथाव्यवस्थया इतियावत्, स्थासकाः, चन्द्रकाः, (बुद्बुदाकारा बिन्दवः-इतिभावः) अथवा, स्थासकैः, चार्चिक्यैः, (अचातुर्यानुलिप्त चन्दनादिभिरितियावत्) स्थासकः पुंसि चार्चिक्ये जलादेरपि बुद्बुदे" इति मेदिनी। अतीति— अतिसितेन, विमलेन, जलधाराणां, मेघानां, शकलेन, खण्डेन, शारित इव, चित्रित इव। शारदाकाशैकदेशः, शरत्कालिकगगनैकभागः। केतकीति-केतक्याः, गर्भपत्रं, अभ्यन्तरच्छदः, तद्वत् पाण्डुरं, श्वेतं, तस्य, चण्डातकस्य, परिधानवस्त्रस्य। क्षामतरीकृतकुक्षिः, अतितरांक्षीणतांनीतोदरः। कक्ष्याबन्धं, कटिबन्धं। विलासविक्षिप्तेन, लीलानिक्षिप्तेन। धवलेति धवलः, श्वेतः, व्यायामः, (विशेषेण आयत-

मफालीपटान्तेन धरणितलगतेन धार्यमाण इव पृष्ठतः शेषेण स्थिरस्थूलोरुदण्डः, भूमिभङ्गभयेनेव मन्थराणि स्थापयन्पदानि निर्भरगर्वगुरु कथमपि शैलमिव गात्रमुद्वहन्दर्पेण मुहुर्मुहुरुरसि द्विगुणिते दोष्णि वामे तिर्यगुत्क्षिप्ते च दक्षिणे जङ्घाकाण्डे कुण्डलिते चण्डस्फोटनटांकारैः कर्मविघ्ननिर्घातानिव पातयन्नेकेन्द्रियविकलमिव जीवलोकं कुर्वन्कुवलयश्यामलः पुरुष उज्जगाम। जगाद च विहस्य नरसिंहनादनिर्घोषघोरया भारत्या—

इति भावः) दीर्घो वा, फालीपटान्तः, कटिबन्धवस्त्रान्तः, तेन। धरणितलगतेन, भूतललुण्ठितेन। धार्यमाणः, गृह्यमाण इव शेषेण, अनन्तनागेन (शेषस्य धारणायोग्यत्वादत्र तदुत्प्रेक्षितम्) स्थिरेति स्थिरौ, दृढौ, स्थूलौ, उरुदण्डौ, यस्य, तादृशः। भूमीति भूमेः, पृथिव्याः, भङ्गभयेन, नाशभयेन, (रसातलगमनाशङ्कया इति यावत्) मन्थराणि, मन्दसंचारगाणीतिभावः। स्थापयन्, अर्पयन्। **निर्भरेति** निर्भरेण, निरतिशयेन, गर्वेण, अहङ्कारेण, गुरुः, (भारवदित्यर्थः) दर्पेण, अभिमानेन, द्विगुणिते, द्विरावृत्ते, वामे, सव्ये, दोष्णि, भुजे। तिर्यक्, वक्रं, यथा, तथा, उत्क्षिप्ते, ऊर्द्ध्वं स्थापिते। जङ्घाकाण्डे, जङ्घारूपस्तम्भे। कुण्डलिते, कुञ्चिते। **चण्डेति** चण्डम्, उत्कटं यत्, आस्फोटनं, आघातः (बाह्वोरिति भावः) येन, ये टाङ्काराः, शब्दविशेषाः तैः। **कर्मेति** कर्मणि, भैरवाचार्यसिद्धिकार्ये, विघ्नाय, (अन्तरायार्थमित्यर्थः) निर्घाताः, वायुजनिताः, शब्दाः, तानिव। एकेन्द्रियविकलमिव, एकेन, इन्द्रियेण (श्रवणेनेतियावत्) विकलः, शक्तिहीनः, तमिव, (बधिरमिवेत्यर्थः) कुवलयदलश्यामलः, (नीलपद्म) तद्वच्छ्यामलः, उज्जगाम, उदतिष्ठत। **नरेति** नरसिंहः, नृसिंहावतारः, तस्य नादः, शब्दः, निर्घोषः, हुङ्कारः,

'भो विद्याधर्मश्रद्धाकामुक !, किमयं विद्यावलेपः सहायमदो वा यदस्मै जनायाविधाय बलिं बालिश इव सिद्धिमभिलषसि । का ते दुर्बुद्धिरियम् । एतावता कालेन क्षेत्राधिपतिरस्य मन्नाम्नैव लब्धव्यपदेशस्य देशस्य नागतस्ते श्रोत्रोपकण्ठं श्रीकण्ठनामा नागोऽहम् । अनिच्छति मयि का शक्तिर्ग्रहगणस्यापि गन्तुं गगने । भूनाथोऽप्ययमनाथस्तपस्वी यस्त्वादृशैः शैवापसदैरुपकरणीक्रियते । सहस्वेदानीं सहामुना दुर्नरेन्द्रेण दुर्नयस्य फलम्' इत्यभिधाय च निष्ठुरैः प्रकोष्ठप्रहारैस्त्रीनपि टीटिभप्रभृतीनभिमुखं प्रधावितान्सशरीरानिव रणकृपाणानपातयत् ।

तद्वत्, वाचा, गम्भीरतया, भारत्या, वाचा । जगाद, उवाच । विद्याधर्मेति विद्याचर्या, देवक्रियां, श्रद्धया, गरिमणा, कामुकः, इच्छुकः । विद्यावलेपः, विद्याजनितः, अहङ्कारः, सहायमदः, सहकारिसद्भावजनितौद्धत्यम् । अस्मै (मह्यमितिभावः) बलिं पूजाम्, अविधाय, अदत्वा बालिश इव, मूर्ख इव । मन्नाम्नैव, मदीयेननाम्नैव, लब्धव्यपदेशस्य, प्राप्ताभिधानस्य, (मङ्कृतितस्येतियावत्) अस्य, देशस्य, (श्रीकण्ठाख्यस्य) क्षेत्राधिपतिः, क्षेत्रस्वामी । श्रोत्रोपकण्ठं, श्रोत्रयोः, उपगतः, कण्ठं, उपकण्ठं, (श्रवणसमीपमितियावत्) श्रीकण्ठनामानागः, एतद्देशस्वामी, (त्वयाएतावताऽपि समयेन न श्रुतः ?) ग्रहगणस्यापि, ग्रहाः, रव्यादयः, तेषां गणः, तस्य, (नकोऽप्यत्र उत्पतितुंशक्तः—इतिभावः) भूनाथः, भूपतिः, (अयंपुष्पभूतिः) अनाथः, अस्वामिकः, (भविता) तपस्वी, वराकः, त्वादृशैः, त्वत्सदृशैः । शैवापसदैः, शैवनीचैः, उपकरणीक्रियते, प्रलोभ्यसहायीक्रियते । दुर्नरेन्द्रेण, कुराज्ञा, दुर्नयस्य, दुश्चेष्टितस्य, निष्ठुरैः, निर्दयैः, प्रकोष्ठप्रहारैः, प्रकोष्ठस्य, हस्तावयवस्य, प्रहारैः, मुष्टिकाघातैः । अभिमुखं,

अथापूर्वाधिक्षेपश्रवणादशस्त्रव्रणैरप्यमर्षस्वेदच्छलेनानेकसमरपीतमसिधाराजलमिव वमद्भिरवयवैरपि रोमाञ्चनिभेन मुक्तशरशतशल्यनिकरभरलघुमिवात्मानं रणाय कुर्वद्भिरट्टहासेनापि प्रतिविम्बिततारागणेन स्पष्टदृष्टधवलदन्तमालमवज्ञया हसतेव कथ्यमानसत्त्वावष्टम्भः, परिकरबन्धविभ्रमिभ्रामितकरनखकिरणचक्रवालेन व्यपगमनाशङ्कया नागदमनमन्त्रमण्डलबन्धेनेव रुन्ध-

---

सम्मुखं, प्रधावितान्, प्रचलितान्। स्फुरेति—शरीरावरणं, वर्म्म, कृपाणः, खड्गः, ताभ्यां, सह, वर्त्तमानान्। अथेति—अथ इत्यस्य "नरनाथः, सावज्ञमवादीत्" इत्यनेनान्वयः। अपूर्वेति अपूर्वः, नवः, यः, अधिक्षेपः, निर्भर्त्सनं, तस्य श्रवणं, आकर्णनं, तस्मात्। अशस्त्रव्रणैः, न शस्त्रेण व्रणं, क्षतं, येषां तैः। अमर्षेण, कोपेन, यः, स्वेदः, घर्मजलं, तस्य, छलेन, व्याजेन। अनेकेति—अनेकेषु, समरेषु, युद्धेषु, पीतम्, आस्वादितं, असिधाराजलं, खड्गजलं, इव, (बहुशत्रु हननात्) वमद्भिः, उद्गिरद्भिः, अवयवैः, अङ्गैः, रोमाञ्चनिभेन, लोमच्छलेन, मुक्ताः, निःसारिताः, शरशतानि, बाणसमूहानि, शल्यनिकराः, शल्यसमूहाः, एव भारः येन, तथोक्तः। अतः, लघुः, भाररहितः, तमिव। रणाय, युद्धाय। अट्टहासेन, तन्नाम खड्गेन, प्रतिविम्बिताः, प्रतिफलिताः, तारागणाः, नक्षत्रवृन्दं, यस्मिन्, तेन। **स्पष्टेति**—स्पष्टं, स्फुटं, दृष्टा, धवला, शुभ्रा, दन्तमाला, दशनश्रेणी यत्र, तद् यथा तथा, हसतेव, हासं, कुर्वतेव। **कथ्यमानेति**—कथ्यमानः, अभिधीयमानः, सत्त्वस्य, उद्योगस्य, अवष्टम्भः, वेगः यस्य, तथोक्तः। **परिकरेति**—परिकरबन्धः, कटिबन्धः, तस्य, विभ्रमेण, चेष्टया, भ्रमितयो, चलितयोः, करयोः, हस्तयोः, नखकिरणानां, चक्रवालं, मण्डलं, तेन। व्यपगमनाशङ्कया, (शत्रोः पलायनाशङ्क-

न्दश दिशो नरनाथः सावज्ञमवादीत्—'अरे काकोदर! काक!, मयि स्थिते राजहंसे न जिह्रेषि बलिं याचितुम्। अर्मीभिः किं वा परुषभाषितैः। भुजे वीर्यं निवसति, न वाचि। प्रतिपद्यस्व शस्त्रम्। अयं न भवसि। अगृहीतहेतिष्वशिक्षितो मे भुजः प्रहर्तुम्' इति। नागस्त्वनादृततरम्—'एहि। किं शस्त्रेण। भुजाभ्यामेव भनज्मि भवतो दर्पम्' इत्यभिधायास्फोटयामास। नरपतिरपि निरायुधमायुधेन युधि लज्जमानो जेतुमुत्सृज्य सचर्मफलकमट्टहासमसिमधोरुकस्योपरि बबन्ध बाहुयुद्धाय कक्ष्याम्। युयुधाते च निर्दयास्फोटनस्फुटितभुजरुधिरशीकरसिच्यमानौ

येतिभावः) नागेति—नागानां, सर्पाणां, दमनमन्त्रः, शासनमन्त्रः, (गारुडादीनियावत्) तेन, यः, मण्डलबन्धः, मण्डलाकारः, तेनैव, रुन्धन, अवरोधयन। सावज्ञं, सावहेलम। काकोदर! भुजङ्ग! काकस्य, वायसस्य, उदरं, अथवा, काकं, ईषद्गर्हितमुदरं यस्य। काक! निर्लज्ज! राजहंसे, राजश्रेष्ठे, मराले च, न जिह्रेषि, लज्जसे। बलिं, पूजां, याचितुं। परुषभाषितैः, कटूक्तिभिः। प्रतिपद्यस्व, नय। अयम (ईदृशः-इतिभावः) अगृहीतहेतिषु, अगृहीतशस्त्रेषु, अशिक्षितः, अनभ्यस्तः। अनादृततरं, सावज्ञं। एहि, आगच्छ। किं शस्त्रेण? (नकिमपि प्रयोजनं शस्त्रस्येतिभावः) भनज्मि, नाशयामि। आस्फोटयामास, आस्फालयामास। (बाहौ कराघातमकरोदितिभावः) निरायुधम्, अशस्त्रम्। आयुधेन, शस्त्रेण। उत्सृज्य, परित्यज्य। अट्टहासं, भैरवाचार्यदत्तखड्गं। अधोरुकस्य, उर्वोरधरपर्यन्ताङ्गाच्छादनवस्त्रस्य। कक्ष्यां, कटिबन्धं। निर्दयेति—निर्दयं, निष्ठुरं, यत्, आस्फोटनम्, प्रहरणं, (तालिका शब्दकरणमितिभावः) तेन, स्फुटितस्य, विक्षतस्य, भुजस्य रुधिराणां, रक्तानां, शीकरैः, बिन्दुभिः,

शिलास्तम्भैरिव पतद्भिर्बाहुदण्डैः शब्दमयमिव कुर्वाणौ भुवनं तौ। न चिराच्च पातयामास भूतले भुजंगं भूपतिः। जग्राह च केशेषु। उच्चखान च शिरश्छेत्तुमट्टहासम्। अपश्यच्च वैकक्षकमालान्तरेणास्य यज्ञोपवीतम्। उपसंहृतशस्त्रव्यापारश्चावादीत्— 'दुर्विनीत !, अस्ति ते दुर्नयनिर्वाहबीजमिदम्। यतो विश्रब्धमेवाचरसि चापलानि' इत्युक्त्वोत्ससर्ज तम्। अनन्तरं च सहसैवातिबहलां ज्योत्स्नां ददर्श। शरदि विकसतां कमलवनानामिव च घ्राणावलेपिनमामोदमजिघ्रत्। झटिति च नूपुरशब्दमशृणोत्। व्यापारयामास च शब्दानुसारेण दृष्टिम्।

अथ करतलस्थितस्याट्टहासस्य मध्ये तडितमिव नीलजलधरोदरे स्फुरन्तीं प्रभया पिबन्तीमिव त्रियामाम्, तामरसहस्ताम्, कोमलाङ्गुलिरागराजिजालकानि च चरणलग्नानि वेला-

सिच्यमानौ, कृतसेचनकौ। उच्चखान, उत्तोलयामास, वैकक्षकमालां, तिर्यक्वक्षावलम्बिहार, अन्तरेण, मध्ये। दुर्नयेति— दुर्नयस्य, दुश्चेष्टितस्य, निर्वाहः, सम्पादनं, तस्य बीजं, कारणं (ब्रह्महत्याभयात्त्वदरक्षणमिति भावः) विश्रब्धं, निःशङ्कम्। चापलानि, चाञ्चल्यानि। उत्ससर्ज, त्यत्याज। अतिबहलां, अतिप्रभूताम्। घ्राणविलेपिनं (नासारन्ध्रपूरकमिति यावत्) आमोदम्, सौरभं। व्यापारयामास, प्रसारितवान्। दृष्टिं, नेत्रं। अथ इत्यस्य "श्रियमपश्यत्" इत्यनेनान्वयः। अट्टहासस्य, तन्नामखड्गस्य। तडितं, दामिनीं इव, स्फुरन्तीं, शोभमानाम्। पिबन्तीं, पानंकुर्वन्तीं, इव। त्रियामां, रात्रिं। तामरसहस्तां, पद्मकराम्। कोमलेति कोमलानां, अंगुलीनां, रागराजिः, लौहित्यधारा। तस्या, जालकानि, समूहानि। वेलेति वेलायां, तटभूमौ, बालानि, नूतनानि, यानि, विद्रुमलताबनानि, प्रवाललता उद्यानानि।

बालविद्रुमलतावनानीवाकर्षन्तीम्, करपङ्कजसङ्कोचाशङ्कया शशाङ्कमण्डलमिव खण्डशः कृतं निर्मलचरणनखनिवहनिभेन बिभ्रतीम्, गुल्फावलम्बिनूपुरपुटतया स्थितनिविडकटकावलिबन्धनादिव परिभ्रश्यागताम्। बहुविधकुसुमशकुनिशतशोभितात्पवनचलिततनुतरङ्गादतिस्वच्छादंशुकादुदधिसलिलादिवोत्तरन्तीम्, उदधिजन्मप्रेम्णा त्रिवलिच्छलेन त्रिपथगयेव परिष्वक्तमध्याम्, अत्युन्नतस्तनमण्डलाम्, दृश्यमानदिङ्नागकुम्भामिव ककुभम्, मदलग्नैरावतकरशीकरनिकरमिव शरत्तारा-

नानि, इव। करेति—कर एव, पङ्कजं, कमलं, तस्य, सङ्कोचः, निमीलनं, (चन्द्रोदयादिति यावत्) तस्य आशङ्का, भयं, तथा शशाङ्कमण्डलं, चन्द्रमण्डलं, इव। खण्डशः, कृतं, शकलीकृतम्। निर्मलेति निर्मलानां, स्वच्छानां, चरणनखानां, निवहः, समूहः, तन्निभेन, तत्सदृशेन। गुल्फेति गुल्फं, पादग्रन्थि, अवलम्बते, तं, नूपुरपुटं, नूपुरसन्धिः, यस्याः, तया। स्थितेति स्थितं, निविडं, दृढं, कटकावल्यां, सैनिकसमूहे, बन्धनं, तस्मात्, परिभ्रश्य, निर्गत्य, आगतां, प्राप्ताम्। बह्विति बहुविधैः, नानाप्रकारैः, कुसुमानां, पुष्पाणां, शकुनीनां, पक्षिणां, च शतैः, तन्तुनिर्मितैः (पक्षे) उपरिपतितैः। शोभितं, तस्मात्। पवनेति पवनेन, वायुना, चलिताः, क्षिप्ताः, तनवः, सूक्ष्माः, तरङ्गाः, यस्य, तस्मात्, अतिस्वच्छात्, निर्मलात्, अंशुकात्, वसनात्, उत्तरन्तीं, उत्तिष्ठन्तीम्। उदधिजन्मप्रेम्णा, सागरोत्पत्तिस्नेहेन, त्रिवलिच्छलेन, त्रिवलिव्याजेन। त्रिपथगयेव, त्रिधारयागङ्गयेव, परिष्वक्तमध्यां, आलिङ्गितमध्यभागाम्। दृश्यमानेति—दृश्यमानौ, दिङ्नागस्य, ऐरावतस्य, कुम्भौ यस्यां, तथा भूतां, इव। ककुभं, दिशम्। मदेति—मदे, दानवारिणि, लग्नः,

गणतारं हारमुरसा दधानाम्, धवलचामरैरिव च मन्दमन्दनिःश्वासदोलायितैर्हारकिरणैरुपवीज्यमानाम्, स्वभावलोहितेन मदान्धगन्धेभकुम्भास्फालनसंक्रान्तसिन्दूरेणेव करद्वयेन द्योतमानाम्, हरशिखण्डेन्दुद्वितीयखण्डेनेव कुण्डलीकृतेन ज्योत्स्नामुचा दन्तपत्रेण विभ्राजमानाम्, कौस्तुभगभस्तिस्तबकेनेव च श्रवणलग्नेनाशोककिसलयेनालंकृताम्, महता मातङ्गमदमयेन तिलकेनादृश्यच्छत्रच्छायामण्डलेनेवाविरहितललाटाम्, आ पाद-

संसक्तः, यः, ऐरावतः, तस्य, करः, शुण्डः, तस्य, शीकराणां, जलबिन्दूनां, निकरः, समूहः, तमिव। शरदिति—शरदि, यः, तारागणः, नक्षत्रवृन्दं, तद्वत् तारः, उज्ज्वलः, तम्, उरसा, वक्षसा। मन्देति—मन्दमन्देन, ईषन्मन्देन, निश्वासेन, दोलायितैः, चञ्चलितैः, तैः, उपवीज्यमानां, संवीज्यमानां नाम्। स्वभावलोहितेन, सहजरक्तेन। मदान्धेति मदान्धः, मदमत्तः, यः, गन्धेभः, गन्धहस्ती, (स्वेदं मूत्रं पुरीषं च मज्जाश्चैव मतङ्गजाः, यस्याघ्राय विभ्यन्ति तं विद्याद्गन्धहस्तिनम्) तस्य, कुम्भास्फालनं, अवमर्शः, तेन, संक्रान्तं, संसक्तं, सिन्दूरं, यस्मिन्, तेन, इव। लक्ष्म्याः, करद्वयेन, हस्तयुगलेन, द्योतमानां, शोभमानाम्। हरेति हरस्य, शिखण्डः, चूडा, तत्र, यः, इन्दुद्वितीयखण्डः, अर्द्धचन्द्रः, तेन इव, कुण्डलीकृतेन, वर्तुलाकारेण, ज्योत्स्नामुचा, कान्तिवर्षिणा, दन्तपत्रेण, गजदन्तरचितकर्णभूषणेन, विभ्राजमानां, द्योतमानाम्। कौस्तुभेति—कौस्तुभस्य, मणेः, गभस्तीनां, किरणानां, स्तवकः, गुच्छः, तेन, इव, श्रवणलग्नेन, श्रोत्रगतेन। मातङ्गमदमयेन, गजदाननिर्मितेन। अदृश्येति—अदृश्यस्य, तिरोहितस्य, छत्रस्य, छायामण्डलं, छायाचक्रं तेन, इव। अविरहितः, अशून्यः, ललाटः, यस्याः, ताम्।

तलादासीमन्ताच्च चन्द्रातपधवलेन चन्दनेनादिराजयशसेव धवलीकृताम्, धरणितलचुम्बिनीभिः कण्ठकुसुममालाभिः सरिद्भिरिव सागराधिष्ठात्रीभिरधिष्ठिताम्, मृणालकोमलैरवयवैः कमलसंभवत्वमनन्तरमाचक्षाणां श्रियमपश्यत्। असंभ्रान्तश्च प्रपच्छ—'भद्रे, कासि। किमर्थं वा दर्शनपथमागतासि' इति। सा तु स्त्रीजनविरुद्धेनावष्टम्भेनाभिभवन्तीवाभाषत तम्—'वीर, विद्धि मां नारायणोरःस्थलीलीलाविहारहरिणीम्, पृथुभरतभगीरथादिराजवंशपताकाम्, सुभटभुजजयस्तम्भविलासशा-

आपादतलात्, आसीमन्तात्, सीमन्तपर्यन्तं, चन्द्रातपधवलेन, कौमुदीवत् श्वेतेन, स्वभावशुभ्रेण वा। आदिराजयशसा, आदिराजस्य, मनोः वैवस्वतस्य, पृथुनृपतेर्वा, यशः तेन, इव। धरणितलेति धरणितलं, भूतलं, चुम्बन्ति स्पृशन्ति, इति तादृशाभिः। सागराधिष्ठाभिः, सागरं अधि, अधिकृत्य तिष्ठन्ति, याः, ताभिः। कमलसम्भवत्वं, कमलादुत्पत्तिम्, अथवा, सम्भूयते, स्थीयते, अस्मिन्निति, अधिष्ठानस्थानं, यस्याः (कमलवासिन्यालक्ष्म्याः-इतिभावः) अनन्तरं, अन्तररहितं, (तूष्णींमितियावत) आचक्षाणां, कथयन्तीं, असम्भ्रान्तः, अचकितः, (अत्वरएवेतिभावः) अवष्टम्भेन, गर्वेण। अभिभवन्तीव, तिरस्कुर्वन्तीव, (अवरुन्धतीव तद्वाक्यमितिभावः) नारायणेति नारायणस्य, विष्णोः, उरः, वक्षःस्थलम्, एव, स्थली, अकृत्रिमाभूः, (वनमितियावत्) तत्र, लीलया, स्वेच्छया, यः, विहारः, विहरणं, क्रीडनं वा तत्र हरिणी, मृगी, ताम् (स्वेच्छयारण्यस्थल्यां हरिण्या विहारः प्रसिद्धः) पृथ्विति पृथुप्रभृतीनां, राज्ञां, वंशस्य, कुलस्य, वेणुदण्डस्य च, पताकां, ध्वजां, औज्वल्यकारिणीं, कीर्तिविस्तारात्, (पक्षे) वेणुदण्डस्योपरि अवस्थानात्। सुभटेति—

लभञ्जिकाम्, रणरुधिरतरङ्गिणीतरङ्गक्रीडादोहददुर्ललितराज-हंसीम्, सितनृपच्छत्रषण्डशिखण्डिनीम्, अतिनिशितशस्त्रधा-रावनभ्रमणविभ्रमसिंहीम्, असिधाराजलकमलिनीं श्रियम्। अपहृतास्मि तवामुना शौर्यरसेन। याचस्व, ददामि ते वरम-भिलषितम्' इति।

वीराणां ह्यपुनरुक्ताः परोपकाराः। यतो राजा तां प्रणम्य स्वार्थविमुखो भैरवाचार्यस्य सिद्धिं ययाचे। लक्ष्मीस्तु देवी प्रीततरहृदया विस्तीर्यमाणेन चक्षुषा क्षीरोदेनेवोपरि पर्यस्तेना

सुभटानां, सुवीराणां, भुजाः, बाहवः, एव, जयस्तम्भाः, तेषु, विलास-शालभञ्जिका शोभार्थनिहितपुत्तलिका, ताम् (सुभटपदेनास्याः वीरानु-रागित्वं, सूचितं) रणेति—रणेषु, युद्धेषु, या, रुधिरतरङ्गिण्यः, रक्तनद्यः, तासां, तरंगेषु, ऊर्म्मिषु, क्रीडा, केली, तत्र दोहदेन, अभि-लाषेण, दुर्ललिता, दुर्विनीता, राजहंसी ताम्। सितेति—सितानि, शुभ्राणि, नृपाणां, राज्ञां, छत्रषण्डानि, आतपत्रसमूहानि, तत्र शिख-ण्डिनी, मयूरी, ताम्, (अनातपेसञ्चरणशीलत्वाद् मयूरीणां) अतीति—अतिनिशितानां, सुतीक्ष्णानां, शस्त्राणां, धारा एव, वनानि, तेषु, भ्रमणं एव, विभ्रमः, विलासः, तत्र, सिंही, ताम्। असीति—असीनां, खड्गानां, धारा एव, जलानि, (तनुत्वादितिभावः) तत्र कम-लिनी, पद्मिनी ताम्। अपहृतेति—अपहृता, आकृष्टा, शौर्य्यरसेन, उत्साहेन। अभिलषितं, इच्छितम्। अपुनरुक्तेति अपुनरुक्ताः, पुनरुक्तिदोषरहिताः, परोपकाराः, परेषामुपकृतयः, अथवा, अपुनरुक्ताः, अनधिकाः। तां, लक्ष्मीम्। स्वार्थविमुखः, निःस्वार्थः। सिद्धिं, इच्छितसाफल्यं। प्रीततरेति—प्रीततरं, अतिशयेन, प्रीतं, (राज्ञः, स्वार्थनिःस्पृहत्वेनेति यावत्) हृदयं, यस्याः, सा। विस्तीर्यमाणेन,

भिषिञ्चन्ती भूपालम् 'एवमस्तु' इत्यब्रवीत्। अवादीच्च पुनः— 'अनेन सत्त्वोत्कर्षेण भगवच्छिवभट्टारकभक्त्या चासाधारणया भवान्भुवि सूर्याचन्द्रमसोस्तृतीय इवाविच्छिन्नस्य प्रतिदिनमुपचीयमानवृद्धेः शुचिसुभगसत्यत्यागधैर्यशौण्डपुरुषप्रकाण्डप्रायस्य महतो राजवंशस्य कर्ता भविष्यति। यस्मिन्नुत्पत्स्यते सर्वद्वीपानां भोक्ता हरिश्चन्द्र इव हर्षनामा चक्रवर्ती त्रिभुवनविजिगीषुर्द्वितीयो मांधातेव,यस्यायं करः स्वयमेव कमलमपहाय ग्रहीष्यति चामरम्' इति वचसोऽन्ते तिरोबभूव।

भूमिपालस्तु तदाकर्ण्य हृदयेनातिमात्रमप्रीयत। भैरवाचार्योऽपि तस्या देव्याःस्तेन वचसा कर्मणा च सम्यगुपपादितेन सद्य एव कुन्तली किरीटी कुण्डली हारी केयूरी मेखली मुद्गरी

विस्फार्यमाणेन, (निःस्पृहत्वदर्शनेन विस्मयाणमादिनि यावत) क्षीरोदेनेव, दुग्धसमुद्रेणेव (प्रसन्नत्वादित्यर्थः) उपरिपर्यस्तेन, पतितेन। एवं, अस्तु (पूर्णा ते प्रार्थना) सत्त्वोत्कर्षेण, साहसातिशयेन, असाधारणया, निरुपमया। सूर्यचन्द्रमसोः, रविनिशाकरयोः, तृतीय इव, मित्र इव, (तेजस्त्वात) अविच्छिन्नस्य, अत्रुटितस्य, उपचीयमानवृद्धेः, निरन्तरवर्द्धमानाभ्युदयस्य। (समयप्रभावेण उन्नतिं, अवनतिं च गच्छतः, प्रतिमासं, एवं वृद्धिमद्वंशस्य नृपस्येत्यर्थः "व्यतिरेकः) शुचीति शुचिः, पूतं, शुद्धाचरणं वा सुभगं, सु-शोभनं, भगं, वीर्यं, यशो वा, सत्यं, यथार्थकथनं,त्यागः, दानं, धैर्यं, धीरत्वं, तेषु, शौण्डाः, दक्षाः, (सर्वगुणसम्पन्नाः—इत्यर्थः) पुरुषप्रकाण्डाः, पुरुषश्रेष्ठाः, प्रायेण, बाहुल्येन, यत्र, तथा भूतस्य, कर्ता, जनकः। यस्मिन (राजवंशे-इति यावत) द्वितीयः, अपरः, मान्धातेव, नृप इव। कर्मणा, (शवसाधनरूपकार्येणेतिभावः) सम्यक् उपपादितेन, सम्यगनुष्ठितेन।

खड्गी च भूत्वावाप विद्याधरत्वम्। प्रोवाच च—'राजन्, अदूरव्यापिनः फल्गुचेतसामलसानां मनोरथाः। सतां तु भुवि विस्तारवत्यः स्वभावेनैवोपकृतयः। स्वप्नेऽप्यसंभावितां दातुमिमां दक्षिणां क्षमः कोऽन्यो भवन्तमपहाय। संपत्कणिकामपि प्राप्य तुलेव लघुप्रकृतिरुन्नतिमायाति। त्वदीयैर्गुणैरुपकरणीकृतस्य त्वत्त एव च लब्धात्मलाभस्य निर्लज्जतेयमस्य मूढहृदयस्य। नदिच्छामि येन केनचित्कार्यलवोपपादनोपयोगेन स्मारयितुमात्मानम्' इति प्रत्युपकारदुष्प्रवेशास्तु भवन्ति धीराणां हृदया-

मत्र एव, तत्क्षणमेव, कुन्तली, सुकेशः, किरीटी, मुकुधारी, कुण्डली, कुण्डलयुक्तः। हारी, हारवान। केयूरी, अङ्गदी, मेखली, तड़ागीधारी। मुद्गरी, मुद्गरः, दण्डः, तद्वान्। विद्याधरत्वं, विद्याधरभावम्। अदूरव्यापिनः, समीपप्रसारिणः, फल्गुचेतसाम्, असारहृदयानाम्। अलसानां, उद्यमरहितानां, मनोरथाः, इप्सितानि। विस्तारवत्यः, प्रसरणशीलाः। उपकृतयः, उपकाराः। इमां, दक्षिणां, (विद्याधरत्वलाभरूपाम) क्षमः, समर्थः। अपहाय, त्यक्त्वा। सम्पदिति—सम्पदः, धनस्य, कणिकां, कणमात्रं, (लेशमपीतिभावः) लघुप्रकृतिः, नीचस्वभावः। उन्नतिम्। औन्नत्यं, विपथगमनं च। उपकरणीकृतस्य, कृतउपकारस्य। लब्धेति—लब्धः, प्राप्तः, आत्मनो, लाभः, अभीष्टरूपः, येन तथा भूतस्य, अस्य (मदीयस्येति यावत्) कार्येति—कार्यस्य, लवः, लेशः, (किञ्चिन्मात्रमितिभावः) तस्य उपपादनं, करणं, तेन, यः, उपयोगः, (उपकाररूपः) तेन। स्मारयितुं, स्मरणतां नेतुं। प्रत्युपकारेति—प्रत्युपकारेण, उपकारप्रतिदानेन,

वष्टम्भाः, अतस्तं राजा 'भवत्सिद्धयैव परिसमाप्तकृत्योऽस्मि । साधयतु मान्यो यथासमीहितं स्थानम्' इति प्रत्याचचक्षे ।

तथोक्तश्च भूभुजा जिगमिषुः सुदृढं समालिङ्ग्य टीटिभादीन्कुवलयवनेनेवावश्यायशीकरस्राविणा सास्रेण चक्षुषा वीक्षमाणः क्षितिपतिं पुनरुवाच—'तात, ब्रवीमि यामीति न स्नेहसदृशम् । त्वदीयाः प्राणा इति पुनरुक्तम् । गृह्यतामिदं शरीरकमिति व्यतिरेकेणार्थकरणम् । तिलशः क्रीता वयमिति नोप-

---

दुष्प्रवेशाः, प्रवेष्टुमशक्याः, हृदयावष्टम्भाः, हृदयगाम्भीर्याणि, (नहि धीराः प्रत्युपकारं अर्थयन्ते) भवत्सिद्ध्या, इप्सितपूरणेनेतिभावः । परिसमाप्तं, पूर्णतांनीतम् । कृत्यं, कर्म, यस्य, तथोक्तः । साधयतु-व्रजतु, मान्यः । (भवानितियावत्) यथा समीहितं, चेष्टितानुरूपं, (यथेप्सितमितिभावः) स्थानं, (विद्याधरलोकं) इति, एवं प्रत्याचचक्षे, अकथयत् ।

भूभुजा, राज्ञा, जिगमिषुः, गन्तुमिच्छुः, (भैरवाचार्ये-इतिभावः) वकुलयवनेन नीलोत्पलकाननेन, इव । अवश्यायेति—अवश्यायानां तुषाराणां, शीकरान्, विन्दून् स्रवति इति तादृशेन । सास्रेण, सजलेन । स्नेहशदृशं, स्नेहसमुचितम् । प्राणाः, (मदीया इत्यर्थः) त्वदीयाः, (त्वं मत्तः अभिन्न इत्यर्थः) पुनरुक्तं, (कथितपूर्वमितिभावः) व्यतिरेकेण, पृथग्भावेन, अर्थकरणं, अर्थसाधनम् (आवांखलु अभिन्नौ, कथने तु विपर्ययः-एवेति भावः) तिलशः, खण्डशः, क्रीता वयमिति (वहु उपकार करणात्) नहि प्रत्युपकार कर्तुं समर्थाः वयमितिभावः) दूरीकरणं, दूरे निक्षेप, इव । अप्रत्यक्षं, वचनमात्रं (दृष्टेरविषयत्वाद्

कारानुरूपम् । बान्धवोऽसीति दूरीकरणमिव । त्वयि स्थितं हृदयमित्यप्रत्यक्षम् । त्वद्विरहकारिणी कारणेयं न सिद्धिरित्यश्रद्धेयम् । निष्कारणस्तवोपकार इत्यनुवादः । स्मर्तव्या वयमित्याज्ञा । सर्वथा कृतघ्नालापेष्वसज्जनकथासु च चेतसि कर्तव्योऽयं स्वार्थनिष्ठुरो जनः' इत्यभिधाय वेगच्छिन्नहारोच्छलितमुक्ताफलनिकरताडिततारागणं गगनतलमुत्पपात । ययौ च सीमन्तितग्रह-

दयस्येतिभावः) त्वद्विरह कारिणी, तवविच्छेदजननी, अतएव नः, अस्माकं, इयं सिद्धिः, कारणा, यातना, (क्लेश एवेतियावत्) (कारणातुयातना तीव्रवेदना "इत्यमरः") अश्रद्धेयं, अविश्वास्यम्, निष्कारणः, कारणरहितः, निरर्थको वा) इति, एतत्कथनं, अनुवादः, कथितस्यार्थस्य प्रकारान्तरेणकथनम् । आज्ञा, आदेशः । कृतघ्नालापेषु, कृतं, (कार्यं) घ्नन्ति-इति कृतघ्नाः, तेषां, आलापाः, भाषणानि, तेषु, असज्जनकथासु, दुर्जनविषयकालापप्रस्तावेषु, भवतां प्रत्युपकाराकरणात्, अहमपिकृतघ्नः, अतः, स्वार्थनिष्ठुरः स्वकार्यसाधनपरायणः, अतएव निर्दयः । **वेगेति**—वेगेन, रंहसा, छिन्नात्, त्रुटितात्, हारात्, उच्छलितानां, निर्गलितानां, मुक्ताफलानां, मौक्तिकानां, निकरैः, समूहैः, ताडितः, आहतः, तारागणः, नक्षत्रवृन्दं, यस्य, यत्र वा, तत् (विषयाणां मौक्तिकानां, निगरणेन असंख्यतारागणताडनम्, अतः, असम्बन्धे सम्बन्धरूपा अतिशयोक्तिः) **सीमन्तितेति**—सीमन्तितः, द्विधाकृतः, ग्रहाणां, दिग्चारिणां, सूर्यादीनां, ग्रामः, समूहः, येन, तथोक्तः । सिध्युचितं, (विद्याधरत्वा योग्यं) धाम, स्थानम् । श्रीकण्ठोऽपि, तन्नामनागोऽपि । पराक्रमक्रीतः, बलक्रीतः । कर्तव्येषु, कार्येषु, (भवतः,

ग्रामः सिद्ध्युचितं धाम। श्रीकण्ठोऽपि—'राजन्, पराक्रमक्रीतः कर्तव्येषु नियोगेनानुग्राह्यो ग्राहितविनयोऽयं जनः' इत्यभिधाय राजानुमोदितस्तदेव भूयो भूविवरं विवेश।

नरपतिस्तु क्षीणभूयिष्ठायां क्षपायां, प्रवातुमारब्धे प्रबुध्यमानकमलिनीनिःश्वाससुरभौ, वनदेवताकुचांशुकापहरणपरिहासस्वेदिनीव सावश्यायशीकरे, परिमलाकृष्टमधुकृति कुमुदनिद्रावाहिनि निशापरिणतिजडे तुषारलेशिनि वनानिले, विरहविधु-

इतियावत्) नियोगेन, आदेशेन। ग्राहितविनयः, शिक्षितविनयः, (पराजयेनेत्यर्थः) भूविवरं, पातालम्। नरपतिः "इत्यतः नगरं विवेश" इत्यनेनान्वयः। क्षीणभूयिष्ठायां, (प्रायेणाऽव्यतीतायामिति-भावः) क्षपायां, रजन्याम्। प्रवातुं, सञ्चरितुम्। **प्रबुद्ध्यमानेति**—प्रबुद्ध्यमानानां, (सूर्योदयात्) विकाशं गतानां, कमलिनीनां, निश्वासेन (तत्स्पर्शवायुनेतिभावः) सुरभिः, सुगन्धः, तस्मिन्। **वनेति**—वनदेवतानां, कुचयोः, स्तनयोः, अंशुकस्य, वस्त्रस्य, अपहरणमेव परिहासः, हास्यं, (क्रीडनमितियावत्) तेन यः, स्वेदः, घर्मजलं, तद्वति इव, सावश्यायशीकरे, तुषारबिन्दुयुक्ते (समासोक्तिः) **परिमलेति**—परिमलः, पुष्पविमर्दोद्गन्धः, तेन, आकृष्टाः, आकर्षिताः, मधुकृतः, द्विरेफाः (पक्षे) (तदाघ्रायोन्मादिताः-विटाः-इति यावत्) येन तादृशे। **कुमुदेति**—कुमुदानां, निद्रानिमीलनं, तां वाहयति, उत्पादयति, इति तस्मिन् (दक्षिणनायकत्वंव्यज्यतेऽत्रप्रेमगर्भव्यवहारेणेतिभावः) **निशेति**—निशायाः, रात्रेः, परिणतिः, परिणामः, तया जड़ः, मन्थरः, शिशिरभारेण, (पक्षे) सर्वासां निशां, विलासात्,

रच्चक्रवाकचक्रनिःश्वसितसंतापितायामिवापरजलनिधिमवतरन्त्यां त्रियामायां, साक्षादागतलक्ष्मीविलोकनकुतूहलिनीष्विव समुन्मीलन्तीषु नलिनीषु, उन्निद्रपक्षिणि क्षरति कुसुमविसरमिव तुहिनकणनिकरं मृदुपवनलासितलते कानने, कमललक्ष्मी प्रबोधमंलशंखेष्विव रसत्स्वन्तर्बद्धध्वनन्मधुकरेषु मुकुलायमा-

प्रजागरालसः, इत्यर्थः-तस्मिन् । तुषारलेशिनि, शिशिरविन्दु वाहिनि, (ईषत्शीतलेतियावत्) (पक्षे) रतिश्रमस्वेदवतीनिभावः । **विरहेति**—विरहेण, वियोगेन, विधुराणां, व्याकुलानां, चक्रवाकाणां, रथाङ्ग-पक्षिणां, चक्रस्य, समूहस्य, निश्वसितेन, निश्वासमरुता (उष्णेनेति-यावत्) सन्तापितायां, इव, (उत्प्रेक्षा) अपरजलनिधिं, अपरं समुद्रं, त्रियामायां, रजन्यां । **साक्षादिति**—साक्षादागतायाः, प्राप्तायाः, लक्ष्म्याः, श्रियाः, विलोकने, दर्शने, कुतूहलिन्यः, कौतुकवत्यः, तासु-इव । समुन्मीलन्तीषु, विकसन्तीषु, नलिनीषु, पद्मिनीषु, (मुग्धनायिकात्वं, व्यज्यते एतेन कमलिनीनां) । **उन्निद्रेति**—उन्निद्राः, विगत-निद्राः, (प्रातः पक्षिणां, जागरणस्वभावः) पक्षिणः, यत्र, तस्मिन् (शृङ्गारसहायाः पक्षिणः-विटानां ध्वन्यते अनेन) क्षरति, वर्षति । कुसुमविसरमिव, पुष्पनिकरमिव, (पक्षे) विरहतापोपशान्तये रति-सुखोपभुक्तये वा । **मृद्विति**—मृदुना त्रिविधेन, पवनेन, वायुना, लासिताः, नर्त्तिताः, (कम्पिताः-इतिभावः) लताः, व्रतत्यः, यत्र तादृशे । **कमलेति** कमलानां, पद्मानां, लक्ष्मीः, श्रीः, तस्याः, प्रबोधाय, जागरणाय, मङ्गलशङ्खाः, तेषु इव, (उत्प्रेक्षा) रसत्सु, ध्वनत्सु । **अन्तरिति**—अन्तः, अभ्यन्तरे, बद्धाः, रुद्धाः, (पद्मनिमीलनादित्यर्थः)

नेषु कुमुदेषु, उज्जिहानरविरथवाजिविसृष्टैः प्रोथपवनैः प्रोत्सार्यमाणास्विव वारुण्यां ककुभि पुञ्जीभवन्तीषु श्यामालताकलिकासु तारकासु, मन्दरशिखराश्रयिणि मन्दानिललुलितकल्पलतावनकुसुमधूलिविच्छुरित इव धूसरीभवति सप्तर्षिमण्डले,सुरवारणाङ्कुश इव च्युते गलति तारामये मृगे, त्रीनपिटीटिभादीन्गृहीत्वा नागयुद्धव्यतिकरमलीमसानि शुचिनि वनवापीपयसि

ध्वनन्तः, गुञ्जन्तः, मधुकराः, भ्रमराः, येषां, तेषु। मुकुलायमानेषु, मुकुलभावंगच्छत्सु। **उज्जिहानेति**– उज्जिहानैः, उद्गच्छद्भिः, प्रवुद्धैः, वा, रवेः, सूर्यस्य, रथवाजिभिः, रथाश्वैः, विसृष्टाः, त्यक्ताः, तैः। प्रोथपवनैः, नासामारुतैः। प्रोत्सार्यमाणासु, अपसार्यमाणासु, इव। वारुण्यां ककुभि, पश्चिमायांदिशि पुञ्जीभवन्तीषु, संहती भवन्तिषु। **श्यामेति**—श्यामा, रात्रिः, एव लता, व्रततिः, अथवा, श्यामालता, प्रियंगुलतिका, मकरिका वा तस्याः, कलिकाः, कुसुममुकुलानि, तासु। तारकासु, नक्षत्रेषु (रूपकम) **मन्दरेति** मन्दरस्य, पर्वतस्य, शिखरं, शृङ्गम, आश्रयनीति तथा भूते। **मन्दानिलेति**—मन्देन, अल्पेन. (मृदुप्रवाहवतेतिभावः) अनिलेन, वायुना, लुलितं, ईषदान्दोलितम्। यत्, कल्पलतावनं, देवतरु काननं, तस्य, कुसुमानां, पुष्पाणां, धूलिभिः, परागैः, विच्छुरिते इव, विलिप्ते इव, धूसरा, भवति, धूसरवर्णतांगच्छति। सप्तर्षिमण्डले, मरीच्यादिमहर्षिसमूहे। **सुरेति**—सुरवारणस्य, ऐरावतस्य, अंकुशे इव। च्युते, स्वस्थानात् भ्रष्टे, गलति, सरति। तारामये, नक्षत्रमये, मृगे, मृगशीर्षनामनक्षत्रे, स हि, अंकुशाकारः, (अतः) कोणत्रय युक्तेनांकुशेन, (उपमा) टीटि-

प्रक्षाल्याङ्गानि नगरं विवेश। अन्यस्मिन्नहनि तेषामात्मशरीरानन्तरं स्नानभोजनाच्छादनादिना प्रीतिमकरोत्।

कतिपयदिवसापगमे च परिव्राट् भूभुजा वार्यमाणोऽपि वनं ययौ। पातालस्वामिकर्णतालौ तु शौर्यानुरक्तौ तमेव सिषेवाते। संपादितमनोरथातिरिक्तविभवौ च सुभटमण्डलमध्ये निष्कृष्टमण्डलाग्रौ समरमुखेषु प्रथममुपयुज्यमानौ कथान्तरेषु

भादीन्। नागेति—नागेन, (श्रीकण्ठेन) सह, यत्, युद्धं, तस्य व्यतिकरः, सम्पर्कः, तेन, मलीमसानि, म्लानानि। शुचिनि, पवित्रे, वनवापीपयसि, अरण्यसरसीजले। अन्यस्मिन् अहनि, अपरदिने। तेषां (टीटिभादीनां) आत्मेति आत्मशरीरं, स्वदेहं। अनन्तरं, पश्चात् (पूर्वं समाधाय स्नानादि व्यापारं तेषां, पश्चात्स्वयमपि कृतवानितिभावः) परिव्राट्, परिव्राजकः, (टीटिभः) भूभुजा, राज्ञा, वार्यमाणः, निषेधितः, वनं, अरण्यं, ययौ, अगमत् (वानप्रस्थमवलम्ब्येतिभावः)। शौर्येति—शौर्येण, पराक्रमेण, अनुरक्तौ, जातस्नेहौ, (न भोगाकांक्षयेत्यर्थः) सम्पादितेति—सम्पादितः, जनितः, मनोरथस्य, आशायाः, अतिरिक्तः, अधिकः, विभवः, सम्पद्, ययो तौ। सुभट मण्डलमध्ये, सुवीरसंघे। निष्कृष्टेति निष्कृष्टं, उत्कृष्टम्। मण्डलाग्रं, खड्गः, (खड्गे तु निस्त्रिंशचन्द्रहासासिरिष्टयः। कौक्षेयको मण्डलाग्रः "इत्यमरः") ययोः, तौ, अथवा निष्कृष्टं, प्रसिद्धं, यत्, मण्डलं, वीरसमूहः, तस्य, अग्रौ, अग्रगणनीयौ, अतएव, समरमुखेषु, युद्धेषु, प्रथमम्, पूर्वं, (सेनापत्यत्वेनेतिभावः) उपयुज्यमानौ, नियुक्तौ। कथाऽन्तरेषु, आलापप्रसंगेषु। अन्तरान्तरा, मध्ये मध्ये।

चान्तरान्तरा समादिष्टौ विचित्राणि भैरवाचार्यचरितानि शैशव-
वृत्तान्तांश्च कथयन्तौ तेनैव सार्धं जरामजग्मतुरिति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते भैरवाचार्यसिद्धिसाधनं नाम

तृतीय उच्छ्वासः ।

समादिष्टौ, आज्ञप्तौ, (राज्ञा इति यावत्) शैशववृत्तान्तान्, बाल्य-
क्रीड़ादिव्यापारान् (भैरवाचार्यस्यैवेत्यर्थः) कथयन्तौ । जरां, वृद्धत्वम् ।

इति श्रीबाणभट्टकृतहर्षचरितव्याख्यायां "आशुतोषिण्यां"

तृतीय उच्छ्वासः ।

पं० रघुनाथचन्द्र शास्त्री के प्रबन्ध से द्वितीय, तृतीय उच्छ्वास
बी० बी० आर० आई० प्रेस लाहौर में छपा ।

श्रीहर्षचरितम् ।

चतुर्थ उच्छ्वासः ।

योगं स्वप्नेऽपि नेच्छन्ति कुर्वते न करग्रहम् ।
महान्तो नाममात्रेण भवन्ति पतयो भुवः ॥ १ ॥
सकलमहीभृत्कम्पकृदुत्पद्यत एक एव नृपवंशे ।
विपुलेऽपि पृथुप्रतिमो दन्त इव गणाधिपस्य मुखे ॥ २ ॥

अथ कविवरो भट्टबाणश्चरित्रनायकजन्मवृत्तान्तप्रस्तावमुपक्रममाण आदौ महतां भुवः पतित्वमितरवैलक्षण्येन वर्णयति ।

योगमिति । महान्तो नाममात्रेण नाम्नैव भुवः पतयो भवन्ति । नामैव महतां भुवःपतित्वे प्रयोजकं नत्वन्ये पराक्रमादयो गुणाः । योगं संबधं युवतिं वा स्वप्नेऽपि नेच्छन्ति । भूपतीनां युक्त्यपेक्षित्वमेतेषां तु नेत्यर्थः । करग्रहणं पाणिपीडनं बलिस्वीकारं वा न कुर्वते । पतित्वे हि पाणिपीडनमपेक्षितं नृपत्वे च बलिस्वीकारस्तदुभयमप्येते नाचरन्त्यतो वैलक्षण्यम् । अत्र प्रतिपाद्येन वस्तुना साधारण्यात्पत्युर्भूपतेश्च महत उत्कर्षस्य द्योतनाच्छब्दशक्तिमूलानुसरणारूपो व्यतिरेकालंकारः ॥ १ ॥

वर्ण्यं श्रीहर्षं सकलनृपवंशललामभूतं मनसिकृत्य तादृशस्य महतो जनेर्दुष्प्राप्यत्वं वर्णयति—सकलेति । विपुलेऽपि विशालेऽपि नृपवंशे पृथुप्रतिमः पृथुनामकराजसदृशः सकलानां महीभृतां नृपाणां कम्पकृद् भीतिद एक एव विरल इति तात्पर्यम् उत्पद्यते प्रादुर्भवति । गणाधिपस्य गजाननस्य मुखे पृथुर्महती प्रतिमा आकारो यस्य तादृश एको दन्त इव । यथा गजाननमुखस्य एको दन्तः सर्वेषां भूधराणां भीतिदस्तद्वदयमप्यखिलानां नृपाणां कम्प-

१ अथ तस्मात्पुष्पभूतेर्द्विजवरस्वेच्छागृहीतकोषो नाभिपद्म इव पुण्डरीकेक्षणात्, लक्ष्मीपुरःसरो रत्नसंचय इव रत्नाकरात्, गुरुबुधकविकलावत्तेजस्विभूनन्दनप्रायो ग्रहगण इवो-

कृत्। अनया चोपमयाऽगतेनसदृश एव गणाधिपो देवतात्वेन तदास्वीकृत आसीदिति गम्यते। अपि च कुलस्योत्तमक एक एव भवति वंश इति प्रसिद्धमेव। गणाधिपो हि परिणागजली नामनुकुर्वन् पीडयामास निखिलान् भूधरानिति पौराणिकीं सिद्धिमनुस्मृत्ये यमुपमा। पृथुर्नाम सक कृतनृपश्रेष्ठो मथम नाद्भुतानशरीराज्ज्ञात आदिनृपो भुवः समीकरणकाले पर्वतान्कंपयामासेति विष्णुपुराणे ॥२॥

अथेति। अथेत्यादौ राजवंशो नृपान्वयो निजंगाम इति संबंधः कस्मात्, पुष्पभूतेस्तन्नामकान्नृपात्। पुंडरीके इव कमले इवेक्षणे नयने यस्य तस्मात्। द्विजवरैर्ब्राह्मणश्रेष्ठैः स्वेच्छया गृहीतः स्वीकृतः कोषोऽर्थसंचयो यस्य स नृपवंशः। पुंडरीकेक्षणाद्विष्णोर्द्विजवरेण ब्रह्मणा। स्वेच्छया गृहीतः कोषः कुडमलो यस्य स नाभिपद्म इव। सर्ववेद-प्रवर्तकत्वाद् द्विजश्रेष्ठत्वं ब्रह्मणः। 'कोषोऽस्त्री कुडमले। जातिकोशेऽर्थसंघाते, इति मेदिनी। साधारणधर्मश्च द्विजवरस्वेच्छागृहीतकोषत्वम्। रत्नानां स्वजातिश्रेष्ठानामाकरात्वनेनृपात् (पक्षे) रत्नाकरात्सागरात् लक्ष्मीः पुरःसराग्रगामिनी यस्य स नृपान्वयो लक्ष्म्यालंकृत इत्यर्थः (पक्षे) लक्ष्मीः पुरःसरा प्रथममुत्पन्ना यस्य सः। आहिताग्न्यादित्वात्परनिपातः। रत्नानां स्वजातिश्रेष्ठानां संचयः (पक्षे) रत्नसंचयश्चतुर्दश रत्नानीव। 'रत्नं स्वजातिश्रेष्ठेऽपि' इति मेदिनी। 'पुरःसर' इति रूपं पुरःपूर्वकात्सरतेः, 'पुरोऽग्रतोऽग्रेषु सर्तेः' इत्यनेन टप्रयये निष्पन्नम्। 'संचय' इति सपूर्वकाच्च एरच्इत्यनेनाच् देवासुरैर्मथ्यमानात्सागराच्चतुर्दश

दयस्थानात्, महाभारवाहनयोग्यः सागर इव सगरप्रभावान्, दुर्जयबलसनाथो हरिवंश इव शूराभिरूगाम राजवंशः । यस्मादविनष्टधर्मधवलाः प्रजास्सर्गा इव कृतमुखान् प्रतापाक्रान्त-

रत्नानि प्रादुर्बभूवुरिति भागवते । उदयस्थानात्समुन्नतेः स्थानात्पु-ष्पभूतेः (पक्षे) पूर्वपर्वतात् । 'उदयस्तु पुमान्पूर्वपर्वते च समुन्नतौ' इति मेदिनी । गुरव उपदेष्टारः बुधा विद्वांसः कवयः काव्यनिर्मातारः कलावन्तो नृत्यादिकलाप्रवीणास्तेजस्विनः शूराः भूनन्दना राजानः प्राया बहुला यस्मिन् स नृपवंशः । (पक्षे) गुरुर्बृहस्पतिः बुधः सौम्यः कविः शुक्रः कलावांश्चन्द्रो तेजस्वी सूर्यः भूनन्दनः मंगलः प्राया बहुला यस्मिन् स ग्रहगण इव तारका समूह इव । सागर इव प्रभा-वःसामर्थ्यं यस्य तस्मात्पुष्पभूतेः (पक्षे) सगरस्यापत्यानि पुमांसः सगराः तेषां प्रभावात्सामर्थ्यात् । सगरशब्दात् "जनपदशब्दात्क्षत्रि-यादञ्' अनेन सूत्रेणाञि" तद्राजकत्वाद्बहुत्वे लुक् । अस्य जनपद-वाचकत्वं कल्प्यमन्यथा सगरेण सागरस्यानिर्मितत्वादसंगतेयमुपमा स्यात् । कपिलावहननार्थैः सगरपुत्रैरुत्खातः सागर इति महाभारते वनपर्वणि । महाभारते भुवः पालनमुद्यमार्थं गतागतं विदधतीनांनाग्नां भारश्च तस्यवाहनस्य धारणस्य योग्यः।शूराद्वीरात(पक्षे तन्नामकाद्यदु वंशपूर्वजात् । दुर्जयं जेतुमशक्यमजय्यं यद्बलं सामर्थ्यं तेन युक्तः (पक्षे) दुर्जयेन दुरभिभवेनार्थाद्भगवता श्रीकृष्णेन बलेन बलरामेण च सनाथो हरिवंशो यादववंश इव । यस्मादिति । यस्माद्राजानोऽजा-यन्तेत्यन्वयः । कृतमुखान्कुशलाद्यस्मान् । 'कृतमुखः कृती कुशल इत्यपि' इत्यमरः । अविनष्टो धर्मो येषां तादृशान् धवान् धूर्तान् लान्ति स्वीकुर्वन्ति ते धर्मनिरतधूर्तग्रहणे बद्धादरा इत्यर्थः । 'धवः जीर्णपुमान्नरे धूर्ते' इति मेदिनी । अथवाऽविनष्टधर्मेण धवलाः

भुवनाः किरणा इव तेजोनिधेः, विग्रहव्याप्तदिङ्मुखा गिरय इव भूभृत्प्रभवात्, धरणिधारणक्षमा दिग्गजा इव ब्रह्मकरात्, उदधीन्पातुमुद्यता जलधरा इव घनागमात्, इच्छाफलदायिनः कल्पतरव इव नन्दनात्, सर्वभूताश्रया विश्वरूपप्रकारा इव श्रीवरादजायन्त राजानः।

शुभ्राः यशस्वन्त इति यावत्। कृतमुखात्कृतयुगारंभादविनष्टेन पूर्णेन धर्मेण धवलाः प्रजासर्गा इव। धर्मो हि चतुष्पात् स च कृतयुगे परिपूर्ण आसीत्तदनुरोधेनाविनष्टेति विशेषणम्। अग्रे च प्रतियुगं तस्यैकैकः पादो नष्टः। धर्मस्य चतुष्पात्वं श्रीहर्षेण नलवर्णने प्रदर्शितम्। 'पदैश्चतुर्भिः सुकृते स्थिरीकृते कृतेऽमुना के न तपः प्रपेदिरे' इति। तेजसां निधेर्यस्मात्राज्ञः(पक्षे) तेजोनिधेः सूर्यात्। प्रतापेन तेजसा (पराक्रमेणेत्यर्थः) आक्रान्तभुवनतलं यैस्ते राजानः (पक्ष) प्रतापेन तापेनाक्रान्तं भुवनतलं यैस्ते किरणाः। 'प्रतापस्तापतेजसोः'इति मेदिनी। भूभृतां राज्ञां भूधराणां च प्रभवाज्जन्ममूलाद्। विग्रहेण समरेण देहेन च व्याप्तानि दिङ्मुखानि यैस्ते राजानो गिरयश्च। ब्रह्मकरात्परब्रह्मचिन्तकात्(पक्षे प्रजापतेः। धरण्याः पृथ्व्या धारणे वहने क्षमाः समर्थाः दिग्गजा इव। नृपपक्षेप्येवमेव। 'सूर्यस्याण्डकपाले द्वे समानीय प्रजापतिः। हस्ताभ्यां परिगृह्याथ सप्त सामान्यगायत। गायतो ब्रह्मणस्तस्मात्समुत्पेतुर्मतंगजाः' इति पालकाव्यः। घनो दृढ आगमः शास्त्रं यस्य तस्माद्यस्मात्पक्षे वर्षाकालात्। उदधीन् पातुं आरक्षितुं प्राशितुं च। वर्षाकाले हि मेघाः समुद्रोपरि लंबमाना जलपानायागता इति तर्कयित्वेयमुपमा नन्दयति सन्तोषयति सुहृदः स नन्दनस्तस्मात्(पक्षे) तन्नामकात्स्वर्गोद्यानात्। नन्दनेत्यत्र 'नन्दि ग्रहिपचादिभ्यः' इत्यनेनल्युः।

तेषु चैवमुत्पद्यमानेषु क्रमेणोदपादि हूणहरिणकेसरी सिन्धुराजज्वरो गुर्जरप्रजागरो गान्धाराधिपगन्धद्विपकूटपाकलो लाटपाटवपाटच्चरो मालवलक्ष्मीलतापरशुः प्रतापशील इति प्रथितापरनामा प्रभाकरवर्धनो नाम राजाधिराजः। यो राज्याङ्गसङ्गीन्यभिषिच्यमान एव

इच्छायाः फलं ददाति ते कल्पतरव इव। 'सुप्यजातौ णिनिस्ताच्छील्ये' इत्यनेन णिनि। श्रीधराः राजलक्ष्म्या आधाराः (पक्षे) विष्णोः। सर्वेषां भूतानां प्राणिनामाश्रया अथवा सर्वेषां भूतानां पंचमहाभूतानामाश्रया विश्वरूपधारा इव। गीतायां हि विश्वरूपदर्शनवेलायामर्जुनेन सर्वभूतानि तत्र दृष्टानि तदनुरोधेन,

तेष्विति। हूणा राजविशेषा एव हरिणा मृगास्तेषां केसरी तद्घातको मृगराजः। सिंधुराजस्य ज्वरः संतापकः। गुर्जराणां तद्देश नृपाणां प्रजागरो निद्रानाशः। गान्धाराणामधुना 'कंदाहार' इति प्रसिद्धानां देशानामधिप एव गंधद्विपो मत्तगजस्तस्य कूटपाकलः, त्रिदोषजो ज्वरः। 'पित्तज्वरः पाकलोऽस्य कूटपूर्वस्त्रिदोषजः' इति त्रिकाण्डशेषः। यद्यपि कूटपाकलशब्दो हस्तिज्वरवाची तथापि गन्धद्विपपदसंनिधानाज्ज्वरमात्रवाच्येव। 'विशिष्टवाचकानां सति पृथग् विशेषणत्वे विशेष्यमात्रपरत्वम्' इति न्यायात्। लाटानां पाटवस्य कौशलस्य पाटच्चरश्चोरः। पाटवशब्दः पटुशब्दाद् 'इगन्ताच्च लघुपूर्वाद्' इत्यनेन भावेऽणि निष्पन्नः। पाटच्चर इति पाटयन् नाशयंश्चोरयतीति पाटच्चर इति पृषोदरादित्वात्साधुः। मालवस्य मालवाधिपस्य लक्ष्मीरेव लता तस्याः परशुः कुठारः। प्रथितं प्रसिद्धमपरमन्यन्नाम यस्य सः। राज्यांगस्य राज्यशरीरस्य संगः संबन्धो विद्यते येषां तानि धनानि मलानीव मुमोच। स्नानेन

मलानीव मुमोच धनानि । यः परकीयेणापि कातरव-
ल्लभेन रणमुखे तृणेनेव धृतेनालज्जत जीवितेन । यः कर-
धृतधौतासिप्रतिबिम्बितेनात्मनाप्यदूयत समितिषु सहायेन,
रिपूणां पुरः प्रधनेषु धनुषापि नमता । यो मानी मानसेना-
खिद्यत । यश्चान्तर्गतापरिमितरिपुशल्यशङ्कुकीलितामिव
निश्चलामुवाह राजलक्ष्मीम् । यश्च सर्वासु दिक्षु समीकृतत-

मलनाशो भवति तद्वदनेनापि राज्याभिषेक वेलायां मलभूतानि
धनान्युत्सृष्टानि । अनेन दानवेलायांधनेऽनासक्तिः सूच्यते । परकी-
येण शत्रुसंबंधिना रणमुखे समराग्रभागे धृतेन कातरस्य भीरोर्वल्ल-
भेन तृणेनेव जीवितेनालज्जत । रणे भीरुः शरणं गच्छंस्तृणं मुखे
धत्ते । अस्य तु तृणस्वीकारेण सहैव तादृशं जीवितं लज्जाकरमा-
भात् । करे हस्ते धृते धौते शुभ्रेऽसौ खड्गे प्रतिबिंबितेनात्मना स्व-
प्रतिबिंबेनापि प्रधनेषु युद्धेषु सहायेन । समितिषु स्वप्रतिबिंबमपि
सहायं नैच्छदित्यर्थः । मानी सगर्वो मानसेऽन्तःकरणे नाखिद्यत
खिन्नो न बभूव । अथवा मानी यो मानसेन उच्चपदाकांक्षारूप-
मनोविकारेणाखिद्यत । यथा रावणः कर्तव्याभावं पश्यन्नखिद्यत
तद्वदिति वा । तथा च प्रसन्नराघवे 'लंकेश्वरः खिद्यते' इति । अथ
वा "समितिषु सहायेन" इत्यतः "अखिद्यत" इत्यंतमेकं वाक्यम् ।
यो मानी सगर्वो रिपूणां पुरो नमता सहायेन धनुषापि करणेन
मानसेन 'अधिकरणे'तृतीया मनस्यखिद्यत । अन्तर्गतान्यपरिमितानि
असंख्येकानि रिपुशल्यानि शत्रुबाणा एव कीलिकास्तैः कीलतामिव
रुद्धामिव राज्यलक्ष्मीम् । शत्रुबाणा अस्यापकारका आसन् येन
चांचल्यचंचू राज्यलक्ष्मीस्तस्मिन् दृढस्थितासीदिति भावः । 'संख्या-
कीलकयोःशंकुः इति शाश्वतः कादंबर्यां तु राज्यलक्ष्म्याः शूद्रके

टावटविटपाटवीतरुतृणगुल्मवल्मीकगिरिगहनैर्दुर्गडयात्रापथैः पृथु-
भिर्भृत्योपयोगाय व्यभजनेव वसुधां बहुधा। यं चालब्धयुद्ध
दोहदमात्मीयोऽपि सकलरिपुसमुत्सारकः परकीयइवततापप्रतापः
प्रतापः। यस्य च वह्निमयो हृदयेषु, जलमयो लोचनपुटेषु, मा-
रुतमयो निःश्वसितेषु, क्षमामयोऽङ्गेषु, आकाशमयः शून्यतायां,
पञ्चमहाभूतमयो मूर्त इवादृश्यत निहतप्रतिसामन्तान्तः पुरेषु

चिरस्थितिरनेनेत्थं वर्णिता। 'अतिचिरकाललग्नमनेकक-
नृपतिसहस्रसंपर्ककलङ्कमिव क्षालयन्ती यस्य कृपाणधाराजले
चिरमुवास राज्यलक्ष्मीः' पुनश्च राजानं विशिनष्टि। यश्चेति।
समीकृतानि, समस्थलीकृतानि, तटानि, तीराणि, आवटा
गर्ता विटपाः शाखा अटवीतरवो वनवृक्षा तृणं गुल्मानि क्षुद्रवृक्षा
वल्मीकानि मृत्कूटा गिरयः पर्वता गहनानि वनानि च येषु तैः।
गमनविघ्नकारिणां विध्वंसनेन कृता मार्गा इति तात्पर्यम्। विभज-
नाय सर्वेषां पदार्थानां समीकरणमावश्यकम्। यं चेति। अलब्धोऽ
प्राप्तो युद्धस्य रणस्य दोहदोऽभिलाषो येन सः। 'दोहदो
गर्भलक्षणे। अभिलाषे तथा गर्भे, इति हैमः। सकलानां रिपूणां
समुत्सारको नाशकः। 'शेषे' षष्ठी। अन्यथा तृजकाभ्यां कर्तरीति
समासनिषेधः स्यात्। याजकादिगणे च समुत्सारकशब्दाभावात्।
यस्य चेति-हृदयेषु वह्निमयो वह्निरूपः संतापकत्वात्, लोचन-
पुटेषु, नेत्रयुगेषु, जलमयो रोदनाश्रुप्रवर्तकत्वात्, निःश्वसितेषु, दुः-
खजेषु दीर्घेषु श्वासेषु मारुतमयः, अंगेषु अवयवेषु क्षमामयः पृथ्व्या
उपरीतस्ततो लुण्ठनेन धूलिव्याप्तत्वात्प्रस्तरकठिनकायत्वाद्वा,
शून्यतायामाकाशमयः अन्यकार्याभावाच्छून्यत्वम्, पंचमहाभूतमयः
पृथ्व्यप्तेजोवाय्वाकाशमयः। मूर्तिमानिव। प्रतिसामन्तानां

प्रतापः। यस्य चासन्नेषु भृत्यरत्नेषु प्रतिबिम्बितेव तुल्यरूपा समलक्ष्यत लक्ष्मीः। तथा च यस्य प्रतापाग्निना भूतिः शौर्योष्मणा सिद्धिरसिधाराजलेन वंशवृद्धिः शस्त्रव्रणमुखैः पुरुषकारोक्तिर्धनुर्गुणकिणेन करगृहीतिरभवत्। यश्च वैरमुपायनं विग्रहमनुग्रहं समरागमं महोत्सवं शत्रुं निधिदर्शनमरिबाहुल्यमभ्युदयमाहवाह्वानं वरप्रदानमवस्कन्दपातं दिष्टवृद्धिशस्त्रप्रहार-

---

शत्रुपक्षीयाणां नृपाणामन्तःपुरेष्ववरोधेषु। यस्य चेति—आसन्नेषु समीपस्थेषु भृत्यरत्नेषु सेवकश्रेष्ठेषु प्रतिबिम्बितेव संजातप्रतिबिम्बेव तुल्यानि सदृशानि रूपाणि यस्याः सा लक्ष्मीः समलक्ष्यत। अत्रासन्नपदेन बिम्बग्रहणयोग्यत्वं रत्नपदेन योग्यानामेव सत्कारश्च व्यज्यते। तथेति। प्रतापः पराक्रम एवाग्निस्तेन भूतिः कल्याणं भस्म वा। शौर्योष्मणा सिद्धिर्योगनिष्पत्तिः। उष्मणा च पाकसिद्धिः- 'सिद्धिः स्त्री योगनिष्पत्तिः' इति मेदिनी। असिधाराजलेन खड्गधारोदकेन वंशस्य कुलस्य वृद्धिरभ्युदयः। जलेन च वंशानां वेणूनां वृद्धिः। खड्गाग्रेण हि स्वान्वयस्य संपदनेन संपादितेति भावः। 'वृद्धिस्तुवर्जने। कालांतरे चाभ्युदयेस्त्रियामुत्तमयोषिति' इति मेदिनी। शस्त्रव्रणानां, शस्त्रक्षतानां मुखैरग्रभागैः पुरुषकारस्य पराक्रमस्योक्तिर्भाषितम्। पराक्रमकथनेनान्यापेक्षा व्रणा एव तत्कथका इत्यर्थः। भाषितमपि मुखैर्भवति। धनुर्गुणस्य धनुष्यज्यायाः किणेन प्रथितेन व्रणजचिन्हेन करगृहीतिर्हस्तस्वीकारः। अनेन हि तस्य धनुर्विद्यातत्परत्वं लक्ष्यते। तदासक्तस्य हि हस्ते किणो भवतीति (पक्षे) करगृहीतिर्दण्डग्रहणम्। यश्चेति। वैरं विरोधम्। 'वीर' शब्दाद्युवादित्वादण् कर्मार्थे। उपायनमुपहारम्। विग्रहं समरम्। समरस्य युद्धस्यागमं प्राप्तिम्। निधिदर्शनं द्रव्यसंग्रहदर्शनम्। अरीणां

पतनं वसुधारारसमन्वयत। यस्मिंश्च राजनि निरन्तरैर्यूपनिकरैरङ्कुरितमिव कृतयुगेन, दिङ्मुखविसर्पिभिरध्वरधूमैः पलायितमिव कलिना, ससुधैः सुरालयैरवतीर्णमिव स्वर्गेण सुरालयशिखरोद्धूयमानैर्धवलध्वजैः पल्लवितमिव धर्मेण, बहिरुपरचितविकटसभासत्रप्रपाप्राग्वंशमण्डपैः प्रसूतमिव

शत्रूणां बाहुल्यमाधिक्यमभ्युदयमुत्कर्षम्। आहवाय समरायाऽह्वानं वरप्रदानम्। अवस्कन्दपातमज्ञाताभिगमनं दिष्टस्य भाग्यस्य वृद्धिम्। शस्त्रप्रहारस्य पतनं वसुधाराया: सुवर्णप्रवाहस्य रसममन्यत। यस्मिन्निति। निरंतरैर्घनैर्यूपनिकरैर्यज्ञस्तंभैः करणैः कृतयुगेन सत्ययुगेनांकुरितमिव। यूपा भूमेर्निर्गताः कदल्यंकुरा इव सत्ययुगांकुरा इति कल्पनयायमुक्तिः। अतो यूपस्य पल्लवरूपत्वाभावादसंगतमिदमिति कल्पना परास्ता। यथा कदल्यंकुरा भूमिमुद्भिद्य बहिरागच्छन्ति तद्वदिमे कृतयुगांकुरा इति भावः। दिशां हरितां मुखेषु विसर्पन्ति प्रसरन्ति तच्छीलैरधूमैः करणैः कलिना। कलियुगेन पलायितमिव। यथा पिशाचादयो मन्त्रपूतधूमसंपर्कभीत्या पलायन्ते तद्वदयमपि यज्ञधूमभीत्या पलायितः। अथवा कृष्णवर्णा दिग्विसर्पिणो धूमा एव पलायमानानि कलिस्वरूपाणीति कल्पना सुधायाऽमृतेन शुभ्रवर्णचूर्णेन 'चुना' इति प्रसिद्धेन वा सहितैः सुरालयैर्देवगृहैः स्वर्गेण स्वर्लोकेनावतीर्णमिवाध आगतमिव। स्वर्गं ससुधानि सामृतानि देवगृहाण्यत्रापि शुभ्रचूर्णापरपर्यायसुधालिप्तान्यतः स्वर्गो महीमागतन्निवेति कल्पना। सुरालयाना देवगृहाणां शिखरेषूर्ध्वभागेपूद्धूयमानैःकम्पमानैर्धवलैःशुभ्रैर्ध्वजैःपताकाभिर्धर्मेण पल्लवितमिव। पल्लवितेत्ययं शब्दोऽङ्कुरितवज्ज्ञातव्यः। बहिर्बहिर्भाग उपरचिताःकृता विकटाविशाला सभाधर्मशाला सत्रंसदान्नंसदैवान्नदानं

ग्रामैः, काञ्चनमयसर्वोपकरणैर्विभवैर्विशीर्णमिव मेरुणा, द्विज-
दीयमानैरर्थकलशैःफलितमिव भाग्यसंपदा

तस्य च जन्मान्तरेऽपि सती पार्वतीव शंकरस्य, गृहीतपरहृ-
दया लक्ष्मीरिव लोकगुरोः स्फुरत्तरलतारका रोहिणीव कलावतः
सर्वजनजननी बुद्धिरिव प्रजापतेः महाभूभृत्कुलोद्गता गङ्गेव वाहि
नीनायकस्य, मानसानुवर्तनचतुरा हंसीव राजहंसस्य सकललोक

प्रपा पानीयशाला प्राग्वंशमंडपो हविःशालायाः पूर्वभागे यजमाना-
दीनां निवासार्थं निर्मितो मण्डपस्तैः करणैर्ग्रामैः प्रसूतमिव।
एतेषां बाहुल्याद्बहिर्भागेऽन्ये ग्रामा उत्पन्नान्विति कल्पना ।
काञ्चनमयानि सुवर्णमयानि सर्वोपकरणानि येषां तैर्विभवैः संपद्भिः
करणैर्मेरुणा विशीर्णमिव विदीर्णमिव । द्विजेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो
दीयमानैरर्थकलशैर्धनपूर्णघटैः फलितमिव । घटाकाराणि नारिके-
लसदृशानि फलानि भाग्यसंपदः संजातानीति तात्पर्यार्थः ।

तस्येति । जन्मान्तरेष्वन्यस्मिञ्जन्मन्यपि सतीव पार्वतीव ।
दक्षस्य प्रजापतेर्दुहिता सती पितृभवने यज्ञावलोकनायागता । तत्राव-
मानिताऽऽत्मानमग्निसाच्चकारपार्वतीरूपेणोदियायशंकरंवव्रे(पक्षे)सती
पतिव्रता । गृहीतमाकर्षितं परहृदयमन्यमानसं वत्सलतया यया सा ।
लक्ष्मीपक्षे गृहीतपरहृदयेति सुलभम् । लोकगुरोर्लोकाधिपस्यविष्णो-
र्णोश्च स्फुरन्त्यौ तरले तारके कनीनिके यस्याः । (पक्षे)स्फुरन्ती तर-
ला चंचला तारका नक्षत्रं यस्याः सा रोहिणीव । कलावतः कलानि-
पुणस्य (पक्षे) चन्द्रस्य । सर्वलोकजननी सर्वासां प्रजानां वात्सल्या-
न्माता । (पक्षे) जन्यतेऽनया जननी उत्पादनसाधनं करणे ल्युट्
सर्वलोकानां जनन्युत्पादिका । वाहिनीनायकस्य सेनाध्यक्षस्य
समुद्रस्य च । महाभूभृद् महानृपो हिमालयश्च तस्य कुल उद्गतोत्प-

चिनचरणा त्रयीव धर्मस्य, दिवानिशममुक्तपार्श्वस्थितिररुन्धतीव महामुनेः, हंसमयीव गतिषु, परपुष्टमयीवालापेषु चक्रवाकीमयीव पतिप्रेम्णि, प्रावृण्मयीव पयोधरोन्नतौ, मदिरामयीव विलासेषु निधिमयीवार्थसंचयेषु, वसुधारामयीव प्रसादेषु, कमलमयीव कोषसंग्रहेषु, कुसुममयीव फलदानेषु, संध्यामयीव वन्द्यत्वे, चन्द्रमयीव निरुष्मत्वे, दर्पणमयीव प्रतिप्राणि-

न्ना। मानसमन्तः करणं तदाख्यं सरश्च तस्यानुवर्तने अनुकूलाचरणे तत्र स्थितौ च चतुरा कुशला राजहंसस्य नृपश्रेष्ठस्य पक्षिणश्च त्रयीव वेदत्रयीव। 'श्रुतिः स्त्री वेद आम्नायस्त्रयी' इत्यमरः। सकलैर्लोकैरर्चितौ पूजितौ चरणौ पादौ (पक्षे) चरणाः शाखा यस्याः सा। दिवानिशं रात्रिंदिवममुक्ता पार्श्वे समीपे स्थितिर्यया सा। महामुनेर्मननान्मुनिर्विचारवांस्तस्याथवा राजर्षेः (पक्षे) वशिष्ठस्य। आकाशे हि वशिष्ठमपरित्यजन्त्यरुन्धती तिष्ठति तदनुरोधत इदम्। हंसमयीव हंसीव। आलापेषु भाषणेषु। प्रावृण्मयीव वर्षाकालमिव पयोधरयोः स्तनयोः पयोधराणां मेघानां चोन्नतौ। मदिरामयीव मद्यमिव विलासेषु शृंगारजेषु विकारेषु। 'यानस्थानासनादीनां मुखनेत्रादिकर्मणाम्। विशेषस्तु विलासः स्यादिष्टसंदर्शनादिना' इति विश्वनाथः। मदिरा चाकस्मात्क्रोधादीन् विकाराञ्जनयतीति प्रसिद्धमेव, अर्थानां धनानां संचयेषु संग्रहेषु। वसुधारामयीव सुवर्णधारेव प्रसादेष्वनुग्रहेषु। कोषाणामर्थसंचयानां कुड्मलानां वा। स्त्रीणां पुष्पकलिकासु स्वाभाविकी प्रीतिस्ते युज्यत इदं वर्णनम्। कुसुममयीव पुष्पाणीव फलानां दानेषु। कुसुमेभ्यो यथा फलानि जायन्ते तद्वदस्याः सकाशद्भृत्यानां सेवाफललाभः। वन्द्यत्वे नमस्कार्यत्वे। निरुष्मत्वे उष्मा गर्व औष्ण्यं च। दर्पणमयीव

ग्रहणेषु, सामुद्रमयीव परचित्तज्ञानेषु, परमात्ममयीव व्याप्तिषु, स्मृतिमयीव पुण्यप्रवृत्तिषु, मधुमयीव सम्भाषणेषु अमृतमयीव तृष्यत्सु, वृष्टिमयीव भृत्येषु, निर्वृतिमयीव सखीषु वेतसमयीव गुरुषु, गोत्रवृद्धिरिव विलासानाम्, प्रायश्चित्तशुद्धिरिव स्त्रीत्वस्य, आज्ञासिद्धिरिव मकरध्वजस्य, व्युत्थानबुद्धिरिव रूपस्य दिष्टवृद्धिरिव रतेः, मनोरथसिद्धिरिव रामणीयकस्य, दैवसंपत्तिरिव लावण्यस्य, वंशोत्पत्तिरिवानुरागस्य, वरप्राप्तिरिव

मुकुर इव प्राणिनि प्राणिनीति प्रतिप्राणि प्रतिप्राणिग्रहणं स्वीकारः प्रतिबिम्बोत्पादनं च । सामुद्रमयीव सामुद्रशास्त्रमिव परेषां चित्तस्य मनसो ज्ञानेषु । सामुद्रविद्यातोऽन्यदीयस्वभावज्ञानं जायत इति प्रथितम् । 'वेत्ता स्त्रीपुंसयोश्चिन्हं सामुद्रिक उदाहृतः' इति हारावली । परमात्ममयीव ब्रह्मेव व्याप्तिषु ब्रह्म सर्वव्यापीति वेदान्तराद्धान्तः । अस्या अपि कार्यार्थं सर्वत्र गमनेन सर्वत्र व्याप्तिः तृष्यत्सु तृष्णापीडितेषु अमृतमयीव सुधेव । जलादिदानेन तेषां तृष्णाशामकत्वात् । वृष्टिमयीव वृष्टिरिव सेवकेषु सदैव धनवर्षणात् । निर्वृतिमयीव चित्तस्वास्थ्यमिव सखीषु वयस्यासु तन्मानसमोदजनकत्वात् । वेतसमयीव नम्रत्वाद् गुरुषु श्वश्र्वादिवृद्धेषु । विलासानां गोत्रस्य कुलस्य वृद्धिरिव । प्रायश्चित्तशुद्धिरिव पवित्रीकरणमिव स्त्रीत्वस्य स्त्रीजातेः । अनया निखिला स्त्रीजातिः पवित्रिता । आज्ञासिद्धिरिव । अमोघमस्त्रं नु मदनस्येति तात्पर्यार्थः । व्युत्थानबुद्धिरिवेति । व्युत्थानं समाधेश्चलनम् । स्वाधिक्यसंपादनाय समाधिमाश्रितस्य रूपस्य समाधेरवसरणवेलायां जायमानं ज्ञानमित्यर्थः । रतेर्मदनभार्यायाः, दिष्टस्य भागधेयस्य वृद्धिरिव । मृतो मदनः कदाचिदनया साधनभूतयोज्जीवेतेति रतेर्भाग्यवृद्धिः । रामणी-

कान्तेः, सर्गसमाप्तिरिव सौन्दर्यस्य, आयतिरिव यौवनस्य, अनभ्रवृष्टिरिव वैदग्ध्यस्य, अयशःप्रमृष्टिरिव लक्ष्म्याः, यशःपुष्टिरिव चारित्र्यस्य, हृदयतुष्टिरिव धर्मस्य, सौभाग्यपरमाणुसृष्टिरिव प्रजापतेः, शमस्यापि शान्तिरिव, विनयस्यापि विनीतिरिव, आभिजात्यस्याप्यभिजातिरिव, संयमस्यापि संयतिरिव, धैर्यस्यापि धृतिरिव, विभ्रमस्यापि विश्रान्तिरिव यशोमती नाम महादेवी प्राणानां प्रणयस्य विस्रम्भस्य धर्मस्य सुखस्य च भूमिरभूत् । यस्य वक्षसि नरकजितो लक्ष्मीरिव ललास ।

यकस्य रमणीयशब्दात् 'योपधाद्गुरूपोत्तमाद्वुञ्' इत्यनेन भावे वुञ् । अनुरागस्य प्रेम्णो वंशोत्पत्तिरन्वयसंभूतिः । सर्गसमाप्तिः,उत्पत्तेः-समाप्तिः पराकाष्ठेत्यर्थः आयतिरुत्तरकाल इव यौवनस्य तारुण्यस्य । युवादित्वादण् भावे' । अनभ्रवृष्टिः अभ्रेण सहिता वृष्टिरभ्रवृष्टिर्न तथाऽनभ्रवृष्टिः सा चाश्चर्यजनिका पुण्यवल्लभ्या च । वैदग्ध्येनेयं पुण्यतो लब्धाश्चर्यकारिणी । वैदग्ध्यं तस्यामतीवेति तात्पर्यम् । लक्ष्म्या अयशसः 'यः सुन्दरस्तद्वनिता अपकीर्तेः प्रमृष्टिः शोधिका नाशिका । अनुरूपभर्तृगामिन्यपि लक्ष्मीयुतेत्यर्थः । चारित्र्यं पातिव्रत्यम् । सौभाग्यस्य परमाणूनां सूक्ष्मावयवानां सृष्टिरुत्पत्तिः (प्रथमतो ब्रह्मणा सौभाग्यमुत्पिपत्सुनेयमेव निर्मितेति भावः) आभिजात्यं कुलीनत्वम् । विभ्रमस्य दयितागमने बाहुमूलादीनां व्यक्तीकरणरूपभावस्य विश्रान्तिस्त्वरा विश्रम्भस्य विश्वासस्य । नरकान् कुंभीनादीन् जयति सः । 'क्विप् च' इत्यनेन क्विप् । (पक्षे) नरकासुरं जितवतो नारायणस्य । ललास शुशुभे आलिलिंग वा ।

निसर्गत एव च स नृपतिरादित्यभक्तो बभूव । प्रतिदिनमुदये दिनकृतः स्नातः सितदुकूलधारी धवलकर्पटप्रावृतशिराः प्राङ्मुखः क्षितौ जानुभ्यां स्थित्वा कुङ्कुमपङ्कानुलिप्त मण्डलके पवित्रपद्मरागपात्रीनिहितेन स्वहृदयेनेव सूर्यानुरक्तेन रक्तकमलषण्डेनार्चां ददौ । अजपच्च जप्यं सुचरितः प्रत्युषसि मध्यंदिने दिनान्ते चापत्यहेतोःप्राध्वं प्रयतेन मनसा जजपूको मंत्रमादित्यहृदयम ।

भक्तजनानुरोधविधेयानि तु भवन्ति देवतानां मनांसि । यतः । स राजा कदाचिग्द्रीष्मसमये यदृच्छया सितकरकरसितसुधाधवलस्य हर्म्यस्य पृष्ठे सुष्वाप । पार्श्वे चास्य द्वितीनिसर्ग इति । निसर्गत एव । दिनकृतः सूर्यस्योदये सिते शुभ्रे दुकूले चौमजे वसने धरति सः । धवलेन शुभ्रेण कर्पटेन शिरोवेष्टनवस्त्रेण प्रावृतं शिरो येन सः । रागाणां माणिक्यानां पात्र्यां भाजने निहितेन स्थापितेन स्वमानसेनेव यथा मनः सूर्यानुरक्तं तद्वदनुरक्तेन रक्तकमलसमूहेनार्चां पूजां ददौ । प्रत्यूषसि प्रभाते मध्यंदिने मध्यान्हे दिनान्ते सायंकाले। एतेन तदा त्रिः संध्या वंदनपद्धतिरासीदिति ज्ञायते । प्राध्वं सनम्रं प्रयतेन पवित्रेण मनसा आदित्यहृदयमिति मंत्रनाम ।

भक्तेति । अर्थान्तरन्यासः ग्रीष्मसमय इत्यनेन बहिः स्वापकारणमूष्मातिशयरूपं व्यंजितम् यदृच्छया । 'यदृच्छा स्वैरिता' इत्यमरः । सितकरस्य चंद्रस्य करैः किरणैः सुधया चूर्णविशेषेण च धवलः शुभ्रः । स्वयं शुभ्रोपि चद्रकिरणैर्विशेषतो धवल इत्यर्थः । पार्श्वे च समीपे द्वितीयशय्यायां पृथक् शय्या हि नारीणां स्वापे योग्या । नाश्नीयाद्भार्यया सार्धं न च स्वप्यात्तया सह' इतिवच-

यशयने देवी यशोवती शिश्ये । परिणतप्रायां तु श्यामायाम, आसन्नप्रभातवेलाविलुप्यमानलावण्ये लिलम्बिषमाणे सीदत्तेजसि तारकेश्वरे, कराग्रस्पृष्टकुमुदिनीप्रमोदजन्मनि शशधरस्वेद इव गलत्यतिशीतलेऽवश्यायपयसि, मधुमदमत्तप्रसुप्तसीमन्तिनीनि :श्वासाहतेषु संक्रान्तमदेष्विव घूर्णमानेष्वन्तः पुरप्रदीपेषु, राजनि च विमलनखप्रतिबिम्बिताभिः सवाह्य मानचरण इव तारकाभिः, विस्रब्धप्रसारितैर्दिगङ्ग-

---

नान् । श्यामायां रात्रौ । 'श्यामा स्याच्छारिवा निशा ' इत्यमरः । आसन्नया समीपागतया प्रभातवेलया विलुप्यमानं नाशितं लावण्यं कान्तिर्यस्य तस्मिन् लिलम्बिषमाणे दूरं जिगमिषौ सीदन्नस्यत्तेजो यस्य तस्मिंस्तारकेश्वरे चन्द्रे सति । रात्र्यास्तुरीययामावसान इति तात्पर्यार्थः । कराग्रैः किरणाग्रैः स्पृष्टायाः कुमिदिन्याः प्रमोदस्यानंदस्य जन्मयस्मादितिचन्द्र विशेषणं, अथवा कराग्रस्पृष्टायाः कुमुदिन्याः प्रमोदाजन्म यस्य तस्मिन्नेवायपयसीत्यर्थः । परं चंद्रे गन्तुकामे कुमुदिन्याः प्रमोदवर्णनमसंगतमतः पूर्वोक्तार्थ एव पुनरुक्तः । शशधरस्य चन्द्रमसः स्वेद इव अवश्यायपयसि नीहारोदके गलति सति। शिशिरस्वेद इतिपाठःनमनोरमः । ग्रीष्मतौ स्वेदोत्पत्त्योऽमाधिक्यस्यैवानुभवसिद्धत्वात् । मधुनो मद्यस्य मदेन मत्तानां प्रसुप्तानां निद्रितानां सीमन्तिनीनां प्रमदानां निश्वासैराहतेषु ताडितेष्वत एव संक्रान्तः समागतो मदो येषां तेषु । मद्यमत्तकामिनीश्वाससंपर्कान्मदोपि दीपेष्वागत इति भावः । घूर्णमानेषु भ्रममागतेषु । प्रदीपा अपि मद्यमत्तचिन्हानि प्रकटयामासुरिति तात्पर्यार्थः । वैमलेषु स्वच्छेषु नखेषु प्रतिबिम्बिताभिस्तारकाभिर्नवैः संवाह्यमानौ चरणौ यस्य तस्मिन् । विस्रब्धं निर्भयं प्रसारितैर्विस्तारितैः,

नानामिवार्पितैरङ्गैर्मधुसुगन्धिभिः स्वहस्तकमलतालवृन्तवा-
तैरिव श्वसितैर्मुखश्रिया वीज्यमाने, विमलकपोलस्थलस्थितेन
सितकुसुमशेखरेणेव रतिकेलिकचग्रहलम्बितेन प्रतिमाशशि-
बिम्बेन विराजिते स्वपति, देवी यशोवती सहसैव 'आर्यपुत्र,
परित्रायस्व परित्रायस्व' इति भाषमाणा भूषणरवेण व्याहर-
न्तीव परिजनमुत्कम्पमानाङ्गयष्टिरुदतिष्ठत् ।

अथ तेन सर्वस्यामपि पृथिव्यामश्रुतपूर्वेण किमुत देवीमुखे परि

दिगङ्गनानामिव दिग्भागेभ्य इवार्पितैर्दत्तैरङ्गैरवयवैरुपलक्षिते । इत्थं
भूतलक्षणे" तृतीया । मुखश्रिया मुखकान्त्या कर्तृभूतया मधुना
मद्येन सुरभिभिः, सुगन्धिभिः, श्वसितैः, श्वासैः, स्वस्यात्मनो
हस्तकमलं हस्तस्थितमरविन्दमेव व्यजनं तस्य वातैरिव वीज्यमाना
विमले स्वच्छे कपोलस्थले गण्डस्थले स्थितेन प्रतिमाशशिनः
प्रतिबिम्बशशिनो बिम्बेन । विमलपदं बिम्बग्रहणसामर्थ्यं द्योतयति
कथंभूतेन रतिकेलिः सुरतक्रीडा तस्यां कचग्रहणे लम्बितो गण्ड-
स्योपर्यागतस्तेन कुसुमशेखरेणेव पुष्पगुच्छेनेव विराजन्ती शोभ-
माना । विराजित इति-राज्ञो विशेषणं वा । सहसैवातर्कितमेव ।
परित्रायस्व रक्ष । भूषणरवेणालंकारशब्देन संभ्रमचलनादलंकार-
शब्दः व्याहरन्तीवाह्वयन्तीव । उत्कम्पमाना वेपमाना अंगयष्टिः
शरीरयष्टिर्यस्याः सा ।

अथ तेनेति । पूर्वं श्रुतः श्रुतपूर्वो न तथा श्रुतपूर्वस्तेन ।
'सुप्सुपा' इत्यनेन समासः । दग्ध इव ज्वलित इव । एकपदे झटिति
गाढनिद्रः केनचिदंगारादिना दह्येत चेत्तूर्णमुत्तिष्ठति । कोपेन क्रोधेन
कम्पमानेन वेपमानेन दक्षिणकरेणापसव्यहस्तेनाकृष्टेन कर्णोत्प-
लेनेव कर्णोपरिस्थापितेन कमलेनेव । एतेन तस्य खड्गनिष्कोषणो

आयस्वेति ध्वनिना दग्ध इव श्रवणयोरेकपद एव निद्रां तत्याज राजा । शिरोभागाच्च कोपकम्पमानदक्षिणकराकृष्टेन कर्णोत्पलेनेव निर्गच्छताच्छधारेण धौतासिना सीमन्तयन्निव निशाम्, अन्तरालव्यवधायकमाकाशमिवोत्तरीयांशुकं विक्षिपन्वामकरपल्लवेन करविक्षेपवेगगलितेन हृदयेनेव भयनिमित्तान्वेषिणा भ्रमता दिक्षु कनकवलयेन विराजमानः, सत्वरावतारितवामचरणाक्रान्तिकम्पितप्रासादः, पुरःपतितेनासिधारागोचरगतेन शशिमयूखखण्डेनेव खण्डितेन हारेण राजमानः, लक्ष्मीचुम्बनलग्नताम्बूलरसरञ्जिताभ्यामिव निद्रया कोपेन चातिलोहिताभ्यां

निरायासत्वं दर्शितम् । अच्छा स्वच्छा धारा निशिताग्रभागो यस्य तेन । 'धारा० । खड्गादेर्निशिते मुखे' इति मेदिनी । सीमन्तयन् द्विधा कुर्वन् । खड्गचालनेन तत्तेजसा तमो द्विधाभूतमिवाभात् , अन्तरालेऽभ्यन्तरे व्यवधायकमपवारकमाकाशमिव । एतेन वस्त्रस्य सौक्ष्म्यं द्योतितम् । वामेनि । दक्षिणहस्ते खड्गस्य सत्वाद्वामेन वस्त्रक्षेपणम् । करस्य विक्षेपस्य प्रेरणाया वेगाद् गलितेन पतितेन हृदयेनेव भयस्य, भीतेर्निमित्तानि, कारणान्यन्विष्यति मार्गयति तेन दिक्षु, आशासु, भ्रमता, कनकवलयेन सुवर्णकङ्कणेन विराजमानः शोभमानः । वर्तुलो भूमौ पदार्थः पतित इतस्ततो भ्रमतीति हि प्रत्यक्षम् । सत्वरं तूर्णमवतारितस्याधोनिवेशितस्य वामचरणस्य सव्यपादस्याक्रान्त्या कम्पितः, प्रासादो, राजगृहं, येन सः । असिधारायाः खड्गाग्रभागस्य गोचरं वशं गतेन खण्डितेन त्रुटितेन हारेण मुक्ताहारेण शशिमयूखमण्डलेन चंद्रकिरणसमूहेनेव राजमानः । लक्ष्म्याश्चुम्बनं तया, कृतं चुम्बनं तेन लग्नः, संलग्नस्ताम्बूलरसस्तेन रञ्जिताभ्यामिव रक्ताभ्यामिव । चुम्बनस्थानेषु नेत्रस्य

लोचनाभ्यां पाटलयन्पर्यन्तानाशानाम, बद्धान्धकारया त्रिपताकया भ्रकुट्या पुनरिव त्रियामां परिवर्तयन्, 'देवि, न भेतव्यं न भेतव्यम्' इत्यभिदधानो वेगेनोत्पपात। सर्वासु च दिक्षु विक्षिप्तचक्षुर्यदा नाद्राक्षीत्किंचिदपि तदा पप्रच्छ तां भयकारणम्।

अथ गृहदेवतास्विव प्रधावितासु यामिकिनीषु प्रबुद्धे च समीपशायिनि परिजने, शान्ते च हृदयोत्कम्पकारिणि साध्वसे सा समभाषत—'आर्यपुत्र, जानामि स्वप्ने भगवतः सवितुर्मण्डलान्निर्गत्य द्वौ कुमारकौ, तेजोमयौ, बालातपेनेव पूरयन्तौ दिग्भागान्, वैद्युतमिव जीवलोकं कुर्वाणौ, मुकुटिनौ, कुण्डलिनौ अङ्गदिनौ, कवचिनौ, गृहीतशस्त्रौ, इन्द्रगोपकरुचा रुधिरेण स्नातौ, उन्मुखेनोत्तमाङ्गघटमानाञ्जलिना जगता निखिलेन प्रणम्यमानौ, कन्ययैकया च चन्द्रमूर्त्येव सुषुम्णरश्मिनिर्गत-

---

अहणां प्रसिद्धमेव। तिस्रः पताकाः ध्वजाः यस्यास्तया। भ्रुकुटेस्त्रिधा परिवर्तनेन त्रियामां रात्रिं पुनरिव परिवर्तयन् आनयन्।

अथेति। यामिकिनीषु जागरिकासु। रात्रौ नृपप्रासादे जाग्रतो जनाः संरक्षणाय नियुक्ताः सन्ति। समीपं निकटअर्थादन्तःपुरस्य बहिर्द्वारि शेते तस्मिन् प्रबुद्धे जागरिते। हृदयस्य मनस उत्कम्पं वेपनं करोति तच्छीले साध्वसे भये शान्ते नष्टे सति। सवितुः सूर्यस्य मण्डलात्परिधेर्निर्गत्य बहिरागत्य। बालातपेन कोमलकिरणैर्दिग्भागान्दिशां प्रदेशान् पूरयन्तौ व्याप्नुवन्तौ वैद्युतमिव विद्युत्संबंधिनमिव। अंगदिनौ केयूरवन्तौ। इन्द्रगोपक इव ताम्रवर्णो मृगकीटक इव रुक् कान्तिर्यस्य तेनोन्मुखेनोर्ध्वावलोकिना। सुषुम्णारश्मेरमृतमयकिरणान्निर्गतया बहिरागतया। विलपन्त्याः

यानुगम्यमानौ, क्षितितलमवतीर्णौ । तौ च मे विलपन्त्याः शस्त्रेणोदरं विदार्य प्रवेष्टुमारब्धौ । प्रतिबुद्धास्मि चार्यपुत्रं विक्रोशयन्ती वेपमानहृदया' इति ।

एतस्मिन्नेव च कालक्रमे राजलक्ष्म्याः प्रथमालापः प्रथयन्निव स्वप्नफलमुपतोरणं रराण प्रभातशङ्खः । भाविनीं भूतिमिवाभिदधानो दध्वनुर्मन्दं दुन्दुभयः । चकाण कोणाहतानन्दादिव प्रत्यूषनान्दी । जयजयेति प्रबोधमङ्गलपाठकानामुच्चैर्वाचोऽश्रूयन्त, पुरुषश्च वल्लभतुरङ्गमन्दुरामन्दिरेमन्दमन्दं

मे विलपन्तीं (मामनादृत्येत्यर्थः) 'षष्ठी चानादरे' इत्यनेनानादरे षष्ठी । विदार्य भित्वा ।

एतस्मिन्नेवेति स्वप्नफलं प्रथयन्निव स्वप्नोऽवश्यं भावीति सूचयन्निव उपतोरणं बहिर्द्वारोपरि । विभक्त्यनेनाव्ययीभावः । प्रातदृष्टः स्वप्नः सद्यः फलद इति धर्मशास्त्रमतश्च स्वप्नोऽयमवश्य सफल भवेदिति सूचयितुमिदं वर्णनम । अमन्दमुच्चैः । कोणो वादनदण्डस्तेन आहतं ताडनं तस्यानन्दात् । प्रत्यूषनान्दी प्राभातिकी भेरी । प्रबोधमंगलपाठकाः प्रातर्नरपतिप्रबोधनार्थं गायन्तो बन्दिनः । वल्लभः, प्रियो, यस्तुरंगस्तस्य मन्दुरामंदिरं शाला । मन्दुराशब्द एव वाजिशालावाच्यपि तुरंगपदसान्निध्याच्छालामात्रवाचकः । वाचकानां पदानां सति पृथग्विशेषणत्वे विशेष्यमात्रपरत्वमिति न्यायात् । सुप्तं निद्रा । 'नंपुसकेभावेक्तः । तस्मादुत्थितः । अथवादौ सुप्तः पश्चादुत्थितः । अस्मिन्पक्षेऽकर्मकत्वात्कर्तरि क्तः सप्तानां हयानाम्, च्योतत्तुषाराणां पतद्धिमानां सलिलैः शीकरमार्द्रं मरकतमिव गारुत्मतमिव हरितं हरिद्वर्णं यवसं तृणं किरन । वक्त्रापरवक्त्रे । वक्त्रं भाव्यर्थसूचकः छंदोविशेषः

सुप्तोत्थितः सप्तानां कृतमधुरहेषारवाणां पुरश्च्योततुषार-सलिलशीकरं किरन्मरकतहरितं यवसं वक्त्रापरवक्त्रेपपाठ—

निधिरस्तरुविकारेण सन्मणिः स्फुरता धाम्ना ।

शुभागमो निमित्तेन स्पष्टमाख्यायते लोके ॥३॥

अरुण इव पुरःसरो रविं पवन इवातिजवो जलागमम् ।

शुभमशुभमथापि वा नृणां कथयति पूर्वनिदर्शनोदयः' ॥४॥

नरपतिस्तु तच्छ्रुत्वा प्रीयमाणेनान्तःकरणेन तामवादीत्—'देवि, मुदोऽवसरे विषीदसि । समृद्धास्ते गुरुजनाशिषः । पूर्णा नो मनोरथाः । परिगृहीतासि कुलदेवताभिः । प्रसन्नस्ते भगवानंशुमाली ।

अपरवक्त्रम् तन्नामकं मात्रावृत्तम् । 'वक्त्रमास्ये छंदसि च' हेमचंद्रः । उभयोराख्यायिकायामत्यावश्यकत्वम् । तथा चाग्निपुराणे, 'उच्छ्वासैश्च परिच्छेदो यत्र सा चूर्णिकोत्तरा । वक्त्रं चापरवक्त्रं च यत्र साऽऽख्यायिका मता' ।

निधिरिति । निधिर्भूमिगतो धनसंचयस्तरुविकारेण वृक्षस्य विशिष्टावस्थानेन सन्मणिः समीचीनं रत्नं स्फुरता विकसता धाम्ना तेजसा शुभागमः शुभस्य प्राप्तिर्निमित्तेन शकुनेन लोके जने स्पष्टमाख्याते कथ्यते । दीपकालंकारः॥३॥

अरुण इति । पुरःसरोऽग्रयायी अरुणो रविमिवातिजवो वेगवान् पवनो वायुर्जलागमं वर्षाकालमिव पूर्वं प्राग् निदर्शनस्य दृष्टांतस्योदयः प्राप्तिर्नृणां शुभमशुभं वा कल्याणमकल्याणम् वा कथयति । भाविनावर्थानर्थौ पूर्वमेव शकुनादिना ज्ञायेते इति तात्पर्यार्थः ॥४॥

नरपतिरिति । प्रीयमाणेन संतुष्टेन । स्वमनोरथसूचकवाक्य-

नचिरेणैवातिगुणवदपत्यत्रयलाभेनानन्दयिष्यति भवतीम्' इति । अवतीर्य च यथाक्रियमाणाः क्रियाश्चकार । यशोवत्यपि तुतोष तेन पत्युर्भाषितेन ।

ततः समतिक्रान्ते कस्मिंश्चित्कालांशे देव्यां च यशोवत्यां देवो राज्यवर्धनः प्रथममेव संबभूव गर्भे । गर्भस्थितस्यैव च यस्य यशसेव पाण्डुतामादत्त जननी । गुणगौरवक्लान्तेव गात्रमुद्वोढुं न शशाक । कान्तिविसरामृतरसतृप्तेवाहारं प्रति पराङ्मुखीबभूव । शनैः शनैरुपचीयमानगर्भभरालसा च

श्रवणात्तस्यानंदः । मुदोऽवसरे आनन्दस्य समये विषीदसि खिद्यसे अंशूनां किरणानां माला पंक्ति र्विद्यते यस्य स भगवान् सूर्यः । 'ब्रह्मादिभ्यश्च' इत्यनेन मत्वर्थीय इनिः । अवतीर्य चन्द्रशालायाः इति शेषः

तत इति । कालांशे स्वल्पे काले । स्वप्नः सफल इति सूचयितुमिदम् । गर्भे स्थितस्य विद्यमानस्य यस्य राज्यवर्धनस्य । यशसा कीर्त्येव । यशसः पाण्डुत्ववर्णनं कविसंप्रदायानुरूपम् । अतएव विश्वनाथेनोक्तं कविसमये 'यशसि धवलता' इति । गुणानां गौरवेण जाड्येन क्लान्ता पीडितेव गात्रं शरीरमुद्वोढुं धारयितुम् । भारेण पीडितः स्वशरीरधारणेऽप्यसमर्थो भवति । कान्तीनां तेजसां विसरः समूह एवामृतरसस्तेन तृप्तेव । तृप्ताय च पानादि न रोचते । उक्तं च श्रीहर्षेण 'अपां हि तृप्ताय न वारिधारा स्वादुः सुगंधिः स्वदते तुषारा' । उपचीयमानस्य वर्धमानस्य गर्भस्य भरेण भारेणालसामन्दा गुरुभिर्वृद्धजनैर्वारितापि निषिद्धापि कथमपिकष्टेन एतेन तस्या जनेष्वादरातिशयो व्यज्यते । विश्राम्यन्ती श्रान्ता विश्रमाय यत्रकुत्रापि तिष्ठन्ती सालभञ्जिकेव पुत्तलिकेव । कमलेति ।

गुरुभिर्वारितापि वन्दनायकथमपिसखीभिर्हस्तावलम्बेनानीयत।
विश्राम्यन्ती सालभञ्जिकेव समीपगतस्तम्भभित्तिष्वलक्ष्यत।
कमललोभनिलीनैरलिभिरिव धृतावुद्धर्तुं नाशकच्चरणौ।
मृणाललोभेन च चरणनखमयूखलग्नैर्भवनहंसैरिव संचार्यमाणा
मन्दमन्दं बभ्राम। मणिभित्तिपातिनीषु प्रतिमास्वपि हस्तावल-
म्बनलोभेन प्रसारयामास करकमलम्, किमुत सखीषु।
माणिक्यस्तम्भदीधितीरप्यालम्बितुमाचकाङ्क्ष. किं पुनर्भवन-
लताः। समादेष्टुमप्यसमर्थासीद्गृहकार्याणि केव कथा कर्तुम।
आस्तां नूपुरभारखेदितं चरणयुगलं मनसापि नोदसहत

गर्भपीडिता चरणावुद्धर्तुं नाशकत्परं भ्रमरैः कमलभ्रान्त्या ध्यातौ तावताऽसमर्थेति कल्पितम्। मृणाललोभेन बिसलोभेन चरणनखाना मयूखेषु किरणेषु लग्नैः संसक्तैर्हंसैमरालैः संचार्यमाणा गमनाय प्रेर्यमाणा मन्दं मन्दं शनैः शनैर्बभ्राम। हंससदृशीं गतिमाचरन्ती मन्दं जगाम हंसलग्नत्वं कारणं कथितम्। मणिभित्तिषु पतन्ति तासु प्रतिमासु स्वप्रतिबिम्बेष्वपि। श्रान्ता यस्य कस्यापि सहायं ग्रहीतुमुत्कण्ठिता भवति तद्वदियमपि स्वप्रतिमाधारमपेक्षतेति तात्पर्यम्। माणिक्यानां पद्मरागाणां दीधितीरपि किरणान्यप्या लंबितुमाश्रयितुमाचकांक्ष इयेष। भवनलता गृहमध्ये स्थापिता लताः। नूपुरयोर्मञ्जर्योर्भारेण खेदितं पीडितम्। पादावसमर्था-वित्यत्र नाश्चर्यमपि तु सौधारोहणकल्पनामपि नासहत। तस्तान। दीर्घं श्वसितवती। प्रत्युत्थानेष्विति। उभयोर्जान्वोरूरुपर्वणाः शिखरयोरग्रयोर्निहितौ स्थापितौ करकिसलयौ यया सा। दिवस-मित्यत्यन्तसंयोगे द्वितीया। स्तनयोः पृष्ठे संक्रान्तेन पतितेनापत्य-दर्शनस्यौत्सुक्यादिच्छया ... तः प्रविष्टेनेव। स्तनयोः पृष्ठ्या-

सौधमारोढुम्। अङ्गान्यपि नाशक्नोद्धारयितुं दूरे भूषणानि। स्विन्नयित्वापि क्रीडापर्वताधिरोहणमुत्कम्पितस्तनी तस्तान। प्रत्युत्थानेपृ मय जानुशिखरविनिहितकरकिसलयापि गर्वादिव गर्भेणाधार्यत। दिवसं चाधोमुखी स्तनपृष्ठसंक्रान्तेनापत्यदर्शनौत्सुक्यादन्तःप्रविष्टेनेव मुखकमलेनैवं प्रीयमाणा ददर्श गर्भम्। उदरे तनयेन हृदये च भर्त्रा निष्ठ्ता द्विगुणितामिव लक्ष्मीमुवाह। सख्युत्सङ्गमुक्तशरीरा च शरीरपरिचारिकाणामङ्केषु सपत्नीनान्तु शिरःसु पादौ चकार। अवतीर्णे च दशमे मासि सर्वोर्वीभृत्पक्षपाताय वज्रपरमाणुभिरिव निर्मितम्, त्रिभुवनभारधार-

---

धिक्यादकञ्चुकयामस्थितिस्तेन च तत्र प्रतिबिम्बं युज्यते। अन्यथा साऽसंक्रीकृत चालिकेति तर्क्यं स्यात्। सखीनां सहचरीणामुत्सङ्गेष्वंकेषु मुक्तं त्यक्तं शरीरं यया सा सपत्नीनां समानपतीनां शिरःसूत्तमांगेषु। अवतीर्ण इति। सर्वेष मुर्वीभृतां नृपाणां पर्वतानां च पक्षपाताय नृपाणां सहायनाशाय पर्वतानां पतत्रान्मूलनाय च। बले सखिसहाययोः। 'चूलिरन्ध्रे पतत्रे च' इति मेदिनी। वज्रस्येन्द्रायुधस्य परमाणुभिः सूक्ष्मैरवयवैरिव। इन्द्रेणोत्पातिनां पर्वतानां पक्षाः स्ववज्रेण छिन्नास्तद्वद्यमप्युर्वीभृतां पक्षपाताय वज्रमय इव निर्मित इति तात्पर्यम्। त्रिभुवनस्य त्रिलोक्या धारणे वहने समर्थं शेषस्य तन्नामकस्य सर्पराजस्य फणामण्डलस्य फणासमूहस्योपकरणैः साधनैरिव कल्पितम्। सकलानां भूभृतां राज्ञां पर्वतानां च कम्पं करोति तच्छीलमत एव दिग्गजानामवयवैरिव विहितं कृतम् दिग्गजाः स्वदन्तैः पर्वतान्कम्पयन्ति तद्वनुरोधेनेनम्। नृत्यमयः। पूरितेति। पूरितानां शंखाना शद्वैर्ध्वनिभिर्मुखरम्। प्रहतानां ताडितानां पटहशतानां ढकाशतानां पटुः

णसमर्थं शेषफणामण्डलोपकरणैरिव कल्पितम्, सकलभूभृत्कम्पकारिणं दिग्गजावयवैरिव विहितममूं देवं राजवधनम्। यस्मिञ्जाते जातप्रमोदा नृत्यमय्य इवाजायन्त प्रजाः। पूरितासंख्यशङ्खशब्दमुखरं प्रहतपटहशतपटुरवं गम्भीरभेरीनिनादनिर्भरभरितभुवनं प्रमोदोन्मत्तमर्त्यलोकमनोहरं मासमेकं दिवसमिव महोत्सवमकरोन्नरपतिः।

अथान्यस्मिन्नतिक्रान्ते कस्मिंश्चित्काले कन्दलिनि कुड्मलितकदम्बतरौ तोक्मतृणस्तम्बे स्तम्भिततामरसे विकसितचातकचेतसि मूकमानसौकसि नभसि देव्या देवकया इव चक्रपाणिर्यशोवत्या हृदये गर्भे च संबभूव हर्षः। शनैः शनैश्चास्या सर्वप्रजा पुण्यैरिव परिगृहीता भूयोऽप्यापाण्डुनाङ्गयष्टिर्जगाम। गर्भारम्भेण श्यामायमानचारुचूचुकचूलिकौ चक्रवर्तिनः पातुं मुद्रिताविव पयोधरकलशौ बभार। स्तन्या-

सम्यग् रवो ध्वनिर्यस्मिंस्तम्। गंभीरेण दुंदुभीनां भेरीणां निनादेन शब्देन निर्भरमत्यंतं भरितं व्याप्तं भुवनं येन तम्। प्रमोदेनानंदेनोन्मत्तेन मत्तेन मर्त्यलोकेन मनुजलोकेन मनोहरस्तम्। मासम् त्रिंशदहोरात्रम्। अत्यन्तसंयोगे द्वितीया। एक दिवसमिवेति। उत्सवनिमग्नानामचेतितः कालो यात इति ज्ञायतेऽनेन।

अथेति। कस्मिंश्चित्काले द्वित्रवर्षात्मक इत्यर्थः। कन्दलिनि नवांकुरवति कुड्मलितः संजातकोरकः कदंबतरुर्यस्मिंस्तस्मिन्। तोक्मा हरितास्तृणस्तम्बा यवससमूहा यस्मिन्। स्तम्भितानि रुद्धानि (नष्टानीत्यर्थः) तामरसानि कमलानि यस्मिन्। पर्जन्याधिक्येन कमलध्वंसः। विकसितं प्रफुल्लं चातकचेतश्चातकमानसं यस्मिन्। एतादृशे नभसि श्रावणे मासि। मेघागमनेन चातकानंदः।

र्थमाननिहिता दुग्धनदीव दीर्घस्निग्धधवला माधुर्यमधत्त दृष्टिः । सकलमङ्गलगणाधिष्ठितगात्रगरिम्णेव गतिरमन्दायत । मन्दंमन्दं संचरन्त्या निर्मलकुट्टिमनिमग्नप्रतिबिम्बनिभेन गृहीतपादपल्लवा पूर्वसेवामिवारेभे पृथिव्यस्याः । दिवसमधिशयानायाः शयनीयमपाश्रयपत्रभङ्गपुत्रिकाप्रतिमा विमलकपो-

मूका अशब्दा मानसौकसो हंसाः यस्मिन् । हंसानां तदाऽत्राऽस्थित्या मूकत्वम् । तथा च विश्वनाथः 'जलधरसमये मानसं यान्ति हंसाः, इति । देव्या देवक्याः कृष्णमातुः तस्या अपि भगवन्तंध्यायन्त्याहृदये गर्भे च सममेव हरिः प्रादुरासीत् । भगवद्ध्याननिमग्ना सा गर्भवत्यासीदिति तात्पर्यार्थः,नभसीत्यस्योपमायां न संबन्धः, देवकीगर्भस्य श्रावणेऽसंभवादिति दिक् प्रजापुण्यैरिव परिगृहीता स्वीकृता आपाण्डुतां पाण्डुरत्वम् । श्यामायमानौ कृष्णवर्णौ चूलिके हस्तिनः कर्णमूले इव चूचुकौ स्तनाग्रौ यस्याः सा चूचुकस्य चूलिकोपमा काठिन्यकार्ष्यमूलित्वत्यवधेयम् रक्षणार्थमुद्रांविधाय किमपि स्थाप्यते तद्वदिदमपि । गर्भकाले च कुचाग्रयोः श्यामत्वं वर्णितं वाग्भटेन अम्लेष्टता स्तनौ पीनौ' श्वेतान्तौ कृष्णचूचुकौ' इति । चक्रवर्तिनो भाविनः पानायेत्यर्थः, स्तन्यार्थं दुग्धार्थं स्तने भवं स्तन्यं दिगादित्वाद्भवार्थे यत् । सकलमंगलगणेनार्था दिक्पालसमूहेनाधिष्ठितानां गात्राणामवयवानां गरिम्णा गौरवेण गतिर्गमनममदायत । नृपश्च देवतांशोभवति । मन्दमन्दं शनैः शनैः संचरंत्या अस्या निर्मले हीरकादिरत्नमयेऽतएव स्वच्छे कुट्टिमे निबद्धायां भुवि निमग्नस्य पतितस्य प्रतिबिंबस्य, निभेन, मिषेण, पूर्वसेवां प्रथमसेवामिव । दिवसम् शयनं शय्यामधिशयानाया अधितिष्ठंत्याः । 'अपाश्रयः शय्यास्तरणं तस्य पत्रगर्भपुत्रिका तदुपरि लिखिता पुत्रिका तस्याः प्रतिमा ।

लोदरगता प्रसवसमयं प्रतिपालयन्ती लक्ष्मीरिवालक्ष्यत। क्षपासु सौधशिखराग्रगताया गर्भोन्माथमुक्तांशुके स्तनमण्डले संक्रान्तमुडुपतिमण्डलमुपरि गर्भस्य श्वेतातपत्रमिव केनापि धार्यमाणमदृश्यत। सुप्तया वासभवने चित्रभित्तिचामरग्राहिण्योऽपि चामराणि चालयांचक्रुः स्वप्नेषु करविधूतकमलिनीपलाशपुटसलिलैश्चतुर्भिरपि दिक्करिभिरक्रियताभिषेकः। प्रतिबुध्यमानायाश्च चन्द्रशालिकासालभञ्जिकापरिजनो जयशब्दमसकृदजनयत्। परिजनाह्वानेष्वादिशेत्यशरीरा वाचो निश्चेरुः। क्रीडायामपि नासहताज्ञाभङ्गम्। अपि च चतुर्णामपि महार्णवानामेकी

विमले स्वच्छे कपोलोदरे गल्लमध्ये गता, विमलेत्यनेन बिंबग्रहणसामर्थ्यम्। प्रसवसमयं प्रसूतिकालं प्रतिपालयंती प्रत्यवेक्षमाणा लक्ष्मीरिव जीवन्ती' इति प्रसिद्धा प्रसूतिदेवतेव। क्षपासु रात्रिषु सौधशिखरं चंद्रशालां गताया गर्भस्य अर्भकस्योन्माथेन परिस्फुरणेन मुक्तं त्यक्तमंशुकं वसनं यस्य तस्मिन्। संक्रांतं प्रतिबिंबितमुडुपतिमंडलं चद्रमंडलं गर्भस्योदरस्थितार्भकस्योपरि केनापि धार्यमाणं श्वेतं शुभ्रमातपत्रं छत्रमिव। अत्र सौधाग्रगमनं तु लघुना शिविकादिना, वासभवने, शय्यागृहे। स्वप्नेष्विति। चतुर्भिरपि दिक्करिभिर्दिग्गजैः करे शुंडादंडे विधूतस्य कमलिन्याः, पलाशस्य, पत्रस्य, पुटस्य, पर्णपात्रस्य, सलिलैरुदकैरभिषेको मंत्रपूतं जलसिंचनम्। सालभंजिकापरिजनः सौधे स्थापिताःमूर्तयः। अशरीरा वाचः अमानुष्यो वाचः। चतुर्णामिति। चतुः समुद्रोदकानि सम्राडभिषेकोपयुक्तानि तत्र वाञ्छा भाविनीं साम्राज्यसिद्धिं शशंस। वेलालता समुद्रतीरस्था लता तस्या गृहोदरस्य गृहमध्यस्य पुलिनपरिसरेषु वालुकाप्रदेशेषु,

कृतेनाम्भसा स्नातुं वाञ्छा बभूव । वेलालतागृहोदरपुलिनपरिसरेषु पर्यटितुं हृदयमभिललाष । आत्ययिकेष्वपि कार्येषु सविभ्रमं भ्रूलता चचाल संनिहितेष्वपि मणिदर्पणेषु मुखमुत्खाते खड्गपट्टे वीक्षितुं व्यसनमासीत् । उत्सारितवीणाः स्त्रीजनविरुद्धा धनुर्ध्वनयः श्रुतावसुखायन्त । पञ्जरकेसरिषु चक्षुररमत । गुरुप्रणामेष्वपि स्तम्भितमिव शिरः कथमपि ननाम । सख्यश्चास्याः प्रमोदविस्फारितैर्लोचनपुटैरासन्नप्रसवमहोत्सवधियेव धवलयन्त्यो भवनं विकचकुमुदकमलकुवलयपलाशवृष्टिमयं रक्षाबलिविधिमिवानवरतं विदधाना दिक्षु क्षणमपि न मुमुचुः पार्श्वम् ।

आत्मोचितस्थाननिषण्णाश्च महान्तो विविधौषधिधरा भिष

एतेनापत्यस्यासमुद्रक्षितीशत्वं सूचितम् । आत्ययिकेष्ववश्यकर्तव्येष्वपि । संहितेष्विति मणिदर्पणेषु रत्नमुकुरेषु । उत्खाते विकोषे, एतेन गर्भस्य वीरत्वं ज्ञातम् । उत्सारिता निःसारिता वीणा येस्ते स्त्रीजनविरुद्धा युवतिजनानुचिता, धनुर्ध्वनयश्चापशब्दाः, श्रुतौ कर्णेऽसुखायन्त सुखं व्यदधुः । सख्य इति । सख्योऽस्याः पार्श्वन मुचुमुरित्यन्वयः । तान् विशिनष्टि । प्रमोदेनानंदेन विस्फारितैर्विकसितैर्लोचनपुटैर्नयन पुटैः । अत्र पुटशब्दोऽलंकारार्थः । आसन्नस्य समीपागतस्य प्रसवमहोत्सवस्य धियेव बुध्येव । भवनं गृहं धवलयन्त्यः शुभ्रीकुर्वन्त्यः । महोत्सवेषु गृहशुभ्रीकरणं प्रसिद्धमेव, अनवरतं, सततं, विकचानां, विकसितानां, कमलकुमुदकुवलयपलाशानां, वृष्टिमयं वृष्टिप्रचुरं, रक्षाबलिं रक्षणार्थं क्रियमाणां पूजामिव दिक्षुसर्वत्र विदधानाः कुर्वाणाः । आत्मनः स्वस्योचितेषु योग्येषु स्थानेषु निषण्णा स्थिताः । विविधानामोषधीनां धरा धारका

जो भूधरा इव भुवो धृतिं चक्रुः । पयोनिधीनां हृदयानीव लक्ष्म्यासहागतानि ग्रीवासूत्रग्रन्थिषु प्रशस्तरत्नान्यबध्यन्त ।

ततश्च प्राप्ते ज्येष्ठामूलीये मासि, बहुलासु बहुलपक्षद्वादश्यां, व्यतीते प्रदोषसमये, समारुरुक्षति क्षपायौवने, सहसैवान्तःपुरे समुदपादि कोलाहलः स्त्रीजनस्य । निर्गत्य च ससंभ्रमं यशोवत्याः स्वयमेव हृदयनिर्विशेषा धात्र्याः सुता सुयात्रेति नाम्ना राज्ञः पादयोर्निपत्य 'देव' दिष्ट्या वर्धसे द्वितीयसुतजन्मना' 'इति व्याहरन्ती पूर्णपात्रं जहार ।

अस्मिन्नेव च काले राज्ञः परमसंमतः, शतशः संवादि-

इत्युभयत्रापि समानम् । अथवा विविधा ओषधयो यासु तथाभूता धरा भूमयो येषां ते । भिषजो वैद्याः । धृतिं धैर्यं धारणां च । प्रशस्तानि च तानि रत्नानि (पक्षे प्रशस्तानि रत्नानि येषु तथाभूतानि हृदयानि ।

तत्रश्चेति ज्येष्ठामूलीये ज्येष्ठे 'ज्येष्ठामूलीयमिच्छन्ति मासमाषाढपूर्वजम्' इति हारावली । बहुलासु कृत्तिकासु । 'बहुलाः कृत्तिका' इत्यमरः । बहुलपक्षद्वादश्यां, कृष्णपक्षद्वादश्यां, प्रदोषसमये रजनीमुखे व्यतीतेऽतिक्रान्ते, क्षपाया, रात्रेर्यौवने, प्रारम्भादुत्तरभागे, समारुरुक्षत्यागते सति । स्त्रीजनस्य, युवतिवर्गस्य, कोलाहलः कलकल उदपादि समभूत् । निर्गत्येति । यशोवत्या धात्र्या उपमातुः सुता हृदयान्निर्गतो विशेषो यस्यां सा सुयात्रेति नाम्ना स्वयमेव निर्गत्यात्मेच्छया बहिरागत्य इति व्याहरन्ती इति निवेदयन्ती पूर्णपात्रं पूर्णानकम् ।

अस्मिन्निति । परमसंमतोऽत्यंतमान्यः संवादितः प्रत्यक्षीकृतोऽतींद्रियादेशो भविष्यकथनं यस्य सः । संकलितं गणनं विद्यते

तानीन्द्रियादेशो, दर्शितप्रभावः संकलिनी ज्योतिषि, सर्वासां ग्रहसंहितानां पारदृश्वा, सकलगणकमध्ये महितो हितश्च त्रिकालज्ञानभाग्भोजकस्तारको नाम गणकः समुपसृत्य विज्ञापितवान्—'देव, श्रूयताम्। मांधाता किलैवंविधे व्यतीपातादिसर्वदोषाभिषङ्गरहितेऽहनि सर्वेषूच्चस्थानस्थितेष्वेवं ग्रहेष्वीदृशि लग्ने भेजे जन्म। अर्वाक्ततोऽस्मिन्नन्तराले पुनरेवंविधे योगे चक्रवर्तिजनने नाजनि जगति कश्चिदपरः। सप्तानां चक्रवर्तिनामग्रणीश्चक्रवर्तिचिह्नानां महारत्नानां च भाजनं सप्तानां सागराणां पालयिता सप्ततन्तूनां सर्वेषां प्रवर्तयिता सप्तसप्तिसमः सुतोऽयं देवस्य जातः' इति।

अत्रान्तरे स्वयमेवानाध्माता अपि तारमधुरं शङ्खाविरसुः।

यस्य सः। ज्योतिषि ज्योतिःशास्त्रे पारदृश्वा पारंगतः। दृशेः क्वनिप्'। महितः पूज्यो भोजकः सूर्याराधको गणकविशेषो भागवत, इति प्रथितो वा। मांधाता सूर्यवंशस्थो युवनाश्वस्य पुत्रो ऽबरीषाख्यस्य नृपतेः पिता। व्यतीपातादिदोषाणामभिषंगेन संबंधेन रहिते वर्जिते। सर्वेषूच्चस्थानस्थितेषु ग्रहेषु। सर्वेषां ग्रहाणामेकदैवोच्चस्थानत्वमशक्यमिति ज्योतिर्विदोऽतोऽत्र शुभेषु ग्रहेष्विवत्यर्थो ग्राह्यः। चक्रवर्तिनः सम्राजो जननमुत्पत्तिर्यस्मिंस्तादृशे योगे सुमुहूर्ते नाजनि। दीपजनेत्यनेन वैकल्पिकः कर्तरि चिण्। अग्रणीः श्रेष्ठः। 'भाजनं पात्रम्। परिनायकः सेनापतिः। सप्ततन्तूनां यज्ञानां, प्रवर्तयिता प्रवर्तकः। सप्त सप्तयोऽश्वा यस्य स सूर्यस्तेन समस्तुल्यः।

अत्रान्तरे इति। अनाध्माता अपूरितास्तारमधुरमुच्चैर्मनोहरम्। क्षुभितस्य संचलितस्य जलनिधेः, समुद्रस्य, जलस्य, ध्वनिरिव,

अनाडितोऽपि क्षुभितजलनिधिजलध्वनिधीरं जुगुञ्जाभिषेकदुन्दुभिः। अनाहतान्यपि मङ्गलतूर्याणि रेणुः। सर्वभुवनाभयघोषणापटह इव दिगन्तरेषु बभ्राम, तूर्यप्रतिशब्दः, विधुतकेसरसटाश्च साटोपगृहीतहरितदूर्वापल्लवकवलप्रशस्तैर्मुखपुटैः समहेषन्त हृष्टा वाजिनः। सलीलमुत्क्षिप्तैर्हस्तपल्लवैर्नृत्यन्त इव श्रवणसुभगं जगर्जुर्गजाः। ववौ चाचिराच्चक्रायुधमुत्सृजन्त्या लक्ष्म्या निःश्वास इव सुरामोदसुरभिर्दिव्यानिलः। यज्वनां मन्दिरेषु प्रदक्षिणशिखाकलापकथितकल्याणागमाः प्रजज्वलुर-

---

धीरं यथास्यात्तथा जुगुंज दध्वान। मंगलतूर्याणि मंगलवादित्राणि। सर्वस्य, सकलस्य, भुवनस्य जगतोऽभयस्य घोषणाया उच्चैर्घुष्टस्य पटहो, ढक्केव। तूर्याणां, वाद्यविशेषाणां, प्रतिशब्दः, प्रतिध्वनिः,। विधूताः, कंपिताः, केसरसटाः,सटाग्राणि, यैस्ते वाजिनो हयाः, आटोपं सगर्वं,गृहीतानां,हरितानां,हरिद्वर्णानां,दूर्वाणां कवलैर्ग्रासैः प्रशस्तानि, विस्तृतानि,तैर्मुखपुटैः,समहेषन्त समह्रेषन्त।उत्क्षिप्तैरूर्ध्वं धृतैर्हस्तपल्लवैः, शुंडादंडैर्नृत्यन्त इव नर्तका, इव गजा, हस्तिनः,श्रवणसुभगं अतिमनोहरं, जगर्जुः शब्दं चक्रुः, ववाविति। चक्रायुधं नारायणमचिरात्तूर्णमुत्सृजंत्यास्त्यजंत्या लक्ष्म्या निश्वास इव। नूतनोत्पन्नं हर्षमाश्रयितुं हरिर्लक्ष्म्या त्यक्त इति तात्पर्यम्। सुराया मद्यस्यामोदेनाति निर्हारिगंधेन, सुरभिः सुगंधिर्दिव्यानिलः, स्वर्गीयो वायुः। यज्वनां,यज्ञकृतां, मंदिरेषु, गृहेषु, प्रदक्षिणेन, वर्तुलाकारेण, शिखाकलापेन,ज्वाला समूहेन कथितः सूचितः कल्याणानां मंगलानामागम उत्पत्तिर्यैस्ते वैतानवन्हयो यज्ञाग्नयोऽनिंधना इंधनरहिता एव। वैतानवन्हीनां प्रदक्षिणशिखावलयेन ज्वलनं मंगलसूचकमिति कविसंप्रदायः। भुवस्तलादिति। तपनीयशृंखला सुवर्णनि-

निन्धना वतानैवह्नयः भुवस्तलात्तपनीयशृङ्खलाबन्धबन्धुरकल-शीकोशाः समुद्गगुर्महानिधयः । प्रहतमङ्गलतूर्यप्रतिशब्दनिभेन दिक्षु दिक्पालैरपि प्रमोदादक्रियतेव दिष्टवृद्धि कलकलः तत्क्षण एव च शुक्ल वाससो ब्रह्ममुखाः कृतयुग प्रजापतय इव प्रजावृद्धये समुपतस्थिरे द्विजातयः । साक्षाद्धर्म इव शान्त्युदककलहस्तस्तस्थौ पुरः पुरोधाः। पुरातन्यः स्थितय इवादृश्यन्तागता बान्धववृद्धा । प्रलम्बश्मश्रुजालजटिलाननानि बहलमलपङ्ककलङ्ककालकायानि नश्यतः कलिकालस्य बान्धवकुलानीवाकुलान्यधावंत मुक्तानि बन्धनवृन्दानि । तत्कालापक्रान्तस्याधर्मस्य शिविरश्रेणय इवालक्ष्यन्त लोकविलुण्ठिता

गाडस्तस्य बंधेन वंधनेन, बंधुरो, मनोहरः, कलशीकोशी घटावरणं येषां ते महानिधयो द्रव्यसंचया. भुवस्तलाद्भूपृष्ठादुदगुर्बहिराजग्मुः । प्रहतानां ताडितानां मंगलतूर्याणां प्रतिशब्दस्य निभेन मिषेण दिष्टवृद्धिरानंदवर्धनम्, तत्क्षणे । ब्रह्मामुखे येषांते (पक्ष)ब्रह्मवेदो मुखे येषां । पुरातन्यः प्राचीनाः । प्रलंबेन लंबमानेन श्मश्रुजालेन मुखस्थकेशसमूहेन. जटिलानि, व्याप्तान्याननानि, मुखानि, येषां ते । बहलेन प्रभूतेन मलपंकस्य कलंकेन कालाः कृष्णवर्णाः कायाः येषां ते । एतेन तदानीं कारागृहिणां श्मश्रुच्छेदनं स्नानं च प्रतिरुद्धमासीदिति गम्यते । आकुलान्युत्सुकानि गृहगमनत्वरयौत्सुक्यम् । बंधनवृंदानि बंधनं कारावासो विद्यते येषां ते बंधनाः तेषां वृंदानि, समूहाः । तत्काले-धर्मस्वरूपस्य, हर्षस्योत्पत्तिकाले ऽपक्रांतस्य पलायितस्याधर्मस्य शिबिरश्रेणयो निवासगृहपंक्तय इव रिक्ता इत्यर्थः। लोकैरानंदमग्नैर्जनैर्विलुंठिताश्चोरिता बलाद् गृहीता विपणिवीथ्यो बणिक्पथसमूहाः । एतेन तदानीं पुत्रोत्पत्याद्यभ्युदयकाले बिपणि-

विपणिवीथ्यः । विलसदुन्मुखवामनकबधिरवृन्दवेष्टिताः साक्षाज्जातमातृदेवता इव बहुबालकव्याकुला ननृतुर्वृद्धधात्र्यः । प्रावर्तत च विगतराजकुलस्थितिरधः कृतप्रतीहाराकृतिरपनीतवेत्रिवेत्रो निर्दोषान्तःपुरप्रवेशः समस्वामिपरिजनो निर्विशेषबालवृद्धः समानशिष्टाशिष्टजनो दुर्ज्ञेयमत्तामत्तप्रविभागस्तुल्यकुलयुवतिवेश्याविलासः प्रनृत्तसकलकटकलोकः पुत्रजन्मोत्सवो महान् ।

अपरेद्युरारभ्य सर्वाभ्यो दिग्भ्यः श्रीराज्यानीयावर्जि-

विलुंठनपद्धतिरासीदिति गम्यते । प्राया नृपा वणिजां धनदातार इत्यपि कलनीयम् । विलसितां, शोभमानानां, खर्वाणां, बधिराणां, श्रोत्रविहीनानां, वृन्दैः, समूहैर्वेष्टिता, वृद्धधात्र्या जरत्य उपमातृका, बहुभिरनेकैर्बालकैर्वत्सैर्व्याकुला जातमातृदेवता अपत्यरक्षकदेवता इव ननृतुः । प्रसूतिगृह बहुबालराक्षिनृता देवी षाष्ठाखंडे तण्डुलमयी रक्षार्थमधुनापि स्थाप्यते । प्रावर्तनेति—विगता नष्टा राजकुलस्य नृपगृहस्य स्थितिर्मर्यादा यस्मिन्सः । अधःकृता तिरस्कृतावमानितेत्यर्थः, प्रतीहारस्य दौवारिकस्याकृतिर्यस्मिन्सः । निर्दोषोऽनिवारितोऽन्तःपुरप्रवेशो यस्मिन् सः । समौ स्वामिपरिजनौ सेव्यसेवकौ यस्मिन्सः । निर्गता विशेषा येभ्यस्ते निर्विशेषास्तथा बालवृद्धा यस्मिन् सः दुर्ज्ञेयो ज्ञातुमशक्यो मत्तामत्तयोः क्षीबाक्षीबयोः प्रविभागो यस्मिन् सः । तुल्यः, समानः, कुलयुवतीनां, वेश्यानां च विलासो यस्मिन् सः । कुलस्त्रियोऽपि प्रमोदप्रमत्ता वेश्या इव विलासान् प्रकटयामासुरित्यर्थः । प्रनृत्ता, नृत्यासक्तः, सकलः, कटकलोकः, सैनिकवर्गो यस्मिन्सः ।

अपरेद्युरिति । नृत्यन्ति सामन्तान्तःपुरसहस्राण्यदृश्यन्तेति-

-गानि, असुरविवरागीगापावृतानि नारायणावरोधानीव प्रचलितानि, अप्सरसामिव महीमवतीर्णानि कुलानि. परिजनेन पृथुकरण्डपरिगृहीताः स्नानीयचूर्णावकीर्णकुसुमाः सुमनःस्रजः, स्फटिकशिलाशकलशुक्लकर्पूरखण्डपूरिताः पात्रीः, कुङ्कुमाधिवासभाञ्जि भाजनानि च मणिमयानि, सहकारतैलतिम्यत्तनुखदिरकेसरजालजटिलानि चन्दनधवलपूगफलफालीदन्तुरदन्तशफरुकाणि, गुञ्जन्मधुकरकुलपीयमानपारिजातपरिमलानि पाट

संबंध: सर्वाभ्यो दिग्भ्यो निखिलाभ्य आशाभ्य आवर्जितान्यानीतानि स्त्रीराज्यानीव। अपावृतानि विमुक्तान्यसुरविवराणीव। पातालविवरान्नागकन्यान्यागता इमा इति कल्पना। नारायणस्य श्रीकृष्णस्यावरोधान्यन्तः पुराणि बहुसंख्याकत्वात्। परिजनेनेत्यस्य बिभ्राणेनेत्यनेन संबंध,। किं बिभ्राणेनेत्याह। पृथुषु महत्सु करंडेषु समुद्गेषु परिगृहीताः, स्थापिताः, स्नानीयचूर्णेनावकीर्णानि, व्याप्तानि कुसुमानि यासां ताः सुमनःस्रजः, पुष्पमालाः। स्फटिकस्य शिलाशकलैरिव शिलाखंडैरिव शुक्लैः शुभ्रैः कर्पूरखंडैः, पूरिताः पात्रीर्भाजनानि। मणिमयानि रत्नमयानि। कुंकुमस्य काश्मीरजस्याधिवासं संस्कारं भजन्ति तानि भाजनानि, पात्राणि। सहकारतैलेनाम्रतैलेन तिम्यतामार्द्राणां तनूनां, सूक्ष्माणां, खदिरकेसराणां जालेन समूहेन जटिलानि व्याप्तानि। चन्दनमिव,धवलानि,शुभ्राणि, पूगीफलानि फाल्यः कार्पासवस्त्राण्याच्छादनार्थं स्थापितानीत्यर्थस्ताभिर्दन्तुराणि नतोन्नतानि दन्तशफरुकाणि करिदन्तकृताः समुद्गकाः। गुंजता सशब्देन मधुकरकुलेन भ्रमरसमूहेन पीयमानः प्र.श्यमानः पारिजातस्य सुगन्धिद्रव्यविशेषस्य परिमलो येषां तानि पाटलानीषद्रक्तानि पटलकानि पिटकानि।

लानि पोटलकानि (पटलकानि) च, सिन्दूरपात्राणि च, पिष्टातकपात्राणि च, बाललतालम्बमानविटकवीटकांश्च ताम्बूलवृक्षान्बिभ्राणेनानुगम्यमानानि चरणनिकुट्टनरणितमणिनूपुरमुखरितदिङ्मुखानि नृत्यन्ति राजकुलमागच्छन्ति समन्तात्सामन्तान्तःपुरसहस्राण्यदृश्यन्त ।

शनैः शनैर्व्यजृम्भत च क्वचिन्नृत्तानुचितचिरंतनशालीनकुलपुत्रकलोकलास्यप्रथितपार्थिवानुरागः, क्वचिदन्तःस्मितक्षितिपालोपेक्षितक्षीबक्षुद्रदासीसमाकृष्यमाणराजवल्लभः,

---

'पटलं तिलके नेत्ररोगे छदिपि संचये । पिटके परिवारे च इति' हैमः । सिन्दूरपात्राणि रक्तचूर्णपात्राणि । पिष्टातकस्य कृष्णवर्णस्य सुगंधिद्रव्यस्य, पात्राणि । बाललतासु लंबमाना विटकवीटकाः पंचाशत्पर्णमयास्तांबूला येषां तान् तांबूलवृक्षान् । बिभ्राणेन धारयता परिजनेन सेवकेनानुगम्यमानान्यनुस्रियमाणानि । चरणैः यन्निकुट्टनं ताडनं तेन रणितैः शब्दं विदधद्भिर्नूपुरैर्मुखरितानि शब्दायितानि दिङ्मुखानि यैस्तानि । राजकुलं, राजगृहम् ।

शनैरिति । उत्सवामोद उत्सवस्य हर्षो व्यजृंभतावर्धत । क्वचिदेकत्र नृत्तस्य नर्तनस्यायोग्यश्चिरंतनः परंपरागतः शालीनोऽधृष्टः कुलपुत्रकाणां लोकः समूहस्तस्य लास्येन नृत्येन प्रथितः स्पष्टः पार्थिवस्य पृथ्व्या ईश्वरस्य प्रतापवर्धनस्यानुरागः प्रेम यस्मिन्सः । अन्तः स्मितं हास्यं यस्य तेन क्षितिपालेन नृपेण उपेक्षितः अवज्ञां प्रापितः क्षीबया मत्तया क्षुद्रदास्या समाकृष्यमाणो राजवल्लभो राजप्रियजनो यस्मिन्सः । नृपस्मितप्रेरिता क्षुद्रदासी राजवल्लभं समाकृष्टवतीत्यर्थः । मत्तानां कटककुट्टिनीनां सेनावेश्यानां कंठेषु गलेषु लग्नानां समासक्तानां वृद्धानां जरठानामार्याणां श्रेष्ठानां

क्वचिन्मत्तकटककुट्टनीकण्ठलग्नवृद्धार्यासामन्तनृत्तनिर्भरहसितनरपतिः, क्वचित्क्षितिपाक्षिसंज्ञादिष्टदुष्टदासेरकगीतसूच्यमानसचिवचौर्यरतप्रपञ्चः, क्वचिन्मदोत्कटकुटहारिकापरिष्वज्यमानजरत्प्रव्राजितजनितजनहासः, क्वचिदन्योन्यनिर्भरस्पर्धोद्धुरचेटकपेटकारब्धावाच्यवचनयुद्धः, क्वचिन्नृपावलाबलात्कारनर्त्यमाननृत्यानभिज्ञान्तःपुरपालभावितभुजिष्यः, सपर्वत इव कुसुमराशिभिः, सधारागृह इव सीधुप्रपाभिः, सनन्दनवन इव पारिजातकामोदैः, सनीहार इव कर्पूररेणुभिः, साट्टहास इव

सामन्तानां मंडलाधिपानां नृत्तेन निर्भरमतिशयितं हसितो नरपतिर्यस्मिन्सः। क्षितिपालेन नृपेणाक्षिसंज्ञया नेत्रसूचनया आदिष्ट आज्ञापितो दुष्टो दासेरको दास्याः पुत्रस्तेन गीतेन गानेन करणेन सूच्यमानः कथ्यमानः, सचिवस्य, चौर्यरतस्य गुप्तक्रीडाया अर्थात्परनारीगमनस्य, यस्मिन्सः, प्रपंचो विस्तारो, उपरितनवर्णनेन तदानीं सचिवादयो न शुद्धाचाराः सेनायां च वेश्यास्थापनपद्धतिरासीदिति ज्ञायते। मदेनोत्कटया व्याप्तया कूटहारिकया कुंभदास्या परिष्वज्यमान आलिंग्यमानो जरन्वृद्धः प्रव्रजितःसन्यासी तेन जनित उत्पादितो जनहासो लोकहास्यं यस्मिन्सः। अन्योऽन्यस्य परस्परस्यनिर्भरयाऽतिशयया स्पर्धया उद्धुराउल्लासिताश्चेटका गायकवेश्यादीनांपरिचिताः जनास्तेषां पेटकेन समूहेनारब्धं प्रारधम् अवाच्यवचनैर्गालिभिर्युद्धं वाक्कलहो यस्मिन्सः। पेटकः पुस्तकादीनांमंजूषायां कदंबक इति मेदनी। नृपावलाभिः नृपतिदासीभिः काभिश्चित् बलात्कारेण हठेन नर्त्यमाना नृत्यानभिज्ञाः नृत्यापरिचिताः अन्तःपुरपाला अन्तःपुररक्षकाः तैः भाविताः भोगिताः भुजिष्या दास्यो यस्मिन्सः। सीधुप्रपाभिर्मद्यपानायशालाभिः सधारागृह इव,

पटहरवैः,साट्टहास इव पटहरवैः,सामृतमथन इव कलकलैः, सावर्त इव रासकमण्डलैः सरोमाञ्च इव भूषणमणिकिरणैः, सपट्टबन्धन इव चन्दनलहलाटिकाभिः, सप्रसव इव प्रतिशब्दकैः, सप्ररोह इव प्रसाददानैरुत्सवामोदः।

स्कन्धावलम्बमानकेसरमालाः काम्बोजवाजिन इवास्कन्दन्तः, तरलतारका हरिणा इवोड्डीयमानाः, सगरसुता इव खनित्रैर्निर्दयैश्चरणाभिघातैर्दारयन्तो भुवम्, अनेकसहस्रसंख्या-

---

धारागृहैर्यन्त्रगृहैः सहित इव कर्पूररेणुभिः कर्पूरपरागैः सनीहार इव हिममय इव। शैत्यशुभ्र-युतत्वात्कर्पूरस्योभयधर्मत्वात्। पटहानामानकानां रवैः, शब्दैः अट्टहासेनोच्चैर्हास्येन सहित इव कलकलैः कोलाहलैरमृतः मथनेन सहित इव। उच्चैः शब्दवत्त्वात्। रासकं गोपानां वर्तुलाकारो नृत्यविशेषः आवर्तैर्भ्रमिभिः सहित इव भूषणमणीनामलंकाररत्नानां किरणैर्मयूखैः सरोमाञ्च इव रोमांचे रोमोद्गमैः सहित इव। दन्तुराकारत्वादिति भावः। चंदनस्य मलयजस्य ललाटिकाभिर्ललाटालंकारैः पट्टबंधेन शिरोवेष्टनेन सहित इव। चंदनेन शुभ्रत्वाल्ललाटस्य। प्रतिशब्दकैः प्रतिध्वनिभिः। प्रसाददानैरनुग्रहदानैः सप्ररोह इव सांकुर इव। अनुग्रहेण दत्ताः पदार्था उत्सवामोदस्यांकुरा इति कल्पना।

स्कन्धेति—युवानश्चिक्रीडुरित्यन्वयः। तान्यूनो विशिनष्टि। स्कन्धेष्ववलंबमानाः केसरमालाः, बकुलस्रजः, स्कन्धस्थाः केशा वा येषां ते। आस्कन्दन्त, उड्डीयमानाः, कांबोजवाजिनः, कांबोजाख्यस्य हिमवदुत्तरस्य काश्मीरात्प्राचीनस्य, देशस्याश्वा इव। 'आस्कन्दितकमित्यपि। उत्प्लुत्योत्प्लुत्य गमनं कोपादेवाखिलैः पदैः' इति हैममाला। सगरपुत्राः खनित्रैरिव निर्दयैर्दयारहितैश्च रणाभिघातैः,

श्चिक्रीडुर्युवानः। कथमपि तालावचरचारणचरणक्षोभं चक्षमे क्षमा, क्षितिपालकुमारकाणां खेलतामन्योन्यास्फालैराभरणेषु मुक्ताफलानि फेलुः। सिन्दूररेणुना पुनरुत्पन्नहिरण्यगर्भगर्भशोणित शोणाशमिव ब्रह्मांडकपालमभवत्। पटवासपांशुपटलेन प्रकटितमन्दाकिनीसैकतसहस्रमिव शुशुभे नभस्तलम्। विप्रकीर्यमाणपिष्टातकपरागपिञ्जरितातना भुवनक्षोभविशीर्णपितामहकमलकिञ्जल्करजोराजिरञ्जिता इव रेजुर्दिवसाः। संघट्टविघटितहारपतितमुक्ताफलपटलेषु चस्खाल लोकः।

स्थानस्थानेषु च मंदमंदमास्फाल्यमानालिङ्ग्यकेन शिञ्जान-

पादताडनैर्भुवं वसुधां दारयन्त इव खनन्त इव। अनेकसहस्रसंख्या असंख्याता इत्यर्थः। क्षमा पृथ्वी तालैरवचरन्ति भ्रमन्ति ते च ते चारणा बंदिनस्तेषां चरणक्षोभं चक्षमे विषेहे। आभरणेष्वलंकारेषु, अन्योन्यास्फालनैः परस्पर संघर्षणैः। पुनरुत्पन्नः पुनर्जातो हिरण्यगर्भो ब्रह्मा तस्य गर्भस्य भ्रूणस्य शोणितै रक्तैः शोणास्ताम्रा आशा दिशा यस्य तत्। पटवासस्य पिष्टातस्य पांसून् रजसां पटलेन समूहेन प्रकटितंव्यक्तत्वया दर्शितं मन्दाकिन्याः स्वर्गगंगाया सैकतसहस्रं पुलिनसहस्रं येन तदिव। विप्रकीर्यमाणस्य क्षिप्यमाणस्य पिष्टातकस्य सुगन्धिद्रव्यविशेषस्य "अर्गजा" इति भाषायां प्रसिद्धस्य परागैर्धूलिभिः पिञ्जरितः पीतवर्णीकृत आतपः प्रकाशो येषां ते दिवसा भुवनस्य जगतः क्षोभेन सञ्चलनेन विशीर्णस्य विदीर्णस्य पितामहकमलस्य ब्रह्मकमलस्य किञ्जल्करजसां परागधूलीनां राजिभिः पंक्तिभिः रंजिता इव। संघट्टेन विघटितेभ्यस्त्रुटितेभ्यो हारेभ्यो मुक्तामालाभ्यः पतितेषु मुक्ताफलपटलेषु मौक्तिकसमूहेषु।

स्थानस्थानेष्विति। स्थानस्थानेष्वेवंविधेनातोद्यवाद्येनानुगम्य-

मंजुवेणुना झणझणायमानझल्लरीकेण ताड्यमानतंत्री पटहिकेन, वाद्यमानानुत्तालालाबुवीणेन कलकांस्यकोशीकणित काहलेन समकालदीयमानानुत्तालतानेनातोद्यवाद्येनानुगम्यमानाः, पदे पदे झणझणितभूषणरवैरपि सहृदयैरिवानुवर्तमानताललयाः, कोकिला इव मदकलकाकलीकोमलालापिन्यो, विटानां कर्णामृतान्यश्लीलरासकपदानि गायन्त्यः, समुण्डमालिकाः, सकर्णपल्लवाः, सचन्दनतिलकाः, समुच्छ्राभिर्वलयावलीवाचालाभिर्बाहुलतिकाभिः सविनारमिवालिङ्गयन्त्यः, मकुकु-

---

मानाः पण्यविलासिन्यः प्रानृत्यन्निति संबन्धः । मन्दं मन्दं शनैः शनैरास्फाल्यमानास्ताड्यमाना आलिंग्या लघुमृदङ्गाः (तबला) प्रसिद्धा यस्मिंस्तेन । शिञ्जाना मधुरं नदन्तो मञ्जवो मनोज्ञा वेणवो मुरल्यो यस्मिंस्तेन । झणझणायमाना झणझणेति शब्दं विदधत्यो झल्लर्यो (झांज) इति भाषायां प्रसिद्धा यस्मिंस्तेन । ताड्यमानास्तंत्र्यो वीणाः पटहिका लघ्वी भेर्यो यस्मिंस्तेन । वाद्यमाना अनुत्ताला मधुरशब्दा अलाबुवीणा यस्मिंस्तेन । कलं मधुरं कांस्यकोशयां कांस्यमये वाद्यपृष्ठभागे कणितः सशब्दः काहलः 'कर्णा' इति भाषायां प्रसिद्धो यस्मिंस्तेन । समकालं दीयमाना अनुत्ताला अनुत्कटा ताना यस्मिंस्तेन । आतोद्यवाद्येन चतुर्विधवाद्येनानुगम्यमानाः । पदे पदे इति । झणझणितानां तथा शब्दं विदधतां भूषणानामलंकाराणां रवैः शब्दैरपि सहृदयैर्गानाभिज्ञैरनुवर्तमानौ ताललयौ यासां ताः । मदेन कला मधुरा काकली कोमलध्वनिस्तया मधुरमालपन्ति गायन्ति ताः । विटानां स्वाश्रितानां नीचानां कर्णामृतानि कर्णयोः श्रोत्रयोरमृतसदृशान्यश्लीलान्यवाच्यानि रासकपदानि गोपनृत्यपदानि । समुण्डमालिका मुण्डे शिरसि पुष्प-

प्रमृष्टिरुचिरकायाः काश्मीरकिशोर्य इव वल्गन्त्यः, नितम्बबिम्बलम्बिविकट कुरण्टकशेखराः प्रदीप्ता इव रागाग्निना सिंदूरच्छटाच्छुरितमुखमुद्राः शासनपट्टपङ्क्तय इवाप्रतिहत-शासनस्य कंदर्पस्य, मुष्टिकीर्यमाणकर्पूरपटवासपांसुला मनो-रथसंचरणरथ्या इव यौवनस्य, उद्दामकुसुमदामताडिततरुण जनाः प्रतीहार्य इव तरुणमहोत्सवस्य, प्रचलत्पत्रकुण्डला

मालिकास्ताभिः सहिताः । समुच्छ्रिताभिरूर्ध्वं विधृताभि-र्वलयानां कंकणानामवलीभिः , पंक्तिभिर्वाचालाभिर्वाचा-टाभिर्बाहुलतिकाभिर्हस्तैः । लतिकाशब्दोबाहुकोमलतां व्यं-जयति । कुङ्कुमेन प्रमृष्टिः परिमार्जनं विलेपनमिति यावत् तया रुचिरः सुन्दरः कायः शरीरं यासां ताः। वल्गन्त्यो मनोहराः काश्मीरेपु बालिकाः कुङ्कुमस्थलीपु लुंठनात्सुन्दरकाया दृश्यन्ते तद्वदिमा इति भावः । नितम्बबिंबेपु लंबते ते तद्दशा विकटा विशालाः कुरण्टकशेखरा अम्लातपुष्पगुच्छा यासां ताः । रागाग्निनाऽनुरागवन्हिना प्रदीप्ता इव । अम्लातपुष्पाणां रक्त-वर्णत्वान् । सिन्दूरछटाभी रक्तवर्णचूर्णसमूहैश्छुरिता व्याप्ता मुखमुद्रा यासां ताः । अतएव प्रतिहतमनिरोधं शासनमाज्ञा यस्य तस्य कन्दर्पस्य मदनस्य शासनपत्रस्याज्ञापत्रस्य पंक्तय इव। मुद्रितमुखत्वमुभयोः साधारण्यमिति भावः । अञ्जलिभिः-हस्तसंपुटैः प्रकीर्यमाणेन क्षिप्यमाणेन कर्पूरपटवासेन कर्पूरमिश्रि-तेन सुगन्धिचूर्णेन पांसुला धूलिव्याप्ताः कर्पूरचूर्णपांसुयुक्ता इत्यर्थः, यौवनस्य तारुण्यस्य मनोरथस्य स्पृहायाः संचरणस्य गमनस्य वीथ्यो मार्गा इव । मार्गा यथा वालुकाकणव्याप्तास्तद्वदिमाः कर्पूरकणव्याप्ता इत्यर्थः । उद्दामं सातिशयं कुसुमदामभिः,

लसन्त्यो लता इव मदनचंदनद्रुमस्य, ललितपदहंसकरवमुखराः समुल्लसन्त्यो वीचय इव शृङ्गाररसस्य, वाच्यावाच्यविवेकशून्या बालक्रीडा इव सौभाग्यस्य, घनपटहरवोत्कण्टकितगात्रयष्टयः केतक्य इव कुसुमधूलिमुद्गिरन्त्यः, कमलिन्य इव दिवसमुत्फुल्लाननाः, कुमुदिन्य इव रात्रावनुपजातनिद्राः, आविष्टा इव नरेन्द्रवृन्दपरिवृत्ताः प्रीतय इव हृदयमपहरन्त्यः, गीतय इव रागमुद्दीपयन्त्यः, पुष्टय इवानन्दमुत्पादयन्त्यः, मदमपि मदयन्त्य इव, रागमपि

पुष्पस्रग्भिस्ताडितास्तरुणा जना याभिस्ता स्तरुणा महोत्सवस्य तरुणस्य नूतनस्य यूनां वा महोत्सवस्य प्रतीहार्य इव । प्रतीहार्योऽपि स्वयष्टिभिर्जनांस्ताडयन्ति । प्रचलन्ति नृत्यवशाच्चचलानि पत्राकाराणि कुण्डलानि कर्णभूषणानि यासां ताः । (पक्षे) प्रचलन्ति पत्राण्येव कुण्डलानि पल्लवरूपाणि कर्णभूषणानि यासां ताः । ललितेषु रमणीयेषु पदेषु चरणेषु ये हंसकाः नूपुरास्तेषां रवेण शब्देन मुखराः सशब्दाः । यद्वा ललितानि पदानि यासां ताश्च ता हंसकरवमुखराश्च । (पक्षे) ललितपदानां हंसकानां हंसानां रवेण मुखराः । सौभाग्यस्य सुभगतायाः वाच्यावाच्ययोर्विवेको विचारस्तेन शून्या बालक्रीडा इव । घनेन दृढेन पटहरवेण भेरीनिनादेन उत्कंटकिता समुद्गतरोमांचा गात्रयष्टयो यासां ताः । दिवसम उत्फुल्लं प्रफुल्लमाननं मुखं यासां ताः । कमलिनीनां कमलरूपाणि मुखानि दिवसं विकसितानि भवन्ति कुमुदिन्य इ। कैरविण्य इव रात्रावनुपजाता अनागता निद्रा यासां ताः । कैरविण्य आसूर्योदयमसंकुचिता एतासामपि क्रीडासक्ततया निशायां निद्राभाव इति भावः । आविष्टा इव पिशाचग्रस्ता इव ।

रञ्जयन्त्य इव, आनंदमपि आनंदयंत्य इव, नृत्यमपि नर्तयमाना इव, उत्सवमप्युत्सुकयंत्य इव, कटाक्षितेषु पिबंत्य इवापाङ्गशुक्तिभिः, तर्जनेषु संयमयंत्य इव नखमयूख-पाशैः कोपाभिनयेषु ताडयंत्य इव भ्रूलताविभागैः, प्रणय-संभाषणेषु वर्षंत्य इव सर्वरसान्, चतुरचङ्क्रमणेषु विकिरंत्य इव विकारान्, पण्यविलासिन्यः प्रानृत्यन् ।

अन्यत्र वेत्रिवेत्रवित्रासितजनदत्तान्तरालाः, ध्रियमाण-धवलातपत्रवना वनदेवता इव कल्पतरुतलविचारिण्यः, काश्चि-त्स्कन्धोभयपालीलम्बमानलम्बोत्तरीयलग्ना लीलादोलाधिरूढा इव प्रेङ्खन्त्यः, कैश्चित्कनककेयूरकोटिपाट्यमानपट्टांशुकोत्तरङ्गा-

---

नरेन्द्रवृन्देन भूपसमूहेन मांत्रिकसमूहेन वा परिवृता वेष्टिताः । मदमपि मदयन्त्य इव । मदेनान्या मत्तो भवति स तु इमा आश्रित्योन्मत्तः । रागोऽनुरागो हिंगुलादिश्च । रोगाऽन्यान् रंजयति इमास्तु तमपि रंजयन्ति । चतुरेषु मनोहरेषु चंक्रमणेषु वक्रगमनेषु ।

अन्यत्रेति प्रारब्धं समारब्धं नृत्यं नर्तनं याभिस्ता राजमहिष्यो विलेसुश्चिक्रीडुः । कथंभूता इत्याह । वेत्रिभिः कञ्चुकिभिः कर्तृभिर्वेत्रैर्हस्तयष्टिभिः करणैर्वित्रासिताः पीडिता जनास्तैर्दत्तोऽन्तरालोऽवकाशो यासां ताः । ध्रियमाणमुह्यमानं धवलानां शुभ्राणामातपत्राणां छत्राणां वनं समूहो यासां ताः (वनशब्दो लक्षणाया समूहवाची) कल्पतरूणां देववृक्षाणां तलेषु विचरन्ति तच्छीला वनदेवता इव । शुभ्रपर्णत्वात्कल्पतरूणां छत्रसाम्यम् । स्कन्धानामुभयपालीषु कोटिद्वयेषु लम्बमानानि लम्बानि दीर्घाण्युत्तरीयाणि प्रावारकास्तेषु लग्नाः संसक्ताः । लीलायाः क्रीडायाः दोलायामधिरूढा इव । प्रेंखंत्य इतस्ततो गच्छंत्यः । कनकस्य सुवर्णस्य

स्तरङ्गिण्य इव तरच्चक्रवाकसीमन्त्यमानस्रोतसः,काश्चिदुध्दूय-मानधवलचामरसटालग्नत्रिकण्टकवलितविकटकटाक्षाः सरस्य इव हंसाकृष्यमाणनीलोत्पलवनाः काश्चिच्चलच्चरणच्युतालक्त-कारुणस्वेदशीकरसिच्यमानभवनहंसाः, संध्यारागरज्यमाने-न्दुबिम्बा इवकौमुदीरजन्यः काश्चित्कण्ठनिहितकाञ्चनकाञ्ची-

केयूराणामङ्गदानां कोटिभिरग्रभागैः पाट्यमानाः तरङ्गा इव पट्टांशुकानि पट्टांशुकतरङ्गाः तरङ्ग सदृशानि चञ्चलानि श्रेष्ठवस्त्राणि यासां ताः। तरद्भिश्चक्रवाकैः सीमंत्यमानानि विभज्य-मानानि,स्रोतांसि यासां, तास्तरंगिण्यो नद्य इव। कनकांगदानां चक्र वाकसाम्यं. पाट्यमानवस्त्राणां द्विधा क्रियमाणप्रवाहसाम्यम्। उध्दूयमानासु वार्यमाणासु धवलासु शुभ्रासु चामरसटासु चामरामेपु लग्नेन संसक्तेन त्रिकंटकेन कर्णाभरणेन वलिता वक्रीकृता विकटाः, विशालाः, कटाक्षाः, यासां ताः। 'त्रिकंटकस्तु त्र्यश्रः स्यात्त्रिभी रत्नैश्च भूषणम्'। हंसैराकृष्यमाणानि, नीलोत्पलवनानि, यासां ताः सरस्य इव। यथा सरसीपु हंसाः कमलान्याकर्षन्तितद्वत्त सत्दृशीषु युवतिपु हंससदृशाश्चामरसटाः कमलसदृशानि नयनान्याकर्पति। रत्नमयत्रिकटकपदोपादानेन हंसचंचुर्व्यज्यते रक्तवर्णत्वादिति दिक्। चलद्भ्यश्चरणेभ्यश्च्युतैर्गलितैरलक्तकेनारुणैस्ताम्रैः स्वेदशी-करैर्घर्मबिन्दुभिः सिच्यमाना भवनहंसाः, याभिस्ताः। संध्यारागेण रज्यमानमिदुबिंबं याभिस्ता रजन्यो रात्रय इव। चन्द्रसदृशान् श्वेतान् गृहहंसान् संध्यारक्तिम्नेवारुणितघर्मबिंदुभिर्ज्योत्स्न्य इवेमा रंजयन्तीत्यर्थः। कामवागुरा मदनजालानीव। प्रसारितबाहुपाशस्य वागुरासाम्यम्। कंठेषु निहितैः स्थापितैः कांचनकांचीगुणैः सुवर्णमेखलादामभिरंचितानां नम्राणां कंचुकिनां कंचुकानि चूलिका

गुणाश्चितकञ्चुकिविकाराकुञ्चितभ्रुवः, कामबागुरा इव प्रसारितबाहुपाशा राजमहिष्यः प्रारब्धनृत्या विलेसुः ।

सर्वतश्च नृत्यन्तः स्त्रैणस्य गलद्भिः पादालक्तकैररुणिता रागमयीव शुशोणक्षौणी। समुल्लसद्भिः स्तनमण्डलैर्मङ्गलकलशमय इव बभूव महोत्सवः । भुजलताविक्षेपैर्मृणालवलयमय इव रराज जीवलोकः। समुल्लसद्भिर्विलासस्मितैस्तडिन्मय इवाक्रियत कालः । चञ्चलानां चक्षुषामंशुभिः कृष्णशारमया इवासन्वासराः । समुल्लसद्भिः शिरीषकुसुमस्तवककर्णपूरैः शुकपिच्छमय इव हरितच्छायोऽभूदातपः । विस्रंसमानैर्धम्मिल्लतमालपल्लवैः कज्जलमयमिवालक्ष्यतान्तरिक्षम् । उत्क्षिप्तैर्हस्तकिशलयैः कमलिनीमय्य इव बभासिरे स्तृष्यः । माणिक्येन्द्रायुधानामर्चिषा चापपत्रमया इव चकाशिरे रविमरीचयः । रणतामाभरणगणानां प्रतिशब्दकैः किङ्किणीमय्य इव शिशिञ्जिरे दिशः। जरत्योऽप्युन्मादिन्य इव रमण्यो ननृतुः । वर्षीयांसोऽपि ग्रहगृहीता इव नापत्रेपिरे । विद्वांसोऽपि मत्ता इवात्मानं

विद्यन्ते येषां तेषांस्तनानां विकारैराकुंचिताः संकुचिता भ्रुवो भ्रुकुट्यो यासां ताः । वस्त्रधारणवेलायां कांचीगुणस्य कंठ धारणं स्त्रीसंप्रदायः । यद्वा कंचुकिनां प्रतिहारिणामित्यर्थो ग्राह्यः ।

सर्वतश्चेति । स्त्रैणस्य स्त्रीसमूहस्य । क्षोणी, पृथ्वी, शुशोणा, रक्तवर्णा बभूव । विलासस्मितैर्लीलाहास्यैः कालः समयः कृष्णवर्णश्च । तडिन्मयइव विद्युन्मय इव । हास्यस्य शुभ्रत्वं कविसमयानुरूपमतः शुभ्रतडिन्मयत्वमुत्सवकालस्य वर्षातमनुचितमिवावभाति । सितायास्तडितो दुर्भिक्षत्वसूचकत्वात् । 'दुर्भिक्षाय सिता भवेत्' इति महाभाष्यवचनात् । विस्रंसमानैर्गलद्भिर्नृत्यवेशादिति

विलस्मरुः । निनर्तिषया मुनीनामपि मनांसि विपुस्फुलुः ।
सर्वस्वं च ददौ नरपतिः। दिशि दिशि कुबेरकोषा इवालुप्यन्त
लोकेन द्रविणराशयः ।

एवं च वृत्ते तस्मिन्महोत्सवे शनैःशनैः पुनरप्यतिक्रामति काले.
देवे चोत्तमाङ्गनिहितरक्षासर्षपे, समुन्मिषत्प्रतापाग्निस्फुलिङ्ग
इव,गोरोचनापिञ्जरितवपुषिसम भिव्यज्यमानसहजक्षात्रतेजसी-
व,हाटकबद्धविकटव्याघ्रनखपङ्क्तिमण्डितग्रीवकेहृदयोद्भिद्यमा
नदर्पाङ्कुर इव, प्रथमाव्यक्तजल्पितेन सत्यस्य शनैरोंकारमिव
कुर्वाणे, मुग्धस्मितैः कुसुमैरिव मधुकरकुलानि बन्धुहृदया-
न्याकर्षति, जननीपयोधरकलशपयःशीकरसेकादिव जायमा-
नैर्विलासहसिताङ्कुरैर्दर्शनैरलंक्रियमाणमुखकमलके, चारि-

भाव : । धम्मिलस्य संयतकेशानाम् । माणिक्येन्द्रायुधानां शरीरे
धृतरत्नोद्भूतेंद्रधनुषाम् अर्चिषा प्रभया । किंकिणीमय्यः क्षुद्रघंटाप्र-
चुराः । शिशिंजिरे मधुरं शब्दमकुर्वन् । निनर्तिषया नृत्येच्छया ।
नृत्यतेः सनि ।

एवमिति । यशोवती राज्यश्रियं नारायणमूर्तिर्वसुधामिव
गर्भेण आधत्तेति संबंधः । देवे चेत्यादीनां हर्ष इत्यनेन संबंधः ।
उत्तमांगे मूर्धनि निहिता रक्षायैसर्षपायस्यतस्मिन्। अधुनापि शैत्यादि-
वातविकारपरिहरणाय सर्षपोपयोगः क्रियते। समुन्मिषतः प्रज्वलि-
ष्यतः प्रतापाग्नेः यशोवन्हेर्विस्फुलिंग इव।सर्षपस्य विस्फुलिंगसाम्यम्।
गोरोचनया, गोपित्तेन, पिंजरितं, पिशंगीकृतं, वपुः, शरीरं, यस्य,
तस्मिन् गोरोचनायाः क्षात्रतेजःसाम्यम् । पीतवर्णत्वात् । हाटके
सुवर्णे,बद्धानां,खचितानां,विकटानां वक्राणां व्याघ्रनखानां पंक्त्या रा-
ज्या मंडिता,भूषिता,ग्रीवा कंधरा यस्य तस्मिन् । व्याघ्रनखानां वक्र-

त्र इवान्तःपुरस्त्रीकदम्बकेन पाल्यमाने, मन्त्र इव सचिवमण्डलेन रक्ष्यमाणे, वृत्त इव कुलपुत्रकलोकेनामुच्यमाने, यशसीवात्मवंशेन, संवर्ध्यमाने, मृगपतिपोत इव रक्षिपुरुषशस्त्रपञ्जरमध्यगते, धात्रीकराङ्गुलिलग्ने पञ्चषाणि पदानि प्रयच्छति हर्षे, षष्ठे वर्षमवतरति च राज्यवर्धने देवी यशोवती गर्भेणाधत्त नारायणमूर्तिरिव वसुधां देवीं राज्यश्रियम् ।

पूर्णेषु च प्रसवदिवसेषु दीर्घरक्तनालनेत्रामुत्पलिनीमिव सरसी, हंसमधुरस्वरां शरदमिव प्रावृट्, कुसुमसुकुमारावयवां वनराजिमिव मधुश्रीः, महाकनकावदातां वसुधारामिव द्यौः, प्रभावर्षिणीं रत्नजातिमिव वेला, सकलजननयनानन्दका

त्वाद्दर्पांकुरसाम्यं, युक्तमेव । मुग्धैः सुंदरैः स्मितैर्हास्यैः कुसुमैर्मधुकरकुलानीव भ्रमरसमूहा इव बंधुहृदयानि आप्तजनानां स्याकर्षति । जनन्याः कलशाविव पयोधरौ,स्तनौ, तयोः,पयसो दुग्धस्य शीकरैः,कणैः, सेकादिव सिंचनादिव, उदकसेचनादंकुरोत्पत्तिः दंतानां शुभ्रत्वाद्धासतां करत्वसाम्यवशान युक्तमेव। चारित्र पातिव्रत्य इव । मृगपतिपोत इव सिंहशिशाविव रक्षिपुरुषाणां शस्त्राण्येव पञ्जरस्तस्य मध्यं गते । धात्र्युपमाता ।

पूर्णेष्विति देवी दुहितरं प्रसूतवतीति संबंधः । नालानि नाड्यो नेत्रे च नालनेत्रं प्राण्यंगत्वादेकवद्भावः । दीर्घं महद् रक्तं ताम्रं नालनेत्रं यस्याः सा दुहिता ताम् (पक्षे) दीर्घाणि रक्तानि नालानि पद्मदंडा नेत्राणि मूलानि यस्यास्तामुत्पलिनीं कमलिनीम् । हंस इव हंसैर्वा मधुरः स्वरो यस्यास्ताम् । कुसुमानीव कुसुमान्येव षा गात्राणि यस्यास्तां वनराजिं वनपंक्तिम् । महाकनकं तिलसुवर्णमिति शंकरः तदिवावदाता शुभ्रा । (पक्षे) महाकनकेनावदाता

रिणीं चन्द्रलेखामिव प्रतिपत्, सहस्रनेत्रदर्शनयोग्यां जयन्तीमिव शची, सर्वभूभृदभ्यर्थितां गौरीमिव मेना, प्रसूतवती दुहितरम् यया द्वयोः सुतयोरुपरि स्तनयोरिवैकावलीलतया नितरामभ्राजत।

अस्मिन्नेव तु काले देव्या यशोवत्या भ्राता सुतमष्टवर्षदेशीयमुद्धूयमानकुटिलकाकपक्षकशिखण्डं खण्डपरशुहुंकाराग्निधूमलेखानुबद्धमूर्धानं मकरध्वजमिव पुनर्जातम्, एकेनेन्द्रनीलकुण्डलांशुश्यामलितेन शरीरार्धेनेतरेण च त्रिकण्टकमुक्ताफलालोकधवलितेन संपृक्तावतारमिव हरिहरयोर्दर्शयन्तम्, पीनप्रकोष्ठप्रतिष्ठित पुष्पलोहवलयं, परशुराममिव क्षत्रक्षपणक्षीण-

वसुधारा धनवृष्टिः। भाग्याधिक्यसूचनाय दिवः सुवर्णवृष्टिः, पततीति हि प्रसिद्धिः। वेला समुद्र विकृतिः। शची इंद्राणी। भूभृद्भी राजिभिः पर्वतैश्च। गौरीमिव पार्वतीमिव। एकावलीलता एकयष्टिका मौक्तिकमाला।

अस्मिन्निति। देव्या यशोवत्या भ्राता स्वतनयं भंडिनामानं कुमारयोरनुचरमर्पितवानिति संबंधः। अष्टवर्षदेशीयम् ईषन्न्यूनान्यष्टवर्षाणि यस्यतम्। उद्धूयमानः, कंपमानः, काकपक्षकः, शिखा एव शिखंडो बर्हो यस्य तम्। खण्डपरशोः शिवस्य हुंकाराग्नेर्धूमलेखया धूमराज्याऽनुबद्धाऽनुगतो मूर्धा मस्तकं यस्य तं पुनर्जातं पुनरुद्भूतं मकरध्व मिव मदनमिव। कुमारस्य मदनसाम्यं शिखाया धूमलेखासाम्यम्। इंद्रनीलकुण्डलस्यांशुभिः किरणैः, श्यामलितेन, कृष्णीभूतेन। त्रिकंटकस्य कर्णभूषणस्य मुक्ताभ तानामालोकेन कान्त्या धवलितं शुभ्रीकृतं तेन, संपृक्तावतारमेकीभूतावतारम्,एतेन तदा हरिहरयोरेकावतारकल्पनाऽऽसीदिति गम्यते। पीने पुष्टे प्रकोष्ठे

परशुपाशचिह्नितं बालतां गतम्, कण्ठसूत्रग्रथितभङ्गुरप्रवालाङ्कुरं हिरण्यकशिपुमिवोरः काठिन्यखण्डितनरसिंहनखरखण्डम् गृहीतजन्मान्तरं, शैशवेऽपि सावष्टम्भं बीजमिव वीर्यद्रुमस्य, भण्डिनामानमनुचरं कुमारयोरर्पितवान् ।

अवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तृतीयस्य नेत्रयोरिवेश्वरस्य तुल्यं दर्शनमासीत् । राजपुत्रावपि सकलजीवलोकहृदयानन्ददायिनौ तेन प्रकृतिदक्षिणेन मधुमाधवाविव मलयमारुतेनोपेतौ नितरां रेजतुः । क्रमेण चापरेणेव भ्रात्रा प्रजानन्देन

कूपरादधः प्रदेशे प्रतिष्ठितं पुष्पलोहस्य मणिविशेषस्य वलयं कटकं यस्य तम् । क्षत्रस्य क्षात्रियजातेः क्षपणेन नाशेन क्षीणस्य परशोरायुधविशेषस्य पाशो धारणरज्जुस्तेन चिन्हितो युक्तस्तम् । पुष्पलोहवलयं परशुधारणपाशेनोत्प्रेक्षितम् । कण्ठसूत्रग्रथिता भंगुरा वक्र प्रवालस्य रत्नविशेषस्यांकुरा यस्य तम् । उरःकाठिन्येन वक्षोदार्ढ्येन खंडितं नरसिंहस्य नखराणां नखानांखडं येन तम् । गृहीतं जन्मान्तरमन्यज्जन्म येन तं हिरण्यकशिपुमिव प्रल्हादपितरमिव । वक्राणां प्रवालांकुराणां नृसिंहनखचिन्हसाम्यम् । शैशवेपि बाल्येपि सावष्टंभं सगर्वम् । अतएव वीर्यद्रुमस्य पराक्रमवृक्षस्य बीजमिव ।

अवनीति । अवनिपतेस्तु तस्योपरि पुत्रयोस्तुल्यं दर्शनमालोकनमासीदिति संबंधः । कथमिव । ईश्वरस्य शंकरस्य तृतीयस्योपरि भालस्थलोचनोपरि दर्शनं दृष्टिरिव । ईश्वरस्येति नृपविशेषणं च । राजपुत्रावपि राज्यवर्गेनहर्षावपि प्रकृतिदक्षिणेन निसर्गऋजुना तेन भंडिना रेजतुः शुशुभाते । सकलजीवलोकस्य हृदयस्यानंदं दत्तरतौ प्रकृतिदक्षिणेन स्वभावसरलेन निसर्गतो दाक्षिण्येन च मलयमारुतेन वासंतानिलेनोपेतौ मधुमाधवौ चैत्रवैशाखाविव ।

सह वर्धमानौ यौवनमवतेरतुः। स्थिरगोरुस्तम्भौ च पृथुप्रकोष्ठौ दीर्घभुजार्गलौ विकटोरःकवाटौ प्रांशुसालाभिरामौ महानगरसंनिवेशाविव सर्वलोकाश्रयक्षमौ बभूवतुः।

अथ चन्द्रसूर्याविव स्फुरज्ज्योत्स्नायशःप्रतापाक्रान्तभुवनावभिरामदुर्निरीक्ष्यौ, अग्निमारुताविव समभिव्यक्ततेजोबलावेकीभूतौ, शिलाकठिनकायबन्धौ हिमवद्विन्ध्याविवाचलौ, महावृषाविव कृतयुगयोग्यौ, अरुणगरुडाविव हरिवाहनविभक्तशरीरौ, इन्द्रोपेन्द्राविव नागेन्द्रगतौ, कर्णार्जुनाविव

महतो नगरस्य सन्निवेशाविव स्थाने इव सर्वलोकानामाश्रयस्याधारस्य क्षमौ समर्थौ। स्थिरौ स्तम्भाविवोरू ययोस्तौ (पक्षे) स्थिरा उरवो महान्तः स्तंभा ययोस्तौ। पृथू महान्तौ प्रकोष्ठौ कूर्पराधोभागौ ययोस्तौ (पक्षे) पृथवो महान्तः प्रकोष्ठाः कक्ष्या ययोस्तौ। विकटं विशालमुरःकवाटं वक्षःफलिका ययोस्तौ (पक्षे) विकटान्युर इव कवाटानि द्वाराणि ययोस्तौ। प्रांशू सालौ वृक्षविशेषाविवाभिरामौ सुन्दरौ (पक्षे) प्रांशुनोन्नतेन सालेन वप्रेणाभिरामौ।

अथेति। तौ स्वल्पीयसापि कालेन द्वीपांतरेष्वप्यद्वीपेष्वपि ख्यातिं प्रसिद्धिं जग्मतुरिति संबंधः। स्फुरन्ती ज्योत्स्नेव चन्द्रिकेव, यशः, कीर्तिः, प्रतापः, पराक्रमश्च ताभ्यामाक्रान्तं भुवनतलं याभ्यां तौ। अतएवाभिरामौ सुन्दरौ दुर्निरीक्ष्यौ दुरवलोकनीयौ। यशसा सुन्दरौ (प्रतापेन दुर्निरीक्ष्याविवत्यर्थः) (पक्षे) स्फुरज्ज्योत्स्नैव यशः प्रताप आतपश्च ताभ्यामाक्रान्तं भुवनतलं याभ्यां तौ। चन्द्रमसो ज्योत्स्नयाभिरामत्वं सूर्यस्यातपेन दुर्निरीक्षत्वं च। समभिव्यक्ते तेजस्तेजस्त्वं प्रकाशश्च बलं सामर्थ्यं च ययोस्तौ। अग्निमारुताविव वन्हिसमीरणाविवैकीभूतौ परस्परानुवर्तिनौ मिलि-

कुण्डलकिरीटधरौ, पूर्वापरदिग्भागाविव सर्वतेजस्विनामुदयास्तमयसंपादनसमर्थौ, अमान्ताविवातिमानेनासन्नवेलार्गलनिरोधसंकटे कुकुटीरके, तेजः पराङ्मुखीं छायामपि जुगुप्समानौ, स्वात्मप्रतिबिम्बेनापि पादनखलग्नेन लज्जमानौ, शिरोरुहाणामपि भङ्गेन दुःखमवतिष्ठमानौ, चूडामणिसंक्रान्तेनापि द्वितीयेनातपत्रेणापत्रपमाणौ, भगवति षण्मुखेऽपि स्वामिशब्देनासुखायमानश्रवणौ, दर्पणदृष्टेनापि प्रतिपुरुषेण दूयमाननयनौ, संध्याञ्जलिघटनेष्वपि शूलायमानोत्तमाङ्गौ,

---

तौ च। शिलेव शिलाभिर्वा कठिनः कायबधो देहबधो ययोस्तौ। अचलौ दृढौ पर्वतौ वा। हिमवान् हिमालयो विंध्याचलो विंध्याद्रिस्ताविव। महावृषाविव महान्तौ बलीवर्दाविव कृतयुगस्य योग्यौ (पक्षे) कृता युगस्य धुरि योग्याऽध्ययनं याभ्यां तौ। अथवा वृषपक्षे कृते परिकल्पिते युगे धुरि योग्यावुचितावित्यर्थः। हरिवाहनेनाश्वारोहणेन विभक्तं सुबद्धं सुपरिमाणं शरीरं ययोस्तौ। (पक्षे) हरिश्च हरिश्च हरी कृष्णादिनकरौ तयार्वाहनं यानं विभक्तं योजितं शरीरं देहो ययोस्तौ। 'हरिर्वातार्कचंद्रेंद्रयमोपेंद्रमरीचिषु। सिंहाश्वकपिभेकाहिशुकलोकांतरेषु च' इति विश्वः। नागेन्द्र इव गजराज इव गतं गमनं ययोस्तौ। (पक्षे) नागेन्द्र ऐरावतः शेषराजश्च तौ गतौ प्राप्तौ। कर्णाय कुन्डले सूर्येण दत्ते। अर्जुनस्य शिरसि किरीटो वृत्रघ्ना बद्धः। सर्वतेजस्विनां वीराणामादित्यादीनां चादयोऽभ्युदय उद्गमनं चास्तो नाशस्तिरोभवनं च तत्र समर्थौ। अतिमानेनात्यंताभिमानेन महाप्रमाणतया चासन्नयाः समीपस्थाया वेलायाः समुद्रमर्यादाया अर्गलरूपाया निरोधेन प्रतिबंधेन संकटे गहने। कुत्सितं कुटीरकं क्षुद्रगृहं तस्मिन् अमान्ताविवावर्तमा-

जलधरधृतेनापि धनुषा दोदूयमानहृदयौ, आलेख्य क्षितिपतिभिरप्यप्रणमद्भिः संतप्यमानचरणौ, परिमितमण्डलसंतुष्टं तेजः सवितुरप्यबहुमन्यमानौ, भूभृदपहृतलक्ष्मीकं सागरमप्युपहसन्तौ, बलवन्तमकृतविग्रहं मारुतमपि निन्दन्तौ, हिमवतोऽपि चमरीबालव्यजनवीजितेन दह्यमानौ, जलधीनामपि शङ्खैः खिद्यमानौ चतुःसमुद्राधिपतिमपरं प्रचेतसमप्यसहमानौ, अनपहृतच्छत्रानपि विच्छायानवनिपालान्कुर्वाणौ, साधुष्वप्यसेवितप्रसन्नौ मुखेन

नाविव (समुद्रमर्यादितायां भुवि महामानवत्त्वेनातिष्ठन्ताविवेति तात्पर्यार्थः) शिरोरुहाणां केशानामपि भंगन (कर्तनादाविति भावः) चूडामणौ शिरोभूषणे संक्रान्तेनापि पतितेनापि आतपत्रेण छत्रेण लज्जमानौ (चूडामणिषु प्रतिबिम्बितमपि द्वितीयमातपत्रमसहमानावित्यर्थः) षण्मुखेपि, कार्तिकेयेपि, स्वामिशब्दभाजमस्वीकुर्वन्तावित्यर्थः। संध्यायां संध्योपासने। अंजलिघटनेष्वपि, नमस्कारेष्वपि। दोदूयमानमतिशयेन पीड्यमानं हृदयं ययोस्तौ। आलेख्यनृपतिभिश्चित्रस्थराजभिरप्रणमद्भिरकृतनमस्कारैः संतप्यमानौ कुप्यन्तौ चरणौ पादौ ययोस्तौ, परिमितेन परिगणितेनाल्पेनेत्यर्थः, मंडलेन विषयेण बिम्बेन च संतुष्टं सवितुः सूर्यस्यापि तेजोऽबहुमन्यमानौ भूभृतामरिणापहृता लक्ष्मीर्यस्य तं सागरमपि समुद्रमपि अकृतो विग्रहःसमरः। कायश्च येन तम्। मारुतस्य शरीराभावाद्रूपरहितस्पर्शवत्त्वरूपतल्लक्षणादशरीरत्वस्य प्रतीतेः। अनपहृतमगृहीतमातपत्रं छत्रं येषां तानपि विच्छायान्मलिनान्। पराजयेनेति भावः। गृहीतातपत्रा अपि विच्छाया इति विरोधः। साधुष्वपि सदाचारेष्वप्यसेवितेन सेवया विना

मधु क्षरन्तौ, दुष्टराजवंशानूष्मणा दूरस्थितानपि म्लानिमा नयन्तौ, अनुदिवसं शस्त्राभ्यासश्यामिकाकलङ्कितमशेषराजकप्रतापाग्निनिर्वपणमलिनमिव करतलमुद्वहन्तौ, योग्याकालेषु धीरैर्धनुर्ध्वनिभिरभ्यर्णोपभोगाद्दिग्वधूभिरिवालपन्तौ, राज्यवर्धन इति हर्ष इति सर्वस्यामेव पृथिव्यामाविर्भूतशब्दप्रादुर्भावौ, स्वल्पीयसैव कालेन द्वीपान्तरेष्वपि प्रकाशतां जग्मतुः।

एकदा च तावाहूय भुक्तवानभ्यन्तरगतः पिता सस्नेहमवादीत्—'वत्सौ, प्रथमं राज्याङ्गं दुर्लभाः सद्भृत्याः। प्रायेण परमाणव इव समवायेष्वनुगुणीभूय द्रव्यं कुर्वन्ति पार्थिवं

प्रसन्नौ मुखेन मधुक्षरन्तौ मधुरं भाषमाणौ। साधुषूत्सवकालेष्वप्यसेविता प्रसन्ना मद्यं याभ्यां तथाभूतावपि मुखेन मधु क्षरन्तावविति विरोधः। अथवा साधुषु सतामुपरि असेवितप्रसन्नावपि अपीतमद्यावपि मुखेन मधु क्षरन्ताविति विरोधो ज्ञेयः,

दुष्टेति। ऊष्मणा दाहशक्त्या। तया समीपस्थो म्लानो भवति न तु दूरस्थ इति विरोधः। शस्त्राणामभ्यासस्य श्यामलकया किणेन प्रथितेन कलंकितं मलिनम् अशेषस्य सकलस्य राजकस्य राजसमूहस्य प्रतापाग्नेः शौर्याग्नेर्निर्वपणेन शमनेन मलिनमिव। वन्हेः शमनेन शांतांगारेण हस्तो मलिनो भवति योग्याया अध्ययनस्य कालेषु। धीरैर्गभीरैर्धनुर्ध्वनिभिर्धनुःशब्दै अभ्यर्णोपभोगात्समीपागतो य उपभोगः सेवारूपस्तस्मात्। आविर्भूतः शब्दप्रादुर्भावो नामप्रसिद्धिर्ययोस्तौ।

एकदेति। प्रायेण क्षुद्रा नीचा समवायेषु समूहेषु अर्थान्मंत्रिसभायामनुगुणीभूय प्रविश्य पार्थिवं नृपं द्रव्यं स्वकरक्षी

क्षुद्राः । क्रीडारसेन नर्तयन्तो मयूरतां नयन्ति बालिशाः । दर्पणमिवानुप्रविश्यात्मीयां प्रकृतिं संक्रामयन्ति पल्लविकाः । स्वप्ना इव मिथ्यादर्शनैरसद्बुद्धिं जनयन्ति विप्रलम्भकाः । गीतनृत्यहसितैरुन्मत्ततामावहन्त्युपेक्षिता विकारा इव वातिकाः । चातका इव तृष्णावन्तो न शक्यन्ते ग्रहीतुमकुलीनाः, मानसे मीनमिव स्फुरन्तमेवाभिप्रायं गृह्णन्ति जालिकाः । यमपट्टिका इवाम्बरे चित्रमालिखन्त्युद्गीतकाः । शल्यं हृदये निक्षिपन्त्येतिमार्मणाः । यतः सर्वदोषाभिषङ्गैरसंगतौ बहुधोपधाभिः परीक्षितौ शुची विनीतौ विक्रान्तावभिरूपौ मालवराजपुत्रौ भ्रातरौ भुजाविव मे शरीरादव्यतिरिक्तौ कुमारगुप्तमाधवगुप्ता-

---

ह्नकं कुर्वन्ति (तन्मंत्रिषु स्वप्रवेशं कृत्वा नृपाद्धनं हरन्तीत्यर्थः । यथा परमाणवः सूक्ष्माः अवयवाः समवायेषु तादृशसंबंधेष्वनुगुणीभूय घटकीभूय पार्थिवं पृथ्वीसंबंधि द्रव्यं कुर्वन्ति तद्वत् । बालिशा धूर्ताः कुमाराश्च । क्रीडारसेन नर्तयन्तो मयूरतां हास्यत्वम्, कुमाराश्च क्रीडायां मयूरान्नर्तयन्ति । पल्लविका विटाः किसलयानि च । अनुप्रविश्य चित्तं रंजयित्वा आक्रम्य च । आत्मीयां प्रकृतिं स्वीयं दौरात्म्यं शरीरं च,विप्रलंभका प्रतारका असच्छास्त्रनिर्मातारो वा वातिका धूर्ता वातजा विकारा वा । तृष्णावतोऽकुलीना ग्रहीतुं न शक्यन्ते तेषां तृष्णायाः कदापि शमनासंभवात् । चातका अपि कौ पृथ्व्यां लीना न भवन्ति खेचरत्वात्तेषाम् । जालिका मायाविनः कैवर्ताश्च । मानसेऽन्तःकरणे सरोविशेषे च । स्फुरत्मुत्पद्यमानमेवाभिप्रायं स्फुरन्तं चलन्तं मीनं मत्स्यमिव । यमपट्टो धर्मराजप्रकृतियुतः पट्टो विद्यते येषां ते । उद्गीतका उच्चैर्गीतं गानं येषां ते । अंबरे आकाशे चित्रमालिखन्त्यसंभाव्यानर्थानारभंते । वस्त्रे च

'अस्माभिर्भवतोरनुचरत्वार्थमिमौ निर्दिष्टौ, अनयोरुपरि भवद्भ्या-
मपि नान्यपरिजन समवृत्तिभ्यां भवितव्यम' इत्युक्त्वा तयोराह्वानाय प्रतीहारमादिदेश।

नचिरादुद्वारदेशनिहितलोचनौ राज्यवर्धनहर्षौ प्रतीहारेण सह प्रविशन्तम अग्रतो ज्येष्ठमष्टादशवर्षवयस नात्युच्चं नातिखर्वमतिगुरुभिः पदन्यासैरनेकनरपतिसंचरण चलां निश्चलीकुर्वाणमिवोर्वीम्, अनवरताभ्यस्तलङ्घनघनोपचयकठिन मांसमेदुरादूरुद्वयान्निष्पततेवानुल्बणजानुग्रंथिप्रसूतेन तनुतरजङ्घाकाण्डयुगलेन भासमानम, उल्लिखितपार्श्वप्रकाशितकशिम्ना मन्दरमिव सुरासुररभसभ्रमितवासुकिकषणक्षीणेन मध्येन लक्ष्यमाणम्, अतिविस्तीर्णेनोरसा स्वामिसंभावनानामपरिमितानामवकाशमिव प्रयच्छन्तम्, प्रलम्बमानस्य भुजयुगलस्य

चित्रकर्माचरन्ति। अतिमार्गणा अत्यन्तं याचकाः दृढाः शराश्च। शल्यं विषादं शंकुं च। सर्वदोषाभिषंगैर्दोषसंपर्कैः। उपधाभिर्भृत्यपरीक्षणोपायैः। अन्यपरिजनसमा इतरमेव तुल्या वृत्तिर्वर्तनं तया।

न चिरादिति राज्यवर्धनहर्षौ प्रतिहारेण सह प्रविशंतमग्रतो ज्येष्ठं कुमारगुप्त पृष्ठतश्च तस्य कनीयांसं माधवगुप्तं ददृशतुरिति संबंधः। अष्टादश वर्षाणि वयो यस्य तं नातिखर्वं नातिवामनं पादन्यासैश्चरणसंक्रमणैरनेकेषां नरपतीनां संचरणेन गमनेन चलामुर्वी पृथ्वीं निश्चलीकुर्वाणं स्थिरीकुर्वाणमिव। अनवरतं सततमभ्यस्तेन कृतेन लंघनेनोड्डानेन गमनेन वा घनो दृढ उपचयो वृद्धिर्यस्य तस्मादूरुद्वयादंकद्वयाद्। अनुल्बणाया अनुद्धताया जानुग्रंथेः। प्रसूतेन जातेन। तनुतरेण सूक्ष्मेण जंघाकांडद्वयेन प्रसृतायुगलेन भासमानं शोभमानम्। उल्लिखिताभ्यां तनूभूताभ्यां

निभृतललितैर्विक्षेपैरनिदुस्तरं तरन्तमिम यौवनोदधिम, वाम करकटकमाणिक्यमरीचिमञ्जरीजालिन्या समुद्भिद्यमानप्रतापानलशिखापल्लवयेव चापकिणलेखयाङ्कितपीवरप्रकोष्ठम, आलोहिनीमुग्धांसतटावलम्बिनीमस्त्रग्रहणव्रतविधृतां रौरवीमिव त्वचं कर्णाभरणमणेः प्रभां बिभ्राणम्, उत्कोटिकेयूरपत्रभङ्गपुत्रिकाप्रतिबिम्बगर्भकपोलं मुखं चन्द्रमसमिव हृदयस्थितरोहिणीकमुद्वहन्तम्, अचपलस्तिमिततारकेणाधोमुखेन चक्षुषा शिक्षयन्तमिव लद्मीलाभोत्तानितमुखानि पङ्कजवनानि विनयम् स्वाम्यनुरागमिवाम्लातकमुत्तंसीकृतं सिरसा धारयन्तम्, निर्दयाकर्षणभङ्गभीततया सकलकार्मुकार्पितामिव नम्रतां प्रकाशयन्तम, शैशव एव निर्जितैरिन्द्रियैरिरिभिरिव सयतैः शोभमानम्, प्रणयिनीमिव विश्वासभूमिं कुलपुत्रतामनु-

---

पार्श्वाभ्यां कक्षाधोभागाभ्यां प्रकाशितः प्रकटितः कृशिमा कृशता यस्य तेन मध्येन कटिना। सुरासुरैः, रभसेन वेगेन भ्रमितो वासुकि शेषराजस्तेन कषणं घषणं तेन क्षीणेन मध्येनोपलक्ष्यमाणं मंदारमिव मंदार पर्वतमिव। अवकाश स्थलमिव प्रयच्छन्तं ददानम्। निभृतललितगंभीरमनोहरैः वामकरस्य सव्यहस्तस्य माणिक्यकटकस्य माणिक्यवलयस्य मरीचिमंजरीणां किरणानां जालं समूहो विद्यते यस्यास्तया चापकिणलेखया चापव्रणचिन्हराज्या समुद्भिद्यमानस्योद्गच्छतः प्रतापानलस्य सिखापल्लवया शिखापल्लवेनेव। अस्त्रग्रहणं शस्त्रस्वीकारस्तस्य व्रते विधृतां शस्त्राध्ययन कालेऽङ्गीकृताम् रौरवीं मृगसंबंधिनीम्। उत्कोटिकस्योर्ध्वाग्रभागस्य केयूरस्यांगदस्य पत्रभंगपुत्रिका रचनाविशेष उल्लिखिता शालभंजिका तस्याः प्रतिबिम्बंगर्भेमध्ये यस्य तादृशः कपोलो यस्य तन्मुखं हृदयस्थित

वर्तमानम्, तेजस्विनमपि शीलेनाह्लादकेन सवितारमिव शशिनान्तर्गतेन विराजमानम् अचलानामपि कायकार्कश्येन गन्धन मिवचारन्तम्,दर्शनक्रीत मानन्दहस्त विक्रीणानमिव जनं सौभाग्येन, कुमारगुप्तम्,पृष्ठतस्तस्य कनीयांसमतिप्रांशुतया गौरतया च मनःशिलाशैलमिव सञ्चरंतम्, अनुल्वणमालतीकुसुमशेखर निभेननिर्जिगमिषता गुरुणा शिरसि चुम्बितमिव यशसा, परस्परविरुद्धयोर्विनययौवनयोश्चिरात्प्रथमसङ्गमचिह्नमिव भ्रूसङ्गतकेन कथयन्तम्,अतिधीरतया हृदयनिहितां स्वामिभक्तिमिव निश्चलां दृष्टिं धारयन्तम् , अच्छाच्छचन्दनरसानु-

रोहिणी यस्य तादृशं चंद्रमसमिवोद्वहता। चक्षुषाजातकाञ्चनम् लक्ष्म्य श्रिय. लाभेनोत्तानितान्युपरि कृतानि मुखानि यैस्तानि। अम्लातकं ताम्रकुरंटक पुष्पम्। अतएव तस्यानुरागसादृश्यम्। उत्तंसीकृतं शेखरतां नीतम्। निर्दयं दृढ यदाकर्षणं तेन भङ्गो नाशस्तस्य भीततया भीत्या सकलैः कामुकैर्धनुर्भिरर्पितां दत्तामिव। कायकार्कश्येन देहदार्ढ्येनाचलानां पर्वतानां गन्धनं मर्दनमिव। दर्शनेनावलोकनेन क्रीतमावर्जितं जनं सौभाग्येन तद्रूपमूल्येनानन्दहस्ते आनन्दरूपकेतुहस्ते विक्रीणानमिव। अवलोकनेनैव वश्यतां नीतमतएव क्रीतं जनमानन्दभाजं विदधात्यत आनन्द हस्ते विक्रीणीत इत्युक्तम्। विक्रीणान इति रूपं विपूर्वकात्क्रीणातेः "परिव्यवेभ्यः क्रियः" इत्यनेनात्मनेपदे शानचि निष्पन्नम्। तस्य कुमारगुप्तस्य। उन्नतत्वाद्गौरवर्णत्वाच्च मनःशिलाशैलसाम्यम्। अनुल्वणस्याव्यक्तस्य मालतीकुसुमशेखरस्य निभेन मिषेण निर्जिगमिषता बहिरागन्तुमिच्छुना गुरुणा महता यशसा शिरसि चुम्बितमिव। यशसः शुभ्रत्वाच्छे-

लपेशीतलं संनिहितहारोपधानं वक्षःस्थलमनन्तसामन्तसंक्रांतिश्रान्तायाः श्रियो विशालं शशिमणिशिलापट्टशयनमिव विभ्राणम्, चक्षुः कुरङ्गैर्घोणावंशं वराहैः स्कन्धपीठं महिषैः प्रकोष्ठबन्धं व्याघ्रैः पराक्रमं केसरिभिर्गमनं मतङ्गजैर्मृगयाक्षपितशेषभीतिरुत्कोचमिव दत्तं दर्शयन्तं माधवगुप्तं ददृशतुः।

प्रविश्य च दूरादेव चतुर्भिरङ्गैरुत्तमाङ्गेन च गां स्पृशन्तौ नमश्चक्रतुः। स्निग्धनरेन्द्रदृष्टिनिर्दिष्टामुचितां भूमिं भेजाते। मुहूर्तं च स्थित्वा भूपतिरादिदेश तौ—'अद्यप्रभृति भवद्भ्यां कुमारावनुवर्तनीयौ' 'यथाज्ञापयति देवः' इति मेदिनीदोलायमानमौलिभ्यामुत्थाय राज्यवर्धनहर्षौ प्रणेमतुः।

खर साम्यम् (शेखर चानुलग्गविशेषणेन तस्य विनीतत्वं व्यज्यते) अपङ्गतकेन विनयेन भ्रुवोरन्तराले धृतैःकेशैः। एतेन तदानीं भ्रुकुट्योरन्तरालवर्तिनां केशानामच्छेदनरीतिमन्यजनेष्वासीदिति ज्ञायते। स्वच्छाच्छस्यातिस्वच्छस्य चन्दनरसस्यानुलेपनेन शीतलं हिमं सन्निहितं स्थापितं हार एव मौक्तिकमालेवोपधानमुपबर्हो यस्य तत्। अनन्तेष्वसंख्येषु; सामन्तेषु, प्रतिभूपेषु, सङ्क्रान्त्या सङ्क्रमणेन श्रान्तायाः खिन्नायाः श्रिया राजलक्ष्म्या विशालं महत् शशिमणिशिलापट्टमेव चन्द्रकान्तशिलाखण्डमेव शयनम्। घोणा नासिकैव वंशो वेणुरुन्नतत्वात्। उत्कोचमिव गुप्तोपहारमिव।

प्रविश्येति। चतुर्भिरंगैर्जानुभ्यां हस्ताभ्यां च। गां पृथ्वीम्। स्निग्धेन प्रेमवता नरेन्द्रेण नृपेण दृष्ट्या निर्दिष्टां दर्शितामुचितां सेवकयोग्याम्। मेदिन्यां पृथ्व्यां दोलायमानाभ्यां मस्तकाभ्याम्। निमेषोन्मेषाविव संकोचविकासाविव।

तौ च पितरम् । ततश्चारभ्य क्षणमपि निमेषोन्मेषाविव चक्षुर्गो वरादनपयान्तावुच्छ्वासनिःश्वासाविव नक्तंदिवमभिमुखस्थितौ भुजाविव सततपार्श्ववर्तिनौ कुमारयोस्तौ बभूवतुः ।

अथ राज्यश्रीरपि नृत्यगीतादिषु विदग्धासु सखीषु सकलासु कलासु च प्रतिदिवसमुपचीयमानपरिचया शनैः शनैरवर्धत । परिमितैरेव दिवसैर्यौवनमारुरोह । निपेतुरेकस्यां तस्यां शरा इव लक्ष्यभुवि भूभुजां सर्वेषां दृष्टयः । दूतप्रेषणादिभिश्च तां ययाचिरे राजानः ।

कदाचित्तु राजान्तःपुरप्रासादस्थितो बाह्यकक्ष्यावस्थितेन पुरुषेण स्वप्रस्तावगतां गीयमानामार्यामशृणोत् ।

'उद्वेगमहावर्ते पातयति पयोधरोन्नमनकाले ।
सरिदिव तटमनुवर्षं विवर्धमाना सुता पितरम्' ॥५॥

तां च श्रुत्वा पार्श्वस्थितां महादेवीमुत्सारितपरिजनो

अथेति—नृत्यं नर्तनं गीतं गानं चादि प्रमुखं यासां तासु विदग्धासु पण्डितासु सखीषु मनोहरासु सकलासु कलासु च । उपचीयमानो वर्धमानः परिचयो यस्याः सा ।

कदाचिदिति—बाह्य कक्ष्यायां प्रासादस्य बहिःप्रकोष्ठे ।

उद्वेगेति । अनुवर्षं प्रतिहायनं प्रतिवर्षाकालं च । वर्धमाना सुता कन्या पयोधरयोः स्तनयोः पयोधराणां मेघानां चोन्नमनस्योद्गमनस्य काले तारुण्ये वर्षाकाले च । पितरं जनकमुद्वेगस्य मानसपीडाया महत्यावर्ते आवर्तने (पक्षे) उद्वेग इव महावर्ते महत्यंभसां भ्रमे पातयति । कथमिव सरिन्नदी तटं तीरमिव । 'आवर्तश्चिन्तने वारिभ्रमे चावर्तने पुमान्' इति मेदिनी ॥५॥

तां चेति । उत्सारिता दूरीकृताः परिजना येन सः । पार्श्वे

जगाद—'देवि, तरुणीभूता वत्सा राज्यश्रीः । एतदीया गुणवत्तेव क्षणमपि हृदयान्नापयाति मे चिन्ता। यौवनारम्भ एव च कन्यकानामिन्धनीभवन्ति पितरः संतापानलस्य। हृदयमन्धकारयति मे दिवसमिव पयोधरोन्नतिरस्याः । केनापि कृता धर्म्या नाभिमता मे स्थितिरियं यदङ्गसंभूतान्यङ्कलालितान्यपरित्याज्यान्यपत्यकान्यकाण्ड एवागत्यासंस्तुतैर्नीयन्ते एतानि तानि खलवङ्कनस्थानानि संसारस्य । सेयं सर्वाभिभाविनी शोकाग्नेर्दाहशक्तिर्यदपत्यत्वे समाने जातायां दुहितरि दूयन्ते सन्तः। एतदर्थं जन्मकाल एव कन्यकाभ्यः प्रयच्छन्ति सलिलमश्रुभिः साधवः । एतद्भयादकृतदारपरिग्रहाः परिहृतगृहवसतयः शून्यान्यरण्यान्यधिशेरते मुनयः। को हि नाम सहते विरहमपत्यानाम्। यथा यथा समापतन्ति दूता वराणां वराकी लज्जमानेव चिन्ता तथा तथा नितरां प्रविशति मे हृदयम्। किं क्रियते। तथापि गृहगतैरनुगन्तव्या एव लोकवृत्तयः। प्रायेण च सत्स्वप्यन्येषु वरगुणेष्वभिजनमेवानुरुध्यन्ते धीमन्तः धरणीधराणां च मूर्ध्नि स्थितो माहेश्वरः पादन्यास इव सकलभुवननमस्कृतो मौखरीवंशः। तत्रापि तिलकभूतस्याव-

---

समीपे स्थिताम् । तरुणीभूता यौवनमासन्ना । एतदीयेति । हृदयादनपगमनमेव गुणवत्तायाश्चिन्तापायाश्च साम्यम्। पयोधरयोः स्तनयोर्मेघानां चोन्नतिः । धर्म्या धर्मेण प्राप्या ! इयं स्थितिराचारो नाभिमता, न मान्या, अकांड एवातर्कितमेव। असंस्तुतैरपरिचितैः। अंकनस्थानानि चिन्हस्थानानि । शून्यान्यरण्यानीति । वराकी दीना। गृहगतैर्गृहस्थैः । अभिजनं कुलम् धरणीधराणां नृपाणां पर्वतानां च। सकलेन भुवनेन नमस्कृतो वन्दितः ; ग्रहपतिरिव सूर्य

न्तिवर्मणः सूनुरग्रजो ग्रहवर्मा नाम ग्रहपतिरिव गां गतः पितुरन्यूनो गुणैरेनां प्रार्थयते। यदि भवत्या अपि मतिरनुमन्यते ततस्तस्मै दातुमिच्छामि' इत्युक्तवति भर्तरि दुहितृस्नेहकातरतरहृदया साश्रुलोचना महादेवी प्रत्युवाच—'आर्यपुत्र, संवर्धनमात्रोपयोगिन्यो धात्रीनिर्विशेषा भवन्ति खलु मातरः कन्यकानाम्। दाने तु प्रमाणमासां पितरः। केवलं कृपाकृतविशेषः सुदूरेण तनयस्नेहादतिरिच्यते दुहितृस्नेहः। यथा यावज्जीवमावयोरार्तिता प्रतिपद्यते तथार्यपुत्र एव जानाति' इति।

राजा तु जातनिश्चयो दुहितृदानं प्रति समाहूय सुतावपि विदितार्थावकार्षीत्। शोभने च दिवसे ग्रहवर्मणा कन्यां प्रार्थयितुं प्रेषितस्य पूर्वागतस्यैव प्रधानदूतपुरुषस्य करे सर्वराजकुलसमक्षं दुहितृदानजलमपातयत्। जातमुदि

इव। दुहितृस्नेहेन कन्याप्रेम्णा कातरं भीरु हृदयं यस्याः सा। धात्रीनिर्विशेषा धात्र्या निर्गतो विशेषो यस्याः सा। उपमातृसदृश इत्यर्थः। 'धात्री जनन्यामलकी वसुमत्युपमातृषु' इति मेदिनी। आर्तिता मनःपीडात्वम्।

राजेति। जातमुदीति। एव राजकुलमासीदिति संबंधः। उद्दामं सातिशयं दीयमानैस्तांबूलैः पटवासैः सुगंधिचूर्णैः कुसुमैः पुष्पैश्च प्रसाधिता अलंकृताः सर्वलोकाः यस्मिन्। सकलदेशेभ्यादिश्यमानमाज्ञाप्यमानं शिल्पिसार्थानां कारुसमूहानामागमनं यस्मिंस्तत्। अवनिपालपुरुषै राजसेवकैर्गृहीतः स्वीकृतः समग्रैः सकलैर्ग्रामीणै ग्राम्यैः जनैरानीयमान उपकरणसंभारः साधनसमूहो यस्मिंस्तत्। राज्ञां नृपाणां दौवारिकैर्द्वार-

कृतार्थे गते च तस्मिन्नासन्नेषु च विवाहदिवसेषूद्दाम्-दीयमानताम्बूलपटवासकुसुमप्रसाधितसर्वलोकम्, सकलदेशा-दिश्यमानशिल्पिसार्थागमनम्, अवनिपालपुरुषगृहीतसमग्र-ग्रामीणानीयमानोपकरणसम्भारम्, राजदौवारिकोपनीय-मानानेकनृपोपायनम्, उपनिमन्त्रितागतबन्धुवर्गसंवर्गणव्यग्र-राजवल्लभम्, लब्धमधुमदप्रचण्डचर्मकारकरपुटोल्लालित-कोणपटुविघट्टनरणन्मङ्गलपटहम्, पिष्टपञ्चांगुलमण्ड्यमानो-लूखलमुसलशिलाद्युपकरणम्, अशेषाशाखामुखाविर्भूतचारण-परम्परापूर्यमाणप्रकोष्ठप्रतिष्ठाप्यमानेन्द्राणीदैवतम्, सित-

---

रत्नकैरुपनीयमानान्यनेकानि नृपाणामुपायनान्युपहारा यस्मिंस्तत् उपनिमन्त्रितस्याहूतस्यागतस्य बन्धुवर्गस्याप्तसमूहस्य संवर्गणे स्वागते व्यग्रा राजवल्लभा यस्मिन्, लब्धस्याचि-गतस्य मधुनो मद्यस्य मदेन प्रचण्डा भयंकराश्चर्मकाराः पादूकृतस्तैः करपुटैरुल्लालिताः कम्पिताः कृतसंस्कारा वाः कोणा भेरीदण्डास्तैर्यत्पटु विघट्टनं ताडनं तेन रणन्तः शब्दं विदधतो भेरीसमूहाः यस्मिंस्तत्। पिष्टस्य सुधाचूर्णस्य पञ्चांगुलं पिष्टपञ्चांगुलम् (सुधालिप्तानामंगुलीनां पंचक-मित्यर्थः) तेनमण्ड्यमानम् उलूखलमुसलशिलादि उपकरणं साधनं यस्मिंस्तत्। अद्य यावद् उलूखलादिचित्रीकरण-पद्धितिर्विवाहे वर्तते। अशेषाशामुखेभ्योऽखिलाभ्यो दिग्भ्य आविर्भूतया आगतया चारणानां बन्दिनां परंपरया पूर्यमाणे व्याप्ते प्रकोष्ठेऽलिन्दे प्रतिष्ठाप्यमाना, इन्द्राणीदैवतं यस्मिन्। विवाहे शच्याः पूजनमावश्यकम्। सितैः शुभ्रैः कुसुमैः पुष्पैर्विलेपनैः अङ्गरागैर्वसनैर्वस्त्रैश्च सत्कृतैर्भूषितैः सूत्रधारैः

कुसुमविलेपनवसनसत्कृतैः सूत्रधारैरादीयमानविवाहवेदीसूत्रपातम्, उत्कूर्चककरैश्च सुधाकर्परस्कन्धैरधिरोहिणीसमारूढैर्धवलीक्रियमाणप्रासादप्रतोलीप्राकारशिखरम्, क्षुण्णक्षाल्यमानकुसुम्भकसम्भारम्भःप्लवरज्यमानजनपादपल्लवम्, निरूप्यमाणयौतकयोग्यमातङ्गतुरङ्गतरङ्गिताङ्गनम्, गणनाभियुक्तगणकगणगृह्यमाणलग्नगुणम्, गन्धोदकवाहिमकरमुखप्रणालीपूर्यमाणक्रीडावापीसमूहम्, हेमकारचक्रप्रक्रान्तहाटकघटनटाङ्कारवाचालितालिन्दकम्, उत्थापिताभिनवभित्तिपात्यमानबहलवालुकाकण्ठकालिपाकुलालेपकलोकम्, चतुर-

---

स्थपतिभिरादीयमानो रच्यमानो विवाहवेद्याः सूत्रस्य परिमाणरज्वाः पातो रचनारम्भः यस्मिन्। उन्मुखा ऊर्ध्वमुखाः कूर्चकाः ("कुंचला" इति भाषायां प्रसिद्धाः) करेषु येषां तैः सुधायाः कर्पराः कपालाः स्कन्धेषु येषां तैः। अधिरोहिणीं सोपनमार्गं (शिढी) इति भाषायां प्रसिद्धामधिरूढैर्धवैः पुरुषैर्धवलीक्रियमाणानि प्रासादस्य राजगृहस्य प्रतोलीप्राकारस्य मार्गवप्रस्य शिखराणि यस्मिंस्तत्, क्षुण्णश्चूर्णीकृतः क्षाल्यमानः स्वच्छीक्रियमाणः कुसुम्भसम्भारः काश्मीरजसमूहस्तस्यांभःप्लवेनोदकपूरेण रज्यमाना रक्तीक्रियमाणा जनानां पादपल्लवा यस्मिन् निरूप्यमाणा यौतकयोग्या दुहितृदानकाले जामात्रे दातुं योग्या मातङ्गा हस्तिनस्तुरङ्गा अश्वाश्च तैस्तरङ्गितमङ्गनं यस्य तत्। गणनायां सङ्ख्यानेऽभियुक्तेन नियुक्तेन गणकगणेन मौहूर्तिकसमूहेन गृह्यमाणां लग्नस्य वेषादेर्गुणा यस्मिन्। गंधोदकं सुगन्धिवारि वहन्ति ताभिर्मकरस्य मुखं यासां ताभिः प्रणालीभिर्जलनिःसरणमार्गैः पूर्यमाणः क्रीडावापीसमूहः

चित्रकरचक्रवाललिख्यमानमंगल्यालेख्यम् . लेप्यकारकदम्बकक्रियमाण मृण्मयमीनकूर्ममकरनारिकेलकदलीपूगवृक्षकम् , क्षितिपालैश्च स्वयमाबद्धकक्ष्यैः स्वाम्यर्पितकर्मशोभासंपादनाकुलैः सिंदूरकुट्टिमभूमीश्च मसृणयद्भिर्विनिहितसरसालक्तकचर्पण-हस्तान्विन्यस्तालक्तकपटलांश्च चूताशोकपल्लवलांछित-शिखरानुद्वाहविनर्दिकास्तम्भानुत्तम्भयद्भिः प्रारब्ध विविध-व्यापारम् , आसूर्योदयाच्च प्रविष्टाभिः सतीभिः सुभगाभिः सुवेशाभिरविधवाभिः सिन्दूररजोराजिराजितललाटाभिर्वधूवर-गोत्रग्रहणगर्भाणि श्रुतिसुभगानि मंगलानि गायन्तीभिर्बहु-विधवर्णकादिग्धांगुलीभिर्ग्रीवासूत्राणि च चित्रयन्तीभिश्चि-

---

क्रीडार्थं निर्मितानां कूपानां समूहो यस्मिन् । हेमकारचक्रेण सुवर्णकारसमूहेन प्रक्रान्तं प्रारब्धं हाटकघटनं सौवर्णालंकार-निर्माणं तस्य टांकारेण शब्देन वाचालितोऽलिन्दः प्रकोष्ठो यस्मिन् । उत्थापिताः समुच्छ्रिताः याः अभिनवाः नूतनाः भित्तयः तासु पात्यमानाः बहुलाः वालुकानां कण्ठकानां कणाः यस्मिन्, एतादृशो, य, आलेपः, तस्मिन् आकुलाः व्यग्राः आलेपकलोकाः, कारवः, यस्मिन । चतुराणां चित्रकाराणां चक्रवालेन समूहेन लिख्यमानानि मांगल्यानि मङ्गलसम्बन्धी-न्यालेख्यानि, चित्राणि, यस्मिन् । लेप्यकारकदम्बेनालेपकव-र्गेण क्रियमाणा मृण्मया मीना मत्स्याः कूर्मा नारिकेल-कदलीपूगवृक्षाः यस्मिन् , क्षितिपालान्विशिनष्टि । आबद्ध-कक्ष्यैर्बद्धपरिकरैः । स्वामिनाऽर्पितस्य नृपेणाज्ञापितस्य कर्मणः शोभायाः, सम्पादने आकुलैः, सिन्दूरकुट्टिमभूमीः सिन्दूरप्रस्तर-भुवो मसृणयद्भिः श्लक्ष्णीकुर्वद्भिः ।

त्रपल्लवलतालेखप्रकुशलाभिः कलशांश्च धवलिताञ्शीतलशाराजिर-श्रेणीश्च मण्डयन्तीभिराभत्रपुटकर्पासतूलपल्लवांश्च वैवाहिक-कङ्कणोर्णासूत्रसंनाहांश्च रञ्जयन्तीभिर्बलाशनाघृतनीकृतकुङ्कुम-कल्कमिश्रितांश्चाङ्गरागाल्लावण्यविशेषकृन्ति च मुखालेपनानी कल्पन्तीभिः कक्कोलमिश्राः सजातीफलाः स्फुरत्स्फारितस्फाटिक-कर्पूरशकलखचितान्तराला लवङ्गमाला रचयन्तीभिः समन्ता-त्सामन्तसीमन्तिनीभिर्व्याप्तम् बहुविधभक्तिनिर्माणनिपुणपुराण-पौरपुरंध्रिबध्यमानैर्बद्धैश्चाचारचतुरान्तःपुरजरतीजनितपूजाराज-मानरजकरज्यमानै रक्तैश्चोभयपटान्तलग्नपरिजनप्रेङ्खोलितैश्छा-यासु शोष्यमाणैः शुष्कैश्च कुटिलकमरूपक्रियमाणपल्लवपरभा-

---

विनिहिताः स्थापिताः सरसस्यार्द्रस्यातपर्णस्य चूर्णविशेषस्य हस्ता येषु तान्। उद्वाहस्य विवाहस्य वेद्याः स्तंभान् उत्तंभयद्भिरूर्ध्वीकुव-द्भिः" उदःस्थास्तंभोः पूर्वस्य' इत्यनेन पूर्वसवर्णः। प्रविष्टाभिरित्यादीनां तृतीयान्तानां व्याप्तमित्यनेनान्वयः। सिंदूररजोराजिभिः कश्मीरज-धूलिसमूहै राजितं शोभितं ललाट यासां ताभिः। अद्य यावद्विवाहा-दिमंगलेषु' लेपमुत्तमांगेषु नार्यो विदधाति। बहुविधाभिर्वर्णकाभिर्वि-लेपनैर्दिग्धाभिरुपलिप्ताभिरंगुलीभिः करणैः। प्रावासूत्राणि विवाहे बध्यमानानि मंगलसूत्राणि चित्रयन्तीभिः। तदा शालाया अजिर-श्रेणीरंगपंक्तीरित्यर्थः। शालाजिराणि (शरावान्मृत्पात्राणीत्यर्थः) वैवाहिकस्य विवाहसंबंधिनः कंकणस्योर्णासूत्राणां मेषलोमसूत्राणां संनाहान रचनाः बलाशना पुष्पाख्योषधिविशेषस्तत्पक्कं घृतं रक्षार्थं क्रि-यते। तेन घृतेन घनीकृतः कुंकुमकल्कस्तेन मिश्रितान्। स्फुरद्भिः प्र-काशमानैः स्फीतैर्बृहद्भिः स्फटिककर्पूरस्य कर्पूरविशेषस्य शकलैःखंडैः खचितमंतरालं यासां ताः। सर्वतो वासोभिर्वसनैः संछादितमिति सं-

गैरपरैरारब्धकुङ्कुमपंकस्थासकच्छुरणैरपरैरुद्भुजभुजिष्यभज्यमानभङ्गुरोत्तरीयैः क्षौमैश्च बादरैश्च दुकूलैश्च लालातन्तुजैश्चांशुकैश्च नेत्रैश्च निर्मोकनिभैरकठोररम्भागर्भकोमलैर्निःश्वासहार्यैः स्पर्शानुमेयैर्वासोभिः सर्वतः स्फुरद्भिरिन्द्रायुधसहस्रैरिव संछादितम्, उज्ज्वलनिचोलकावगुण्ठ्यमानोपधानैः हंसतूलशयनीयैस्तारामुक्ताफलोपचीयमानैश्च कञ्चुकैरनेकोपयोगपात्यमानैश्चापरिमितैः पट्टपटीसहस्रैराभिनवरागकोमलदुकूलरा मानैश्च पट-

बंधः। बहुविधानां भक्तीनां रचनानां निर्माणे निपुणाभिः कुशलाभिः पुराणाभिः पुरातनीभिः पौरपुरंध्रीभिर्नागरिकप्रमदाभिर्बध्यमानैः आचारे चतुराभिरन्तः पुरजरतीभिर्वृद्धाभिर्जनितया पूजया राजमानैः शोभमानै रजकैर्निर्णेजकै रज्यमानैः। उभयपटांते पटान्तद्वये लग्नैः परिजनैः प्रेङ्खोलितै श्चालितैः। कुटिलः क्रमो येषां तै रूपैः क्रियमाणः, पल्लवानां परभागः शोभा येषां तैः। आरब्धं कुंकमपंकस्य स्थासकानां रचनाविशेषाणां छुरणं लपनं येषु तैः उद्भुजैरूर्ध्वहस्तैर्भुजिष्यैर्विटैर्भज्यमानानि मुष्टिदानेन समाक्रियमाणानि भंगुराणि वक्राण्युत्तरीयाणि येषु तैः। क्षौमैः क्षुमाविकारैः। बादरैः कार्पासैः। लालातंतुजैः कौशेयैः। नेत्रैर्वस्त्रविशेषैः। निर्मोकाभैः सर्पकंचुकसदृशैः। अकठोरः कोमलो रंभायाः कदल्या गर्भ इव मध्य इव कोमलानि तैः मृदुभिः। निश्वासेन हार्यैर्हरणीयैरतिसूक्ष्मैरित्यर्थः) उज्वलैः स्वच्छैर्निचोलिकैरवगुंठ्यमानानि वेष्ट्यमानान्युपधानान्युपबर्हाणि येषां तैः हंसतूल यनीयैर्हंसपक्षशय्याभिः। अथवा उज्वलैर्निचोल कैरवगुंठ्यमानानि पराजितानि हंसकलानि यैस्तैः। शुभ्रत्वाद्धंसा यैः पराजिता इत्यर्थः। ताराकारैर्मुक्ताफलैरुपचीयमानैःशोभमानैः कंचुकैश्चोलैः। स्तवरकनिवह उपरि स्थाप्यमानवस्त्रसमूहस्तेन निरंतरं दृढं छाद्यमा-

वितानैः स्तवरकनिवहनिरन्तरच्छाद्यमानसमस्तपटलैश्च मण्डपैश्चित्र-नेत्रवटवेष्ट्यमानैश्च स्तम्भैरुज्ज्वलं रमणीयं चौत्सुक्यदं च मङ्गल्यं चासीद्राजकुलम् ।

देवी तु यशोवती विवाहोत्सवपर्याकुलहृदया हृदयेन भर्तरि, कुतूहलेन जामातरि, स्नेहेन दुहितरि, उपचारेण निमन्त्रितस्त्रीषु, आदेशेन परिजने, शरीरेण संचरणे, चक्षुषा कृताकृतप्रत्यवेक्षणेषु, आनन्देन महोत्सवे, एकापि बहुधा विभक्तेवाभवत् । भूपतिरप्युपर्युपरि विसर्जिताश्ववारीजनितजामातृजोषः सत्यप्याज्ञासंपादनदक्षे सुखेक्षणपरे परिजने मर्म पुत्राभ्यां दुहितृस्नेहविक्लवः सर्वं स्वयमकरोत् ।

एवं च तस्मिन्नविधवामय इव भवति राजकुले, मङ्गलमय इव जायमाने जीवलोके, चारणमयेष्विव लक्ष्यमाणेषु दिङ्मुखेषु, पटहमय इव कृतेऽन्तरिक्षे, भूषणमय इव भ्रमति परिजने, बान्धवमय इव दृश्यमाने सर्गे, निर्वृतिमय इवोपलक्ष्यमाणे काले, लक्ष्मीमय इव विजृम्भमाणे महोत्सवे, निधान इव सुखस्य, फल इव जन्मनः, परिणाम इव पुण्यस्य, यौवन इव विभूतेः, यौवराज्य इव प्रीतेः, सिद्धिकाल इव मनोरथस्य वर्तमाने, गण्यमान इव जनाङ्गुलीभिः, आलोक्यमान इव मागधवृन्दैः, प्रत्युद्गम्यमान इव मङ्गल्यवाद्यप्रतिशब्दकैः,

नानि समस्तपटलानि, सकलपरिच्छदा, गृहाच्छादनानि, यैस्तैर्मंडपैः । उच्चित्रैरूपरिस्थितचित्रैर्नेत्रपटैः पटविशेषैर्वेष्टमानैः, स्तंभैरुज्ज्वलं, प्रकाशमानं राजकुलं राजप्रासादः । 'नेत्रं मंथगुणे वस्त्रभेदे मूलं द्रुमस्य च' इति मेदिनी ।

देवीति—विवाहोत्सवेन पर्याकुलं व्याकुलं हृदयं यस्याः सा । बहुधाऽनेकप्रकारेण । उपर्युपरि वारंवारं, विसर्जिताभिः, प्रेषिताभिरश्ववारीभिः क्रमेलकवडवाभिर्जनित उत्पादितो जामातृजोष आनंदो येन सः ।

एवं चेति—अविधवामयेऽविधवाप्रचुरे । प्राचुर्ये मयट् । निर्वृतिमय

आहूयमान इव मौहूर्तिकैः, आकृष्यमाण इव मनोरथैः, परिष्वज्यमान इव वधूस्नेहेन हृदयेन राजगाम विवाहदिवसः। प्रातरेव प्रतीहारैः समुत्सारितनिखिलानिबद्धलोकं विविक्तमक्रियत राजकुलम्।

अथ प्रतीहारः प्रविश्य नृपसमीपम् 'देव, जामातुरन्तिकात्ताम्बूलदायकः पारिजातकनामा संप्राप्तः' इत्यभिधाय स्वाकारं युवानमदर्शयत्। राजा तु तं दूरादेव जामातृबहुमानादर्शितादरः 'बालक, कच्चित्कुशली ग्रहवर्मा' इति पप्रच्छ। असौ तु ससाकर्णितनरनाधिपध्वनिर्धावमानः कतिचित्पदान्युपसृत्य प्रसार्य च बाहू सेवाचतुरश्चिरं वसुंधरायां निधाय मूर्धानमुत्थाय 'देव, कुशली यथाज्ञापयस्यर्चयति च देवं नमस्कारेण' इति व्यज्ञापयत्। आगतजामातृनिवेदनागतं च तं ज्ञात्वा कृतसत्कारं राजा 'यामिन्याः प्रथमे यामे विवाहकालात्ययकृतो यथा न भवति दोषः' इति संदिश्य प्रतीपं प्राहिणोत्।

अथ सकलकमलवनलक्ष्मीं वधूमुख इव संचार्य समवसिते वासरे, विवाहदिवसश्रियः पादपल्लव इव रज्यमाने सवितरि, वधूवरानुरागलघूकृतप्रेमलज्जितेष्विव विघटमानेषु चक्रवाकमिथुनेषु, सौभाग्य-

---

इव आनंदमय इव। मुखस्य निधान इत्यादीनां वर्तमान इत्यनेनान्वयः। समुत्सारिता निःसारिता अनिबद्धलोका अनिमंत्रिता जना यस्मात्तत्।

अथेति—यथा न भवति दोष इत्युक्त्वैव विरमणं नृपस्य विनयाधिक्यं व्यंजयति। अन्यथा तथा कार्यमित्युक्तौ जामाताज्ञापितः स्यात्। प्रतीपं प्राहिणोत्पुनरपि जामातुः सन्निधौ प्रेषयामास।

अथेति—कमलानि सायं संकुचन्ति तेषां श्रीर्वधूमुखे निवेश्य वासरो गतोऽन्वेति कल्पना। वधूवरयोरनुरागेण प्रेम्णा लघूकृतं तिरस्कृतं यत्प्रेम तेन लज्जितेष्विव। सायं चक्रवाकमिथुनानि वियुज्यन्ते वधूवरप्रेमाधिक्येन, जायमाना, लज्जा, कारणत्वेन प्रदर्शिता। कपोतस्य पारावतस्य कण्ठ इव कर्बुरे चित्र-

ध्वज इव रक्तांशुकसुकुमारवपुषि नभसि स्फुरति संध्यारागे, कपोतक-गठकर्बुरं वरयात्रागमनरजसीव कलुषयति दिङ्मुखानि तिमिरे, लग्नसं-पादनसज्ज इवोज्जिहाने ज्योतिर्गणे, विवाहमङ्गलकलश इवोदयशिख-रिणा समुत्क्षिप्यमाणे वर्धमानधवलच्छाये ताराधिपमण्डले, वधूवदन-लावण्यज्योत्स्नापरिपीततमसि प्रदोषे, वृथोदितमुपहसतिरिव रजनिक-रमुत्तानितमुखेषु कुमुदवनेष्वाजगाम मुहुर्मुहुरुल्लासितस्फारस्फुरितास्र-गाचामरैर्मनोरथैरिवोत्थितरागाग्रपल्लवैः पुरो धावमानैः पादातैरुत्कर्ण-कटकहयप्रतिहेषितदीयमानस्वागतैरिव वाजिनां वृन्दैश्चापूरितदिग्भागः, चलकर्णचामराणां चामीकरमयसर्वोपकरणानां वर्णकलम्बिनां बलिनां

वर्णे तमसि वरयात्रागमनस्य रजसीव धूलाविव दिङ्मुखानि कलुषयति दिशा मंडलानि मलिनीकुर्वति । अत्र तमसः कर्बुरत्वं संध्यारागसंबंधेन । लग्नस्य मुहूर्तस्य विवाहस्य च संपादने सज्ज इव बद्धपरिकर इव ज्योतिर्गणे नक्षत्रसमूह उज्जिहाने, उद्गच्छति । वर्धमाना धवला, छाया, कान्तिर्यस्य (पक्षे) वर्धमान इव, शराव इव, छाया यस्य, तेन च मंगलकलशसाम्यम् । स च मृण्मयघटः सुधालिप्तः शुभ्रो भवति । वध्वा वदनस्य मुखस्य लावण्येन कांत्या परिपीतं प्राशितं तमोऽधकारो यस्य तादृशि प्रदोषे रजनीमुखे । वृथोदितं व्यर्थमुद्गतम् । उद्गमनकार्यस्य तमोनाशनस्य वधूमुखेनैव संपादितत्वात् । उल्लासितैरुत्पाटितैः, स्फारं विशालं महदित्यर्थः स्फुरितं कम्पनं येषां ते रक्तैश्चामरैरुपलक्षितो ग्रह-वर्मा आजगामेति संबंधः । कम्पितानां, ताम्रचामराणां, मनोरथस्य, नूतनपत्रसा-म्यम् । उत्कर्णानामूर्ध्वकर्णानां कटकहयानां सेनाश्वानां प्रतिहेषितेन प्रतिशब्देन दीयमानं स्वागतं येषां तैर्वाजिनामश्वानां, वृन्दैः, समूहैः । आपूरितो दिग्भागो यस्य सः । चलन्ति कर्णचामराणि कर्णे भूषणार्थं स्थापितानि चामराणि येषां चामीकरमयं सुवर्णमयं सर्वोपकरणं सकलसाहित्यमलंकारा वा येषाम् । वर्ण-कैराच्छादनवसनैर्लम्बन्ते भूमिं स्पृशन्ति ते वर्णकलम्बिन इति यथाकथंचिल्लाप-

घण्टाटाङ्कारिणां करिणां घटाभिः घटयन्निव पुनरिन्द्रहृदयविलीनमन्धकारं, नक्षत्रमालामण्डितमुखीं करिणीं निशाकर इव पौरंदरीं दिशमारूढः प्रकटितविविधविहगविरुतैस्तालावचरचारणैः पुरः सरैर्बालो वसन्त इवोपवनैः क्रियमाणकोलाहलो, गन्धतैलावसेकसुगन्धिना दीपिकाचक्रवालस्यालोकेन कुंकुमपटवासधूलिपटलेनेव पिञ्जरीकुर्वन्सकलं लोकम्, उत्फुल्लमल्लिकामुण्डमालामध्याध्यासितकुसुमशेखरेण शिरसा हसन्निव सपरिवेशशपाकरं कौमुदीप्रदोषम्, आत्मरूपनिर्जितमकरकेतुकरापहृतेन कार्मुकेणेव कौसुमेन दाम्ना विरचितवैकक्ष्यकविलासः, कुसुमसौरभगर्वभ्रान्तभ्रमरकुलकलप्रलापसुभगः पारिजात इव जातः श्रिया सह पुनरवतारितो मेदिनीं, नववधूवदनावलोकनकुतूहलेनेव

नीयम्। घंटानां टांकारो विद्यते येषां तः। घटयन्निवोत्पादयन्निव। नक्षत्रमालया, भूषणविशेषेण, यस्यास्ताम् (पक्षे) नक्षत्राणां, तारकाणां, मालया, पंक्त्या, मंडितं, मुखं, यस्याः। पौरंदरीं, पूर्वां, दिशाम्। प्रकटितानि, विविधानि, विहगानां, विरुतानि, शब्दाः, यैस्तैस्तालावचरैस्तालेष्ववचरन्ति, नृत्यन्ति, तैर्बन्दिभिः। यथा विहगविरुतिभिरुपवनैर्बालो वसन्तो, वसन्तारंभः, कोलाहलं, जनयति, तद्वद्वसंतसदृशोयं पक्षिशब्दं विदधद्भिर्बन्दिभिरुत्पादितकोलाहल इत्यर्थः। गन्धयुतस्य, सुगंधिनस्तैलस्यावसेकेन, सिंचनेन, सुगंधिना, सुरभिणा। चक्रवालं, समूहः। कुंकुमपटवासः, उत्फुल्लानां, विकसितानां मल्लिकानां, पुष्पविशेषाणां, मुंडमालाया, मालस्रजो मध्यं मध्यभागमध्यासितोऽधिष्ठितः, कुसुमशेखरो, यस्य, तेन शिरसा सपरिवेशः, समंडलश्चंद्रो यस्मिंस्तं कौमुदीप्रदोषं चंद्रिकायुतं प्रदोषकालं हसन्निव मालायाः परिवेशसाम्यं चंद्रस्य च शेखरसाम्यम्। विरचितो वैकक्ष्यकस्य तिर्यगुरसि क्षिप्तस्योपवीतादेर्विलासः शोभा येन सः। कुसुमानां, सौरभस्य सुगंधस्य गर्वेण भ्रांतानां, मूढानां, भ्रमराणां, कुलस्य, कलप्रलापेन, मधुरध्वनिना, सुभगो, मनोहरः। श्रिया सह जातो लक्ष्म्यासममुत्पन्नः पारिजातस्तत्संज्ञ-

कृष्यमाणहृदयः पतन्निव मुखेन प्रत्यासन्नलग्नो ग्रहवर्मा ।

राजा तु तमुपद्वारमागतं चरणाभ्यामेव राजचक्रानुगम्यमानः ससुतः प्रत्युज्जगाम । अवतीर्णं च तं कृतनमस्कारं मन्मथमिव माधवः प्रसारितभुजो गाढमालिलिङ्ग । यथाक्रमं परिष्वक्तराज्यवर्धनहर्षं च हस्ते गृहीत्वाभ्यन्तरं निन्ये । स्वनिर्विशेषासनदानादिना चैनमुपचारेणोपचचार ।

न चिराच्च गम्भीरनामा नृपतेः प्रणयी विद्वान्द्विजन्मा ग्रहवर्माणमुवाच —'तात, त्वां प्राप्य चिरात्खलु राज्यश्रिया घटितौ तेजोमयौ सकलजगद्गीयमानबुधकर्णानन्दकारिगुणगणौ सोमसूर्यवंशाविव पुष्पभूतिमुखरवंशौ । प्रथममेव कौस्तुभमणिरिव गुणैः स्थितोऽसि हृदये देवस्य । इदानीं तु शशीव शिरसा परमेश्वरेणासि वोढव्यो जातः इति ।

एवं वदत्येव तस्मिन्नृपमुपसृत्य मौहूर्तिकाः 'देव, समासीदति लग्नवेला । व्रजतु जामाता कौतुकगृहम्' इत्यूचुः । अथ नरेन्द्रेण 'उत्तिष्ठ गच्छ' इति गदितो ग्रहवर्मा प्रविश्यान्तःपुरं जामातृदर्शनकूतूहलिनीनां स्त्रीणां पतितानि लोचनसहस्राणि विकचनीलकुवलयवनानीव लङ्घयन्नाससाद कौतुकगृहद्वारम । निवारितपरिजनश्च प्रविवेश ।

अथ तत्र कतिपयाप्तप्रियसखीस्वजनप्रमदाप्रायपरिवाराम्, अरु-

कवृत्तः, श्रिया राज्यश्रिया, राज्यलक्ष्म्या पुनर्मेदिनीं पृथ्वीमवतारित आनीतः ।

तातेति—सकलजगता गीयमानो बुधानां विदुषां कर्णयोः श्रोत्रयोर्बुधश्चंद्रपुत्रः कर्णः सूर्यात्मजस्तयोर्वा, आनंदकारी गुणगणो ययोस्तौ । हृदये, मनसि, वक्षसि च । देवस्य नृपतेर्विष्णोर्वा । परमेश्वरेण नृपेण हरेण च । एतेन जामातुः पूजनीयत्वं व्यज्यते । **एवमिति**—लंघयन्नाक्रममाणः । कौतुकगृहद्वारमुत्सवगृहस्य विवाहोत्सवगृहस्य द्वारम् ।

अथेति—तत्र वधूमपश्यदिति संबंधः । अरुणांशुकेन लोहितवस्त्रेणाव-

णांशुकावगुण्ठितमुखीं प्रभातसंध्यामिव स्वप्रभया निष्प्रभान्प्रदीपका-न्कुर्वाणाम्, अतिसौकुमार्यशङ्कितेनेव यौवनेन नातिनिर्भरमुपगूढाम्, साध्वसनिरुध्यमानहृदयदेशदुःखमुक्तैर्निभृतायतैः श्वसितैरपयान्तं कुमा-रभावमिवानुशोचन्तीम्, अत्युत्कम्पिनीं पतनभियेव त्रपया निष्पन्दं धार्यमाणाम्, हस्तं तामरसप्रतिपन्नमासन्नग्रहणं शशिनमिव रोहिणीं भयवेपमानमानसामवलोकयन्तीम्, चन्दनधवलतनुलताज्योत्स्नादा-नसंचितलावण्यात्कुमुदिनीगर्भादिव प्रसूताम्, कुसुमामोदनिर्हारिणीं वसन्तहृदयादिव निर्गताम्, निःश्वासपरिमलाकृष्टमधुकरकुलां मलय-मारुतादिवोत्पन्नाम्, कृतकंदर्पानुसरणां रतिमिव पुनर्जाताम्, प्रभा-लावण्यमदसौरभमाधुर्यैः कौस्तुभशशिमदिरापारिजातामृतप्रभवैः सर्व-

गुंठितमाच्छादितं मुखं यस्यास्ताम्। प्रभातसंध्या चारुणस्यानूरोरल्पैरंशुभिरं-शुकैरवगुंठितमुखी भवति। नातिनिर्भरं नातिदृढमुपगूढामालिंगिताम्। अप्राप्त-पूर्णयौवनां वयःसंधौ वर्तमानामित्यर्थः। साध्वसेन भयेन कंपेन वा निरुध्यमा-नेन हृदयदेशेन दुःखान्मुक्तैर्निभृतैर्गुप्तैरायतैर्दीर्घैः। अपयान्तं नश्यन्तं कुमार-भावं बाल्यम्। तामरसप्रतिपन्नं, कमलसदृशमासन्नं प्राप्तं ग्रहणं, स्वीकारो, यस्य तं हस्तं करमवलोकयन्तीम्। भयेन, वेपमानं, मानसं, मनो, यस्यास्ताम्। आस-न्नग्रहणं प्राप्तोपरागं, शशिनं, चंद्रमसमवलोकयन्ती रोहिणीं चन्द्रभार्यामिव। भर्तृ-ग्रहणं दृष्ट्वा रोहिणी वेपते। विवाहे च कुमार्यो भर्तृभीत्या लज्जाधिक्येन वा वेपन्त इति हि प्रत्यक्षम्। वर्णितं चैतत् चन्दनेन धवला शुभ्रा तनुलता, यस्या स्ताम्। ज्योत्स्नायाश्चंद्रिकाया, आदानेन, ग्रहणेन, संचितं, वर्द्धितं, लावण्यं, कान्तिर्यस्य तस्मात्कुमुदिनीगर्भात्। शुभ्रा, तनुलता, कमलिन्याः, संजातान्वित्युत्प्रेक्षा। कृतकंदर्पानुसरणामुद्भूतमदनविकाराम् (पक्षे) मदनमनुयान्तीम्। प्रभादीनां कौस्तुभादिभिर्यथासंख्येनान्वयः। सर्वरत्नगुणैः, कौस्तुभादीनां प्रभादिभिर्गुणैः, उपलक्षितां. सुरासुरकृपा, देवासुरयोरुपरि, कोपेन, लक्ष्मीहरणजेनेत्यर्थः, रत्नाक-

रत्नगुणोरपगामिव सुरासुरकृपया रत्नाकरेण कल्पितां श्रियं, स्निग्धेन बालिकालोकेन सितसिन्धुवारकुसुममञ्जरीभिरिव मुक्तादीधितिभिः कल्पितकर्णावतंसाम्, कर्णाभरणमरकतप्रभाहरितशाद्वलेन कपोलस्थलीनञ्जन विनोदयन्तीमिव हारिणीं लोचनच्छायाम्, अधोमुखं वरकौतुकालोकनाकुलं मुहुर्मुहुः कृतमुखोन्नमनप्रयत्नं सखीजनं हृदयं च निर्भर्त्सयन्तीं वधूमपश्यन्।

प्रविशन्तमेव तं हृदयचौरं बध्वा समर्पितं जग्राह कंदर्पः। परिहासस्मेरमुखीभिश्च नारीभिः कौतुकगृहे यद्यत्कार्यते जामाता तत्तत्सर्वमनिपेशलं चकार। कृतपरिणयानुरूपवेशपरिग्रहां गृहीत्वा करे वधूं निर्जगाम। जगाम च नवसुधाधवलां निमन्त्रितागतैस्तुषारशैलोपत्यकामिव त्र्यम्बकाम्बिकाविवाहाहूतैर्भूभृद्भिः परिवृत्ताम्, सेकसुकुमारयवाङ्कुरदन्तुरैः पञ्चास्यैः कलशैः कोमलवर्णिकाविचित्रैरमित्र-

रेण सागरेण, कल्पितां, श्रियं लक्ष्मीमिव। स्निग्धेन वत्सलेन बालिकाजनेन कन्यकाजनेन। सिताभिः, सिंदुवारस्य, निर्गुण्ड्याः, कुसुममञ्जरीभिः। हारिणीं मनोहरां हरिणसंबंधिनीं च। कौतुकालोकने आकुलमुत्सुकं हृदयं सखीजनं च निर्भर्त्सयन्तीं तर्जयमानामिव। अथवा हेतुमण्यंतं हेतोरविवक्षयेति बोध्यम्।

प्रविशन्तमिति—हृदयचोरं हृदयहारकम् कंदर्पो जग्राह। यथा कंचित्स्तेनं कोपि राजपुरुषादेर्हस्ते ददाति तद्वदिमं, बध्वार्पितं कंदर्पो जग्राहेत्यर्थः। अतिपेशलमतिमनोहरम्। कृतः परिणयस्य विवाहस्यानुरूपो योग्यो वेशपरिग्रहो नेपथ्यस्वीकारो यया ताम् वेदीं जगामेति-संबंधः, वेदीं विशिनष्टि। नवया नूतनया सुधया धवलाम्। भूभृद्भी राजभिः, पर्वतैश्च। तुषारशैलस्य हिमालयस्योपत्यकां समीपस्थभूमिम्। शुभ्रवर्णत्वं भूभृद्वेष्टितत्वं च तत्साम्यम्। सेकेन, सुकुमाराः, कोमला, यवांकुरास्तैर्दन्तुरैरुच्चनीचैः, पंचास्यैः विस्तृतमुखैः कोमलयावर्णिकया, शुभ्ररंगेण विचित्रैरमित्रमुखैः शत्रुवदनैश्च, शत्रुमुखाकाराणि (पात्राणीयासन्नित्यर्थः) मंगल्य-

मुखैश्च मङ्गल्यफलहस्ताभिरञ्जलिकारिकाभिरुद्भासितपर्यन्ताम्, उपाध्यायोपधीयमानेन्धनधूमायमानाग्निसंधुक्षणाक्षणिकोपद्रष्टृद्विजाम्, उपकृशानुनिहितानुपहतहरितकुशाम्, संनिहितदृषदजिनाज्यस्रुक्समित्पूलीनिवहाम्, नूतनसूर्पार्पितश्यामलशमीपलाशमिश्रलाजहासिनीं वेदीम्। आरुरोह च तां दिवमिव सज्योत्स्नः शशी। समुत्सर्प च वेल्लितारुणशिखापल्लवस्य शिखिनः कुसुमायुध इव रतिद्वितीयो रक्ताशोकस्य समीपम्। हुते च हुतभुजि दक्षिणावर्तप्रवृत्ताभिर्वधूवदनविलोकनकुतूहलिनीभिरिव ज्वालाभिरेव सह प्रदक्षिणां बभ्राम। पात्यमाने च लाजाञ्जलौ नखमयूखधवलिततनुरदृष्टपूर्ववधूवररूपविस्मयस्मेर इवादृश्यत विभावसुः।

फलं हस्ते यासां ताभिः। अंजलिकारिकाभि मृण्मयप्रतिमाभिः, उद्भासितः शोभितः, पर्यन्तो यस्यास्ताम्। उपाध्यायेन गुरुणोपधीयमानैः, स्थाप्यमानैरिंधनैः समिद्भिर्धूमायमानस्याग्नेः, संधुक्षणे प्रज्वलनेऽक्षणिका व्यग्रा उपद्रष्टारः, साक्षिणः, छात्रा वा द्विजा ब्राह्मणाः यस्यां ताम्। उपकृशानु, वन्हेः समीपे निहिताः स्थापिताः, अनुपहताः, अनुपभुक्ताः, (प्रत्यग्रा इत्यर्थः) हरितकुशा, हरिद्वर्णा दर्भा यस्यास्ताम्। दृशदश्मा, अजिनं मृगचर्म आज्यं, घृतं, स्रुक्, पात्रविशेषः, समित्पूली एकत्र बद्धाः, समिधः। नूतनसूर्पे नवे प्रस्फोटनेऽर्पिताभिः श्यामलैः, कृष्णैः शमीपलाशैः शमीपर्णैर्मिश्रिताभिर्लाजाभिर्हसति ताम्। लाजानां शुभ्रत्वाद्धास्यसाम्यम्। वेल्लिताश्चलिता-अरुणाः, ताम्राः, शिखापल्लवाः, ज्वालाग्राणि, यस्य तस्य. शिखिनो, वन्हेः, (पक्षे) वेल्लिता-अरुणाः, शिखापल्लवाः, अग्रपर्णानि, यस्य तस्य रक्ताशोकस्य शिखिनो वृक्षस्य। दक्षिणावर्तेनापसव्यवर्तुलेन प्रवृत्ताभिः। नखमयूखैर्नखकिरणैर्धवलिता तनुर्यस्य सः। अदृष्टपूर्वेणानवलोकितपूर्वेण बधूवरयो रूपेण जातो यो विस्मयः तेनाश्चर्येण स्मेरश्चकित इव। विभावसुर्वन्हिः।

अत्रान्तरे स्वच्छकपोलोदरसंक्रान्तमनलप्रतिबिम्बमिव निर्वापयन्ती स्थूलमुक्ताफलविमलबाष्पबिन्दुसंदोहदर्शितदुर्दिना निर्वेदनविकारं रुरोद वधूः। उदश्रुविलोचनानां च बान्धववधूनामुदपादि महानाक्रन्दः। परिसमापितवैवाहिकक्रियाकलापस्तु जामाता बध्वा समं प्रणनाम श्वसुरौ। प्रविवेश च द्वारपक्षलिखितरतिप्रीतिदैवतं प्रणयिभिरिव प्रथमप्रविष्टैरलिकुलैः कृतकोलाहलम्, अलिकुलपक्षपवनप्रेङ्खोलितैः कर्णोत्पलप्रहारभयप्रकम्पितैरिव मङ्गलप्रदीपैः प्रकाशितम्, एकदेशलिखितस्तबकितरक्ताशोकतरुतलभाजाधिज्यचापेन तिर्यक्कूणितनेत्रत्रिभागेण शरमृजूकुर्वता कामदेवेनाधिष्ठितम्, एकपार्श्वन्यस्तेन काञ्चनाचामनकेनेतरपार्श्ववर्तिन्या च दान्तशफरुकधारिण्या कनकपुत्रिकया साक्षाल्लक्ष्म्येवोद्दण्डपुण्डरीकहस्तया सनाथेन सोपधानेन स्वास्तीर्णेन शयनेन शोभमानम्, शयनशिरोभागस्थितेन च कृतकुमुदशोभेन कुसुमायुधसाहायकायागतेन शशिनेव निद्राकलशेन राजतेन विराजमानं वासगृहम्।

अत्रान्तरे इति—स्वच्छकपोलोदरे स्वच्छे कपोलमध्ये, संक्रान्तं पतितमनलस्याग्नेः प्रतिबिंबम्। स्वच्छेत्यनेन बिंबग्रहणयोग्यत्वम्। निर्वापयन्ती शमयन्ती। स्थूलमुक्ताफलानीव विमलाः स्वच्छा बाष्पबिन्दवस्तेषां संदोहेन समूहेन दर्शितं दुर्दिनं यया सा। निर्गता विकारा यस्मात्तादृशं वदनं यस्मिन्यथा तथा। वदनविकारदर्शनाभावस्तु भर्तृसांनिध्यात्। **प्रविवेशेति**—जामाता वासगृहं प्रविवेशेति संबंधः। द्वारपक्षे द्वारपार्श्वे लिखितं रतेर्मदनभार्यायाः, प्रीतिदैवतमर्थान्मदनो यस्मिन्। एकदेशे, लिखितस्य, स्तबकितस्य, गुच्छयुतस्य, रक्ताशोकस्य, तलं भजति तेन ज्यामधिगतं चापं यस्य तेन। कूणितः, संकुचितो, नेत्रत्रिभागो, नेत्रापांगो यस्य तेन। एतेन लक्ष्यबद्धदृष्टित्वं दर्शितम्। कांचनाचामनकेन, सौवर्णष्ठीवनपात्रेण, दन्तशफरुकं, हरितदंतमयीं, पेटिकां, धारयति, तया।

तत्र च ह्रीताया नववधूकायाः पराङ्मुखप्रसुप्ताया मणिभित्तिदर्पणेषु मुखप्रतिबिम्बानि प्रथमालापाकर्णनकौतुकागतगृहदेवताऽऽननानीव मणिगवाक्षकेषु वीक्षमाणः क्षणदां निन्ये । स्थित्वा च श्वशुरकुले शालीनामृतमिव श्वश्रूहृदये वर्षन्नभिनवाभिनवोपचारैरपुनरुक्तान्यानन्दमयानि दशदिनानिस्थित्वा दत्वा राज दौवारिकमिव राजकुले रणरणकं यौतुकनिवेदितानीव शम्बलान्यादाय हृदयानि सर्वलोकस्य कथं कथमपि विसर्जितो नृपेणबन्ध्वा सहस्वदेशमगमदिति ।

इति श्रीबाणभट्टकृते हर्षचरिते चक्रवर्तिजन्मवर्णनं
नाम चतुर्थ उच्छ्वासः ।

तत्रेति—प्रथमालापस्य प्रथमभाषितस्याकर्णनस्य, श्रवणस्य, कौतुकादागतानां गृहदेवतानामाननानीव मुखानीव (अधुनापि गर्भाधानसंस्कारवेलायां वधूवरालापकुतूहलिन्यः प्रमदाः निगुह्यात्मानं तिष्ठन्तीति प्रसिद्धमेव) अपुनरुक्तानि नवानि । रणरणकं, मनस्तापम् । यौतके, कन्यादानकाले, दीयमानधने निवेदितानीव, समर्पितानीव, सर्वलोकस्य, हृदयानि, चेतांसि, कथंकथमपि, कष्टेन । अगमत्, गतवान् ।

इति श्रीबाणभट्टकृतहर्षचरितव्याख्यायां "आशुतोषिण्यां"
चतुर्थ उच्छ्वासः ।

दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्ता की संख्या Borrower's No